गांधीजी

अगस्त १९६१ (श्रावण १८८३ शके)

© नवजीवन ट्रस्ट अहमदाबाद १९६१

साढ़े सात रुपये

निदेशक, प्रकाशन विभाग दिल्ली-८ द्वारा प्रकाशित
जीवणजी डाह्याभाई देसाई, नवजीवन प्रेस अहमदाबाद-१४ द्वारा मुद्रित

भूमिका

प्रस्तुत खण्डमें जुलाई १९०५ से अक्तूबर १९०६ तक की सामग्री दी गई है। यह समय गांधीजीके व्यक्तिगत जीवन और दक्षिण आफ्रिकाके भारतीय समाजके जीवनमें महत्त्वपूर्ण परिवर्तनोंका है। यद्यपि ट्रान्सवालके भारतीयोंकी सेवाके व्रत और 'इंडियन ओपिनियन' के खर्चकी दृष्टिसे वे स्वयं अभीतक जोहानिसबर्गमें रहकर बैरिस्टरी कर रहे थे फिर भी उनका फीनिक्स आश्रम सहयोगियोंके लिए घर बन गया था। इन सहयोगियोंमें श्री वेस्ट जैसे कुछ यूरोपीय भी सम्मिलित थे। जोहानिसबर्गमें उनका पारिवारिक जीवन अपेक्षाकृत अधिक स्थिर हो गया था। सहयोगी और सहकारी भी परिवारके सदस्य थे। भोजनके बाद रातको वे तथा अन्य सदस्य धार्मिक अध्ययन और दार्शनिक चर्चा करते थे। अपने बच्चोंके लिए उन्होंने जो सख्त आचार-नीति अपनाई थी उसके बावजूद उनकी बकालत बढ़ती गई। जीवनमें सादगीके साथ-साथ संयम और शारीरिक श्रमपर जोर बढ़ गया। घरसे दफ्तर तक का छः मीलका फासला वे जाते और आते पैदल ही तय करते थे। उनके आहार-सम्बन्धी प्रयोग भी चलते रहे। अपने बड़े भाई श्री लक्ष्मीदासके नाम पत्र (मई २७, १९०६) में उन्होंने लिखा था: "कुछ भी मेरा है यह मेरा दावा नहीं है। मेरे पास जो-कुछ भी है वह सब लोक-सेवामें लगाया जा रहा है।... मुझे किसी किस्मके दुनियाई सुख भोगकी इच्छा बिलकुल नहीं है।"

सार्वजनिक कार्यकर्ताके जीवनमें ब्रह्मचर्यकी आवश्यकतापर उनका विश्वास अधिकाधिक बढ़ता गया — यह दूसरा महत्त्वपूर्ण विकास हुआ। तब उन्हें आत्मज्ञानकी दिशामें उसके उपयोगकी प्रतीति नहीं हुई थी। किन्तु जूलू विद्रोहके समय जब उन्हें डोलीवाहक दलके साथ कठिन मंजिलोंपर जाना पड़ा, उन्होंने लिखा है: "मेरे मनमें विचार उदित हुआ कि यदि मैं इस तरह समाजकी सेवामें संलग्न होना चाहता हूँ तो मुझे धन और सन्तानकी इच्छा छोड़ देनी चाहिए और सांसारिक काम-काजसे अलग होकर वानप्रस्थ जीवन व्यतीत करना चाहिए।" (आत्मकथा, भाग ४, अध्याय ७) उन्हें विश्वास हो गया कि वे आत्मा और शरीर दोनोंके लिए साथ-साथ नहीं जी सकते और उन्होंने जीवनके ३७ वें वर्षमें आजन्म ब्रह्मचर्यका व्रत ले लिया। अन्तत: उन्हें सितम्बर ११, १९०६ की सार्वजनिक सभामें उस व्रतकी सुन्दरता और शक्तिका साक्षात्कार हुआ था। ईश्वरको साक्षी रखकर बुरे कानूनके सामने न झुकनेके कारण मिलनेवाले दण्डको झेलनेके लिए लिया गया था और उसी दिन उस सिद्धान्तका जन्म हुआ जो बादमें 'सत्याग्रह' कहलाया।

उनके हाथोंमें 'इंडियन ओपिनियन' उनके प्रभावकी उत्तरोत्तर वृद्धिका साधन बन गया था। विशेषत: गुजराती विभागके द्वारा उन्होंने दक्षिण आफ्रिकी भारतीय समाजको आत्म-संयम, स्वच्छता और अच्छी नागरिकता सिखाने और सत्याग्रहके योग्य बनानेका प्रयत्न किया। उसमें उन्होंने टॉल्स्टॉय, लिंकन, मैज़िनी, एलिज़ाबेथ फ्राइ, फ्लोरेंस नाइटिंगेल, ईश्वरचन्द्र विद्यासागर और टी० माधवराव जैसे महान् पुरुषों और स्त्रियोंके जीवन-चरित्र लिखकर अपने पाठकोंको अनुप्राणित करनेका प्रयास किया। कुछ व्यावहारिक कठिनाइयोंके कारण बादमें उन्हें 'इंडियन ओपिनियन' के हिन्दी और तमिल विभाग बन्द कर देने पड़े। इस कालके पत्रोंको देखनेसे उनके पत्रोंसे प्रकट होता है कि वे उस पत्रकी सामग्री, स्वरूप और अन्य विषयोंके बारेमें सविस्तार हिदायतें देते थे। पत्रका आर्थिक पक्ष अनिश्चित बना हुआ था और गांधीजीको उसके लिए लगातार अतिरिक्त धनराशि अर्पित करनी पड़ती थी।

और सबसे बड़ी घटना" मानी जायेगी। जापानकी महानताका श्रेय उन्होंने उसके द्वारा मिकाडोके शिक्षा-सम्बन्धी आदेशोंके निष्ठापूर्ण पालन और सेनाके आचारको दिया।

यह खण्ड उस विस्तृत भूमिकाको प्रस्तुत करता है जिसमें गांधीजीने वानप्रस्थ जीवन अपनाया और वे मानव-समाजके ऐसे मार्गदर्शकके रूपमें प्रकट हुए जिसे इस बातकी प्रतीति हो गई थी कि "किसी नये तत्वका आविर्भाव हुआ है।" यह तत्व था — सत्याग्रह संवैधानिक आन्दोलनका पूर्ण संतोष प्रदान करनेवाला निर्मल विकल्प।

पाठकोंको सूचना

इस खण्डमें कुछ ऐसे प्रार्थनापत्र सम्मिलित किये गये हैं जिनपर यद्यपि दूसरोंके हस्ताक्षर हैं तथापि वे गांधीजीके लिखे हुए माने गये हैं। इसके कारण खण्ड १ की भूमिकामें स्पष्ट किये जा चुके हैं। ये प्रार्थनापत्र गांधीजीके आत्मकथा-सम्बन्धी लेखोंके सामान्य साक्ष्य उनके सहयोगी श्री एच० एस० एल० पोलक और श्री छगनलाल गांधीकी सम्मति तथा अन्य उपलब्ध प्रमाणोंके आधारपर इंडियन ओपिनियन से लिये गये हैं।

अंग्रेजी तथा गुजराती सामग्रीसे अनुवाद करनेमें हिन्दीको मूलके समीप रखनेका पूरा प्रयत्न किया गया है। किन्तु साथ ही अनुवादको सुपाठ्य बनानेका भी ध्यान रखा गया है। छापेकी स्पष्ट भूलें सुधारकर अनुवाद किया गया है और मूलमें व्यवहृत शब्दोंके संक्षिप्त रूप हिन्दीमें पूरे करके दिये गये हैं। नामोंको लिखनेमें सामान्यतः प्रचलित उच्चारणोंका ध्यान रखा गया है। संशयास्पद उच्चारणोंके सम्बन्धमें गांधीजीके गुजरातीमें लिखे गये उच्चारणको स्वीकार किया गया है।

प्रत्येक शीर्षककी लेखन-तिथि यदि वह उपलब्ध है, दाहिने कोनेमें ऊपर दी गई है। यदि मूलमें कोई तिथि नहीं है तो चौकोर कोष्ठकोंमें अनुमानित तिथि दे दी गई है और जहाँ जरूरी समझा गया है वहाँ उसका कारण भी बता दिया गया है। मूलके साथ अन्तमें दी गई तिथि प्रकाशन की है।

मूलकी भूमिकामें छोटे टाइपमें और मूल सामग्रीके भीतर चौकोर कोष्ठकोंमें जो-कुछ सामग्री दी गई है, वह सम्पादकीय है। मूलमें आये गोल कोष्ठकोंको कायम रखा गया है। गांधीजी द्वारा उद्धृत अनुच्छेद हाशिया छोड़कर गहरी स्याहीमें छापे गये हैं।

सत्यना प्रयोगो अथवा आत्मकथा और दक्षिण आफ्रिकाना सत्याग्रहनो इतिहास के विभिन्न संस्करणोंमें पृष्ठ-संख्याकी भिन्नताके कारण जहाँ आवश्यक हुआ है केवल भाग और अध्यायका ही हवाला दिया गया है।

साधन-सूत्रोंमें एस० एन० संकेत साबरमती संग्रहालय अहमदाबादमें उपलब्ध कागजपत्रोंका सूचक है। इसी प्रकार जी० एन० गांधी स्मारक निधि और संग्रहालय नई दिल्लीमें उपलब्ध कागज पत्रोंका तथा सी० डब्ल्यू० सम्पूर्ण गांधी वाङ्मय द्वारा प्राप्त कागजपत्रोंका सूचक है। सामग्रीके सूत्रोंमें यत्र-तत्र जो संकेत आये हैं उनमें सी० एस० ओ० "कलोनियल सेक्रेटरीके ऑफिस के लिए, सी० ओ० कलोनियल ऑफिसके लिए तथा एल० टी० जी० या एल० जी० लेफ्टिनेंट गवर्नरके लिए आये हैं।

इस खण्डकी सामग्रीके साधन-सूत्र और सम्बन्धित अवधिका तारीखवार वृत्तान्त पुस्तकके अन्तमें दिये गये हैं।

उन्होंने बार-बार ब्रिटिश भारतीय संघके माध्यमसे ट्रान्सवालके भारतीय समाजकी समस्याओंको लेकर जोरदार शब्दोंमें निवेदन प्रस्तुत किये। उदाहरणार्थ ट्रान्सवाल लौटनेवाले भारतीय शरणार्थियोंसे उन्हें जाननेवाले यूरोपीयोंके नाम पूछनेकी प्रथा और ट्रामगाड़ियों तथा रेलगाड़ियों द्वारा भारतीयोंके सफरपर लगे हुए कठोर प्रतिबन्धों की उन्होंने आलोचना की। जब मार्च १९०६ में शान्ति-समितिकी नियुक्ति हुई, तब गांधीजीके नेतृत्वमें संघने जोरदार तरीकेसे उसके सामने भारतीय दृष्टिकोण रखा। अनुमतिपत्रोंकी समस्या इतनी तीव्र हो गई थी कि संघने कतिपय परीक्षात्मक मुकदमे दायर करना भी तय किया। किन्तु चरम स्थिति तब आई जब लॉर्ड मिलनरके आश्वासनपर स्वेच्छापूर्वक दुबारा पंजीयन करा लेनेके बाद भी सरकारने भारतीयोंको तीसरी बार पंजीयन करानेके लिए बाध्य करनेका कानून बनाना निश्चित किया। जिस दिन एशियाई अध्यादेशका मसविदा प्रकाशित हुआ उसी दिनसे दक्षिण आफ्रिकामें घटनाओंकी गति बढ़ गई। अगस्त २५,१९०६को ब्रिटिश भारतीय संघने अध्यादेशका विरोध किया। ८ सितम्बरको गांधीजीने इंडियन ओपिनियन में अध्यादेशकी भर्त्सना करते हुए उसे मानवताके विरुद्ध अपराध कहा साथ ही उसे सरकारका भारतीयोंको ट्रान्सवालसे भगानेका तरीका घोषित किया। गांधीजीने खूनी कानून के विषैले प्रभावोंको स्पष्ट किया और लोगोंसे फिर पंजीयन न करानेका अनुरोध किया। ११ सितम्बरकी सार्वजनिक सभा एक युगान्तरकारी घटना थी। प्रसिद्ध चौथे प्रस्तावकी सिफारिश करते हुए गांधीजीने अध्यादेशके सम्मुख न झुकने और परिणामस्वरूप जेल जानेके लिए समाजका आह्वान किया। सारी परिस्थितियोंसे समाज बहुत व्यग्र हो उठा था और यह तय किया गया कि साम्राज्य-सरकारके सामने भारतीय दृष्टिकोण पेश करनेके लिए एक शिष्टमण्डल इंग्लैंड भेजा जाये।

नेटालके भारतीयोंके सामने भी अपनी समस्याएँ थीं। भारतीयोंके व्यापारिक परवाने फिरसे जारी करनेसे इनकार करना मामूली और रोजमर्रेकी बात हो गई थी। गांधीजीने इस परिस्थितिको गोरों और भारतीयोंके बीच स्पष्ट स्पर्धा माना। दादा उस्मानके मामलेकी अपील उपनिवेश-मन्त्रीके सामने की गई। डर्बन नगर-परिषदने भारतीय व्यापारियों और फेरीवालोंको नये परवाने जारी न करनेका निश्चय किया। इसके पहले गांधीजीने सुझाव रखा था कि परवानोंके मामलोंकी जाँच पड़तालके लिए नेटाल भारतीय कांग्रेस एक समिति बनाये। दूसरी परेशानियाँ भी थीं जैसे १६ वर्षसे अधिक उम्रके भारतीयोंपर १ पौंडका कर लाद दिया गया था पासों और प्रमाणपत्रोंपर प्रति-बन्धात्मक शुल्क लगा दिये गये थे। इस प्रकार इंग्लैंडको शिष्टमण्डल भेजना एक अनिवार्य आवश्यकता प्रतीत हुई और नेटाल भारतीय कांग्रेसने गांधीजीको भेजना तय किया। किन्तु जब फरवरी १९०६ में जूलू-विद्रोह भड़क उठा तब गांधीजीने तमाम भारतीय शिकायतोंपर से ध्यान हटा लिया और न केवल भारतीयोंको आहत सहायकोंके रूपमें अपनी सेवाएँ प्रदान करनेका औचित्य समझाया बल्कि वास्तवमें नेटाल सरकारके सामने ऐसा प्रस्ताव भी पेश किया जिसे सर्दीके अन्ततक उसने स्वीकार कर लिया। इस प्रकार शिष्टमण्डल मुल्तवी हुआ और गांधीजीने अपने १९ सहयोगियोंके साथ लगभग छः हफ्ता तक डोली-वाहकके रूपमें काम किया।

जुलाईमें गांधीजी मोर्चेसे लौट आये। उन्होंने लौटकर देखा कि सरकार अभीतक अनिवार्य पुनःपंजीयनके प्रस्तावपर दृढ़ है, जिससे प्रश्नने पहलेसे भी अधिक गम्भीर रूप धारण कर लिया है। कुछ हफ्तों तक गांधीजी इसको लेकर व्यस्त रहे। लॉर्ड सैल्बोर्नने एशियाई अध्यादेशके बारेमें भारतीय पक्षको मंजूर करनेसे इनकार कर दिया और लॉर्ड एलगिनने अपना यह विचार व्यक्त किया कि शिष्टमण्डल भेजनेसे कोई लाभ नहीं होगा। किन्तु इससे भारतीय समाजका गांधीजी और अलीका इंग्लैंड भेजनेका निश्चय और भी दृढ़ हो गया। एक अन्तिम बैठकमें

गांधीजी जानेके लिए तैयार हो गये किन्तु उन्होंने पहले प्रमुख भारतीयोंसे यह वचन ले लिया कि वे पुन पंजीयन कराना मंजूर नहीं करेंगे। उनके विचारमें भारतीय समाजके लिए यह समय कसौटीका था। इंग्लैंड जाते समय जहाजपर भी वे संघर्षके बारेमें ही विचार करते रहे और वहाँसे इंडियन ओपिनियन के लिए उन्होंने जो लेख भेजे उनमें से एकमें संघर्षके विधि-निषेधका ब्यौरा दिया।

दक्षिण आफ्रिकाके सामने जो बड़े-बड़े प्रश्न थे उनपर अपना मत स्पष्ट करनेमें गांधीजी कभी नहीं चूके। खदानोंमें काम करनेवाले चीनी मजदूरोंके प्रति कठोर बर्तावकी उन्होंने निस्संकोच भर्त्सना की। जब ट्रान्सवाल और ऑरेंज रिवर कालोनीका नया विधान बननेवाला था तब "रंगदार" लोगोंने उस संविधानके अन्तर्गत मताधिकार पानेके लिए प्रार्थनापत्र दिये। गांधीजीने उस आन्दोलनके साथ पूरी सहानुभूति दिखाई।

इस अवधिमें गांधीजीने ट्रान्सवाल और नेटालके प्रमुख समाचारपत्रोंमें अनेक लेख लिखे। नेटाल मर्क्युरी के आमन्त्रणपर सन् १९ ६ में उन्होंने भारतीयोंकी मुख्य-मुख्य शिकायतों और उनके निराकरणके उपायोंका संक्षिप्त तथा सुस्पष्ट ब्यौरा दिया। रैंड डेली मेल को लिखे पत्रमें उन्होंने भारतीयोंके लिए पूर्ण नागरिक स्वतन्त्रताकी माँग की। जब पूनिमा नामकी एक भारतीय स्त्रीपर इसलिए मुकदमा चलाया गया कि उसके पास अपना अनुमतिपत्र नहीं था तब उन्होंने अखबारोंमें उसके विरुद्ध लिखकर जबर्दस्त तूफान पैदा कर दी जिससे सरकारी पक्षका ओछापन तो जाहिर हुआ ही बल्कि अखबारोंको वह वक्तव्य भी वापस लेना पड़ा जिसमें दक्षिण आफ्रिकामें रहनेवाली भारतीय स्त्रियोंको लांछित किया गया था।

गांधीजी भारतीयोंके साथ बरती जानेवाली भेद-नीतिके विरुद्ध आन्दोलन चलानेके अतिरिक्त उनका रचनात्मक मार्गदर्शन भी करते रहते थे। जब नेटाल-सरकारने स्थानीय रूपसे वस्तुओंके निर्माणकी सम्भावनाकी जाँचके लिए एक आयोग बिठाया तब उन्होंने भारतीय व्यापारियोंको उसके सामने गवाही देनेके लिए प्रेरित किया। बड़ौदाकी शैक्षणिक प्रगतिके उदाहरण देकर और गोखलेके सुझावोंका समर्थन करके वे भारतीयोंको शिक्षा प्राप्त करनेकी आवश्यकता निरन्तर समझाते रहते थे। दक्षिण आफ्रिकामें भारतीय व्यापार-संघकी स्थापनाके प्रस्तावका भी उन्होंने अनुमोदन किया था।

भारतकी घटनाओंसे भी वे घनिष्ठ सम्पर्क बनाये रहे। भारतकी आवश्यकताएँ सदा उनके ध्यानमें रहती थीं। उन्होंने नमक-कर समाप्त करनेकी माँग की। बंग-भंग आन्दोलनके तीव्र होनेपर उन्होंने संयुक्त विरोध और अंग्रेजी मालके बहिष्कारका आह्वान किया। स्वदेशी आन्दोलनकी प्रगतिपर प्रसन्नता प्रकट की और साम्प्रदायिक एकताकी आवश्यकतापर जोर दिया। उन्होंने वन्दे मातरम् को भारतका राष्ट्र-गीत और देशको एक राष्ट्र बनानेके लिए हिन्दुस्तानीको राष्ट्र-भाषा स्वीकार करनेकी सलाह दी। भारतीय नेतागण भारतमें जो कुछ कर रहे थे उसपर वे ध्यान रखते रहे और कांग्रेसकी अध्यक्षताके लिए उन्होंने श्री दादाभाईके निर्वाचनका समर्थन किया। साम्राज्यका अविभाज्य अंग होनेके नाते उन्होंने भारतकी आकांक्षाओंपर अधिक गहराईसे सोचनेकी आवश्यकता बताई और न्याय तथा मानवताके नामपर स्वराज्य (होम-रूल) की माँग पेश की।

वे बाहरी दुनियाकी महत्त्वपूर्ण घटनाओंपर भी नजर रखते रहे। निर्वाचनके सिद्धान्तोंपर आधारित नये रूसी विधानको उन्होंने प्रगतिकी दिशामें एक कदम माना। १९ ५ की क्रान्तिके विषयमें उन्होंने कहा कि यदि यह क्रान्ति सफल हो गई तो इस शताब्दीकी सबसे बड़ी विजय

खण्ड

मैट्रिक

चित्र-सूची

१ नेटालके विधेयक

नेटाल सरकारके २१ जूनके खास गज़ट में चार विधेयक प्रकाशित किये गये हैं। वे सभी थोड़े या बहुत आपत्तिजनक हैं। पहला विधेयक उन कानूनोंमें संशोधन करनेके लिए रखा गया है जो कि जूलूलैंड प्रान्तमें शराबके परवाने और दूसरे परवानोंसे सम्बन्धित हैं। यह विधेयक *अधिकतर ब्रिटिश भारतीयोंको लक्ष्यमें रखकर बनाया गया है।* इसके अनुसार प्रत्येक फेरीवालेको प्रतिमास परवाना लेना पड़ेगा और यह उन फेरीवालोंपर भी लागू होगा जो आयातित माल नहीं बेचते यद्यपि ऐसा माल बेचनेके परवानेका कोई शुल्क नहीं देना पड़ता। जो फेरीवाला आयातित माल बेचनेका परवाना लेगा उसे प्रतिमास १ पौंड शुल्क देना पड़ेगा। इसके अतिरिक्त १८९७ के कानून १८ के अनुसार परवाने तबतक नहीं दिये जायेंगे जबतक कि उपनिवेश-सचिव उनकी मंजूरी न दे दे। इस सम्बन्धमें उनका निर्णय सर्वथा अन्तिम होगा और "उनके निर्णयके खिलाफ किसी भी अदालतमें या उच्चाधिकारीके सामने अपील नहीं की जा सकेगी।

दूसरा विधेयक भी ब्रिटिश भारतीयोंसे ही सम्बन्धित है। इसके द्वारा अनधिकृत देहाती जमीनोंपर कर लगाया जायेगा। यह उसी विधेयककी नकल है जिसपर हम पहले विचार कर चुके हैं[1]। इसके अनुसार वह जमीन जिसपर स्वयं उसका मालिक या कोई यूरोपीय प्रत्येक वर्षमें जनवरीसे दिसम्बर तक के बारह महीनोंमें से कमसे-कम छः महीने लगातार नहीं रहा है, अनधिकृत मानी जायेगी।

तीसरे विधेयकका उद्देश्य निजी बस्तियोंमें भी परवानोंकी व्यवस्था करना है। इसमें निजी बस्ती की व्याख्या की गई है किसी निजी जमीनपर अथवा बिकती हुई सरकारी जमीनपर बनी कितनी भी झोंपड़ियाँ या मकान जिनमें वतनी या एशियाई रहते हों। इस प्रकार जमीनका प्रत्येक टुकड़ा जिसपर भारतीयोंका अधिकार होगा कलमकी एक रगड़से निजी बस्ती में बदल दिया जायेगा और उस स्थानके मालिकको एक परवाना लेना पड़ेगा और उसके लिए १ शिलिंग प्रति झोंपड़ी या मकान प्रतिवर्ष देने होंगे। जिन झोंपड़ियोंमें एशियाई या वतनी कर्मचारी रहते होंगे उनका कोई परवाना-शुल्क नहीं लिया जायेगा। इसका मुख्य परिणाम यह होगा कि ऐसे प्रत्येक कमरेपर, जो खुद मालिक या मालिकके नौकरके अलावा किसी अन्य भारतीयके अधिकारमें होगा १ शिलिंग सालाना कर लग जायेगा — फिर उस अपमानका तो कुछ कहना ही नहीं जो कि एशियाइयोंके निवास-स्थानोंको बस्ती के नामसे पुकारनेमें निहित है।

चौथा विधेयक आबाद रिहायशी मकानोंपर कर लगानेके सम्बन्धमें है। यह सबपर लागू होगा। शायद विधेयकके निर्माताओंका ध्यान विधेयकका मसविदा बनाते समय ब्रिटिश भारतीयों पर बिलकुल नहीं था फिर भी अन्तमें इसका प्रभाव अन्य किसी जातिकी अपेक्षा उनपर कहीं अधिक पड़ेगा। इसमें ७५ पौंडसे कम मूल्यके प्रत्येक मकानपर १ पौंड १ शिलिंग कर लगानेका प्रस्ताव है। यह कर ४ पौंडसे अधिक कीमतके रिहायशी मकानोंपर बढ़कर २ पौंड हो जाता है। और रिहायशी मकान का अर्थ है ऐसा कोई भी मकान या मकानका भाग जो रहनेके काम आता हो — इसमें घरेलू नौकर-चाकरोंके कमरे, अस्तबल कोठियोंके बाहर अहातोंमें बने कमरे और अन्य व सब तामीरात शामिल हैं जो रिहायशी

१. देखिए खण्ड ४ पृष्ठ ४७० ।

बाद। साम्राज्य-सरकार ट्रान्सवालको दबा रही है यह हम जानते हैं और उसकी सराहना भी करते हैं। परन्तु हमें इसमें सन्देह है कि यह दबाव परिस्थितिकी गम्भीरताके अनुसार पर्याप्त है। माननीय मन्त्रीकी तीसरी बातसे अनेक सन्देह उत्पन्न होते हैं। उससे उनकी असहाय अवस्थाका पता चलता है। ट्रान्सवाल अभीतक स्वशासित उपनिवेश नहीं बना[1] परन्तु छिपे हुए अर्थसे श्री ब्रॉड्रिकने उक्त बात वैसा ही मानकर कही है। श्री ब्रॉड्रिकने उन वादोंसे इनकार नहीं किया जिनकी चर्चा सर मंचरजीने की थी। और न इस बातसे इनकार किया जा सकता है कि जब वे वादे किये गये थे तब जिम्मेदार मन्त्री भलीभाँति जानते थे कि आगे क्या होनेवाला है। वे जानते थे कि युद्धका एकमात्र परिणाम क्या होगा और शान्तिकी घोषणाके पश्चात् ट्रान्सवालको स्वशासन देना पड़ेगा। इसलिए इसका मतलब यह निकला कि ट्रान्सवालके यूरोपीयोंको तुष्ट करनेकी उत्सुकतामें अब ब्रिटिश सरकार अपने वादोंसे मुकर जानेके लिए भी तैयार हो गई है। यहाँ यह प्रश्न करना सर्वथा संगत होगा कि युद्ध समाप्त होते ही भारतीयोंके साथ किये गये वादे तुरन्त पूरे क्यों नहीं किये गये। और अब भी सर विलियम वेडरबर्नके[2] सुझावके अनुसार ट्रान्सवालको वास्तविक स्वशासन मिलनेसे पहले ही ब्रिटिश सरकार ब्रिटिश भारतीयोंपर से पुरानी पाबन्दियाँ क्यों नहीं हटा देती? वह ऐसा करके इस कानूनको रद करनेकी बदनामी और वैसा करनेकी आवश्यकता सिद्ध करनेका बोझ उस परिषदके सिरपर क्यों नहीं डाल देती जो पूर्ण स्वशासन मिल जानेपर चुनी जायेगी?

जिस समय श्री ब्रॉड्रिकने उपर्युक्त बातें कहीं थीं उसी समय उन्होंने एक अन्य स्थानपर परन्तु भारत-मन्त्रीकी हैसियतसे ही, अपने श्रोताओंको बताया था कि उनपर ब्रिटेनके बाद पहला दावा भारतका ही है क्योंकि भारतके साथ ब्रिटेनका व्यापार उसकी अपेक्षा ज्यादा है जितना कैनडा आस्ट्रेलिया और दक्षिण आफ्रिकाके साथ मिलकर होता है। यदि युद्धकी समाप्ति पर ट्रान्सवालके ब्रिटिश भारतीयोंके हितोंपर इसी भावनासे विचार किया जाता तो लॉर्ड मिलनर[3] ट्रान्सवालके भारतीय-विरोधी कानूनोंपर भी ठीक उसी प्रकार बिना हिचकके कलम फेर देते जिस प्रकार उन्होंने ब्रिटिश सिद्धान्तोंके प्रतिकूल अन्य बीसियों अध्यादेशोंपर फेरी है। यह मामला ऐसा नहीं कि इधर उनका ध्यान ही न गया हो क्योंकि देशमें आवागमन आरम्भ होते ही भारतीयोंने लॉर्ड मिलनरसे भारतीय-विरोधी कानून रद कर देनेकी प्रार्थना की थी। यदि वे यह कदम उठाते तो आज जो भारत-विरोधी आन्दोलन चल रहा है वह शायद सुनाई भी न देता। और हमारी सम्मतिमें श्री ब्रॉड्रिकके वक्तव्यपर अमल भी किया जा सकता है। अभी कोई बहुत देर नहीं हुई है।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, १-३-१९०५

१. स्वशासन १९०६ में मिला।

२. भारतीय मामलोंके प्रेमी, ब्रिटिश संसद सदस्य; दो बार भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेसके अध्यक्ष रहे। देखिए खण्ड १, पृष्ठ ३९९।

३. लॉर्ड अल्फ्रेड मिलनर, दक्षिण आफ्रिकामें उच्चायुक्त १८९७-१९०५ तथा ट्रान्सवालके गवर्नर १९०१-१९०५। देखिए खण्ड १९, १-१।

३ लॉर्ड सेल्बोर्न[1] और स्वशासन

श्री हॉस्किनके वक्तव्यके[2] बारेमें हम जो कुछ कह चुके हैं, उसे देखते कालोनीमें लॉर्ड सेल्बोर्न द्वारा एक शिष्टमण्डलको जो दिये गये उत्तरके जवाबकी मीमांसा करना दिलचस्पीकी बात होगी। शिष्टमण्डल उनसे उस देनेकी प्रार्थना करनेके लिए गया था। परमश्रेष्ठने परिभाषा करते हुए कहा:

> ब्रिटिश साम्राज्यमें उत्तरदायी शासनका अर्थ कुछ स्थानीय मामलोंमें पूर्ण जबतक यह स्वतन्त्रता ब्रिटिश साम्राज्यके आम हितोंमें बाधक नहीं होती, सिद्धान्तोंको जिनपर उसकी नींव है अथवा साम्राज्यको जिन्होंने एक-साथ बाँधती है भंग नहीं करती तबतक उसका अर्थ पूर्ण स्थानीय स्वराज्य

यह परिभाषा सम्राट्के एक विशिष्ट प्रतिनिधिके योग्य है और यह साम्राज्यके द्वारा बार-बार की गई घोषणाओंसे मेल खाती है। तब प्रश्न उठता है कि पर ट्रान्सवालमें जो निर्योग्यताएँ लादी गई हैं वे साम्राज्यके आम हितोंमें बाधक अथवा उन साम्राज्यीय भावनाओंको जो उसे एकताके सूत्रमें बाँधती हैं भंग नहीं प्रश्नका उत्तर स्पष्ट है। हम आशा करते हैं कि जब परमश्रेष्ठके सामने भारतीय प्रश्नोंपर करनेका अवसर आये तब वे अपने द्वारा दी गई इस परिभाषाको लागू करेंगे और विसंगतिको दूर करेंगे।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, १—७—१९ ५

४ सरकारी नौकरियोंमें भेद भाव

लॉर्ड कर्जनने बहुत बार कहा है कि वे नौकरियाँ देनेमें गोरों और कालोंके बीच भेद नहीं करते। उन्होंने एक बार बड़े आवेशसे कहा था कि नौकरियाँ पानेके सम्बन्धमें कोई बात नहीं जिसके बारेमें भारतीय शिकायत कर सकें। और यह साबित करनेके लिए भारतीयोंको बहुत-सी नौकरियाँ दी जा रही हैं उन्होंने एक ब्योरा भी प्रकाशित कराया किन्तु वह ब्योरा बनावटी था क्योंकि उसमें ७५ रुपये वेतन पानेवाले अनेक भारतीय लिये गये थे। माननीय गोपालकृष्ण गोखलेने भी उनके इस झूठे दावेका भण्डाफोड़[5] कर दिया

१ दक्षिण आफ्रिकामें उच्चायुक्त तथा ट्रान्सवाल और ऑरेंज रिवर कालोनीके गवर्नर, १९०५-१०।

२ देखिए पिछला शीर्षक।

३ भारतके वाइसराय और गवर्नर-जनरल, १८९९-१९०५।

४ गोपालकृष्ण गोखले (१८६६-१९१५) भारतके एक प्रतिष्ठित नेता और राजनीतिज्ञ। भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेसके बनारस अधिवेशनके अध्यक्ष। देखिए खण्ड १, पृष्ठ ४१०।

५ बड़ी विधान परिषद्में दिये अपने एक बजट सम्बन्धी भाषणमें।

उन्होंने यह बता दिया है कि बड़े-बड़े वेतन पानेवाले लोग प्रायः सभी यूरोपीय हैं और जो नई जगहें निकली हैं वे भी सब यूरोपीयोंको ही मिली हैं।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन १–७–१९ ५

५ मैक्सिम गोर्की[1]

रूसके लोगों और हमारे देशके लोगोंके बीच एक हदतक तुलना की जा सकती है। जैसे हम गरीब हैं वैसे ही रूसकी जनता भी गरीब है। जैसे हमें राजकाज चलानेका कुछ भी अधिकार नहीं है और चुपचाप कर चुकाने पड़ते हैं, उसी प्रकार रूसके लोगोंको भी करना पड़ता है। रूसमें ऐसे कष्टोंको देखकर कुछ अत्यन्त वीर पुरुष सामने आ जाते हैं। कुछ समय पहले रूसमें विद्रोह हुआ। उसमें जिन्होंने मुख्य भाग लिया उनमें मैक्सिम गोर्की भी थे। वे बहुत गरीबीमें पले थे। शुरूमें वे एक मोचीके यहाँ नौकरीपर रहे। वहाँसे उनको छुट्टी दे दी गई। फिर उन्होंने कुछ समय तक सिपाहीगीरी की। उस समय उन्हें अध्ययन करनेकी तीव्र अभिलाषा हुई। लेकिन गरीब होनेके कारण किसी अच्छी पाठशालामें प्रवेश नहीं मिल सका। उसके बाद उन्होंने एक वकीलके यहाँ नौकरी की और अन्तमें एक नानबाईके यहाँ फेरीवालेका काम किया। इस बीच सारे समय उन्होंने निजी परिश्रमसे शिक्षा प्राप्त करनेका कार्य जारी रखा। उन्होंने १८९२ में अपनी पहली पुस्तक लिखी जो इतनी रोचक थी कि उससे उनकी ख्याति तुरन्त फैल गई। उसके बाद उन्होंने बहुत-सी रचनाएँ की हैं। इन सबके पीछे उनका एक ही उद्देश्य था कि लोगोंको उनके ऊपर होनेवाले अत्याचारोंके खिलाफ उकसाया जाये, सत्ताधीशोंके कान खड़े किये जायें और यथासम्भव जनताकी सेवा की जाये। वे पैसा कमानेकी कुछ भी परवाह न करके ऐसे तीखे लेख लिखते हैं कि उनपर अधिकारियोंकी कड़ी निगाह रहती है। वे लोकसेवा करते हुए जेल भी हो आये हैं किन्तु इसे अपना सम्मान समझते हैं। ऐसा कहा जाता है कि यूरोपमें कामगारोंके हकोंकी रक्षा करनेवाला मैक्सिम गोर्कीके समान कोई दूसरा लेखक नहीं है।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, १–७–१ ५

१ अलेक्सी मैक्सीमोविच पेशकोव गोर्की (१८६८–१९३६) रूसी उपन्यासकार और लेखक।

६. सिंगापुरमें चीनी और भारतीय

सिंगापुर जितना हमारे नजदीक है उतना ही चीनियोंके नजदीक भी उस मुल्कमें चीनियोंको जितनी सुविधाएँ हैं उतनी ही भारतीयोंको भी हैं। फिर सिंगापुरमें चीनियोंका मुकाबला नहीं कर पाते। बहुत-से चीनी सरकारी निर्माण विभागमें हैं, ठेकेदार हैं, और बहुत सम्पन्न हैं। कुछ ही वर्षोंमें चीनी बढ़े हैं में २ ९४७ सन् १९०१ में १०८७७८ सन् १९०२ में १,७१९९ और २२ २२१ चीनी सिंगापुरके इलाकेमें बसे जब कि भारतीय हर साल सिर्फ ११,०० ही गये। इन भारतीयोंमें अधिकतर मद्रासी थे। इस उदाहरणसे ज्ञात होता है कि बाहरके देशोंमें जाकर अभी कितना काम करना बाकी है। हमारे लिए यह बहुत शर्मकी बात है कि हम लोग चीनियोंकी बराबरी नहीं कर सकते।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन १–७–१९ ५

७. पत्र : उच्चायुक्तके सचिवको

जुलाई ६,

सेवामें
निजी सचिव
परमश्रेष्ठ उच्चायुक्त
जोहानिसबर्ग

महोदय

रंगदार व्यक्तियोंके बारेमें ऑरेंज रिवर कालोनीके परमश्रेष्ठ लेफ्टिनेंट गवर्नर द्वारा समयपर स्वीकृत उपधाराओंके सम्बन्धमें उक्त कालोनीकी सरकार और मेरे संघके बीचमें पत्रव्यवहार हुआ है, उसकी प्रतियाँ मैं इस पत्रके साथ संलग्न कर रहा हूँ। मेरा संघ श्रेष्ठका ध्यान इस तथ्यकी ओर आकर्षित करनेकी धृष्टता करता है कि मेरे पत्रमें किसी विधानकी माँग नहीं की गई है। मेरे संघकी नम्र रायमें लेफ्टिनेंट गवर्नरको जो [ ] हैं उनके बलपर वे ऐसी उपधाराओंका निषेध कर सकते हैं जो ब्रिटिश परम्पराओं और पत्र (लैटर्स पेटेंट) के विरोधमें हों। मेरे संघको सूचित किया गया है कि नगरपालिकाओंको कानून बनानेकी आज्ञा मिली है उसे यदि विधान-परिषद स्वीकार कर ले तो फिर सम्राटकी स्वीकृति उसपर प्राप्त करनी होगी। मेरे संघका यह खयाल भी है कि उपनिवेश-सचिव द्वारा लिखित पत्रका अन्तिम अनुच्छेद मेरे संघ द्वारा की गई शिकायतका

१ देखिए "पत्र : उपनिवेश-सचिवको" खण्ड ४ पृष्ठ ४३१-४। सरकारने उसके उत्तरमें सूचित किया कि उपनिवेशमें नगरपालिकाओंके अधिकार सीमित करनेका अथवा कानून बदलनेका कोई विचार नहीं है।

पूरी तरहसे सिद्ध करता है; क्योंकि यदि ब्रिटिश भारतीयोंकी अत्यल्प संख्याके कारण उठाया गया प्रश्न कोई व्यावहारिक महत्ता नहीं रखता तो मेरे पत्रमें उल्लिखित ढंगका विधान स्वीकृत करनेका भी कोई व्यावहारिक अर्थ नहीं हो सकता। यह उपनिवेशके लिए किसी प्रकार उपयोगी न होकर भी निरर्थक रूपसे शिक्षित वाशिन्दोंके ब्रिटिश भारतीय समाजकी भावनाओंको चोट पहुँचाता है और इसलिए मेरा संघ ऐसी आशा करता है कि परमश्रेष्ठ उन उपनियमोंकी जो ऑरेंज रिवर कालोनीकी विभिन्न नगरपालिकाओंमें पास की गई हैं तथा स्वीकृत की गई हैं, उदारतापूर्वक जाँच करायेंगे और, राहत देनेकी कृपा करेंगे।

आपका आज्ञाकारी सेवक
अब्दुल गनी
अध्यक्ष
ब्रिटिश भारतीय संघ

[अंग्रेजीसे]
इंडियन ओपिनियन, ८-७-१९०५

८. पत्र : कैखुसरू व अब्दुल हकको

[जोहानिसबर्ग]
जुलाई १, १९०५

भाई श्री ५ कैखुसरू व अब्दुल हक,

आपका पत्र मिला। मुझे आपके उत्तरसे[1] सन्तोष है। आप लिखनेवालेका नाम जाननेकी इच्छा करते हैं यह ठीक नहीं है। मैंने आपको लिखा है कि आपको उसे जाननेकी कोई जरूरत नहीं है। आपके लिए सचेत रहनेकी भी कोई बात नहीं है। यह सब भूल जाना है। जिस भावना कर्तव्य पालन करना है उस दूसरे जो भी कहें उससे निर्भय रहना चाहिए।

खातेमें मेरे नामे जो पैसा निकलता है उसका हिसाब मुझे भेजें। जो पैसा छापाखानेके लिए दिया गया है वह अभी मैंने जमा नहीं किया।

मो० क० गांधीके सलाम

श्री बालभाई मोरारजी बदर्स
११, फील्ड स्ट्रीट
डर्बन

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें गुजरातीसे; पत्र-पुस्तिका (१९०५), संख्या ५११

१. यह गांधीजीके २७ जून १९०५ के पत्रका उत्तर था। देखिए खण्ड ४, पृष्ठ ५१२।

९ ऑरेंज रिवर उपनिवेशके कानून

इस अंकमें हम ऑरेंज रिवर उपनिवेशके ब्रिटिश भारतीयोंकी स्थितिके विषयमें दो महत्त्वपूर्ण पत्र प्रकाशित कर रहे हैं। पहला पत्र उक्त उपनिवेशके उपनिवेश-सचिवका वह संक्षिप्त और विलम्बित उत्तर है जोकि उन्होंने जोहानिसबर्गके ब्रिटिश भारतीय संघ द्वारा एशियाई विरोधी नगरपालिका-कानूनोंके विरुद्ध की गई आपत्तिपर भेजा है। ये कानून समय-समयपर ऑरेंज रिवर उपनिवेशकी नगरपालिकाओंने बनाये हैं और लेफ्टिनेंट गवर्नरने स्वीकृत किये हैं। दूसरा पत्र आदिवासी रक्षक समाजके मंत्री श्री एच॰ आर॰ फॉक्सबोर्नका है जो उन्होंने श्री लिटिल्टनको[1] भेजा है। ये दोनों एक-दूसरेसे बिलकुल उलटे हैं। उपनिवेश-सचिवने लिखा है कि सरकारका इरादा ऐसा कोई कानून बनानेका नहीं है जिससे कि ऑरेंज रिवर उपनिवेशकी नगरपालिकाओंके वर्तमान स्थानिक शासन-अधिकारोंमें किसी प्रकारकी कमी हो। हमारी सम्मतिमें यह इस प्रश्नकी सफाई स्वीकार कर लेना है। ब्रिटिश भारतीय संघने इन अधिकारोंको कम करनेकी माँग कभी नहीं की क्योंकि लेफ्टिनेंट गवर्नरको पहले ही निषेधाधिकार प्राप्त है। जबतक लेफ्टिनेंट गवर्नर मंजूरी न दें तबतक कोई भी उपनियम लागू नहीं होता और ऑरेंज रिवर उपनिवेश तक में हमें ऐसे किसी कानूनका पता नहीं जो लेफ्टिनेंट गवर्नरको किसी नगरपालिकाके बनाये हुए उपनियमोंपर मंजूरी देनेके लिए मजबूर करता हो। इसके विपरीत परम श्रेष्ठ लेफ्टिनेंट गवर्नरको हिदायतें दी गई हैं कि वे किसी भी रंगभेदकारी कानूनपर मंजूरी न दें। और यह सभी मानते हैं कि जब वे सारे उपनिवेशके कानूनोंके विषयमें ऐसा नहीं कर सकते तब वे उपनिवेशकी किसी खास नगरपालिकामें लागू कानूनोंके विषयमें भी ऐसा नहीं कर सकते। उपनिवेश-सचिवने जो कारण बताया है वह व्यंग्यात्मक है। उन्होंने लिखा है "चूँकि उपनिवेशमें ब्रिटिश भारतीयोंकी संख्या इतनी थोड़ी है, इसलिए मेरा खयाल है कि आप भी मानेंगे कि आपके उठाये प्रश्नका व्यावहारिक महत्त्व बहुत नहीं है।" व्यावहारिक शब्दके नीचे हमने रेखा खींची हुई है। इसका अर्थ क्या है? इससे सिर्फ यह प्रकट होता है कि ऑरेंज रिवर उपनिवेशके दरवाजे ब्रिटिश भारतीयोंके लिए सदा बन्द रहेंगे। और जो कोई ब्रिटिश भारतीय वहाँ जायेगा वह इन प्रतिबन्धक अधिकारोंके बावजूद वैसा करेगा और यदि वह आपत्ति करता है तो उससे यह कह दिया जायेगा कि ये कानून रद नहीं किये जा सकते मुँहतोड़ जवाब दिया जायेगा — अब तो मौका निकल गया है। क्या हम उपनिवेश-सचिवसे पूछ नहीं सकते कि यदि ऑरेंज रिवर उपनिवेशमें इतने थोड़े ब्रिटिश भारतीय हैं तो उनका यह अनावश्यक अपमान क्यों किया जाता है? क्या किसी प्रकारका औचित्य न होते हुए भी किसी समूचे राष्ट्रकी भावनाओंको ठेस पहुँचाना व्यावहारिक नीति-निपुणता है? ऑरेंज रिवर उपनिवेशकी नगरपालिकाएँ निस्सन्देह इतना अनुचित काम नहीं करेंगी कि स्वयं उपनिवेश-सचिवके कथनानुसार जो मामला उनके लिए महत्त्वका नहीं है उसपर लेफ्टिनेंट गवर्नर तक की आपत्ति सुननेसे इनकार कर दें। ऐसा वे तभी करेंगी जबकि उन्हें अपनी कुछ भी हानि न पहुँचानेवाले लोगोंका अकारण अपमान करनेमें आनन्द आता हो। परन्तु उपनिवेश-सचिवके पत्रकी चर्चा हम अधिक नहीं करेंगे। हमें प्रसन्नता है कि ब्रिटिश भारतीय संघ इस मामलेमें पहले ही कदम उठा चुका है और उच्चायुक्तको ऐसा प्रार्थनापत्र भेज चुका है।

1. आल्फ्रेड लिटिल्टन, उपनिवेश-मन्त्री १९०३-५।

शिष्टमण्डलने कुछ और भी शिकायतें बताईं जिनपर लॉर्ड सेल्बोर्नने आवश्यक ध्यान देनेका वचन दिया है।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन ८–७–१९ ५

११. भारतमें नमकपर कर

डॉ० हचिन्सन द्वारा कड़ी आलोचना

भारतमें नमकपर कर है इसके विरोधमें हमेशा आलोचनाएँ हुआ करती हैं। इस बार सुविख्यात डॉ० हचिन्सनने इसकी आलोचना की है। वे कहते हैं कि जापानमें इस प्रकारका कर था वह अब समाप्त कर दिया गया है। फिर भी ब्रिटिश सरकार इसे कायम रखती है, यह बड़ी शर्मकी बात है। यह कर तुरन्त बन्द कर देना चाहिए। नमक ऐसी चीज है जिसकी आहारमें आवश्यकता होती है। भारतमें कुष्ठ रोग बढ़ रहा है उसका कारण नमक-कर है ऐसा कुछ अंशमें कहा जा सकता है। डॉ० हचिन्सन मानते हैं कि नमक-कर एक जंगली रिवाज है और ब्रिटिश सरकारके लिए अशोभनीय है।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन ८–७–१९ ५

१२. पत्र : दादा उस्मानको

[जोहानिसबर्ग]
जुलाई ८, १९ ५

सेठ दादा उस्मान

आपका पत्र मिला। मुझे लगता है आपके फ्राइहीड जानेकी पूरी जरूरत है। वहाँ व्यवस्था किये बिना आप कुछ नहीं कर सकेंगे ऐसी आशंका है। मुझसे यहाँ बैठे-बैठे कुछ नहीं होता। यदि जुर्माना हुआ तो आपकी गैरहाजिरीमें दूकान खुली रखनेकी सिफारिश नहीं कर सकूँगा।

दूकानकी अपीलपर बहुत कुछ निर्भर रहेगा। उस अपीलके सम्बन्धमें पूरी-पूरी सावधानी रखवाएँ। उस अपीलमें कौन पैरवी करेगा यह लिखें। उसमें जीत हो तो दूकान फिर खोल सकेंगे। बीचमें आप टाउन क्लार्क आफिस जाकर मिलेंगे तो फायदा होना सम्भव है।

अब्दुल्ला सेठ हिसाब न दें तो मुझे घबरानेकी जरूरत दिखाई नहीं देती। दादा सेठको ज्यादा पैसा मिलेगा यह आशा तो छोड़ ही दी है। इसलिए घबरानेका कारण तनिक भी नहीं है।

मो० क० गांधीके सलाम

सेठ दादा उस्मान
बॉक्स ८८
व्रीहीड

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें गुजरातीसे : पत्र-पुस्तिका (१९ ५), संख्या ५८२

१. देखिए खण्ड ४, पृष्ठ १०७, १८७–८८ और १९४।

१५ पत्र उपनिवेश-सचिवको

जोहानिसबर्ग
जुलाई ११, १९०५

सेवामें
माननीय उपनिवेश-सचिव
प्रिटोरिया

महोदय

तारीख ७ के गवर्नमेंट गज़ट के पूरकमें प्रकाशित अध्यादेशके मसविदेकी उपधारा १ का जो उपनिवेशके कानूनोंको नगरपालिकाकी विधि-संहिताको सामान्य रूपसे संशोधित करने के विषयमें है, मुझे विनयपूर्वक अपने संघकी ओरसे विरोध करना पड़ रहा है।

यह देखते हुए कि एशियाई-विरोधी कानून स्थानीय सरकार और साम्राज्य सरकारके विचाराधीन है, मेरा संघ यह निवेदन करनेकी धृष्टता करता है कि नगरपालिकाओंको एशियाई बाजारों के संचालनका अधिकार देना असामयिक है और वैसा करनेका मंशा उपनिवेशके ब्रिटिश भारतीयोंकी भी मान प्रतिष्ठाको नुकसान पहुँचाना है। १८८५ के कानून ३ में सरकारी अंकुशका विधान है और यह देखते हुए कि ट्रान्सवालकी नगरपालिकाएँ बहुत हद तक रंग-विद्वेषसे परिचालित होती हैं मेरा संघ नम्रतापूर्वक निवेदन करता है कि एशियाई बाजारों के संचालनका अधिकार नगरपालिकाओं या स्थानीय निकायोंको देना ब्रिटिश भारतीयोंके प्रति अन्याय होगा।

इसलिए मेरा संघ आशा करता है कि सरकार उक्त धाराको वापस ले लेगी और जब तक उपनिवेशमें ब्रिटिश भारतीयोंकी स्थितिके प्रश्नको कोई अन्तिम आकार नहीं दे दिया जाता इस मामलेको रोक रखा जायेगा।

आपका आज्ञाकारी सेवक
अब्दुल गनी
अध्यक्ष
ब्रिटिश भारतीय संघ

[अंग्रेजीसे]
इंडियन ओपिनियन २२-७-१९०५

१७ पत्र हाइम व कास्पर्सको

[जोहानिसबर्ग]
जुलाई १३ १९ ५

श्री हाइम व कास्पर्स
पो ऑ बॉक्स २६१
जोहानिसबर्ग

प्रिय महोदय

विषय मृत अब्दुल करीमकी जायदाद

मुझे अफसोस है कि आपने जो प्रपत्र अनुवादके लिए मेरे पास छोड़ दिया था उसे मैंने अभी बहुत थोड़ा ही किया है। अब भी २४ घने लिखे हुए पन्ने अनुवादके लिए शेष हैं। मुझे कदाचित् यह कहनेकी जरूरत नहीं है कि यह अनुवाद बहुत ही महँगा पड़ेगा। जितना काम मैंने किया है उसकी रकम २ पौंडसे अधिक हो गई है और समाप्त करते-करते यह लगभग १२ पौंड हो जायेगी। फिर भी मैंने जो कुछ अबतक पढ़ लिया है उससे जान पड़ता है कि पोरबन्दरमें मेरे प्रतिनिधिको प्रमाणित नकल पानेमें बहुत चक्करका रास्ता अख्तियार करना पड़ा है। उसका कारण कानूनका परिवर्तन है जिसके मुताबिक उन सम्बन्धित व्यक्तियोंके अतिरिक्त जो अदालतके अधिकारक्षेत्रमें आते हैं कोई दूसरा व्यक्ति प्रमाणित नकलें नहीं पा सकता। बहरहाल यदि आप मुझे अनुवादका काम जारी रखनेको कहें तो मैं वैसा करूँगा। आपका पूरा अनुवाद देनेमें मुझे लगभग एक हफ्ता लग जायेगा। क्योंकि मेरी वर्तमान व्यस्तताओंके कारण मेरे लिए उसपर पूरे दो दिन लगाना सम्भव नहीं है जो इस कामके लिए आवश्यक है। मैं सिर्फ थोड़ा-सा समय रोज इस कार्यमें लगा सकता हूँ।

आपका विश्वासपात्र
मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]

पत्र-पुस्तिका (१९ ५) संख्या ९४९

१८. पत्र : उमर हाजी आमदको

[जोहानिसबर्ग]
जुलाई ११, १९०५

सेठ श्री उमर हाजी आमद,

आपका पत्र मिला। अखबारकी कतरन वापस भेजता हूँ। इससे मालूम होता है कि ओपिनियन का प्रभाव बढ़ता जा रहा है।

इसके साथ अंग्रेजीका पत्र वकीलको पढ़ानेके इरादेसे भेज रहा हूँ। वसीयतके अनुसार अदालतकी तरफसे किसी ट्रस्टीकी नियुक्ति होनी चाहिए। बादमें जब कागज-पत्र यहाँ आयेंगे तब जायदाद आप दोनोंके नाम होगी। फिर पट्टा दर्ज होगा। मैंने जो अंग्रेजीमें लिखा है वह आप समझ जायेंगे, इसलिए ज्यादा विस्तारसे नहीं समझाता।

मो० क० गांधीके सलाम

सेठ उमर हाजी आमद झवेरी[1]
बॉक्स ४४१
डर्बन

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें गुजरातीसे : पत्र-पुस्तिका (१९०५), संख्या ९५१

१९. पत्र : टाउन क्लार्कको[2]

[जोहानिसबर्ग]
जुलाई १८, १९०५

सेवामें
टाउन क्लार्क
जोहानिसबर्ग

महोदय,

विषय : भारतीयोंकी ट्रामगाड़ियोंमें यात्रा

इस विषयमें हमारी जो बातचीत हुई थी उसपर मैंने शान्ति और धीरजसे विचार किया है और अपने मुवक्किलसे सलाह-मशविरा कर लिया है। यदि इस बातका निश्चित आश्वासन दिया जा सके कि नई ट्रामगाड़ियोंमें भारतीयोंको यात्रा करनेकी सुविधाएँ दी जायेंगी तो मेरा आसामी अदालतमें जाँच-मुकदमा दायर नहीं करेगा। किन्तु यदि ऐसा नहीं हो सके तो यह आवश्यक जान पड़ता है कि इस मामलेका निश्चित फैसला करा लिया जाये। मेरा व्यक्तिगत अनुभव यह रहा है कि जहाँ कुछ अधिकारोंका अकारण अभाव मान लिया गया है वहाँ ऐसी मान्यताके बरकरार ही

१. मूल गुजरातीमें जौहरी है।
२. देखिए खण्ड ४, पृष्ठ ५ ।

भागेका प्रबन्ध करनेका नियम-सा बन जाता है और पहले जिस प्रश्नपर बातचीत हो सकती थी वहाँ नया प्रबन्ध हो जानेपर निश्चित रूपसे ऐसे अधिकारी या अधिकारियोंके खिलाफ निर्णय हो जाता है? *इसलिए मैं यह माननेकी धृष्टता करता हूँ कि ऊपर सुझाया गया प्रस्ताव बिलकुल* संगत है।

आपका आज्ञाकारी सेवक
मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]

पत्र-पुस्तिका (१९०५) संख्या ९५९

२० केप प्रवासी प्रतिबन्धक अधिनियम

केप टाउनकी ब्रिटिश भारतीय समिति (ब्रिटिश इंडियन लीग)ने केप प्रवासी-अधिनियमपर अमलके विषयमें उपनिवेश-सचिवको एक प्रार्थनापत्र भेजा था। उसके उत्तरमें उनके दफ्तरसे समितिके अध्यक्षको जो पत्र मिला है उसे हम इसी अंकमें अन्यत्र प्रकाशित कर रहे हैं। समितिने भारतीय भाषाओंको मान्यता देनेके विषयमें जो प्रार्थना की थी उसे उपनिवेश-सचिवने एक वाक्यमें ही उड़ा दिया है। हमें आशा है कि समिति इस प्रश्नको यहीं न छोड़ देगी। उपनिवेश-सचिवके पत्रमें 'निवासी' शब्दका जो अर्थ लगाया गया है वह अत्यन्त आपत्तिजनक है। उपनिवेशका प्रत्येक भारतीय यह साबित नहीं कर सकता कि वह उपनिवेशमें अचल सम्पत्तिका मालिक है या उसके स्त्री और बाल-बच्चे यहाँ मौजूद हैं। यदि इसी अर्थपर आग्रह किया जाता है तो उपनिवेश-सचिवका इरादा ऐसा करनेका न होते हुए भी इससे अनावश्यक कठिनाइयाँ हुए बिना न रहेंगी। हो सकता है कि कोई व्यक्ति केपमें अपना रोजगार छोड़ दे, केवल कुछ समयके लिए भारत चला जाये और अपने कामकी सारसँभालके लिए केवल [illegible] छोड़ जाये क्योंकि उसकी स्त्री और उसके बाल-बच्चे उपनिवेशमें नहीं हैं या वह अचल सम्पत्तिका मालिक नहीं है। इसका अर्थ ऐसा उन गरीब दूकानदारोंकी बिलकुल बरबादी [illegible] अपना रोजगार अस्थायी रूपसे अपने मैनेजरके सुपुर्द करके भारत चला गया हो। यह उदाहरण काल्पनिक भी नहीं है क्योंकि हम जानते हैं कि ऐसे अनेक भारतीयोंकी केपमें फिर आकर रोजगार करनेकी कल्पनाएँ सचमुच खण्डित हो चुकी हैं। इस कारण व्यापारका तकाजा पूरा करनेके लिए [illegible] जो कुछ कर सकते हैं वह है उन लोगोंके अधिकार मान्य कर लेना जो फिर यहाँ [illegible] अपना रोजगार या नौकरी छोड़कर चले गये हों। [illegible] क्योंकि [illegible] उनके [illegible] अनुसार कानूनके [illegible] बिलकुल नहीं है [illegible] है। [illegible] ब्रिटिश भारतीय [illegible] उसका पुनर्विचार करा सकेगी। अब तो हम उनका अधिनियम सम्मान करते हुए भी यह कहना चाहते हैं कि यह कानून अन्यायपूर्ण और अनुचित है और केपवासी ब्रिटिश भारतीयोंको अवश्य ही [illegible] देना।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, १ [illegible]

१. [illegible]

२१. श्री वाछा[1] और भारतीय

राष्ट्रीय महासभाके संयुक्त मंत्री श्री वाछाने हमें एक पत्र लिखा है, जो प्रोत्साहन भावना और सुझावोंसे भरा है। हम उसका मुख्य भाग अन्य स्तम्भमें प्रकाशित करते हैं। उन्होंने एक मिलता-जुलता उदाहरण दिया है, जो दक्षिण आफ्रिकामें ब्रिटिश भारतीयोंके दर्जेके संबंधमें चालू विवादकी दृष्टिसे महत्त्वपूर्ण है। उन्होंने लिखा है

> आपके यहाँके प्रवासी यूरोपीय यह भूल गये मालूम पड़ते हैं कि खुद व्यापारी और व्यवसायी ईस्ट इंडिया कम्पनीके विरुद्ध जो उन्हें १८११ का कानून बनने तक भारतमें व्यापार करनेसे मना करती थी बड़ी तीखी भाषामें शिकायत किया करते थे। यहाँ जो आते थे वे अनधिकारी कहे जाते थे परन्तु अनधिकारियोंमें धीरता और लगन थी।

और हम जानते हैं कि वे सफल हुए। दक्षिण आफ्रिकाकी हालतोंमें भी लगन और धीरता आवश्यक है। १८१३ में न्याय जितना उनके पक्षमें था उसकी अपेक्षा अब हमारे पक्षमें अधिक है। दक्षिण आफ्रिकामें ब्रिटिश भारतीयोंको अपने दर्जेमें सुधार करवानेका दोहरा अधिकार है। १८५८ की घोषणाके विरुद्ध कुछ भी क्यों न कहा जाये उसमें उन्हें ब्रिटिश प्रजाके सम्पूर्ण अधिकारोंका आश्वासन दिया गया है। वे यह दिखा चुके हैं कि दक्षिण आफ्रिकामें उनका जीवन परिश्रमी, संयमी, कानूनका पालन करनेवाला और ईमानदारीका रहा है और जैसा बहुत बार माना जा चुका है, वे देशका विकास करनेमें बहुत उपयोगी सिद्ध हुए हैं। जिम्मेदार मन्त्रियोंने उनसे बार-बार वादे भी किये हैं कि दक्षिण आफ्रिकामें उनके साथ विशेषतः उनके नागरिक अधिकारोंके बारेमें न्याय और समानताका बरताव किया जायेगा।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन १५–७–१९ ५

२२. नेटालमें मकान-कर

नेटाल गवर्नमेंट गज़ट में मकान-करके सम्बन्धमें जो विधेयक प्रकाशित हुआ है उसके विरुद्ध लोगोंकी भावना बढ़ती जाती है। मैरित्सबर्गमें १ तारीखकी रातको इस विषयपर विचार करनेके लिए एक आम सभा की गई थी। डर्बनमें गुरुवारकी शामको सभा की गई है। इस विधेयकके विरुद्ध प्रश्न उठानेके लिए बहुत-से लोगोंने अलग-अलग अर्जियोंपर हस्ताक्षर किये हैं। प्रस्तावित मकान-कर व्यक्ति-करसे भी अधिक अप्रिय हो गया है। इस विधेयकमें सूचित प्रस्ताव बहुत ही अपूर्ण हैं और हमेशाके लिए तो सम्भव हैं ही नहीं, उस थोड़े समयके लिए मंजूर कराना जोखिम-भरा है। यदि यह कर न्यायपूर्वक लगाया जाय तो स्थायी करके रूपमें यह व्यक्ति-करसे बेहतर कहा जा सकता है। व्यक्ति-कर तो मताधिकारके बिना सहन करनेके योग्य है ही नहीं यद्यपि कुछ देशोंमें यह वसूल किया जाता है। मकान-करके विरुद्ध लोगोंकी जो

१. दिनशा एदलजी वाछा (१८४४–१९३६) १९०१ में भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेसके कलकत्ता अधिवेशनके अध्यक्ष; बम्बईकी विधान परिषदके नामजद सदस्य; देखिए खण्ड ५, पृष्ठ ४२१।

विरोधी भावना है उसकी वजहसे या तो उसका रूप बदल देना चाहिए और ऐसा न हो तो उसे हटा ही देना चाहिए, ताकि व्यक्ति-वर्गके प्रति विरोधी भावना पैदा न हो।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन १५-७-१९०५

२३. जापान द्वारा सन्धिकी तैयारी

सखेलियन टापूकी जीत

जापानियोंने सखेलियन नामके रूसी टापूपर कब्जा करके उसमें अपनी फौजें उतार दी हैं। यह टापू ६७ मील लम्बा और २० से लेकर १५ मील तक चौड़ा है। इसका क्षेत्रफल २४५५ वर्ग मील है अर्थात् यह सौराष्ट्रसे अधिक विस्तृत है। इस टापूका दक्षिणी भाग सन् १८७५ तक जापानके कब्जेमें था परन्तु इसके बाद इसे जापानने क्यूराइल टापूके[1] बदलेमें रूसियोंको दे दिया था। इसमें मिट्टीके तेलके बहुतसे कुएँ हैं। यहाँ कोयला भी बहुत निकलता है। इतने बड़े टापूपर जापानी अधिकार हो जानेका चालू सन्धिकी तैयारीपर महत्त्वपूर्ण प्रभाव पड़ा है। टाइम्स पत्रका कहना है कि इस सारे युद्धके दौरानमें अन्य किसी घटनाने रूसी लोगोंको इतना दुःख नहीं पहुँचाया था। इस घटनाने यह बता दिया है कि रूसी अपनी सीमाकी रक्षा करनेमें सर्वथा असमर्थ हैं। इस टापूके रूसके हाथमें आये हुए भी ५ वर्ष पूरे नहीं हुए हैं। रूसने इसको राजनीतिक दाँवपेचोंसे अपने कब्जेमें किया था और इससे जापानको नुकसान उठाना पड़ा था। यदि इस भारी युद्धका प्रसंग न आता तो यह टापू आज भी रूसके हाथमें ही रहता। बहुत अरसेसे जापानने इस टापूपर अपनी नजर लगा रखी थी और इस सामयिक जीतसे यह प्रयास किया जा रहा है कि वाशिंगटनकी संधि-वार्तामें जापानकी स्थिति बहुत मजबूत रहेगी। संधि-समितिकी बैठक होते-होते हमें यह समाचार सुननेको मिल सकता है कि मार्शल ओयामाने रूसी सेनाध्यक्ष लिनेविचको करारी चोट दी है। जापानी सभा अस्थायी युद्ध-विराम करनेसे इनकार करती है और बारबार लड़ाईसे रूसको वास्तविक संधिके लिए मजबूर करनेका उसका इरादा है। और वह साहसके साथ कहती है कि संधिके सिवा दूसरा चारा नहीं है, यह वह बिना देरी और संधिकी वार्ता करनेवाले रूसी प्रतिनिधियोंको अन्तमें जापानकी माँगें मंजूर करनी ही पड़ेंगी।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन १५-७-१९०५

1. उत्तर प्रशान्त महासागरमें एक छोटा-सा द्वीप-समूह।

२४ पत्र छगनलाल गांधीको

२१-२४ कोर्ट चेम्बर्स
नुक्कड़ रिसिक व ऐंडर्सन स्ट्रीट्स
पो ऑ बॉक्स ६५२२
जोहानिसबर्ग
जुलाई १५, १९०५

चि छगनलाल

तुम्हारा पत्र मिला। तुम्हारे पास आज तक का हिसाब भेजा जा चुका है। उसपर से भूकम्प कोषमें[1] जो रकमें मिली हैं तुम्हें उनकी जानकारी हो जायेगी। कुमारी न्यूफ्लीथ द्वारा भेजी गई डर्बन बाढ़ कोषकी रकमें भी उसमें शामिल हैं। वे तुम भी उनसे ले सकते हो। पर्चोंके लिए कोरे पुर्जी-कागज और कच्ची किताबोंके लिए गड्डियाँ मिल गई हैं। तुम्हारे निरीक्षण सम्बन्धी उल्लेखको मैं ठीक-ठीक नहीं समझा। तुम्हें चाहिए कि मुझे निश्चित उदाहरण भेजो। तब मैं कार्य-पद्धतिको अच्छी तरह समझ सकूँगा। मैं यह भी जानना चाहूँगा कि नुकसान कहाँ हुआ है या कहाँ होता जा रहा है। डाह्या जोगीका पैसा मिल गया है। यह रकम १ पौंड २ शि ६ पें है। मुझे मालूम है कि सामग्री देरसे भेजी गई थी। जितनी मुमकिन है, उतनी सामग्री आज भेज रहा हूँ। यदि कुछ बची तो वह कल भेज दी जायेगी। वेस्टने[2] मुझे लिखा है कि मगनलालको सितम्बरके करीब रवाना होना और दिसम्बरमें लौटना चाहिए। उन्होंने यह भी कहा है कि तुम्हारी ऐसी राय है। यदि मगनलालके बिना काम चलाया जा सकता हो तो मुझे कोई आपत्ति नहीं है। काका और आनन्दलालका क्या हाल है? क्या पिल्ले अब बिलकुल अच्छा हो गया है? मगनलालको तमिल पुस्तकें मिल गईं? उसने पढ़ाई शुरू कर दी है?

मोहनदासके आशीर्वाद

[पुनश्च]

भाई एम सी ए जोहानिसबर्गको एक सालके लिए ६ शि भेजो। पैसा श्री मैकिंटायरसे[3] मिल गया है।

मो० क० गां०

भूकम्प और कुमारी न्यूफ्लीथके हिसाबके पर्चे अलग-अलग बनेंगे।

श्री छगनलाल खुशालचंद गांधी
मार्फत इंटरनेशनल प्रिंटिंग प्रेस
फीनिक्स

मूल अंग्रेजी प्रतिकी फोटो-नकल (एस एन ४२८५) से

१. देखिए खण्ड ४ पृष्ठ ४५८।

२. अल्बर्ट वेस्टसे गांधीजीकी मुलाकात १९०४ में जोहानिसबर्गके एक अन्नाहार-गृहमें हुई थी। वे प्लेगके समय रोगियोंकी शुश्रूषाके लिए जोहानिसबर्गमें गांधीजीके साथ जाने के। परन्तु उनके बजाय गांधीजीने इंडियन ओपिनियन और उसके छापेखानेका प्रबन्ध उनके हाथों सौंप दिया। गांधीजी उनके विषयमें लिखते हैं उस दिनसे लेकर मेरे दक्षिण आफ्रिका छोड़नेके दिन तक वे मेरे सुख-दुःखके साथी रहे। देखिए, आत्मकथा भाग ४ अध्याय १६।

३. एक स्कॉच थियोसॉफिस्ट जो गांधीजीके मुंशी थे। देखिए, आत्मकथा (गुजराती), भाग ४ अध्याय २१।

२५ पत्र उमर हाजी आमद झवेरीको

[जोहानिसबर्ग]
जुलाई १७, १९०९

सेठ श्री उमर हाजी आमद झवेरी

आपका पत्र मिला। सेठ हाजी इस्माइलके[1] दोनों पत्र वापस भेजता हूँ। उनके लिखनेका ढंग मुझे जरा भी पसन्द नहीं आया। इससे अनुमान होता है कि उनके खर्चपर नियन्त्रण रखना मुश्किल होगा। यदि वहाँ किरायेके बराबर खर्च हो जाता हो तो इस सम्बन्धमें क्या करना उचित होगा यह सोचनेकी बात है।

व्यापारमें पोरबन्दरका खर्च पूरा करने लायक मुनाफा न हो तो यह मूल पूँजीको खाना ही है। मुझे लगता है कि फिलहाल कलहमें वृद्धि रोकनेके लिए पोरबन्दरको १ पौंडके हिसाबसे भेजना पड़ेगा। मैं आज सेठ हाजी इस्माइलको पत्र[2] लिख रहा हूँ।

मो० क० गांधीके सलाम

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें गुजरातीसे पत्र-पुस्तिका (१९ ९) संख्या ९७८

२६ पत्र हाजी इस्माइल हाजी अबूबकरको

[जोहानिसबर्ग]
जुलाई १७, १९ ९

श्री सेठ हाजी इस्माइल हाजी अबूबकर,

उमर सेठका पत्र आया है। वे उसमें लिखते हैं कि यह खर्च ज्यादा है। आपके पिछले दो पत्र भी मैंने पढ़े। मुझे लगता है कि आपने जो पत्र लिखे हैं वे जितने चाहिए उतने शिष्टतापूर्ण नहीं हैं। उमर सेठ आपके काका हैं। इसलिए आपकी तरफसे उनको लिखा पत्र आपके खानदानी गौरवके अनुकूल शिष्टतापूर्ण होना चाहिए।

खर्चके बारेमें जो उमर सेठ कहते हैं वह विचारणीय है। जब उमर सेठ विलायत गये तबमें और आपके समयमें बड़ा अन्तर है। इस समय किराये आधे हो चुके हैं और अभी घटेंगे। यहाँका खर्च किरायेकी आयमें से पूरा होता है। इसलिए मूल पूँजीपर गुजारा करनेका अवसर आ गया है। मुझे लगता है कि आपकी व्यवस्था ऐसी है कि मूल पूँजीपर गुजारा करनेकी बात नहीं उठनी चाहिए। जिन्होंने पूँजीपर गुजारा किया है ऐसे करोड़पतियोंका पैसा भी खतम हो गया है। इसलिए आपको मेरी खास सलाह है कि आप खर्चका सब विचार कर करें। मुझे

१. उमर हाजी आमदके भतीजे।
२. देखिए अगला शीर्षक।

लगता है कि बहुत-कुछ खर्च कम हो सकता है। अपने स्वास्थ्यका ध्यान रखें। कसरत और नियमित भोजनकी खास जरूरत है।

मो० क० गांधीके सलाम

श्री हाजी इस्माइल हाजी अबूबकर आमद झवेरी
पोरबन्दर
काठियावाड़
मारफत बम्बई

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें गुजरातीसे पत्र-पुस्तिका (१९०५) संख्या ६९१

२७. पत्र : 'डेली एक्सप्रेस'को

जोहानिसबर्ग
[जुलाई १७, १९०५ के बाद]

सेवामें
सम्पादक
'डेली एक्सप्रेस'

महोदय,

आपके एक पत्र-लेखकने आपके पत्रके इसी १७ तारीखके अंकमें 'सिर्फ़ सत्य' के उपनामसे ब्रिटिश भारतीयोंपर आक्रमण किया है। मुझे भरोसा है कि आप मुझे उसका उत्तर देनेका अवसर देंगे। एक सीधी-सादी भारतीय कहावत है कि "आप घोड़ेको पानीके पास ले जा सकते हैं पर उसे पानी पीनेके लिए बाध्य नहीं कर सकते।" इसी तरह जो लोग अपने सम्मुख उपस्थित तथ्योंसे आँखें मूँद लेते हैं उनकी पक्की धारणाएँ मिटाई नहीं जा सकतीं। मुझे बहुत आशंका है कि आपका पत्र-लेखक उसी श्रेणीका है। तथापि उसकी जानकारीके लिए मैं फिरसे यह प्रश्न पूछता हूँ — अगर युद्धके पहले केवल तेरह भारतीय (कुली नहीं जैसा कि आपका पत्र-लेखक लिखना पसन्द करता है) दूकानदार, छोटे व्यापारी या फेरीवाले थे तो फिर ब्रिटिश भारतीय संघके अध्यक्षकी चुनौती[1] श्री क्लाइनेनबर्गने मंजूर क्यों नहीं की? याद रखिये कि इन दूकानदारोंके नाम समाचारपत्रोंको भेज दिये गये हैं। मैं देखता हूँ कि आपका पत्र-लेखक एक कदम और आगे बढ़ गया है। वह साहसपूर्वक यह कहता है कि इस तेरहकी संख्यामें दूकानदार, छोटे व्यापारी और फेरीवाले भी शामिल हैं। दुर्भाग्यसे उसने एक अशुभ[2] संख्या पसन्द की है। मैं आपके पास १० पौंड जमा करनेको तैयार हूँ। अगर मैं दो मध्यस्थोंके सामने यह साबित न कर सकूँ कि युद्धके पूर्व पीटर्सबर्गमें भारतीय दूकानदारों छोटे व्यापारियों और फेरीवालोंकी संख्या आपके पत्र-लेखककी बताई संख्यासे दुगुनीसे भी ज्यादा थी तो वह रकम आपके पत्र-लेखकके सूचित किये हुए किसी भी भारतीय-विरोधी संघको

१. देखिए खण्ड ४, पृष्ठ ३५८।
२. पश्चिमके देशोंमें १३ की संख्या अशुभ मानी जाती है।

दे दी जाये। शर्त सिर्फ यह है कि अगर निर्णय मेरे पक्षमें हो तो आपका पत्र-लेखक भी ब्रिटिश भारतीय संघको उतनी ही रकम देनेके लिए तैयार हो। इन दो मध्यस्थोंमें से एकका चुनाव आपका पत्र-लेखक करेगा और दूसरेका मैं। एक सरपंच चुन लेनेका अधिकार उन दोनोंको होगा। यह हुआ सिकरैमसैम के आँकड़ोंके बारेमें।

जहाँतक इस आरोपका सम्बन्ध है कि असली ब्रिटिश भारतीयों द्वारा मुझे जा रहे हैं मैं आपके पत्र-लेखकका ध्यान सर जेम्स हुलेटकी इस साक्षीकी[1] ओर दिला सकता हूँ जो उन्होंने भारतीय कार्य-आयोगके सामने इस विषयमें दी थी कि अधिक बड़ा कुकर्मी कौन है — यूरोपीय या भारतीय? आपके पत्र-लेखकके अन्य आरोपोंके बारेमें जो उसे दी गई जानकारी पर आधारित हैं, मैं केवल इतना ही कह सकता हूँ कि समझदार लोग उनकी सच्ची कीमतको समझकर ही उनका मूल्य आँकेंगे। अगर भारतीय कोई भी बेईमानीका व्यापार कर रहे हैं और पत्र-लेखकको उसकी जानकारी है तो निश्चय ही उसका इलाज उसीके हाथोंमें है। और अगर व्यापारिक परवानोंका प्रश्न अबतक अन्तिम रूपसे तय नहीं हुआ तो उसका कारण यह है कि सिकरैम सैम और उनके साथी ब्रिटिश भारतीयोंके सुझाये हुए उस अत्यन्त उचित समझौतेको भी मान्य करनेको तैयार नहीं हैं जिसके द्वारा नये परवानोंका नियमन नगर-परिषदके सदस्योंको सौंप दिया जायेगा और इस परिषदका चुनाव अधिकतर सिकरैमसैम और उनके साथी ही करेंगे। महाशय मुझके पूर्व ब्रिटिश भारतीय प्रश्नका कम पैसा या उसका थोड़ा-बहुत अनुभव आपको है। साथ ही आपको ब्रिटिश भारतीयोंका अनुभव भी है। पत्रकारितामें आपने स्वतन्त्र रुख अख्तियार किया है। मुझे निश्चय है आप यह नहीं चाहते कि ब्रिटिश साम्राज्यके संघटक अंगोंके बीच जातीय विद्वेष बढ़े। संभवतः आप यह भी जानते होंगे कि आपके पत्र-लेखकने जिन तथ्योंको पेश किया है उनमें से कुछ असत्य हैं। जिन वक्तव्योंके प्रत्यक्ष मिथ्या होनेमें कोई सन्देह नहीं है उनकी भूल सुधारकर क्या आप अपने सुयशका ही पालन नहीं करेंगे? भारतीय केवल न्याय चाहते हैं अनुग्रह नहीं। ब्रिटिश संडेके नीचे न्याय दुर्लभ वस्तु नहीं होनी चाहिए।

आपका आदि
मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, २९-७-१९०५

[1] देखिए खण्ड १ पृष्ठ ४८८–८९।

सम्मान करना हम सबका फर्ज है। उनके धर्मोपदेशके सम्बन्धमें जो उसमें उनके साथी हैं वे बादमें जो करना चाहेंगे वह करेंगे। इसलिए मुझे लगता है कि आपको उनका सम्मान करनेमें पीछे नहीं हटना चाहिए। चन्दा उगाहनेके कार्यके लिए मैंने अपनी अनुमति नहीं दी है और न देनेका विचार है।

मो० क० गांधीके यथायोग्य

श्री आर॰ पी॰ भट्ट
बॉक्स ५२९
डर्बन

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें गुजरातीसे पत्र-पुस्तिका (१९ ५) संख्या ७२७

३०. पत्र मेघराज व मूडलेको

[जोहानिसबर्ग]
जुलाई २१, १९ ५

प्रिय महोदय,

आपका ९ तारीखका पत्र मिला। मेरी समझमें अभीतक जोहानिसबर्गमें चन्दा इकट्ठा करनेकी कोई जरूरत नहीं है। मेरे पास एक शिकायत भी आ चुकी है कि यहाँ चन्दा इकट्ठा[1] करनेके सिलसिलेमें मेरे नामका उपयोग किया जा रहा है। मैं चाहता हूँ कि आप इस स्वागतको कोई धार्मिक रूप न दें। आप जानते ही होंगे कि आर्यसमाजके उपदेश और सनातन हिन्दू धर्मके उपदेशोंमें अन्तर है और सनातनियोंकी ओरसे एक शिकायत मेरे पास भेजी गई है। भारतसे आनेवाले किसी भी विद्वान भारतीयका आदर करना हमारा कर्तव्य है। मैं तो आपसे यह चाहूँगा कि भारतीयोंके सब धर्मोंकी ओरसे ऐसे व्यक्तियोंका उचित स्वागत किया जाये किन्तु यह तभी हो सकता है जब उसमें कोई साम्प्रदायिक तत्त्व न हो और, उसके बाद जो आर्यसमाजके उपदेशोंमें दिलचस्पी रखते हों वे उसे विशेष रूपसे देख लें।

आपका विश्वस्त
मो० क० गांधी

श्री वी॰ ए॰ मेघराज व ए॰ मूडले
पो॰ ऑ॰ बॉक्स १८२
डर्बन

[अंग्रेजीसे]

पत्र-पुस्तिका (१ ५) संख्या ७१

1. श्री रामचन्द्र [illegible]।

३१. पत्र : कैप्टन फॉउलको

[जोहानिसबर्ग]
जुलाई २१, १९०५

कैप्टन फॉउल
पो० ऑ० बॉक्स ११९९
जोहानिसबर्ग

प्रिय कैप्टन फॉउल,

देखता हूँ कि खुफिया पुलिसके लोग अभीतक बिना अनुमतिपत्रवाले भारतीयोंकी खोजमें लगे हुए हैं। अपनी खोजमें उन्होंने १६ सालकी उम्रके लड़कोंकी भी जाँच की है। वे उपनिवेशमें आपके आश्वासनपर रह रहे हैं — विशेषतः वह एक लड़का जिसके बारेमें मैंने आपको लिखा है। महोदय, वे देखनेमें १६ सालसे कमके हैं। या जब वे यहाँ आये थे तब तो अवश्य ही इसी उम्रके रहे होंगे। दोष इतना ही है कि उनके माता-पिता यहाँ नहीं हैं। या तो वे अनाथ हैं और अपने स्वाभाविक अभिभावकोंकी देख-रेखमें रहते हैं, या ऐसे हैं जिनका लालन-पालन उनके माता-पिताकी जगह वे लगनेवाले रिश्तेदार कर रहे हैं। इसलिए मैं आशा करता हूँ कि आप खुफिया पुलिसके लोगोंको यह आज्ञा देनेकी कृपा करेंगे कि जबतक मामला तय नहीं होता तबतक वे इन लोगोंको न छेड़ें।

आपका सच्चा,
मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]

पत्र-पुस्तिका (१९०५), संख्या ७२९

३२. श्री ब्रॉड्रिकका बजट

भारत-मन्त्रीने ब्रिटिश लोकसभामें भारतीय राजस्व-लेखेपर विचारके लिए लोकसभाको समितिका रूप देनेके प्रस्तावपर जो बजट-विषयक वक्तव्य दिया उसमें कई विशेषताएँ हैं। यह एक शुभ लक्षण है कि हालके वर्षोंमें श्री ब्रॉड्रिकने अपना वक्तव्य सदाकी भाँति अधिवेशनके अन्तमें पेश करनेके बजाय जब कि बेंचें खाली पड़ी रहती हैं और भारत-मन्त्री उनके सामने भाषणका रस्म पूरा करते हैं, प्रायः प्रथम बार, उसके मध्यमें पेश किया है। यह परिवर्तन सोच-समझकर किया गया है। श्री ब्रॉड्रिकने कहा : अब विचारका काम होगा — उपयोगी आलोचना और अच्छा शासन। उन्होंने यह आशा भी प्रकट की कि इस उदाहरणका आगे भी अनुसरण किया जायेगा, चाहे वे भविष्यमें इस उच्च पदपर रहें अथवा विरोधी पक्षकी बेंचोंपर बैठें। श्री ब्रॉड्रिकने इस अवसरपर अत्यन्त स्पष्ट रूपसे बताया कि बहु-निन्दित भारतने साम्राज्यकी कितनी सेवा की है, और जिन दोनों सेवाओंपर उन्होंने इतना जोर दिया है वे ऐसी हैं कि उनकी ओर दक्षिण आफ्रिकाका ध्यान जाना चाहिए और उनकी सराहना होनी चाहिए।

उन्होंने कहा

> १९०२ और १९०३ में भारतके चौदह करोड़ तीस लाख पौंडके व्यापारमें से छः करोड़ बीस लाख पौंडका व्यापार सीधा ब्रिटेनके साथ था। और गत वर्षके सत्रह करोड़ सैंतालीस लाख और अड़तालीस हजार पौंडके व्यापारमें से सात करोड़ सत्तर लाख पौंडका माल सीधा ब्रिटेनमें आया या ब्रिटेनसे गया था। ब्रिटेनके व्यापारमें यह मात्रा छोटी नहीं है। कुछ लोग कई दृष्टियोंसे इस समय उपनिवेशोंके व्यापारकी भारतके व्यापारके साथ तुलना कर रहे हैं। इसलिए यदि हम इन अंकोंकी तुलना करें तो मैं बतला सकता हूँ कि १९०२ में भारतको ब्रिटेनसे तीन करोड़ पैंतीस लाख पौंडका माल गया था। और यह निर्यात कैनेडा ब्रिटिश उपनिवेशों उत्तरी अमेरिका और आस्ट्रेलियाको किये गये कुल निर्यातके बराबर था। गत वर्ष भारतको किये गये निर्यातका परिमाण बढ़कर चार करोड़ पौंड हो गया था और वह इस देशसे आस्ट्रेलिया कैनेडा और केप उपनिवेशको किये गये कुल निर्यातके बराबर था।

श्री ब्रॉड्रिकको इस सबका स्वाभाविक परिणाम निकालनेमें कोई कठिनाई नहीं हुई। इसलिए उन्होंने आगे कहा

> मुझे विश्वास है कि जब मैं यह कहूँ कि ब्रिटेनके साथ भारतका व्यापार बहुतौर है, तो मुझे आशा है इस सभाका प्रत्येक सदस्य मेरा समर्थन करेगा। भारतके व्यापारमें ब्रिटेनका और ब्रिटेनके व्यापारमें भारतका भाग इतना अधिक है कि साम्राज्यके अन्तर्गत व्यापारके सम्बन्धमें जो भी विचार हों उन सबमें हम भारतको प्रथम स्थान देनेका दावा कर सकते हैं।

श्री ब्रॉड्रिकने जो दूसरा वक्तव्य दिया वह साम्राज्यकी रक्षाके विषयमें था। भारत पचहत्तर हजार ब्रिटिश सैनिकोंके प्रशिक्षणका और एक लाख चालीस हजार ब्रिटिश भारतीय सैनिकोंकी भर्तीका स्थान है, और साम्राज्य इन सब सैनिकोंका किसी भी संकटके समय उपयोग कर सकता है। इन सबका खर्च भारत उठाता है, जो उसकी आठ करोड़ बीस लाख पौंडकी आमदनीमें दो करोड़ पाँच लाख पौंड बैठता है। लॉर्ड रॉबर्ट्ससे लेकर अबतक के सब नामी सेनापतियोंने भारतीय सेनाकी कुशलताकी पुष्टि की है। सर जॉर्ज व्हाइट और उनकी सेनाने बोअर-युद्धके समय अपनी इस तत्परताका प्रभावशाली उदाहरण उपस्थित किया था। ये सब तथ्य अर्थ-पूर्ण हैं। दक्षिण आफ्रिकाके राजनीतिज्ञोंको इन सबका अध्ययन और मनन करना चाहिए। और जब वे ऐसा कर चुकें तब हम उन्हें आदरपूर्वक सलाह देंगे कि वे अपने आपसे यह प्रश्न करके देखें कि क्या विशुद्ध स्वार्थकी दृष्टिसे भी भारतके निवासियोंके साथ निरन्तर बिलकुल ऐसे विदेशियोंका-सा व्यवहार करना लाभप्रद होगा जो कि उनकी ओरसे किसी भी प्रकारके लिहाजके अधिकारी न हों।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन २२-४-१९०५

३२. ट्रान्सवालमें एशियाई 'बाज़ार'

ट्रान्सवालके 'गवर्नमेंट गज़ट' के हालके अंकमें एक अध्यादेशका मसविदा प्रकाशित किया गया है। उसकी कुछ धाराएँ ये हैं:

(१) परिषद लेफ्टिनेंट गवर्नरकी मंजूरीसे केवल एशियाई लोगोंके लिए, बाजारों या अन्य स्थानोंको अलग कर सकती है, कायम रख सकती है और बढ़ा सकती है; लेफ्टिनेंट गवर्नर द्वारा समय-समयपर बनाये गये नियमोंके अनुसार उनका नियन्त्रण और निरीक्षण कर सकती है; और उनकी जमीनों या उनपर बनी इमारतों या अन्य निर्मित चीजोंको उन शर्तोंपर एशियाइयोंको पट्टेपर दे सकती है जो समय-समयपर ऊपर कहे नियमोंके अनुसार तय की जायें।

(२) लेफ्टिनेंट गवर्नर १८८५ के कानून ३ या उसके किसी संशोधनकी धाराओंमें निर्दिष्ट किसी भी बाजारकी जगहों या अन्य स्थानोंको नगरपालिकाकी किसी भी परिषदके नाम हस्तान्तरित कर सकता है; परन्तु ऐसा करते हुए उसके वर्तमान पट्टोंका खयाल रखा जायेगा और ऐसे किसी भी हस्तान्तरणपर हस्तान्तरणके स्टाम्पका कर या रजिस्ट्रीका खर्च या कोई अन्य खर्च नहीं लगेगा और इस प्रकार हस्तान्तरित किया गया कोई भी बाजार या स्थान इस खण्डके उपखण्ड (१) के अन्तर्गत पृथक्कृत बाजार या क्षेत्र माना जायेगा।

(३) इस अध्यादेशके खण्ड २ के नियमोंके अनुसार आवश्यक परिवर्तनोंके साथ किसी परिषदको अधिकार है कि वह चाहे तो ऐसे बाजारों और स्थानोंको बन्द कर दे और इनके लिए दूसरी उपयुक्त जमीनका बन्दोबस्त करे।

(४) इस खण्डका "परिषद" अर्थ किसी भी नगरपालिकाकी परिषदका सूचक होगा फिर वह नगरपालिका चाहे १९ ३ के नगर-निगम अध्यादेशके अन्तर्गत बनी हो चाहे १९ ४ के संशोधित नगर-निगम अध्यादेश या किसी अन्य विशेष कानूनके अन्तर्गत।

जोहानिसबर्गके ब्रिटिश भारतीय संघने 'बाजारों'का नियन्त्रण नगरपालिकाओंको हस्तान्तरित कर देनेके विचारका अविलम्ब प्रतिवाद[1] किया है। हमारी सम्मतिमें इस हस्तान्तरणके विरोधमें की गई आपत्तियाँ अकाट्य हैं। सारा ही एशियाई प्रश्न अभी विचाराधीन है और उसके सम्बन्धमें साम्राज्य सरकार और स्थानीय सरकारके बीच पत्र-व्यवहार हो रहा है। १८८५ का कानून ३ जैसा दोनों पक्षोंने कहा है अस्थायी है और यथाशीघ्र हटा दिया जायेगा। इसलिए कोई भी ऐसा विधान जिसका आधार यह कानून हो और जिससे पाबन्दियाँ बढ़ती हों उस उदार नीतिके अनुरूप नहीं हो सकता जिसका पालन करनेके लिए स्थानीय सरकारें बाध्य हैं। यदि यह बात नहीं है तो भी लिटिलटनके इस वक्तव्यका क्या अर्थ होगा कि कमसे-कम युद्धसे पहलेकी अवस्थाएँ जैसीकी तैसी रहने दी जायेंगी। इसके अतिरिक्त रंगके प्रश्नपर ट्रान्सवालकी नगरपालिकाओं और स्थानिक निकायोंके पूर्वग्रह बड़े प्रबल हैं। वे इसका ढोल पीटनेमें संकोच

१. देखिए "एक अनिश्चित-स्थिति" पृष्ठ १२।

नहीं करते और कुछ नगरपालिकाएँ और निकाय संभव होता है तो इसके लिए हिंसा तक करनेको तैयार रहते हैं। इन परिस्थितियोंमें जब कि भावी स्थिति अनिश्चित है, ट्रान्सवाल सरकार द्वारा नये कानूनका बनाया जाना अजीब मालूम होता है, मानो १८८५ का कानून ३ कानूनकी किताबमें से कभी हटाया ही नहीं जायेगा।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, २२–७–१९०५

३४ एक गुप्त बैठक

हमारे सहयोगी ट्रान्सवाल लीडर ने अपने प्रिटोरियाके संवाददाताका भेजा हुआ इस आशयका एक संवाद प्रकाशित किया है कि परममेष्ठ सर आर्थर लालीने एशियाई-विरोधी सम्मेलन (एंटी एशियाटिक कन्वेंशन) के नेताओंको निजी तौरपर मुलाकात दी। मुलाकातियोंमें श्री लवडे और श्री बोर्क भी शामिल थे। संवाददाताने यह भी लिखा है कि मुलाकात देर तक चली और मुलाकाती सर आर्थरके पाससे पूरे सन्तोषके साथ लौटे। मुलाकातमें दरअसल क्या हुआ इसे प्रकट नहीं किया गया। लॉर्ड सेल्बोर्नने बोअर नेताओं और जिम्मेवार संघ (रिस्पॉन्सिबल असोसिएशन) के सदस्योंसे मिलनेपर दूसरा ही रुख अपनाया। उन्होंने पत्र-प्रतिनिधियोंको निमन्त्रित किया और कार्रवाई प्रकाशित कराई। तो फिर, एशियाई मामलोंको इतना छकाने-छिपानेकी क्या जरूरत थी? यदि मुलाकाती यह चाहते थे तो क्या इसका मतलब यह है कि वे अपने कृत्यों और वक्तव्योंपर रोशनी पड़ने देनेसे डरते थे? और यदि सर आर्थरने गोप-नीयता पसन्द की थी तो हम अदबके साथ जानना चाहते हैं कि ऐसा करनेमें उनका मंशा क्या था? उन्हें क्या यह आशंका थी कि श्री लवडे बिलकुल अंधाधुंध वक्तव्य देंगे और इसलिए उन्हें अपनी शर्मपर परदा डालनेकी फिक्र थी? ब्रिटिश भारतीय चाहते हैं कि उनके विरुद्ध या पक्षमें जो कुछ भी कहा जाये वह पूरी तरह खुल्लमखुल्ला कहा जाये। उन्हें किसी बातका डर नहीं है वे किसी बातको न बढ़ाकर कहना चाहते हैं न घटाकर, क्योंकि उनका पक्ष सर्वथा न्यायपूर्ण है। इसलिए हम आशा करें कि ट्रान्सवालके ब्रिटिश भारतीयोंको कमसे-कम उन बातों पर विचार करनेका अवसर अब भी दिया जायेगा जो उनकी पीठ पीछे मुलाकातियोंने परम-श्रेष्ठ लेफ्टिनेंट गवर्नरसे कहीं।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन २२–७–१९०५

३५. क्लार्क्सडॉर्पके भारतीय

क्लार्क्सडॉर्पमें भारतीयोंके बारेमें सभा हो जानेपर नगरस्वास्थ्यरक्षक नाम बहोर डॉक्टरकी रिपोर्ट आई है। उन्होंने उसमें लिखा है कि भारतीयोंके मकान अधिकतर गन्दे पाये जाते हैं वे चाहे जहाँ थूक देते हैं उनके पाखाने बड़े गन्दे होते हैं पाखानोंकी जमीनपर पानी भरा रहता है जो बिलकुल नहीं सूखता है वे दूकानपर ही बैठते और सोते हैं इत्यादि। हम जानते हैं कि इसका बहुत-सा हिस्सा झूठ है और क्लार्क्सडॉर्पके भारतीयोंका कर्तव्य है कि वे इसके खिलाफ रिपोर्ट प्राप्त करें। फिर भी हमें ऊपरके आक्षेप एक हद तक स्वीकार करने पड़ेंगे। इस बातसे कोई इनकार नहीं कर सकता कि हम लोग चाहे जहाँ थूक देते हैं और अपने पाखाने गन्दे रखते हैं। हम लोग पाखानोंकी सफाईकी ओरसे आम तौरपर उदासीन रहते हैं। हम यह अनुभव करते हैं कि हमें उदासीनता छोड़ देनी चाहिए। पाखानोंमें से अनेक रोग लगते हैं यह बात साबित हो सकती है। पाखाने साफ रखना बहुत आसान बात है। पाखानेके बाद हर बार बाल्टीमें सूखी मिट्टी या राख डाली जाये और बर्तनोंको हमेशा जन्तुनाशक पानीसे धोकर साफ किया जाये। यदि हमेशा ऐसा किया जाये तो इसमें समय खर्च नहीं होता और बहुत घिन करनेका कारण भी नहीं रह जाता।

हमें थूकनेके बारेमें भी विचार करना चाहिए। घरमें अथवा दूकानमें चाहे जहाँ थूकनेके बजाय रूमालमें अथवा थूकदानमें थूकनेकी आदत डालना हर तरह जरूरी है।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, २२-७-१९०५

३६. ट्रान्सवालमें भारतीय होटल

ट्रान्सवालमें भारतीय होटलोंके बारेमें आजतक कोई कानून नहीं बना है। काफिरोंके भोजन-गृहों या गोरोंके होटलोंके परवाने लेने पड़ते हैं। ट्रान्सवालमें चीनियोंकी संख्या बढ़ जानेसे चीनी होटल खुलने लगे। इनके लिए परवानेकी कोई जरूरत नहीं थी। इसके बाद चीनियोंने सरकारसे परवाने माँगे। सरकारने लिखा कि परवानोंकी जरूरत नहीं है। चीनियोंने यह समझा कि परवानेके बिना होटल खुल ही नहीं सकता इस कारण उन्होंने सरकारको अर्जी भेजी कि परवानेका कानून बनना चाहिए। कहावत है, अपनी करनी पार उतरनी। तदनुसार अब इस सम्बन्धमें गवर्नमेंट गज़ट में[1] विधेयक प्रकाशित कर दिया गया है। अब होटलोंके भारतीय मालिकोंको भी परवाने लेने पड़ेंगे। इस विधेयकका विरोध भी नहीं किया जा सकता। इसलिए ट्रान्सवालमें जो लोग भारतीय भोजनालय चलाते हैं उनको बहुत सावधानीसे चलना होगा। हमारा खयाल यह है कि मकान बहुत स्वच्छ होंगे तभी परवाने मिलेंगे।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, २२-७-१९०५

१. जून ९, १९०५ को।

३७. जोज़ेफ़ मैज़िनी

जानने योग्य कार्यकलाप

इटली एक नवोदित राष्ट्र है। सन् १८९ से पहले वह बहुतसे छोटे-छोटे भागोंमें बँटा था और उनमें से प्रत्येकका शासक एक सरदार था। जैसा इन दिनों भारत या काठियावाड़ है वैसा सन् १८७ से पहले इटली था। लोग एक भाषा बोलते थे। एक स्वभावके थे फिर भी सबके-सब छोटी-छोटी रियासतोंके अधीन थे। आज इटली यूरोपका एक स्वतन्त्र देश है और इटलीके लोगोंकी एक पृथक जातीयता मानी जाती है। यह कहा जा सकता है कि यह सब एक ही पुरुषके हाथसे हुआ है। उस पुरुषका नाम था जोज़ेफ़ मैज़िनी।

मैज़िनी जेनोआमें १८ ५के जून महीनेकी २२ तारीखको जन्मा था। वह ऐसा सच्चरित्र भला और स्वदेशाभिमानी पुरुष था कि उसके जन्मसे सौ वर्ष बाद उसकी जन्म-शताब्दी मनानेका आन्दोलन यूरोप-भरमें किया जा रहा था और वह अब भी जारी है क्योंकि यद्यपि उसने इटलीकी सेवा करनेमें अपना सारा जीवन बिताया फिर भी उसका मन इतना उदार था कि वह हर देशका निवासी गिना जा सकता है। प्रत्येक देशके लोग उन्नत हों और मिलकर रहें यह उसकी सतत सीख थी।

मैज़िनीकी प्रखर प्रतिभा १३ वर्षकी आयुमें ही दिखाई देने लगी थी। उसने बड़ी विद्वत्ता प्रदर्शित की किन्तु फिर भी अपने देशके लिए उसके दिलमें जो जान थी उसके कारण उसने अन्य पुस्तकें छोड़कर कानूनका अध्ययन शुरू किया और अपने कानूनी ज्ञानका उपयोग गरीबोंको मुफ्त सहायता देनेमें करने लगा। फिर वह उस गुप्त संगठनमें शामिल हो गया जिसका उद्देश्य इटलीको संगठित करना था। उसका पता इटलीकी रियासतोंको चल गया अतः उन्होंने उसे जेलमें भेज दिया। जेलमें भी उसने अपने देशकी मुक्तिका आयोजन जारी रखा। अन्तमें उसे इटली छोड़ना पड़ा। वह मार्सेल्समें जा रहा। रियासतोंने अपना प्रभाव काममें लाकर उसको वहाँसे भी निर्वासित करा दिया। इस प्रकार भटकते रहनेपर भी उसने हार नहीं मानी। वह लेख लिख-लिखकर गुप्त रूपसे इटली भेजता रहा। इसका प्रभाव धीरे-धीरे लोगोंके मनपर पड़ने लगा। यह सब करते हुए उसने बहुत कष्ट सहन किये। उसे जासूसोंसे बचनेके लिए गुप्त वेशमें भ्रमण करना पड़ता था। कई बार उसकी जान भी जोखिममें पड़ जाती थी लेकिन इसका उसे डर नहीं था।

अन्तमें वह सन् १८३७ में ब्रिटेन गया। वहाँ उसे बहुत कष्ट तो नहीं था किन्तु गरीबी बहुत भुगतनी पड़ती थी। इंग्लैंडमें वह बहुत बड़े-बड़े व्यक्तियोंके संपर्कमें आया। उसने उनसे मदद माँगी।

सन् १८४८ में वह गैरीबाल्डीको साथ लेकर इटली गया और वहाँ स्वराज्य स्थापित किया। किन्तु षड्यन्त्रकारी लोगोंके कारण वह देरतक नहीं टिक सका और उसे दुबारा भागना पड़ा। फिर भी उसका बल नहीं टूटा। उसने ऐक्यका जो बीज बोया था वह जमा रहा। और यद्यपि वह स्वयं देशसे निर्वासित रहा फिर भी सन् १८७ में इटली एक राज्य बन गया। उसका राजा विक्टर इमैन्युअल हुआ। इस प्रकार उसे अपने देशके संगठित होनेका संतोष मिला। फिर भी उसे स्वदेशमें लौटनेकी इजाजत नहीं थी। इसलिए वह छद्म वेशमें इटली जाया करता

था। एक बार उसे पुलिस पकड़नेके लिए आई। तब उसने स्वयं दरबानका वेश बनाकर दरवाजा खोला और इस प्रकार पुलिसको चकमा दिया।

यह महान पुरुष सन् १८७२ के मार्च महीनेमें चल बसा। इस समय उसके शत्रु भी मित्र हो गये थे। लोग उसकी सच्ची खूबियोंको पहचान गये थे। उसकी अर्थीके साथ अस्सी हजार लोग गये थे। जेनोआमें वह सबसे ऊँची जगहपर दफन किया गया। इटली और यूरोपके सब देश आज इस पुरुषकी पूजा करते हैं। इटलीके महापुरुषोंमें उसकी गिनती है। वह सदा स्वार्थ-रहित अहंकार-रहित अत्यन्त पवित्र और धर्मनिष्ठ पुरुष रहा। गरीबी उसका आभूषण थी। वह पराये दुःखको अपना दुःख मानता था। संसारमें ऐसे उदाहरण विरले ही देखे पड़ते हैं जहाँ एक ही मनुष्यने अपने मनोबलसे और अपनी उत्कट भक्तिसे अपने देशका अपने जीवन कालमें उद्धार किया हो। ऐसा पुरुष तो मैजिनीकी माँने ही उत्पन्न किया था।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, २२–७–१९०५

३८ ट्रान्सवाल जानेवाले भारतीयोंको महत्त्वपूर्ण सूचना[1]

ट्रान्सवालमें आजकल अनुमतिपत्रोंके बारेमें भारतीयोंपर सख्ती की जा रही है। बहुत लोग जो जाली अनुमतिपत्रोंके बलपर यहाँ ठहरे हुए थे निर्वासित कर दिये गये हैं। अनुमतिपत्रोंपर जिनके अँगूठेके निशान नहीं थे ऐसे कुछ लोगोंको छः छः सप्ताहकी कैदकी सजा दी गई है। अभी कुछ अन्य लोगोंको परेशानी होनेकी सम्भावना है। यह भी खयाल है कि अनुमतिपत्र अधिकारी विभिन्न गाँवोंमें जाँच करनेके लिए जायेंगे। इसलिए जिनके पास जाली अनुमतिपत्र हों उनका तुरन्त ट्रान्सवाल छोड़कर चले जाना जरूरी है। जाली अनुमतिपत्रका उपयोग बिलकुल न किया जाये नहीं तो जेल भुगतनेकी नौबत आयेगी।

आजतक १६ वर्षसे कम आयुके लड़कों और औरतोंको अनुमतिपत्रोंके बिना जाने देते थे लेकिन अनुमतिपत्रोंकी जाँच शुरू होनेके बाद सीमापर बहुत सख्ती की जा रही है। अब १६ वर्षसे कम आयुका लड़का अपने पिताके साथ न हो अथवा स्त्री अपने पतिके साथ न हो तो उनको अनुमतिपत्र न होनेपर रोक लिया जाता है। एक स्त्री अपने पतिके बिना ट्रान्सवाल जा रही थी। वह फोक्सरस्टमें उतार दी गई। इससे ट्रान्सवालमें भारतीयोंको नीचे लिखी बातें ध्यानमें रखनी चाहिए।

(१) जाली अनुमतिपत्र लेकर यहाँ प्रवेश न करें।

(२) स्त्रियाँ अनुमतिपत्र न होनेपर अपने पतिके बिना प्रवेश न करें।

(३) १६ वर्षसे कम आयुके लड़के भी अपने पिताके साथ ही अनुमतिपत्रके बिना प्रविष्ट हो सकते हैं।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन २२–७–१९०५

[1] यह "हमारे जोहानिसबर्ग संवाददाता द्वारा प्रेषित," रूपमें प्रकाशित हुआ था।

३९ पत्र बीमा कम्पनीके एजेंटको[1]

[जोहानिसबर्ग]
जुलाई २५, १९ ५

सेवामें
एजेंट
न्यूयॉर्क म्यूचुअल लाइफ इन्श्योरेंस सोसायटी
कोर्ट स्ट्रीट
जोहानिसबर्ग

प्रिय महोदय

आपको याद होगा कि श्री आनन्दलाल अमृतलाल गांधी[2] और श्री अभयचन्द अमृतलाल गांधीका[3] मेरी मार्फत बीमा हुआ था। उनकी पालिसियोंका नं० क्रमश ११६९ ९ और ११६९ ४ है। मुझे मालूम हुआ है कि कुछ दिनोंसे इन पालिसियोंकी किस्तें नहीं दी गई हैं। क्या आप कृपया मुझे यह बता सकेंगे कि इन बीमा पालिसियोंको फिरसे जारी करना सम्भव है या नहीं? और यदि सम्भव है तो किन शर्तोंपर? यदि बीमा करानेवाला सज्जन उन्हें फिरसे जारी न कराना चाहें तो जो किस्तें वे दे चुके हैं उनमें से उन्हें कुछ रकम वापस मिल सकती है या नहीं?

आपका विश्वस्त
मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]

पत्र-पुस्तिका (१९ ५) संख्या ७७१

४० फूर्संडॉर्पमें भारतीय

फूर्संडॉर्पकी नगर-परिषदने सरकारको अर्जी भेजी है कि भारतीयोंको अनिवार्य रूपसे बस्तियोंमें भेजनेका कानून बनाया जाना चाहिए। ट्रान्सवाल सरकारने उत्तर दिया है कि फिलहाल कुछ नहीं किया जा सकता क्योंकि ब्रिटिश सरकारके साथ इस सम्बन्धमें पत्र-व्यवहार हो रहा है। इससे मालूम होता है कि श्री लिटिलटन और सर आर्थर लालीके बीच विवाद अभी चल ही रहा है। सर आर्थरकी यह माँग है कि केवल भारतीयोंपर ही लागू होनेवाले कानून बनाये जाने चाहिए। परिणामका पता आगामी वर्षसे पहले लगनेकी सम्भावना नहीं है। इस बीच हम उम्मीद करते हैं कि फूर्संडॉर्पके भारतीय अपने मकान साफ-सुथरे रखेंगे।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन २९–७–१९ ५

१ गांधीजीने अगस्त ८, १९०५ को इसी तरहका एक पत्र कम्पनीके एजेंटको लिखा था। सम्भवतः यह कम्पनीके जोहानिसबर्ग-कार्यालयको [illegible] लिखा गया होगा।
२–३ गांधीजीके चचेरे भाई अमृतलाल गांधीके पुत्र और तुलसीदास गांधीके पौत्र।

४१ ट्रान्सवालमें अनुमतिपत्र

हम 'गवर्नमेंट गज़ट'से लेकर यह छाप चुके हैं कि ट्रान्सवालमें कुछ अनुमतिपत्र रद कर दिये गये हैं[1]। कुछ लोगोंने इसका अर्थ यह लगाया है कि बताई हुई संख्याओंके सच्चे अनुमतिपत्रोंके मालिकोंको भी भागना पड़ेगा और उनके अनुमतिपत्र अवैध हो गये हैं। यह विचार भ्रान्तिपूर्ण है। जिनके अनुमतिपत्र वैध हैं और जिनके अँगूठेके निशान उनपर लगे हुए हैं उनको बिलकुल नहीं घबराना चाहिए। गज़टमें नाम प्रकाशित होनेपर भी उनके अनुमतिपत्र रद नहीं होते हैं। यही बात रजिस्टरोंपर भी लागू होती है।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन २९–७–१९ ५

४२ बाल्टिकके बेड़ेका रहस्य

बाल्टिक बेड़ेकी हारकी पूरी कहानीपर प्रकाश डालनेवाला रोजदेस्तवेन्स्कीका[2] जारके नाम प्रेषित पत्र सचमुच भयानक है। यद्यपि यह पत्र एक हारे हुए सेनापतिने लिखा है फिर भी कोई यह न मानेगा कि उसमें बताये गये कारण उन्होंने अपनी हारके स्पष्टीकरणके लिए बहानेके रूपमें पेश किये हैं। जो गुप्त तथ्य अब प्रकट हुए हैं उनसे यह स्पष्टतः सिद्ध हो जाता है कि इस बेड़ेकी जो भीषण पराजय हुई वह अवश्यम्भावी थी। संसारके चतुरसे-चतुर सामुद्रिक युद्ध-विशारद कहते थे कि यह बेड़ा जापानियोंकी पूरी-पूरी खबर लेगा। ऐसा अनुमान लोग इसलिए लगाते थे कि इस बेड़ेके युद्धपोत अतिविशाल शस्त्रास्त्रोंसे बहुत अच्छी तरह सज्जित और तेजीसे चलनेवाले थे। उनमें नयसे-नये ढंगकी बढ़िया तोपें लगी थीं और उनके सेनापति बड़े दक्ष माने जाते थे। लेकिन जैसा कि जल सेनाध्यक्ष रोजदेस्तवेन्स्कीने लिखा है उस बेड़ेकी ऐसी महत्ता केवल कागजी ही थी। उन्होंने जारको पत्रमें लिखा है कि शासन-व्यवस्थाकी खराबीके कारण युद्ध-पोतोंका निर्माण लज्जाजनक ढंगसे किया गया था। यही नहीं उनमें हथियार और बख्तर आदि लगानेकी भी बड़ी कमियाँ थीं। तोपें ठीक तरह गोले नहीं फेंक पाती थीं कोयलाघरोंमें पूरा कोयला नहीं भरा जा सकता था। उनकी तेज चालका वर्णन झूठा किया गया था उनके एंजिन सदा ऐसी आवाज करते रहते थे मानो उनका सारा ढाँचा ढीला हो गया हो। दो-तिहाई नाविक निकम्मे थे तोपचियोंको अपने कर्तव्योंका पता नहीं था और सबसे खराब बात तो यह थी कि माडागास्करसे आगे चलकर सब लोग विद्रोही हो गये थे। इस प्रकारका बेड़ा युद्ध करे तो परिणाम उसकी हारके सिवाय अन्य कुछ नहीं हो सकता। फार्मोसा छोड़नेके बाद क्या-क्या हुआ इसका यथार्थ वर्णन उस पत्रमें दिया गया है। वह अपने बेड़ेकी इस स्थितिको पहलेसे ही जानता था और ऐसी स्थितिमें उसने युद्धका उत्तरदायित्व अपने ऊपर लेकर जो बहादुरी बताई उससे उसकी राज्यभक्ति ही प्रकट होती है।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन २९–७–१९ ५

१ इनकी सूची ८ और १५ जुलाई, १९०५ के इंडियन ओपिनियनमें दी गई थी।

२. वाइस ऐडमिरल रियर एडमिरल रोज्देस्तवेन्स्की।

४१. नेटालके गिरमिटिया भारतीय

श्री जेम्स ए० पोलकिंगहॉर्नने गत ३१ दिसम्बरको समाप्त होनेवाला अपना वार्षिक विवरण प्रकाशित किया है। जैसा कि एक सहयोगी लिखता है, यह विवरण देरसे प्रकाशित हुआ है। नेटालमें अधिकांश सरकारी विवरण इसी तरह प्रकाशित होते हैं। इसमें सन्देह नहीं कि इसके परिणामस्वरूप उनमें वह दिलचस्पी नहीं ली जाती जो उनके तात्कालिक प्रकाशनपर ली जाती। वर्तमान विवरण फिरसे गिरमिटकी शर्तें अपनानेपर और व्यक्ति-करके बारेमें प्रवासी अधिनियमके अमलपर यथेष्ट प्रकाश डालता है। अतः यह साधारणसे अधिक दिलचस्पीकी चीज है। भारतीय गिरमिटिया आबादीकी अबतक दी गई संख्याकी अपेक्षा यह अधिक सही संख्या भी देता है। संरक्षक द्वारा दी गई जानकारी आँखें खोलनेवाली है। गत तीन वर्षोंमें भारतीय आबादी बहुत काफी बढ़ी है। १८७९ से १८९९ के बीचमें यह ११७१२ थी; १९०२ में यह ७८, ४ थी और १९०४ के अन्तमें यह ८७९९८ हो गई। इस तरह दो वर्षोंमें लगभग १ की वृद्धि हुई। और तो भी संरक्षकका अनुमान कहना है कि १९०२ में १९ गिरमिटियोंके लिए प्रार्थनापत्र दिये गये हैं। वे इस माँगकी पूर्ति नहीं कर सके हैं। इस प्रकारके मजदूरोंकी माँग इतनी बड़ी है कि नये प्रार्थनापत्रोंको सर्वथा अस्वीकार कर देना आवश्यक हो गया है। इस बड़ी वृद्धिका कारण स्पष्ट है। इस श्रेणीके मजदूर बहुत लोकप्रिय हैं और उपनिवेशमें उनकी लोकप्रियता बढ़ती जा रही है। जो लोग आते हैं वे बड़ा संतोष प्रदान करते हैं और हजारों उपनिवेशियोंकी गुजर जीविका भारतसे गिरमिटिया मजदूरोंके सतत प्रवाहपर बहुत अंशोंमें निर्भर करती है। इससे जो निष्कर्ष निकलता है वह भी स्पष्ट है। भारतीयोंके अवांछनीय नागरिक होनेके बारेमें यहाँ जो हल्ला है वह अधिकांश रूपसे झूठा अथवा स्वार्थमय है। ऊपर दिये गये आँकड़ोंसे जो निष्कर्ष निकलता है उसका आश्चर्यजनक समर्थन हमें परमश्रेष्ठ नेटालके गवर्नरके हाल ही के भाषणमें मिलता है। कृषि प्रदर्शनीके उद्घाटनके समय उन्होंने कहा था कि नेटालकी तटीय भूमिके विकासके लिए भारतीय कृषक अनिवार्य हैं।

संरक्षक महोदय व्यक्ति-कर और फिरसे गिरमिटमें प्रवेश-संबंधी कानूनके अमलसे बहुत अधिक असन्तुष्ट हैं। वे कहते हैं कि इस कानूनसे लोग बहुत अधिक बच निकलते हैं और जिन भारतीयोंकी गिरमिटकी अवधि समाप्त हो जाती है उनको भारत वापस भेजनेमें यह कानून असफल रहा है। जो लोग यहाँ रह गये हैं उनमें से बहुतेरे व्यक्ति-करसे बचनेमें सफल हो गये हैं। गत वर्ष ८८८ पुरुषों और १४५ स्त्रियोंने नये कानूनके अधीन गिरमिटकी अवधि समाप्त की। इस संख्यामें से केवल ११७ पुरुषों और ३२ स्त्रियोंने पुनः गिरमिटमें आनेकी अर्जी दी। २ १ पुरुष और ५८ स्त्रियाँ भारत लौट गये। १७५ पुरुषों और १४६ स्त्रियोंने कर चुकाया और यह लेखा तैयार करते समय १७ पुरुषों और १ ५ स्त्रियोंके बारेमें कुछ स्थिर नहीं किया जा सका। इसमें आश्चर्य करनेकी बात नहीं है। व्यक्ति-कर राजस्व बढ़ानेका कोई सन्तोषजनक तरीका नहीं है। उपनिवेशमें बसनेमें इससे कारगर रुकावट नहीं आई। अधिनियम बनानेवालोंने किसी ऐसे परिणामकी आशंका नहीं की थी। गिरमिटिया भारतीयोंको इससे क्षोभ उत्पन्न होती है। यह उनसे अनुचित ढंगसे धन वसूल करनेका जरिया है और नेटालके सुन्दर नामपर एक धब्बा लगाता है। और इससे भी अधिक दुःखकी बात यह है कि यह कर उन

लोगोंपर लगाया गया है, जिनकी सेवाएँ, जैसा कि दिखाया जा चुका है, उपनिवेशकी भलाईके लिए अनिवार्य मानी गई हैं।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन ५-८-१९०५

४४. जापान कैसे जीता?

न्यूयॉर्कमें संवाददाताओंने बैरन कोमुरासे प्रश्न किया कि जापानकी जीतके कारण क्या हैं? बैरन कोमुराने जो उत्तर दिया वह सबके लिए मनमें अंकित कर लेने योग्य है। उन्होंने कहा कि जापानकी माँग न्यायोचित है, यह एक कारण है। दूसरा कारण यह है कि जापानमें ऐक्य है। अधिकारियों और कामोंमें भ्रष्टाचार नहीं है। प्रत्येक व्यक्ति अपना-अपना कर्तव्य पूरा करता है। जापानी आदमी अमथा काहिल नहीं है और अत्यन्त सादगीसे रहते हैं। जापानी सादगीसे रहनेके कारण रूसियोंसे टक्कर ले सके हैं। थोड़े कपड़े और आहारमें थोड़ी चीजोंकी आवश्यकता इत्यादि कारणोंसे जापानी सैनिकोंकी खाद्य-सामग्री आदि कम गाड़ियोंमें ढोई जा सकती है। परिणामस्वरूप जापानियोंको बहुतसे सैनिकोंको दूर तक ले जानेमें कम असुविधा रहती है।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन ५-८-१९०५

४५. पत्र : दादा उस्मानको

[जोहानिसबर्ग]
अगस्त ९, १९०५

श्री सेठ दादा उस्मान

पत्र मिला। श्री आदमजीको हकीकत भेजी है। उसकी नकल आपको भी भेजता हूँ। आपके परवानेके बारेमें आपका चेक मिलनेके बाद मैंने आजतक कोई फीस नामे नहीं लिखी है। मुझे लिखनी चाहिए कि नहीं, जवाब लिखें।

विज्ञापन इकट्ठे किये यह ठीक किया। चेक लिये या नहीं?

दफ्तरसे श्री कैविस्टरका मशविरा वगैरह कागजात भेजें।

मो० क० गांधीके सलाम

श्री दादा उस्मान
बॉक्स ८८
डर्बन

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें गुजरातीसे : पत्र-पुस्तिका (१९०५) संख्या ८७

४६. पत्र : कुमारी बिसिक्सको[1]

[जोहानिसबर्ग]
अगस्त ५, १९ ५

प्रिय कुमारी बिसिक्स

मुझे आपकी परेशानियोंके लिए बहुत अफसोस है। मुझे लगता है कि आपने जिन चीजोंका उल्लेख किया है वे वापस नहीं ली जा सकेंगी क्योंकि न्यासीसे मुझे मालूम हुआ है कि वे बिक्रीमें शामिल कर ली गई हैं। चालू बन्देके रूपमें बिक्रीसे केवल २१ पौंड वसूल हुए हैं। मुझे पता चला है कि कारोबार ब्राउन बन्धुओंने खरीदा है।

मैंने भगिनी हौलिएससे कहा था कि शायद मैं सोमवारको आपके पास साइकिलसे चला आऊँ किन्तु मुझे दुःख है कि मैं नहीं आ सकूँगा।

आपका सच्चा
मो० क० गांधी

कुमारी बिसिक्स
मारफत बॉक्स ४२ ७

[अंग्रेजीसे]

पत्र-पुस्तिका (१९ ५) संख्या ८७२

४७. पत्र : उमर हाजी आमदको

[जोहानिसबर्ग]
अगस्त ५, १९ ५

श्री सेठ उमर हाजी आमद

आपका पत्र मिला। मैरित्सबर्गमें विज्ञापन इकट्ठे किये यह जानकर खुशी हुई।

आप फीनिक्स गये होंगे। नियमित रूपसे जाते रहिए। गाँवमें खलल न पहुँचे ऐसी व्यवस्था होनी चाहिए।

मो० क० गांधीके सलाम

श्री उमर हाजी आमद
बॉक्स [४४१]
डर्बन

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें गुजरातीसे पत्र-पुस्तिका (१९ ५) संख्या ८७४

१ कुमारी एम० बिसिक्स एक उत्साही थियोसॉफिस्ट थीं। उन्होंने एक छोटा निरामिष जलपान-गृह खोला और उसमें अपना विस्तार करनेका निर्णय किया। इस उद्यमके लिए गांधीजीसे मदद मांगी। उन्होंने अपने एक मुवक्किलके एक हजार पौंड उसकी मंजूरीसे कुमारी बिसिक्सको दे दिये; परन्तु वे उन्हें कभी वापस नहीं मिले। उसकी क्षतिपूर्ति उन्होंने स्वयं की। देखिए आत्मकथा भाग ४ अध्याय ६।

४८ पत्र अब्दुल हक व कैसुसरको

[जोहानिसबर्ग]
अगस्त ५, १९०५

भाई अब्दुल हक व कैसुसर

आपका पत्र मिला। रुस्तमजी सेठका पत्र वापस भेजता हूँ। मैं उन्हें लिखूँगा। मार्केके बारेमें जो अर्थ आप निकालते हैं वो निकल सकता है। किन्तु उसकी चिन्ता किये बिना कर बाकी न रहे इसपर पर्याप्त ध्यान रखा जाये इतना काफी है। आमम मूसा हुसैनके मुख्त्यार नामेका अभी उपयोग नहीं हो रहा है। आपने पत्रपर पूरी टिकटें नहीं लगाई थीं।

मो० क० गांधीके सलाम

संलग्न १

सेठ आदमभाई साराबजी ब्रदर्स
११ फ्रीडम स्ट्रीट
डर्बन

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें गुजरातीसे पत्र-पुस्तिका (१९ ५) संख्या ८७१

४९ पत्र मुख्य अनुमतिपत्र-सचिवको

[जोहानिसबर्ग]
अगस्त ८, १९ ५

सेवामें
मुख्य अनुमतिपत्र-सचिव
पो ऑ बॉक्स ११९९
जोहानिसबर्ग

महोदय

विषय अब्दुल कादिरके[1] अनुमतिपत्रकी नकल

पिछले महीनेकी १४ तारीखके आपके पत्र संख्या ९५ से मुझे सूचना मिली कि अब आपने मेरे मुवक्किलके अँगूठेके निशानकी जाँच कर ली है और उसके अनुमतिपत्र तथा पंजीयनका पता लगा लिया है।

मैं निवेदन करता हूँ कि ऐसे मामलोंमें एक दूसरा अनुमतिपत्र अथवा किसी प्रकारका प्रमाणपत्र जारी करना आवश्यक है ताकि पंजीकृत निवासी बिना परेशानीके वापस आ सकें। मेरा मुवक्किल भारत जानेवाला है और इसलिए यदि आप उसे प्रमाणपत्र दे दें तो मैं बहुत

१ देखिए भारतीय [illegible] १८९९-१९ १ ।

हस्तान्तरण हूँगा। इसमें जालसाजीका प्रश्न नहीं हो सकता क्योंकि जो प्रमाणपत्र आप जारी करेंगे उसपर अँगूठेका निशान रहनेके कारण किसी औरके द्वारा उसका उपयोग नहीं किया जा सकेगा।

आपका आज्ञाकारी सेवक
मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]

पत्र-पुस्तिका (१९०५) संख्या ८८९

५०. पत्र : अब्दुल हकको

[जोहानिसबर्ग]
अगस्त ८, १९०५

भाई अब्दुल हक,

पारसी कावसजी लिखते हैं कि उन्हें ५ पौंड दिये जायें तो आप उनकी ओरसे एक वर्षकी जमानत दे देंगे। रुस्तम सेठ क्या कह गये हैं यह आपको मालूम होगा। अपने खाते लिखकर उतनी रकम पारसी कावसजीको देना आपको उचित दिखे तो लिखिए। तब मैं उमर सेठको उसमें पौंडका चैक काटनेको लिखूँगा।

आजकल किराया हर माह कितना है लिखिए।

मो० क० गांधीके सलाम

श्री अब्दुल हक
मारफत नदी कालभाई मारावजी बर्दी
११ फील्ड स्ट्रीट
डर्बन

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें गुजरातीसे पत्र-पुस्तिका (१९०५) संख्या ८९

५१. पत्र : तैयब हाजी खान मुहम्मदको

[जोहानिसबर्ग]
अगस्त ८, १९०५

सेठ श्री तैयब हाजी खान मुहम्मद

आपके दावेके¹ बारेमें तारकी नकलके मुताबिक जवाब दिया है। मुझे दुःख है। अब लॉर्ड सेल्बोर्नको अधिक लिखनेकी जरूरत है, ऐसा मैं नहीं मानता। मुकदमा विलायतमें लड़ना होगा। या फिर तैयब सेठ आयें तो यहाँ लड़ सकते हैं।

मो॰ क॰ गांधीके सलाम

संलग्न

पेढ़ी तयब हाजी खान मुहम्मद ऐंड कं॰
बॉक्स ३५७
प्रिटोरिया

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें गुजरातीसे : पत्र-पुस्तिका (१९०५), संख्या ९

५२. पत्र : हाजी हबीबको²

[जोहानिसबर्ग]
अगस्त ९, १९०५

श्री सेठ हाजी हबीब

कपोलियाके बारेमें आपका पत्र मिला। मैंने नोटिस भेज दिया है।

मो॰ क॰ गांधीके सलाम

[पुनश्च]

मैं कल रात कामसे प्रिटोरिया गया था। सवेरे ७॥ की गाड़ीसे आनेके कारण मिल नहीं सका इसके लिए माफी चाहता हूँ। श्री कैलनबैकके³ साथ सन्देशा भेजा है।

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें गुजरातीसे : पत्र-पुस्तिका (१९०५), संख्या ९७

१. यह युद्ध-क्षतिके सम्बन्धमें था।
२. नकल उपलब्ध नहीं है।
३. हरमान कैलेनबैक एक धनी जर्मन वास्तुकार थे। श्री खानने उनमें आध्यात्मिक रुचि देखी और उनका परिचय गांधीजीसे करा दिया। वे गांधीजीके मित्र बन गये और उनके साथ सादे जीवनके प्रयोगोंमें शरीक हो गये। उन्होंने दक्षिण आफ्रिकाके अनाक्रामक प्रतिरोध आन्दोलनमें सहायता की। देखिए, दक्षिण आफ्रिकामें सत्याग्रह, अध्याय २३, ११-२५।

५३. पत्र : अब्दुल कादिरको

[जोहानिसबर्ग]
अगस्त १, १९०५

प्रिय श्री अब्दुल कादिर,

मुझे अभीतक आपको लिखनेका समय नहीं मिला था। कारोबारकी बातपर आनेके पहले श्रीमती अब्दुल कादिरने जो कचौड़ियाँ भेजीं उनके लिए उन्हें धन्यवाद देना चाहता हूँ। मैंने जो हँसी-हँसीमें माँगा था सचमुच ही मिल गया। आप जानते हैं कि श्री उमर और श्री दादा उस्मान मेरे साथ थे। हम सबने उन्हीं कचौड़ियोंकी ब्यालू की। इसके सिवा एक दुर्घटना भी हो गई थी। एक इंजन पटरीसे उतर गया था और रास्तेमें सारे यात्रियोंको गाड़ियाँ बदलनी पड़ी थीं। आधी रातके बाद गाड़ी ३ घंटे पिछड़ गई। इसलिए जिन स्टेशनोंपर भोजन मिल सकता था उनपर भोजन नहीं लिया गया और उस परिस्थितिमें केवल मैंने ही नहीं मेरे दूसरे रेलके साथियोंने भी — यद्यपि वे यूरोपीय थे — वे कचौड़ियाँ बहुत पसन्द कीं। वे बहुत स्वादिष्ट थीं। इस तरह जोहानिसबर्ग पहुँचनेके पहले ही टोकरी खाली हो गई। श्रीमती अब्दुल कादिरको उनकी मेहरबानीके लिए मैं फिर धन्यवाद देता हूँ।

बैंक द्वारा लिखाया गया जमानतनामा श्री अब्दुल गनीने[1] मुझे दिखा दिया है। मेरे विचारसे उसकी कोई जरूरत नहीं है। मेरी रायमें बैंककी जमानतपर साझेदारीके विघटनकी लिखा-पढ़ीका बिलकुल ही प्रभाव नहीं पड़ता। बीचमें परिवर्तन करनेका कारण मेरी समझमें नहीं आता। लेकिन चूँकि पेढ़ी नये सिरेसे नाम चलाई जाती है इसलिए इसमें कोई नुकसान नहीं है। मैं आशा करता हूँ कि आप मामलेको जल्दी आगे बढ़ायेंगे। श्री मुहम्मद इब्राहीमका नाम वापस लेनेमें कोई कठिनाई नहीं होनी चाहिए क्योंकि यदि वे राजी न हों तो भी अदालतका हुक्म बिलकुल काफी होगा। मुझे मालूम हुआ है कि सभी हिस्सेदारोंकी इच्छा साझेदारीके विघटनको 'गज़ट' में विज्ञापित करने की है। मैं भी ऐसा ही सोचता हूँ। इसलिए मैं विज्ञापनका मसविदा भेज रहा हूँ। यदि आप मंजूर करें तो पाँचों हिस्सेदार उसपर दस्तखत कर सकते हैं और वह यहाँके और वहाँके दोनों 'गज़टों' में तथा दोनों जगहोंके एक-एक दैनिक पत्रमें विज्ञापित किया जा सकता है। आपके सम्बन्धके एजेंटोंको भेजनेके लिए भी पत्रका मसविदा[2] साथमें है।

यहाँ जो बैठकें हुईं उनमें आपने अत्यन्त चतुराई और शान्तिका परिचय दिया। उसे देखकर मैं इससे ज्यादा प्रसन्न हुआ। यह मेरी हार्दिक आशा और प्रार्थना है कि दोनों धन्धे बढ़ते जायें और आप सबमें पूरा मेल जोल बना रहे। मैं यह सलाह भी देना चाहता हूँ कि यद्यपि आगे चलकर दक्षिण आफ्रिकाका भविष्य निश्चय ही अच्छा है तो भी आप जो काम हाथमें लें उसमें अत्यन्त सावधान रहें। हमें अभी और भी बुरे दिन देखने पड़ेंगे जो हम सबको इतना

1. अध्यक्ष, ब्रिटिश भारतीय संघ।
2. [illegible]

ऐसे मामलेमें वे सबसे अधिक फायदेमें रहेंगे। मुझे इसमें शक नहीं है कि कारोबार बहुत अधिक करना है, किन्तु इसमें बहुत अधिक विचारशीलताकी आवश्यकता है।

आपका सच्चा
मो० क० गांधी

श्री अब्दुल कादिर
मारफत श्री एम० सी० कमरुद्दीन ऐंड कं०
पो० ऑ० बॉक्स १८६
डर्बन

[अंग्रेजीसे]

पत्र-पुस्तिका (१९०५) संख्या ११२

५४ पत्र : पैक्स लिमिटेडको

[जोहानिसबर्ग]
अगस्त ११, १९०५

पैक्स लि०
पो० ऑ० बॉक्स २७८९
जोहानिसबर्ग

प्रिय महोदय

विषय : मक्खन

इस मुकदमेकी सुनवाई आज सुबह हुई। दो गवाहोंने इस आशयकी गवाही दी कि १ पौंड मक्खन माँगा गया था और उसपर वैसी टिकिया दी जैसी आपने मुझे दिखाई थी। वैसी टिकिया निरीक्षकको दी गई और जब पैसा दिया जा चुका तब निरीक्षकने टिकिया खोली। टिकिया खोलते समय अभियुक्तने टिकियाके ऊपरकी लिखावटकी ओर इशारा किया। यह कानूनके मुताबिक स्पष्ट ही अपराध था किन्तु मजिस्ट्रेटने ऐसा माना कि इस मामलेमें अभियुक्त बिलकुल निर्दोष है और इसलिए उसपर केवल १ पौंड जुर्माना किया गया। मैं वर्तमान परिस्थितियोंमें अधिकसे अधिक यही कर सकता था। जान पड़ता है कि अदालतमें पिछले हफ्ते एक ऐसा ही मामला आया था। उसमें भी गवाहीसे यही जाहिर हुआ कि जो टिकिया बेची गई थी उसपर लिखावट बहुत अस्पष्ट थी। इसलिए मुझे लगता है कि जबतक ऊपर लगे हुए कागजपर चारों तरफकी लिखावट बहुत ज्यादा बड़ी नहीं होगी तबतक फुटकर विक्रेताओंपर जुर्मानेकी जोखिम रहेगी और वह भी बहुत भारी जुर्मानेकी, क्योंकि कानूनमें १ पौंड मक्खन माँगनेपर ग्राहकको इस प्रकारकी टिकिया बेचनेपर २ पौंड जुर्माना किया जा सकता है। इसलिए मैं [सोचता हूँ कि ऊपरकी] लिखावट अधिक अच्छी होनी चाहिए अथवा अपने विक्रेताओंको यह कह दें कि वे इन टिकियोंको बेचते समय हर बार यह कहें कि मक्खनकी कोई गारंटी नहीं है।

मैं मुकदमेके सम्बन्धमें १ पौंड १ शिलिंग आपके नाम डालता हूँ।

आपका विश्वासपात्र
मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]

पत्र-पुस्तिका (१९०५) संख्या १२२

५५. कदम-ब-कदम

रैंड अग्रगामी संघ (रैंड पायोनियर्स) को अफसोस है कि उसकी कार्रवाईके फलस्वरूप जोहानिसबर्गकी गिरजा-परिषद (चर्च कौंसिल) अपने कर्तव्यके प्रति जागरूक हो गई है। परिषदके प्रतिनिधियोंका एक शिष्टमण्डल ट्रान्सवालमें भूमिपर वतनी लोगोंके अधिकारके सम्बन्धमें लॉर्ड सेल्बोर्नसे यह अनुरोध करनेके लिए मिला था कि वतनियोंको जो अधिकार युद्धसे पहले प्राप्त थे उनको अक्षुण्ण रखना वांछनीय है। ट्रान्सवालके महान्यायवादी यह बता चुके हैं कि ट्रान्सवालमें किस प्रकार युद्धसे पहले वतनी लोग स्वतन्त्रतापूर्वक जमीनके मालिक हो सकते थे। उन्होंने उनके सामने एक उदाहरण भी रखा था कि जब कुछ लोगोंने जमीनके बारेमें वतनियोंके अधिकारोंमें कमी करनेके लिए प्रार्थनापत्र दिया तब अध्यक्ष क्रूगरने[1] उनको सूचित किया था कि वे उनकी प्रार्थना स्वीकार नहीं कर सकते। यद्यपि यह ठीक है कि व्यवहारतः वतनी लोगोंको अपनी जमीनोंका पंजीकरण स्वयं अपने नाम करानेकी इजाजत न थी परन्तु, महान्यायवादीने स्पष्ट बताया है कि उनकी जमीनें वतनी मामलोंके आयुक्तके नाम पंजीकृत होनेपर भी उस अधिकारीको उनके सम्बन्धमें निजी विवेकके प्रयोगका अधिकार नहीं मिल जाता था। वह जमीनको उस वतनीके न्यासीकी हैसियतसे ही अपने नाम लिखा सकता था और जमीनके असली मालिकके निर्देशसे उसके स्थानमें किसी दूसरे वतनीका नाम लिखानेके लिए बाध्य था ताकि वह दूसरा वतनी न्यासके कामका अधिकारी हो जाये। सर जॉर्ज फेरारके[2] नेतृत्वमें वतनी विरोधी लोगोंके शोरगुल मचानेपर, सर रिचर्ड सॉलोमनने अपनी इच्छाके बहुत-कुछ विरुद्ध यह वचन दे दिया है कि वे वतनियोंकी जमीनोंका पंजीयन वतनी मामलोंके आयुक्तके नाम करनेके रिवाजको कानूनका रूप देनेके लिए एक विधेयक पेश करेंगे। रैंड अग्रगामी संघने इसके विरुद्ध फिर आन्दोलन शुरू कर दिया है। उसकी जिद है कि वतनी मामलोंके आयुक्तको उनका न्यासी बननेसे इनकार करनेका अधिकार होना चाहिए। यदि उसकी यह प्रार्थना स्वीकृत हो गई तो वतनियोंको युद्धसे पहले जमीनका मालिक होनेका जो अधिकार था वह निश्चय ही छिन जायेगा।

गिरजा-परिषदने इसी प्रकारके आन्दोलनके विरुद्ध अपनी आवाज उठाई है। श्री हॉस्केनके नेतृत्वमें उसके शिष्टमण्डलने लॉर्ड सेल्बोर्नके सामने यह स्पष्ट कर दिया है कि जबसे ट्रान्सवालपर ब्रिटिश अधिकार हुआ है तबसे रंगदार लोगोंके साथ जो व्यवहार हो रहा है वह पहलेसे अधिक ज्यादा बुरा है। उन्होंने और उनके साथी सदस्योंने यह भी कहा कि बहुत-से लोग युद्धको इसलिए ठीक समझते थे कि उनकी सम्मतिमें यह स्वतन्त्रताका युद्ध था। पादरी श्री फिलिप्सने कहा कि वे अपनी जेबसे धन व्यय करके धर्म-युद्धके पक्षमें प्रचार करने इंग्लैंड गये थे क्योंकि बोअर शासनमें रंगदार लोगोंपर जो ज्यादतियाँ की जा रही थीं उन्हें वे सहन नहीं कर सके थे परन्तु पादरी महोदयने अब अनुभव किया है कि इन जातियोंकी हालत ब्रिटिश शासनमें तनिक भी नहीं सुधरी है।

लॉर्ड सेल्बोर्नने उत्तर वही दिया जिसकी आशा की जाती थी। उन्होंने इस प्रश्नका अध्ययन स्वतन्त्र रूपसे नहीं किया था। इसलिए वे कोई मत प्रकट नहीं कर सके। परन्तु परमश्रेष्ठने कहा:

> यदि ब्रिटिश शासनमें सभ्य अथवा असभ्य वतनियोंके साथ किसी प्रकारका अन्याय होता है तो यह हमारे शासनपर कलंक और धब्बा है और ऐसा विषय है जिसके बारेमें मैं व्यक्तिगतरूपमें अनुभव करता हूँ कि यह अपमानजनक बात है।

१. पॉलस स्टीफॅनस जोहानिस क्रूगर (१८२५-१९०४) बोअर नेता, ट्रान्सवालके राष्ट्रपति १८८३-१९।
२. ट्रान्सवाल विधान परिषदके सदस्य।

ये शब्द उस व्यक्तिने कहे हैं जो ट्रान्सवालका शासक है। ईश्वर करे, परमश्रेष्ठने जिस नीतिका इस प्रकार साहसपूर्वक प्रतिपादन किया है, उसे क्रियान्वित करनेका भी उन्हें यथेष्ट साहस और बल प्राप्त हो।

ब्रिटिश भारतीयोंके लिए यह मुलाकात महत्त्वहीन नहीं है। शिष्टमण्डलसे परमश्रेष्ठने जो कुछ कहा वह सब उनपर भी समान रूपसे लागू होता है। और लॉर्ड सेल्बोर्नने जिस नीतिका प्रतिपादन किया वही नीति समस्त ब्रिटिश प्रजाओंपर लागू होने योग्य है। यह खुशीकी बात है कि लॉर्ड सेल्बोर्नके रूपमें ट्रान्सवालको ऐसा गवर्नर और दक्षिण आफ्रिकाको ऐसा उच्चायुक्त मिला है जो कि विरोधी स्वार्थोंके बीच न्यायके लिए दृढ़संकल्प है।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन १२-८-१९०५

५६ नेटालके नये कानून

नेटाल सरकारने बस्तीके सम्बन्धमें और जमीनपर कर लगानेके सम्बन्धमें जो कानून बनानेका विचार किया था वह समाप्त हो गया है। विधान परिषदने इन दोनों विधेयकोंको और बस्तियों पर कर लगाने-सम्बन्धी विधेयकको अस्वीकार कर दिया है। इसलिए हमें बस्तीके सम्बन्धमें जो भय था वह फिलहाल तो दूर हो गया है। यद्यपि यह नहीं कहा जा सकता कि ये विधेयक हमारी अर्जीके कारण समाप्त हुए हैं फिर भी इतना तो निःसन्देह है कि हमारी अर्जीका असर पड़ा है। इससे हमें यह सबक लेना है कि यदि हम मेहनत करें तो कुछ-न-कुछ फल मिले बिना नहीं रह सकता।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन १२-८-१९०५

५७ ट्रान्सवालमें वतनियोंको जमीनका अधिकार

ट्रान्सवालका सर्वोच्च न्यायालय सदा काले लोगोंको लाभ पहुँचाया करता है अर्थात् वह न्यायकी अदालतमें गोरोंकी रहमत माने बिना काले-गोरेको समान समझकर इन्साफ करता है। पॉचेफस्ट्रूममें पादरी मार्गोका गिरजाघर है। उस गिरजाघरके उसके न्यासियोंके नाम चढ़ानेकी अर्जी देनेपर उक्त न्यायालयने[1] निर्णय दिया है कि इस प्रकारकी जमीन काले लोगोंके नाम दर्ज की जा सकती है। जमीनका इस प्रकार दर्ज किया जाना कानूनन मना नहीं है। इस मुकदमेसे प्रतीत होता है कि प्रिटोरिया, जोहानिसबर्ग आदि स्थानोंमें जो मस्जिद हैं वे न्यासियोंके नामपर चढ़ाई जा सकती हैं। यह प्रश्न प्रिटोरिया आदिकी जमातोंके ध्यान देने योग्य है।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन १२-८-१९०५

१. मई ४, १९०५को सर्वोच्च न्यायालयके न्यायाधीश जेम्स रोज-इनेसने यह फैसला दिया था।

५८. इंग्लैंड और जापानके बीच सन्धि

इंग्लैंड और जापानके बीच जो सन्धि हुई थी उसपर पुनर्विचार करनेका समय निकट आ रहा है। इसलिए इस सम्बन्धमें ब्रिटिश राजनयिक क्षेत्रोंमें चर्चा चल रही है। दोनों राज्योंके बीच १ जनवरी १९०२ को पाँच वर्षके लिए सन्धि हुई थी। लेकिन उसमें यह भी शर्त थी कि पाँचवें वर्षके अन्त तक किसी भी पक्षकी तरफसे उस सन्धिको तोड़नेकी पूर्व सूचना न मिले तो वह पाँच वर्षके उपरान्त भी कायम रहे, और उसके बाद जो पक्ष उसे तोड़ना चाहे वह एक वर्ष पहले इत्तला भेजे। यदि इस सन्धिकी समाप्तिके समय कोई पक्ष युद्धमें उलझा हो तो यह सन्धि तबतक कायम रहे जबतक युद्ध शान्त न हो जाये।

इसके अतिरिक्त यदि दोनोंमें से एक पक्षको किसी शक्तिके विरुद्ध लड़ाई छेड़नी पड़े तो दूसरे पक्षको किसी तीसरी शक्तिको उसमें शामिल होनेसे रोकनेका प्रयत्न करना चाहिए। और यदि कोई तीसरी शक्ति लड़ाईमें उतरे हुए पक्षके मुकाबले विरोधी पक्षको सहायता दे तो दूसरा पक्ष लड़ाईमें व्यस्त पक्षकी सहायता तुरन्त करे।

ऊपरकी शर्तोंके अनुसार यदि आगामी वर्षकी १ जनवरी तक सन्धि भंग करनेकी चेतावनी किसी पक्षको नहीं मिलती तो यह सन्धि पाँच वर्ष उपरान्त भी जारी रहेगी। इसके विपरीत यदि इस बीच सन्धि-भंग करनेकी चेतावनी दे दी गई और सन्धिकी अवधिका अन्त होनेपर भी रूसके साथ युद्ध चलता रहा तो भी युद्धकी समाप्ति तक सन्धि कायम रहेगी।

इंग्लैंड और जापान दोनों पक्षोंके लिए सन्धि बड़ी लाभदायक सिद्ध हुई है। वास्तवमें तो इससे सारी दुनियाको लाभ हुआ है, ऐसा मानना चाहिए। क्योंकि यदि रूसकी सहायताके लिए कोई तीसरी शक्ति मैदानमें आती तो इंग्लैंडको जापानकी मददके लिए लड़ाईमें आना पड़ता और ऐसा होनेपर एक बड़े पैमानेपर संसारकी शान्तिमें गहरी बाधा उपस्थित होती ऐसा दिखाई पड़ रहा है। इन सबसे ऐसी आशा करनेके पर्याप्त कारण मौजूद हैं कि यह सन्धि आगे भी कायम रहेगी।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन १२-८-१९०५

५९. पत्र : तैयब हाजी खान मुहम्मद ऐंड कम्पनीको

[जोहानिसबर्ग]
अगस्त १२, १९०५

सेठ श्री तैयब हाजी खान मुहम्मद ऐंड कं०

आपका पत्र मिला। अब उच्चायुक्तको पत्र नहीं लिखा जा सकता। विलायत पहुँचना ही बाकी रहा है। अथवा यहाँ फिर गड़बड़ी हो तो भी सम्भव है। बल्कि महावीरसे मिलिए और उनसे पूछिए क्या कहते हैं। मैं तुरन्त विलायतको लिखनेकी सलाह नहीं दे सकता। क्योंकि अगर तैयब सेठ आते हैं तो सच्ची लड़ाई यहीं लड़नी है। ज्यों-ज्यों दिन निकलते जायेंगे कठिनाई बढ़ती जायेगी। नीचे लिखे मुताबिक तार करें तो अच्छा होगा

उच्चायुक्त मामलेमें हस्तक्षेपसे इनकार करते हैं। आपको आनेकी जोरदार सलाह देता हूँ।[1]

तयब सेठको अनुमतिपत्रकी जरूरत नहीं पड़ेगी इसलिए उसकी कोई फिक्र नहीं करनी है।

मो० क० गांधीके सलाम

सेठ तैयब हाजी खान मुहम्मद ऐंड कं०
बॉक्स १५७
प्रिटोरिया

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें गुजरातीसे पत्र-पुस्तिका (१९०५) संख्या ९३४

६० पत्र : हाजी हबीबको

[जोहानिसबर्ग]
अगस्त १४, १९०५

सेक्रेटरी साहब,

आपका पत्र आनेसे मुझे अपने भाषण[2] याद आ रहे हैं। मैंने आपसे कहा था कि 'स्टार' की तारीखें भेजूँगा। चारों भाषण १०, १८ और २९ मार्चके 'स्टार' में प्रकाशित हुए हैं। इन चारों भाषणोंको चाहे जहाँ भेजकर इनका खुलासा करानेमें मेरी पूरी रजामन्दी है। मैंने इन भाषणोंको फिर अंग्रेजीमें पढ़ा है। और मुझे कहना चाहिए कि इनमें किसी भी धर्मके विरुद्ध मैंने एक भी कड़वा शब्द नहीं कहा है। इनमें हरएककी तारीफ की है और प्रत्येककी खूबियाँ बताई हैं। मुझे स्वप्नमें भी किसीको दुःख पहुँचानेका खयाल नहीं आता। फिर भी ये कितने ही भाइयोंको बुरे लगे हैं, इसका मुझे दुःख है। और किसी भी प्रकारसे यदि मैं उनका मन शान्त कर सकूँ तो ऐसा करना चाहता हूँ। यदि और भी स्पष्टीकरण आवश्यक हो तो लिखिए।

मो० क० गांधीके सलाम

श्री हाजी हबीब
बॉक्स ५७
प्रिटोरिया

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें गुजरातीसे पत्र-पुस्तिका (१९०५) संख्या ९५

१. मूल पत्रमें ऊपरके इस अनुच्छेदका मजमून अंग्रेजीमें है।
२. गांधीजीके हिन्दू धर्म पर दिये गये चार व्याख्यान, देखिए, खण्ड ४, पृष्ठ ३९५, ४०२, ४३५।

६१ पत्र मुख्य अनुमतिपत्र-सचिवको

[जोहानिसबर्ग]
अगस्त १५, १९०५

सेवामें
मुख्य अनुमतिपत्र-सचिव
पो ऑ बॉक्स ११९९
जोहानिसबर्ग

महोदय

मैं पत्रवाहक जॉन सोलंकको उसके अनुमतिपत्र तथा पंजीपत्रके लिए भेज रहा हूँ। मेरी नम्र सम्मतिमें उसके पास जो कागज-पत्र हैं उनसे यह निर्विवाद सिद्ध होता है कि वह ११ मई १९०२को उपनिवेशमें था और उससे नहीं है। वह अपने नामके पंजीयनके सिलसिलेमें जो तफसील देता है उससे यह जाहिर होता है कि उसका पंजीयन बोअर सरकारके जमानेमें हुआ होगा। मेरा खयाल भी ऐसा ही है। उसके वर्गका आदमी किसी हालतमें पंजीकरणसे नहीं बच सकता विशेषतः जब वह इतने लम्बे अरसेसे देशमें रहता हो — और पत्रवाहक निःसन्देह यहाँ लम्बे अरसेसे रहता जान पड़ता है। उसने मुझसे कहा है कि इस समय उसकी पहचानके ऐसे कोई लोग जोहानिसबर्गमें नहीं हैं जो इस बातको प्रमाणित कर सकें कि उसने बोअर सरकारके जमानेमें अपना नाम दर्ज कराया था। आदमी मुझे बहुत गरीब लगता था। इसलिए मुझे विश्वास है कि अगरचे वह पहले ३ पौंड जमा करनेके सम्बन्धमें हलफिया बयान पेश करनेकी स्थितिमें नहीं है आप उसे अनुमतिपत्र दे देंगे और उसका नाम भी नये सिरेसे दर्ज करवा देंगे। मुझे मामला बिलकुल सच्चा और सहानुभूतिके योग्य जान पड़ता है।

आपका आज्ञाकारी सेवक
मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]

पत्र-पुस्तिका (१९०५) संख्या ९७१

६२ पत्र अब्दुल रहमानको

[जोहानिसबर्ग]
अगस्त १६, १९०५

श्री अब्दुल रहमान
पो ऑ बॉक्स १२
पॉचिफस्ट्रम

प्रिय महोदय

कल्याणदासको¹ 'इंडियन ओपिनियन' के चन्देके सम्बन्धमें आपने जो मदद दी उसके लिए आपको बहुत धन्यवाद। आपने मुझसे पॉचिफस्ट्रममें रखे मालके बीमेका जिक्र किया था। एक

१ कल्याणदास जगमोहनदास मेहता १९०१ में गांधीजीके साथ दक्षिण आफ्रिका गये थे और वहाँ वे लगभग ५ वर्ष रहे। उन्होंने १९०४ में जोहानिसबर्गके प्लेगके समय बहुत काम किया था।

कम्पनी है जो अगर इमारत अच्छी और उपयुक्त हो तो मेरा खयाल है ७ पौंड ९ शिलिंगके हिसाबसे ऐसे मालका बीमा कर सकती है। अगर कोई अपने मालका बीमा करानेके इच्छुक हों तो मेहरबानी करके मुझे खबर कीजिये।

आपका सच्चा
मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]

पत्र-पुस्तिका (१९०५) संख्या ९८१

६३. क्या भारत जागेगा?

कर्जन साहब बंगालके दो भाग करके एक भाग असममें जोड़ देनेकी कोशिशें काफी अरसेसे कर रहे हैं। वे इसका कारण यह बताते हैं कि बंगाल इतना बड़ा प्रान्त है कि उसका सारा काम-काज एक गवर्नर नहीं देख सकता। असम एक छोटा-सा प्रान्त है, उसकी जनसंख्या बहुत कम है, लेकिन यह बंगालसे सटा हुआ है। इसलिए माननीय गवर्नर जनरलका इरादा है कि बंगालका कुछ हिस्सा असममें मिला दिया जाये। बंगाली लोग कहते हैं कि बंगाली और असमी दोनों बिलकुल अलग-अलग हैं। बंगाली अत्यन्त शिक्षित हैं। वे एक जमानेसे एक साथ रहते आये हैं। उनको विभक्त करके उनका बल तोड़ देना और उनमें से बहुतोंको असमके साथ मिला देना यह बड़े अन्यायकी बात है। इस बारेमें बहुत चर्चा हो चुकी है। कुछ दिन पहले भी ब्रॉड्रिकने बताया था कि उनको कर्जन साहबका विचार पसन्द आया है। यह समाचार जबसे भारत पहुँचा है तबसे बंगालमें जोर-शोर सभाएँ की जा रही हैं। उनमें सभी लोगोंने भाग लिया है। सुना है चीनी व्यापारी भी इनमें शरीक हुए हैं। ये सभाएँ इतनी विशाल हुई बताई जाती हैं कि इनके बारेमें तार ठेठ दक्षिण आफ्रिका तक पहुँचे हैं। ऐसा प्रतीत होता है कि इन सभाओंमें प्रथम बार ही ऐसे प्रस्ताव प्रस्तुत किये गये हैं कि सरकार घबड़ा जायेगी। मालूम होता है भाषणोंमें यह कहा गया है कि यदि सरकार न्याय न करे तो भारतके व्यापारी विलायतके साथ बिलकुल व्यापार न करें। यह बात हम लोगोंने चीनसे सीखी यह हमें स्वीकार करना चाहिए। किन्तु यदि सचमुच ही इसके अनुसार अमल कर दिखाया जाये तो हमारे कष्टोंका अन्त शीघ्र हो जायेगा और इसमें कोई आश्चर्यकी बात न होगी। क्योंकि यदि ऐसा हुआ तो विलायतको बड़ा नुकसान पहुँचेगा। इसके खिलाफ सरकारको कोई उपाय भी न मिलेगा। लोगोंसे व्यापार करनेकी जबरदस्ती नहीं की जा सकती। यह उपाय बहुत सीधा और सरल है। लेकिन क्या हमारे लोग बंगालमें इतना ऐक्य बनाये रखेंगे? देशके हितके लिए व्यापारी लोग हानि सहन करेंगे? यदि हम इन दोनों प्रश्नोंके उत्तरमें हाँ कह सकें तो मानना होगा कि भारत सचमुच जाग गया है।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, १९-८-१९०५

६४ सर मंचरजी और श्री लिटिलटन

ट्रान्सवालमें भारतीयोंपर पड़नेवाली मुसीबतोंके सम्बन्धमें गत वर्ष विधान-परिषदमें यह प्रस्ताव किया गया था कि श्री लिटिलटन आयोगकी नियुक्ति करें। सर मंचरजीने पूछा था कि वे इस आयोगकी नियुक्तिके सम्बन्धमें अपनी सम्मति दे रहे हैं। उन्होंने इस बारेमें फिर जो प्रश्न किया है उसके उत्तरमें श्री लिटिलटनने कहा है कि अभी इस सम्बन्धमें परामर्श हो रहा है। इससे पता चलता है कि श्री लिटिलटनके साथ ट्रान्सवालकी सरकार असहमत रहती है और दोनों एकमत नहीं हैं। श्री लिटिलटनकी माँग यह है कि नेटाल उपनिवेशके लिए प्रवासी अधिनियमके समान कानून बनाये जायें और सर आर्थर लाली चाहते हैं कि केवल भारतीयोंपर ही लागू होनेवाले कानून बनाये जायें।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन १९–८–१९०५

६५ एलिज़ाबेथ फ्राइ[1]

अंग्रेज लोग हमपर शासन करते हैं और हमारी हालत खराब है, इसके कई कारण हैं। उनमें से एक कारण यह है कि इस जमानेमें अंग्रेजोंमें हमारी अपेक्षा बहादुर, धार्मिक और पवित्र स्त्री-पुरुष अधिक हुए मालूम पड़ते हैं। कुछ भी हो पवित्र स्त्री-पुरुषोंके जीवन वृत्तान्त जाननेसे और उनपर सतत मनन-चिन्तन करनेसे हमें लाभ होगा ही ऐसा समझकर समय-समयपर हम इस प्रकारके जीवन-वृत्तान्त देते रहेंगे। हमें आशा है कि इस अखबारके पाठक इन्हें पढ़कर और वैसा ही आचरण करके हमको प्रोत्साहित करेंगे। हम पहले लिख चुके हैं कि *इंडियन ओपिनियन* की फाइल प्रत्येक ग्राहक रखे। हम इस अवसरपर उस बातकी याद पुनः दिलाते हैं।

इंग्लैंडमें एक शताब्दी पहले श्रीमती एलिज़ाबेथ फ्राइ हो गई हैं। वे अत्यन्त धार्मिक महिला थीं और उनका ध्यान मानव-जातिके दुःख दूर करनेकी ओर रहता था। वे खुद हमेशा बीमार रहा करती थीं किन्तु इस बातकी उन्होंने परवाह नहीं की। अपने ऊपर कष्टोंके आनेसे वे हारती न थीं। इंग्लैंडमें न्यूगेट नामका एक कारागृह है। उसमें सौ वर्ष पहले कैदी स्त्री-पुरुष बुरे ढंगसे रखे जाते थे। उनकी सार-सँभाल कोई नहीं करता था। उनकी दशा बहुत खराब थी। उनमें अपराध घटनेके बदले बढ़ते थे। उनका जीवन पशु-तुल्य जानवरों-जैसा था। नतीजा यह होता था कि जो लोग न्यूगेटमें कैद काटकर बाहर आते थे उनकी दशा दयनीय हो जाती थी। यह कष्ट साधु प्रकृति एलिज़ाबेथ फ्राइसे देखा नहीं गया। उनका जी सन्तप्त हो उठा और उन्होंने अपना जीवन इस प्रकारके कैदियोंकी हीन दशा सुधारनेमें अर्पित कर दिया। वे अधिकारियोंकी स्वीकृति प्राप्त करके न्यूगेट स्त्री कैदियोंकी सहायता करने लगीं। वे उनको सुख-सुविधाएँ दिलाती। इतना ही नहीं उन्होंने लेख लिखकर तथा अपने परिश्रमसे

[1] एलिज़ाबेथ फ्राइ १७८०–१८४५, सोसायटी ऑफ फ्रेंड्सकी सदस्या थीं। वे जेल-सुधारकी जननी थीं।

अधिकारियों द्वारा अनेक सुधार करवाये। इस प्रकारके परिश्रमके फलस्वरूप कैदियोंकी स्थिति बहुत सुधर गई। किन्तु उनके लेखे यह पर्याप्त नहीं था। उन दिनों कैदियोंको आस्ट्रेलिया भेजा जाता था। जहाजमें उनको बड़ा कष्ट दिया जाता था। स्त्री कैदियोंकी आबरू भी न रह पाती थी। एलिजाबेथने देखा कि अपने किये करायें सारे कामपर इन कैदियोंको ले जानेमें पानी फिर जाता है। इस कष्टको मिटानेके लिए वे स्वयं बड़ी मुसीबतें झेल कर जहाजोंपर आया-जाया करती थीं। अन्तमें उन्होंने जहाज-यात्राके कष्टोंको भी दूर कराया। फिर आस्ट्रेलियामें कैदियोंको जो कष्ट होता था उसमें भी सुधार करवाया और अन्तमें कानून बना कि आस्ट्रेलियामें पहुँचनेपर छ: महीने तक तालीम देनेके बाद कैदियोंको दूसरोंकी नौकरीमें सौंप दिया जाये। इस प्रकार दुखियोंके दुःखमें बहुत भाग लेनेवाली यह भली महिला अपना दुःख भूलकर ईश्वरका भजन करती हुई परलोक सिधारी।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, १९-८-१९०५

६६. ब्रिटिश संघ[1]: एक सुझाव

दक्षिण आफ्रिकाको अपनी भूमिपर प्रतिष्ठित वैज्ञानिकोंके इस संघका स्वागत करनेका अपूर्व सम्मान प्राप्त हुआ है। ब्रिटिश विज्ञान प्रगति संघ (ब्रिटिश असोसिएशन फॉर द एडवान्समेंट ऑफ साइन्स) एक ऐसी संस्था है जिसपर साम्राज्य गर्व कर सकता है। दक्षिण आफ्रिकी संघ (साउथ आफ्रिकन असोसिएशन)ने अपनी सहधर्मी संस्थाको इस देशमें बुलानेका विचार किया यह खुशीकी बात है। इसके परिणाम दूरगामी हो सकते हैं। इसस संघका मुख्य उद्देश्य — यानी विज्ञानका प्रचार — तो सिद्ध होगा ही उसमें भी एक बड़ा लाभ यह होगा कि ब्रिटेन दक्षिण आफ्रिका और अन्य उपनिवेश एक-दूसरेके निकट आ जायेंगे। यह तीसरा अवसर है कि संघकी बैठक ब्रिटिश द्वीप-समूहके बाहर हो रही है। ऐसी यात्राओंके महत्त्व तथा जिस सहृदयतासे सदस्योंका स्वागत किया गया है, उसे देखते हुए यह नहीं लगता कि यह क्रम अब टूटेगा। हम उस दिनकी प्रतीक्षामें हैं जब यह बैठक भारतमें होगी। हमें विश्वास है कि ऐसी बैठकसे न केवल भारतका हित होगा बल्कि संघको भी लाभ होगा।

हमें एक नम्र सुझाव रखना है। हमने कहा है कि बाहरके देशोंको ऐसी यात्राएँ साम्राज्यके दूर दूर तक फैले हुए उपनिवेशोंको जोड़नेमें बहुत सहायक होंगी। और इसलिए कि संघको सर्वत्र उसके वास्तविक रूपमें मान्य किया जाये अर्थात् यह कि संघ साम्राज्यकी एक बड़ीसे-बड़ी सम्पत्ति है हम चाहेंगे कि उसका वर्तमान नाम बदल कर ब्रिटिश साम्राज्य विज्ञान प्रगति संघ कर दिया जाये।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, २६-८-१९०५

1. १८३१ में स्थापित।

६७. लॉर्ड कर्ज़न

होनी होकर रही। लॉर्ड कर्ज़न अब भारतके वाइसराय नहीं रहे। यह भाग्यकी विडम्बना है कि जब उनका हटाया जाना अवश्य मालूम पड़ता था तभी उन्हें अत्यन्त अपमानजनक परिस्थितियोंमें जाना पड़ा। वे ऐसे वाइसराय थे जिनके लिए प्रतिष्ठा ही सब कुछ थी और जो अपने हाथमें लिये हुए कार्योंमें सफलता प्राप्त करनेके लिए अपनी प्रतिष्ठापर बहुत ज्यादा भरोसा रखते थे। अब उन्हें भारतसे जाना पड़ा है, तब उनकी प्रतिष्ठा नामके लिए भी शेष नहीं रही है। उनपर यह दुर्भाग्य युद्ध-मन्त्री द्वारा लगाये गये लांछनके कारण आया। इससे यह अधोगति और भी स्पष्ट हो जाती है जो उन्हें सहनी पड़ी। ऐसा लगता है मानो यह उन करोड़ों पीड़ितोंकी प्रार्थनाका ही फल था जो उनके स्वेच्छाचारी शासनमें कराह रहे थे।

हमारा खयाल है कि लॉर्ड कर्ज़नने जो कुछ किया नेकनीयतीसे प्रेरित होकर किया। उनका विश्वास निस्सन्देह यह था कि भारतीयोंके विरोधके बावजूद वे खुद जिन बातोंको सुधारका नाम देना पसन्द करते उन्हें जबरदस्ती लोगोंके गले उतारकर उनका हित ही कर रहे हैं। पद सँभालते ही उन्होंने जो ऊँची आशाएँ उत्पन्न की थीं वे अन्य किसी वाइसरायने कभी नहीं की। उनके भाषणोंसे भारतीय विश्वास करने लगे थे कि वे भारतीय समस्याओंके समाधानके मामलेमें लॉर्ड रिपनसे[1] बाजी मार ले जायेंगे। ब्रिटिश सैनिकोंके व्यवहारके सम्बन्धमें उन्होंने जो सम्मति लिखी थी उसके द्वारा उन्होंने अपने वचनोंको कार्यरूप देकर भी दिखा दिया था। नमक-करमें कमी और दक्षिण आफ्रिकी ब्रिटिश भारतीयोंके पक्षका समर्थन उनकी सदा ही ख्याति देंगे। परन्तु इन बातोंकी पूरी गुंजाइश छोड़नेके पश्चात् भी विशुद्ध परिणाम यह है कि उन्होंने अपने कार्य-कालका आरम्भ लोगोंकी जितनी सद्भावनाके साथ किया था उसके अन्तमें न उनकी उतनी ही अप्रियता कमा चुके हैं। यद्यपि उन्हें त्यागपत्र एक ऐसे दुर्भाग्यपूर्ण कारणसे देना पड़ा जो कि असैनिक शासनपर सैनिक निरंकुशताकी जीतका सूचक है, यद्यपि हम यह कल्पना बखूबी कर सकते हैं कि आज हजारों भारतीय घरोंमें आनन्द मनाया जा रहा होगा और ईश्वरको धन्यवाद दिया जा रहा होगा — इस मुक्तिपर, जो शुभ समझी जायेगी और यह अकारण नहीं।

लॉर्ड कर्ज़नकी कारगुजारियोंको देखते हुए किसी नये वाइसरायसे कोई आशाएँ बाँधना बड़ा जोखिम-भरा काम हो गया है। यदि हम सुखी होना चाहते हैं तो शायद कोई आशा न बाँधना ही ज्यादा निरापद है। परन्तु नवीनीत वाइसराय *लॉर्ड मिंटोके*[2] रूपमें भारतको एक उदार पुरुष मिल रहा है। भारत उनसे अपरिचित भी नहीं है, क्योंकि वे एक ऐसे प्रतिष्ठित वंशके हैं जिसका एक और भी व्यक्ति भारतका वाइसराय रह चुका है। अपने औपनिवेशिक अनुभवसे *भारतके शासनमें उन्हें अतिरिक्त सहायता मिलनेकी सम्भावना है। उपनिवेशोंके शासनकी परम्पराएँ* सदा विशुद्ध वैधानिक रही हैं और यदि भारतमें भी उनका पालन किया गया तो सम्राट एडवर्डके साम्राज्यके इस भागमें लगभग पाँच वर्ष तक शान्तिपूर्ण शासनकी आशा की जा सकती है। ईश्वर करे कि ऐसा ही हो। उस देशमें एक बार फिर दुर्भिक्षका खतरा है, जहाँ अब भी लोग प्लेगसे मर रहे हैं और निर्धनता प्रतिदिन लाखों घरोंका धीरज छीने ले रही है। इस निहुरी

१. (१८२७–१९०९) भारतके वाइसराय और गवर्नर जनरल १८८०–४ और उपनिवेश मंत्री, १८९२–५।
२. अर्ल (Earl) मिंटो, लॉर्ड मिंटो, वाइसराय भारत-शासक : १९०५–१०।

भयंकर आपत्तियोंसे रक्षाका एकमात्र उपाय यह है कि सामितोंके साथ अधिकतम सहानुभूति और दयालुताका व्यवहार किया जाये।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन २६-८-१९०५

६८. प्रोफेसर परमानन्द

ऐंग्लो-वैदिक कॉलेजके प्रतिष्ठित विद्वान प्रोफेसर परमानन्दको अब हमारे बीच रहते कुछ सप्ताह हो चुके हैं। उन्होंने बड़ी-बड़ी सभाओंमें रोचक व्याख्यान दिये हैं। उनका उद्देश्य आर्यसमाजकी शिक्षाओंका प्रचार करनेका जान पड़ता है। इस समाजने इसके धार्मिक सिद्धान्त कुछ भी हों अत्यन्त उपयोगी और व्यावहारिक कार्य किया है। इसने सच्चे देशभक्त और बहुत-से आत्मत्यागी शिक्षक उत्पन्न किये हैं। कुछ महीने पूर्व भारतमें जो भयंकर भूकम्प आया था उसमें भी आर्यसमाज उत्तम काम कर चुका है। प्रोफेसर परमानन्द कार्यकर्त्ताओंके उसी समाजसे सम्बन्धित हैं और इसलिए दक्षिण आफ्रिकाके भारतीयोंसे उनको हार्दिक स्वागत पानेका हक है। निश्चय ही हम लोगोंके बीच विद्वान और सुसंस्कृत भारतीय बहुत नहीं आ सकते।

लेकिन प्रश्न यह है कि हम ऐसे व्यक्तियोंसे क्या लाभ उठायें या वे हमारा क्या उपयोग करें। हम कबूल करते हैं कि अपने बीच धार्मिक आधारपर तीव्र प्रचार-कार्यके लिए हम अभी परिपक्व नहीं हैं। यहाँकी जमीन इस कार्यके लिए तैयार नहीं है। हरएक मजहब वालेके लिए अलगसे अपना प्रचारक और हितरक्षक रख सकना सो बात नहीं है। आर्यसमाज भारतके किसी स्थापित रूढ़िगत धर्मका प्रतिनिधित्व नहीं करता। यदि हम यह कहें कि आर्य समाज एक ऐसा फिर्का है जो अभी अपने अस्तित्वके लिए संघर्ष और नये अनुयायी बनानेके उपयुक्त परिस्थिति तैयार कर रहा है तो इससे उसका यश कम नहीं होता। वह हिन्दू धर्ममें सुधारका प्रतीक है। हम अनुभव करते हैं कि दक्षिण आफ्रिकाके भारतीय अभी सुधारके किसी भी सिद्धान्तको ग्रहण करनेके लिए तैयार नहीं है। जहाँतक भारतीयोंमें आन्तरिक कामका सम्बन्ध है उनकी आवश्यकता है शिक्षण और, जितना भी अधिक मिले उतना ठीक प्रकारका शिक्षण। हमने सदा माना है कि भारतीय गृहस्थीमें सुधारकी गुंजाइश है। और यह सुधार इन सैकड़ों भारतीय युवकोंके शिक्षणके बिना न होगा जो इस उपमहाद्वीपमें प्राय: सर्वथा उपेक्षित हैं। हमारी नम्र सम्मतिमें प्रोफेसर परमानन्द सबसे अच्छा कार्य यह कर सकते हैं कि वे इस प्रश्नकी ओर अपना ध्यान दे जायें। वे जिस समाजके प्रतिनिधि हैं उसकी प्रसिद्ध पुख्ता और उपयोगिता प्रदर्शित करनेका यह एक बहुत अच्छा व्यावहारिक और प्रभावशाली उपाय है। हमारा खयाल है कि दक्षिण आफ्रिकामें भारतीय बालकोंको वेतन-भागी अध्यापकोंके द्वारा पर्याप्त शिक्षण दिलाना प्राय: असंभव है। हमें प्रारम्भिक शिक्षण तक के लिए उच्चतम योग्यता अनुभव और संस्कृतिके अध्यापकोंकी आवश्यकता है।

हम इन विचारोंको प्रोफेसर परमानन्द और उनके द्वारा आर्यसमाज अथवा इसी प्रकारकी भारतकी अन्य संस्थाओंकी सेवामें — उनका मत या धर्म चाहे जो हो — हार्दिक विचारके लिए प्रस्तुत करनेका साहस करते हैं।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, २६-८-१९०५

६९. विश्व-धर्म[1]

यह जमाना अब नहीं रहा जब कि किसी एक मतके माननेवाले लोग मौका-बे-मौका दावा किया करते थे कि हमारा मजहब ही सच्चा मजहब है, दूसरे सब मजहब झूठे हैं। स[ब] धर्मोंके प्रति सहनशीलताकी बढ़ती हुई भावना भविष्यके लिए शुभ-सूचक है। लन्दनसे 'क्रिश्चियन वर्ल्ड' नामक एक साप्ताहिक मजहबी अखबार प्रकाशित होता है। इसमें वे भी नामं... एक सज्जन इस विषयपर प्रायः लेख लिखा करते हैं। मैं इस समाचारपत्रमें अभी हालमें ही प्रकाशित उनके एक लेखसे कुछ उद्धरण यहाँ देना चाहता हूँ।

लेखक बहुत ही उदार और उदात्त भावनाके साथ ईसाई दृष्टिकोणसे इस प्रश्नका विवेचन करते हैं और यह दिखाते हैं कि किस प्रकार संसारके सब मजहब आपसमें जुड़े हुए हैं और इनमें से प्रत्येकमें कुछ ऐसे तत्त्व भी हैं जो सभीमें विद्यमान हैं। एक ईसाई मत-प्रचारक अखबारमें ऐसे लेखका प्रकाशित होना उल्लेखनीय है और यह प्रकट करता है कि वह समयके साथ चल रहा है। कुछ वर्ष पूर्व ऐसा लेख धर्म-विरोधी उपदेश ठहराया गया होता और उसका लेखक अपने ही उद्देश्यका द्रोही कहा जाता और निन्दाका पात्र बन गया होता।

दूसरे मजहबोंके प्रति जो नई भावना ईसाइयोंकी मनोवृत्तिको बदल रही है उसका उल्लेख करने और यह दिखानेके बाद कि किस प्रकार कुछ साल पहले यह धारणा फैली हुई थी कि अन्य अनेक झूठे मजहबोंके बीच केवल ईसाई धर्म ही एक सच्चा धर्म है, उन्होंने कहा है :

> भारी परिवर्तन हुए हैं और इन परिवर्तनोंका एक पहलू औसत आदमीको अत्यधिक चकित कर देनेवाला यह रहस्योद्घाटन है कि वह अबतक जिन सिद्धान्तोंके बीच पला है वे *प्रारम्भिक ईसाई धर्मकी शिक्षा कभी नहीं थे।* वह देखता है कि अन्य जातियों और धर्मोंके विषयमें उसे अबतक जो राय रखनी पड़ी है पुराने धर्मोपदेशकोंमें से सबसे उदारचेता उससे बहुत भिन्न विचार रखते थे। वह मसीहा-कालके इतने समीपवर्ती जस्टिन मार्टरके विषयमें सुनता है जो सुकरातके ज्ञानको दिव्यवाणी से प्रेरित मानते थे। वह ऑरिजेन और मिस्र-निवासी ग्रेगरीके सिद्धान्तोंका परिचय प्राप्त करता है जिनकी सीख यह है कि समस्त मानव जाति एक ही दिव्य निर्देशके अधीन है। वह लक्टेंशसके विषयमें भी सुनता है जो यह मानते थे कि ईश्वरकी सत्तामें विश्वास सभी धर्मोंका समान गुण है।
>
> दरअसल प्रत्येक युगमें अपेक्षाकृत सूक्ष्म चिन्तन करनेवाले ईसाइयोंने प्रायः इसी पद्धतिपर सोचा है। जरूरत सिर्फ इस बातकी रही है कि मनुष्य अन्य जातियोंके सम्पर्कमें — *चाहे साहित्यके माध्यमसे हो या साक्षात् रूपमें* — आयें जिससे वे इस बातकी अनुभूति कर सकें कि धर्मोंके बीचकी अलंघ्य खाई का सिद्धान्त जीवन और आत्मा दोनों धरातलोंपर गलत है।
>
> धर्म अपने विभिन्न नामों और रूपोंमें मानव-हृदयमें एक ही बीज बोता आ रहा है — ज्यों-ज्यों उसका मस्तिष्क ग्रहण करने योग्य होता गया है उसके सामने एक ही तत्त्वका उद्घाटन करता आया है।

१. यह लेख विशेष रूपसे [illegible] में प्रकाशित हुआ।

लेखक आगे कहता है कि अनेक ईसाई संस्थाएँ और सिद्धान्त अन्य धर्मोंके ज्ञानसे ही उत्पन्न हुए हैं। इसमें अनेक प्रतीक प्राचीनकालके ध्वंसावशेष ही हैं।

> इस दृष्टिसे प्राचीन फारसकी मित्र-पूजा कितनी आश्चर्यजनक है! एम० क्यूमाँके शब्दोंमें 'ईसाइयोंकी तरह ही मित्र-धर्मानुयायी परस्पर एक होकर सुगठित समाजोंमें रहते थे और एक-दूसरेको पिता और भाई कहकर पुकारते थे। ईसाइयोंके समान ही वे बप्तिस्मा सहभोज और नामकरण आदि संस्कारोंका पालन करते थे; सर्वमान्य नैतिकताकी शिक्षा देते थे चारित्रिक शौच तथा आत्मत्यागका उपदेश करते थे; और आत्माकी अमरता तथा मरणोत्तर जीवनमें विश्वास करते थे।

अगर लेखक ईसाई धर्मको सर्वोच्च स्थान देना चाहता है तो इसमें कोई आश्चर्यकी बात नहीं। परन्तु यह देखकर सन्तोष होता है कि ईसाई लेखकों तथा समाचारपत्रोंने ऐसी उदार मनोवृत्ति अपनायी है।

सबके हितोंको लक्ष्य बनाकर काम करनेवाले यूरोपीयों तथा भारतीयोंके लिए यह बात विशेष महत्त्व रखती है। भारतका धर्म बहुत प्राचीन है। उसके पास देनेके लिए बहुत-कुछ है। हम दोनोंके बीच एकता बढ़ानेका सबसे अच्छा उपाय यह है कि हममें एक-दूसरेके प्रति हार्दिक सहानुभूति और एक-दूसरेके मजहबके लिए आदर हो। इस महत्त्वपूर्ण प्रश्नपर और अधिक सहिष्णुताका फल हमारे दैनिक सम्बन्धोंमें अधिक व्यापक उदारताके रूपमें प्रकट होगा और वर्तमान मनमुटाव मि° जायेंगे। और फिर क्या यह एक तथ्य नहीं है कि हिन्दुओं और मुसलमानोंके बीच इस प्रकारकी सहिष्णुताकी महती आवश्यकता है? कभी-कभी ऐसा लगाक जाता है कि पूर्व और पश्चिमके बीच सहिष्णुताकी स्थापनाकी इतनी बड़ी आवश्यकता नहीं है जितनी हिन्दुओं और मुसलमानोंके बीच। भारतीयोंके ही आपसी संघर्ष और कलहसे उनका मेलजोल नष्ट न होने पाये। जिस समाजमें फूट है वह टिके बिना रह नहीं सकता। इसलिए मैं भारतीय समाजके सभी अंगोंके बीच पूर्ण एकता और भ्रातृभावनाकी आवश्यकतापर जोर डालना चाहता हूँ।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, २९–८–१९ ५

७० रूसका नया संविधान

रूसके ज़ारने अपनी प्रजाको चुनावपर आधारित संविधान कायम करनेका जो वचन दिया था वह अमलमें लाया गया है। उसकी धाराओंके बारेमें जो तार विलायत आदिसे आये हैं उनसे पता चलता है कि इस समयके प्रजातन्त्रीय राज्य-विधानोंसे यह बहुत कम मेल खाता है। और यह भी भविष्यमें सही रूपसे अमलमें लाया जायेगा या नहीं यह बहुत सन्देहपूर्ण मालूम देता है। इस विधानमें कानून बनानेकी सत्ता ऊपरी दृष्टिसे तो चुने हुए मण्डलको दी गई है किन्तु उन सारी धाराओंके बावजूद ज़ारने अपनी राज्यसत्ता कायम रखी है। इसलिए यह विधान अजीब-सा दीखता है। चुनी हुई राष्ट्रीय परिषद जिन कानूनोंको स्वीकृत करेगी उनके लिए ज़ारकी सम्मति प्राप्त करना आवश्यक होगा। राजसत्तापर यह परिषद किसी भी प्रकारका नियंत्रण रख सकेगी ऐसा मालूम नहीं होता। फिर भी आगे चलकर अधिक ज़ोर लगानेके लिए इस प्रकारका विधान सीढ़ीका काम देगा इस बातसे इनकार नहीं किया जा सकता।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, २६–८–१९ ५

७१ अब्राहम लिंकन

पिछले सप्ताह हमने एलिज़ाबेथ फ्राइका वृत्तान्त दिया था। इस बार अमेरिकाके एक भूतपूर्व राष्ट्रपतिका वृत्तान्त दे रहे हैं।

ऐसा माना जाता है कि गत शताब्दीमें जो बड़ेसे-बड़ा और भलेसे-भला मनुष्य हुआ वह था अब्राहम लिंकन। अब्राहम लिंकनका जन्म सन् १८ ९ में अमेरिकामें हुआ था। उस समय उसके माँ-बाप बहुत गरीबीकी हालतमें थे। १५ वर्षकी आयु तक उसे बहुत ही थोड़ा शिक्षण मिल पाया था। उसे शायद ही लिखना आता था और वह जगह जगह भटककर काम करके गुज़ारेके लायक थोड़ा-बहुत कमा लेता था।

अन्तमें उसके मनमें आगे बढ़नेका विचार पैदा हुआ। उन दिनों स्टीमरकी या अन्य किसी प्रकारकी सुविधाएँ न थीं। इसलिए वह लकड़ीके तख्तोंपर अमरिकाकी विशाल नदियोंमें प्रवास करता हुआ कितने ही गाँवोंमें गया। एक जगह उसे मुनीमगीरीका काम मिल गया। इस समय उसकी आयु बीस वर्षकी थी। जब उसे यह नौकरी मिली तब उसके मनमें यह समाया कि कुछ अधिक अध्ययन करना चाहिए। इसपर उसने कुछ किताबें खरीद लीं और अपने ही-आप अध्ययन प्रारम्भ किया। इस बीच उसके एक मित्रके मनमें यह विचार आया कि यदि अब्राहम लिंकन कानूनका अध्ययन कर ले तो और उन्नति कर सकेगा। इस सलाहपर उसने अब्राहम लिंकनको एक वकीलके यहाँ लगा दिया। वहाँ उसने बड़ी लगन और श्रमके साथ काम किया तथा अध्ययन भी किया। उसने अपनी चतुराईका इतना अच्छा परिचय दिया कि उसके अधिकारी बड़े प्रसन्न हुए। स्वयं उसको भी यह लगा कि मेरी स्थिति उस समाजकी सेवा करने योग्य है, जिसमें मैंने जन्म पाया है।

उसके मनमें ज्यों ही यह विचार उठा उसने अमेरिकी रिवाजके अनुसार संसदका प्रतिनिधि बननेका इरादा किया। उसने अपनी विशेषताएँ बाहिर करनेके लिए पहला लेख लिखा। उसने बड़ी टक्कर ली परन्तु वह स्वयं अभी इस विभागमें अनभिज्ञ था और उसका प्रतिस्पर्धी एक प्रख्यात व्यक्ति था। इसलिए उसने पराजय पाई किन्तु उसका धीमें पड़नेसे बढ़ गया।

उसकी भावनाएँ और भी तीव्र हो गईं। उस समयके अमेरिकाकी परिस्थितिका सही सही चित्र जिस व्यक्तिकी कल्पनामें आ सके वही लिंकनके गुणों और उसकी सेवाको समझ सकता है। अमेरिका इस समय उत्तरसे दक्षिण तक गुलामोंका पड़ाव बना हुआ था। आफ्रिकाके नीग्रो लोगोंको सरे-आम बेचना और उन्हें गुलामीमें रखना जरा भी अनुचित नहीं माना जाता था। बड़े-छोटे अमीर-गरीब सभी लोग गुलामोंको रखनेमें अनहोनापन नहीं मानते थे। इसमें किसीको कोई बुराई नहीं लगती थी। धार्मिक मनुष्य और पादरी आदि लोग गुलामीकी प्रथाको बनाये रखनेमें आगा-पीछा नहीं करते थे। कुछ तो उसे उत्तेजना देते थे और सब यही समझते थे कि गुलामीकी प्रथा भी ईश्वरी नियम है और नीग्रो गुलामीके लिए ही जन्म हैं। केवल थोड़े ही मनुष्य देख पाते थे कि यह व्यवसाय अत्यन्त दूषित और अधार्मिक है। जो इस प्रकार देख सकते थे वे मौन साधे रहते थे ताकत नहीं आजमाते थे। कुछ लोग गुलामोंकी स्थिति सुधारनेमें थोड़ा-सा योग देकर सन्तोष कर लेते थे। उस समय गुलामोंपर जो अत्याचार किये जाते थे उसका वृत्तान्त सुनकर आज भी हमारे रोंगटे खड़े हो जाते हैं। उनको बाँधकर मारा-पीटा जाता था उनसे जबरदस्ती काम लिया जाता था उन्हें जलाया जाता था बेड़ियाँ पहनाई जाती थीं और यह नहीं कि यह सब एक-दो व्यक्तियोंपर ही किया जाता हो बल्कि सबपर यही बीतती थी। इस प्रकारके विचार जिन लोगोंके दिमागमें गहरी जड़ जमा चुके थे उनके विरोधमें खड़े होकर उनके विचारोंको पलटनेका और इसी व्यवसायपर जिन लाखों मनुष्योंकी आजीविका थी उन मनुष्योंका विरोध मोल लेकर और उनसे लड़ाई करके गुलामोंका बन्धनसे छुड़ानेका निश्चय मनमें लिंकनने किया और उस पार उतारा ऐसा कहा जा सकता है। ईश्वरपर उसकी आस्था इतनी अधिक थी उसका स्वभाव इतना अधिक नरम था और उसकी दया इतनी गहरी थी कि रोज-रोज अपने भाषणों लेखों और रहन-सहनके द्वारा वह लोगोंके मनको बदलने लगा। अन्तमें लिंकनका पक्ष और उसका विरोधी ऐसे दो पक्ष पैदा हो गये और अमेरिकामें बड़ा भारी गरेलू युद्ध हुआ। लिंकन इससे जरा भी डरा नहीं। अबतक वह इतना ऊँचा उठ चुका था कि उस राष्ट्रपतिका पद मिल चुका था। लड़ाई कई वर्ष तक चलती रही परन्तु लिंकन सन् १८५८-५९ में पूर्व ही सारे उत्तर अमेरिकामें गुलामीकी प्रथा बन्द कर चुका था। गुलामोंके बन्धन टूटे। जहाँ जहाँ लिंकनका नाम लिया जाता वहाँ-वहाँ वह लोगोंके दुःख हरनेवाले मनुष्यके रूपमें पहचाना जाता था। उसने इस संघर्षके समय जो जोशीले भाषण दिये उनकी भाषा इतनी उत्तम थी कि वे अंग्रेजी साहित्यमें बहुत ऊँचे दर्जेके भाषण माने जाते हैं।

इतना ऊँचा उठ जानेपर भी लिंकन सदैव विनम्र बना रहा। वह हमेशा यह मानता था कि जो प्रजा या व्यक्ति शक्तिशाली हो उसे अपने बलका उपयोग गरीब अथवा कमजोर लोगोंका दुःख मिटानेके लिए करना चाहिए, न कि ऐसे लोगोंको कुचलनेके लिए। यद्यपि अमेरिका उसकी अपनी जन्मभूमि थी और वह स्वयं अमेरिकी था फिर भी समस्त संसार अपना देश है ऐसा वह मानता था। वह उन्नतिके शिखर तक पहुँच गया था और उसका व्यक्तित्व इतना श्रेष्ठ था फिर भी कुछ दुष्ट लोग यह मानते थे कि गुलामीकी प्रथाको हटाकर लिंकनने बहुत लोगोंको हानि पहुँचाई है। इसलिए एक बार जब यह निश्चित मालूम हुआ कि लिंकन नाट्य-

घरमें आनेवाला है तब उसको गोलीसे मार डालनेका षड्यन्त्र रचा गया। नाटकघरके पात्रोंको ही फोड़ लिया गया था और एक मुख्य पात्रने उसको गोली मारनेका बीड़ा उठाया था। जब वह नाटकमें अपनी विशेष कोठरीमें बैठा था तब वह दुष्ट मनुष्य उस कोठरीमें गया, दरवाजा बन्द किया और लिंकनको गोली मार दी। यह घातक मनुष्य भाग गया। जब लोगोंने यह भयानक घटना देखी तब किसी न्यायकी अदालतमें आनेसे पहले ही उन्होंने उस हत्यारेको चीर डाला। ऐसी करुण रीतिसे अमेरिकाके इस महान राष्ट्रपतिकी मृत्यु हुई। हम कह सकते हैं कि लिंकनने दूसरोंके दुःख मिटानेके लिए अपनी जिन्दगी न्योछावर कर दी। इसके बावजूद कहा जा सकता है कि लिंकन अब भी जीवित है। उसका बनाया हुआ संविधान जबतक अमेरिकामें चल रहा है। और जबतक अमेरिकाका अस्तित्व है तबतक लिंकनका नाम अमर रहेगा। ऊपरके वृत्तान्तसे पता चला होगा कि लिंकन अमर हो गया है इसका कारण उसका बड़प्पन चतुराई अथवा धन नहीं था, उसकी भलाई थी। लिंकन जैसे श्रेष्ठ रत्न भिन्न-भिन्न प्रजामें होते हैं अथवा होंगे यह आशा आगे बढ़ सकती है।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन २६-८-१९०५

७२ पत्र : गवर्नरके निजी सचिवको

[जोहानिसबर्ग]
अगस्त १, १९०५

सेवामें
निजी सचिव
गवर्नर, ऑरेंज रिवर कालोनी

महोदय

ऑरेंज रिवर कालोनीके रंगदार लोगोंको प्रभावित करनेवाले नगरपालिकाके कुछ उपनियमोंके सम्बन्धमें मेरे संघने पिछली १ जुलाईको[1] जो निवेदन किया था उसके उत्तरमें आपका १८ अगस्तका पत्र नम्बर पी० एम० १५/५, प्राप्त हुआ।

मेरा संघ आदरपूर्वक निवेदन करता है कि यदि बस्तीमें ब्रिटिश भारतीय हैं ही नहीं तो बस्तीके विनियमोंका वहाँ लागू करना ब्रिटिश भारतीय समाजका अकारण अपमान करना है— विशेषकर उस अवस्थामें जब कि मेरे संघने अभी तक यह आशा नहीं छोड़ी है कि उक्त उपनिवेशमें ब्रिटिश भारतीयोंको किसी-न-किसी दिन प्रवास-सम्बन्धी राहत मिलेगी ही। मेरा संघ यह नहीं समझ पाता कि जो बस्ती-उपनियम वतनियोंको लक्ष्यमें रखकर बनाये गये हैं उन्हें एक कृत्रिम परिभाषा देकर ब्रिटिश भारतीयोंपर क्यों लागू किया जा रहा है।

वतनी नौकरोंके अनिवार्य पंजीयनके नियमपर मेरे संघने कोई आपत्ति नहीं की है किन्तु संघकी विनम्र सम्मतिमें ब्रिटिश भारतीयोंको दक्षिण आफ्रिकाके वतनियोंकी बराबरीपर रख

१. बादमें पीछा करनेवाले सिपाहियोंने अस्तबलमें आग लगा दी और उसमें छिपे हत्यारे बूथको गोलीसे उड़ा दिया था।

२. देखिए "पत्र : उपनिवेश-सचिवको" पृष्ठ ९।

आपत्तिजनक कार्यवाहियाँ अपेक्षाकृत कम ही हुई हैं। यह निर्विवाद है कि युद्धसे पहले ट्रान्सवालमें १५,   से ऊपर ब्रिटिश भारतीय वयस्क पुरुष रहते थे। आपकी पंजियोंमें करीब १२ • ही दिखाई पड़ते हैं। इसलिए यह मानना उचित होगा कि जिन व्यक्तियोंको अनुमतिपत्र मिले हैं उनमें से अधिकतर युद्धके पहलेके ट्रान्सवाल-निवासी हैं।

मेरा संघ सादर विश्वास करता है कि यह नियम वापस ले लिया जायेगा और जो शरणार्थी वापस आनेकी अनुमतिकी प्रतीक्षा कर रहे हैं उनकी अर्जियाँ जल्द मंजूर कर दी जायेंगी क्योंकि मेरे संघके पास जो जानकारी है उसके अनुसार उन्हें बहुत बड़ी असुविधा और हानि हो रही है।

आपका आदि
अब्दुल गनी
अध्यक्ष
ब्रिटिश भारतीय संघ

[अंग्रेजीसे]

प्रिटोरिया आर्काइव्ज एल जी ९२/२११२

७४ नेटालके काफिर

विलायतसे ब्रिटिश संघके[1] कुछ सदस्य आजकल दक्षिण आफ्रिका आये हुए हैं। वे सबके-सब विद्वान हैं और उन्होंने ज्ञान अर्जित किया है। दक्षिण आफ्रिकामें यह संयोग पहली ही बार आया है। कुछ दिन पहले ये लोग नेटालमें थे। तब माननीय मार्शल कैम्बेल उनको अपनी माउंट एजकम्बकी कोठीपर ले गये थे। वहाँ उन सदस्योंको दो प्रकारके अनुभव कराये। एक तो आदिवासी काफिर कैसे होते हैं यह बताया और उनके नाच आदिका प्रदर्शन कराया। उसके बाद शिक्षित आदिवासी काफिरोंसे परिचय कराया। उन लोगोंके वरिष्ठ श्री डुबे नामके व्यक्ति हैं। उन्होंने सदस्योंके समक्ष बड़ा प्रभावशाली भाषण किया।

श्री डुबे जानने योग्य व्यक्ति हैं। इन्होंने फीनिक्सके पास अपने परिश्रमसे तीन सौ एकड़से अधिक जमीन ली है। वहींपर ये अपने भाइयोंको स्वयं पढ़ाते हैं। ये उन्हें विविध प्रकारके उद्योग सिखाते हैं और दुनियाके संघर्षसे मोर्चा लेनेके लिए उनको तैयार करते हैं।

श्री डुबेने अपने शानदार भाषणमें बताया कि काफिरोंके प्रति जो तिरस्कारका भाव रखा जाता है वह अनुचित है। आदिवासी काफिरोंकी तुलनामें शिक्षित काफिर अधिक अच्छे हैं क्योंकि वे लोग अधिक काम करते हैं और उनका रहन-सहन ऊँचे ढंगका होनेके कारण व्यापारियोंमें उनकी साख अधिक है। आदिवासी काफिरोंपर करका बोझ लादना अन्याय है। और ऐसा करना उसी डालको काटनेके बराबर है जिसपर हम खुद बैठे हों। गोरोंके मुकाबले आदिवासी काफिर अपना कर्तव्य अधिक अच्छी तरह समझते हैं और उसका पालन करते हैं। वे परिश्रम करते हैं और उनके बिना गोरे एक घड़ी भी नहीं टिक पायेंगे। वे सदैव वफादार रहनेवाली प्रजा हैं और नेटाल उनकी जन्मभूमि है। दक्षिण आफ्रिकाके सिवाय उनका कोई दूसरा देश नहीं है और उनसे जमीन आदिके अधिकार छीनना उन्हें घरसे बाहर करनेके समान है।

1. देखिए, "ब्रिटिश संघ का प्रवास" पृष्ठ ४९ ।

श्री डबेके इस भाषणका श्रोताओंपर बड़ा अच्छा प्रभाव पड़ा और उन्होंने कहा कि यदि उन्हें अपने फार्ममें लोहारी या छापेखानेका काम शुरू करनेमें दिलचस्पी हो तो वे उन्हें सहायता देंगे। ब्रिटिश संघके सदस्योंने उसी समय आपसमें १० पौंड इकट्ठा करके श्री डुबेको दिये। माननीय श्री मार्सल कैम्बेलने भी इस समय भाषण दिया और उसमें नेटालके आदिवासी काफिरोंकी प्रशंसा की और कहा कि वे अच्छे और उपयोगी हैं। उनके प्रति विद्वेष रखना गलतफहमी और मूर्खतासे भरा हुआ है।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन २– –१९ ५

७५ काउंट टॉल्स्टॉय

ऐसा माना जाता है कि काउंट टॉल्स्टॉयके समान धुरन्धर विद्वान फिर भी फकीरी मनोवृत्तिवाला कोई दूसरा व्यक्ति पश्चिमके देशोंमें तो नहीं है। उनकी आयु आज प्राय अस्सी वर्षकी हो चुकी है फिर भी वे बहुत स्वस्थ, परिश्रमशील एवं विचारवान हैं।

उनका जन्म रूसके एक उच्च कुलमें हुआ है। उनके माता-पिताके पास अपार धन था। यह उन्होंने विरासतमें पाया है। वे स्वयं रूसके एक उमराव हैं। अपनी जवानीमें उन्होंने रूसकी बहुत अच्छी सेवा की है। क्रीमियाकी लड़ाईमें वे बड़ी बहादुरीसे लड़े थे। उस समय वे अन्य उमरावोंकी तरह संसारके सभी प्रकारके भोगोंका भरपूर उपभोग करते थे। वेश्याएँ रखते थे, शराब पीते थे और तम्बाकू पीनेकी उन्हें बहुत बुरी लत थी। युद्धकालमें जब उन्होंने भारी रक्तपात देखा तब उनका मन दयासे भर गया। उनके विचार बदल गये और उन्होंने अपने धर्मका अध्ययन शुरू किया। बाइबिल पढ़ी। ईसा मसीहके जीवनका वृत्तान्त पढ़नेसे उनके मनपर बहुत बड़ा असर हुआ। रूसी भाषामें बाइबिलका अनुवाद था। उससे उनको सन्तोष न हुआ। इसलिए उन्होंने मूल भाषाका अर्थात् हिब्रूका अध्ययन किया और बाइबिलकी खोज जारी रखी। उनमें लिखनेकी महान शक्ति है इस बातका पता भी उन्हें इन्हीं दिनों चला। उन्होंने लड़ाईसे होनेवाले अनर्थकारी परिणामपर बड़ी प्रभावशाली पुस्तक लिखी। सारे यूरोपमें उसकी ख्याति फैल गई। लोगोंकी नैतिकता सुधारनेके अभिप्रायसे कई उपन्यास लिखे। इनके मुकाबलेके ग्रन्थ यूरोपकी भाषाओंमें बहुत कम माने जाते हैं। इन सब पुस्तकोंमें उन्होंने इतने अधिक प्रगतिशील विचार प्रकट किये हैं कि उनके कारण रूसके पादरी टॉल्स्टॉयसे बिगड़ खड़े हुए। उन्हें बिरादरीसे बाहर निकाल दिया गया। इन सब बातोंकी कुछ परवाह न करते हुए उन्होंने अपना प्रयत्न जारी रखा और अपने विचारोंका फैलाव शुरू कर दिया। उनके लेखोंका प्रभाव खुद उनके मनपर भी बहुत पड़ा। उन्होंने अपनी सारी सम्पत्ति त्याग दी और गरीबी अपनायी। आज अनेक वर्षोंसे वे एक किसानकी तरह रहते हैं। अपने निजी परिश्रमसे जो पैदा करते हैं उसीसे अपनी गुजर-बसर करते हैं। सब व्यसन छोड़ दिये हैं, अपना खाना-पीना भी बहुत सादा रखा है और मन, वचन अथवा कायासे ऐसा कोई काम नहीं करते जिससे किसी प्राणीको हानि पहुँचे। सदैव अच्छे कामोंमें और ईश्वरकी स्तुति करनेमें समय बिताते हैं। वे यह मानते हैं कि

१ दुनियामें मनुष्यको दौलत इकट्ठी नहीं करनी चाहिए।

२ दूसरा आदमी चाहे कितना भी बुरा करे फिर भी हमें उसका भला करना चाहिए, यह ईश्वरीय फरमान है, उसी प्रकार नियम भी है।

३ किसीको मुफ्तमें भाव नहीं लेना चाहिए।
४ राज्य-सत्ताका उपभोग करना पाप है। इससे दुनियामें अनेक दुःख उत्पन्न होते हैं।
५ मनुष्य अपने कर्त्तव्यके प्रति अपने कर्त्तव्यका पालन करनेके लिए पैदा हुआ है इसलिए अपने स्वार्थोंकी अपेक्षा उसे अपने कर्त्तव्यपालनपर अधिक ध्यान देना चाहिए।
६ मनुष्यके लिए सच्चा रोजगार खेती है और बड़े नगरोंको बसाना उनमें लाखों मनुष्योंको यन्त्रोद्योग आदिमें लगाना और इस प्रकारके लगे हुए मनुष्योंकी गुलामी अथवा गरीबीसे लाभ उठाकर थोड़ेसे मनुष्यों द्वारा अमीरीका उपभोग किया जाना ईश्वरीय नियमके विपरीत है।

उपर्युक्त विचार बहुत प्रतिभाशाली ढंगसे विभिन्न धर्मोंसे प्रमाण ढूंढ़-ढूंढ़कर और पुराने ग्रन्थोंके आधारपर सिद्ध किये हैं। इस समय यूरोपमें टॉल्स्टॉयके सुझाये नियमोंके अनुसार चलनेवाले हजारों मनुष्य बसते हैं। इन मनुष्योंने अपना सर्वस्व त्यागकर बहुत सादी जिन्दगी अपनाई है।

टॉल्स्टॉय अबतक जोशीले लेख लिखा करते हैं। स्वयं रूसी होनेपर भी रूस और जापानकी लड़ाईके सम्बन्धमें उन्होंने रूसके विरुद्ध बड़े तीखे और कड़े लेख लिखे हैं। रूसके सम्राटका टॉल्स्टॉयने युद्धके सम्बन्धमें बड़ा प्रभावशाली और तीखा पत्र लिखा है। स्वार्थी अधिकारी टॉल्स्टॉयपर बहुत कटु दृष्टि रखते हैं फिर भी वे और स्वयं जार भी उनसे डर कर चलते हैं और मान देते हैं। लाखों गरीब किसान उनके कहे हुए वचनोंका पालन करते हैं यह उनकी भलमनसाहत और ईश्वरपरायण जीवनका प्रताप है।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन २–९–१९०५

७६ जापानकी उन्नति

संसारमें आज सबकी नजर जापानकी ओर लगी हुई है। कोई भी उस देशकी बहादुरी और चतुराईकी प्रशंसा किये बिना नहीं रहता। जापानके एक भूतपूर्व प्रधानमन्त्री काउंट ओकूमाने नॉर्थ अमेरिकन रिव्यू में एक लेख लिखा है। उसमें बताया गया है कि इस समयके जापानकी महानता पचासियों वर्षोंसे होते आनेवाले सुधारोंका परिणाम है। केवल शिक्षण-पद्धतिके दोषके कारण ही वह संसारकी नजरमें पिछड़ा हुआ था। जापानने समझ लिया कि विदेशियोंको अपने देशसे दूर रखना उसके बसमें नहीं है और इसलिए उसने विचार किया कि अपनी सन्तानोंको विदेश भेजकर उन्हें वहाँकी विद्या और कला सिखाई जाये। इस काममें उसने जो स्वदेशाभिमान दिखाया उसके कारण उसकी अपनी प्रतिष्ठा कायम रही। जापानने उत्तम विदेशी शिक्षण प्रणाली अपने देशमें जारी की। बालकों और बालिकाओंके लिए शिक्षण अनिवार्य कर दिया। साथ ही कला-कौशल और व्यापार पर भी ध्यान देनेमें वह नहीं चूका। जबतक उसके युवक पूरी तरह प्रशिक्षित होकर घर नहीं लौटे तबतक उसने विदेशी विद्वानोंका काम पर लगाये रखा।

जब पाश्चात्य शिक्षाकी योजना बड़े जोरसे चल पड़ी तब मिकाडोने प्रत्येक स्कूलमें पढ़ानेके लिए एक आदेश प्रकाशित किया कि तुम हमारी प्रजा और अपने माता-पिताके प्रति भक्ति रखना भाई-बहनोंके प्रति स्नेहशील बनना पति-पत्नी मिलकर रहना अपना बरताव सरल

बच्चोंके लिए सुरक्षित रखा जायेगा। इसकी स्थापना उस समय हुई थी जब सरकारने भारतीय बच्चोंको उपनिवेशके साधारण स्कूलोंमें भरती न करनेका निर्णय किया था।[1] और हम जानते हैं उस समय भी समस्त रंगदार बच्चोंके लिए एक स्कूल स्थापित करनेका प्रश्न उठाया गया था। परन्तु अच्छी तरह विचार करनेके बाद सरकारने सिर्फ भारतीय बच्चोंके लिए एक स्कूल कायम करनेका निर्णय किया। और यही कारण था कि इस स्कूलका यह नाम पड़ा था बाद है। इसके अतिरिक्त रंगदार बच्चे इन शब्दोंका अर्थ इच्छानुसार घटाया बढ़ाया जा सकता है। ब्रिटिश भारतीय इन शब्दोंका अर्थ सभी लोग जानते हैं परन्तु रंगदार व्यक्ति शब्दोंका कोई निश्चित अर्थ नहीं है। और यह देखते हुए कि सरकारने भेद करनेकी नीति अपनाई है यह उचित ही है कि उपनिवेशके इस सबसे बड़े नगरमें ब्रिटिश भारतीयोंके लिए एक स्कूल सुरक्षित रखा जाये। शिक्षा-अधीक्षकने उस दिन कहा था कि भारतीय माता-पिता नेटालके अन्य स्थानोंमें इस प्रकारके विभाजनपर आपत्ति नहीं करते। परन्तु हम सादर निवेदन करते हैं कि नेटालके छोटे नगरोंसे इस प्रकारकी तुलना करना कदाचित् ही उचित होगा। डर्बन एक ऐसा नगर है जिसमें स्वतन्त्र और सम्पन्न भारतीयोंकी सबसे बड़ी आबादी है। इसलिए यह स्वाभाविक ही है कि ऐसे मामलोंमें डर्बनमें कठिनाई तीव्रताके साथ अनुभव की जाये।

जहाँतक लड़के-लड़कियोंको अलग-अलग रखनेका प्रश्न है हम काफी अनुभव प्राप्त तथा भारतीय भावनाओंसे परिचित माता-पिता इतना ही कह सकते हैं कि इस निर्णयसे बहुत-सी वाजब शिकायतें उत्पन्न होने वाली हैं। इस मार्गका अनुसरण् किये जानेमें केवल व्यावहारिक गम्भीर आपत्तियाँ ही नहीं हैं बल्कि बहुतसे उदाहरणोंमें धार्मिक भावनापर भी विचार करना है और हमें सन्देह नहीं कि सरकार ऐसी भावनाओंका पूरा खयाल रखेगी।

अन्तमें हम आशा करते हैं कि उपर्युक्त दोनों मामलोंके बारेमें जो हिदायतें जारी की गई हैं वे वापस ले ली जायेंगी और जब उच्चतर श्रेणी भारतीय विद्यालयकी स्थापना हुई थी तब भारतीय समाजको जो विश्वास दिलाया गया था उसकी सरकार बनाये रखेगी।

आपका आदि
अब्दुल कादिर
और ९९ अन्य

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन २१-१-१९११

१ देखिए खण्ड ९, पृष्ठ १०८।

७८. सन्धिपत्र[1]

जापानने जो शर्तें घोषित की थीं उनमें से उसने दो शर्तें उदारतापूर्वक बहुत-कुछ छोड़ दी हैं। एक तो यह कि लड़ाईके खर्चके बदलेमें कुछ न लिया जाये किन्तु रूसी कैदियोंके खर्च तथा आहतोंकी सेवा-शुश्रूषाके खर्चके बदलेमें रूस केवल १२ पौंड जापानको दे और दूसरी यह कि सखेलियन द्वीपको दोनों पक्ष आधा-आधा बाँट लें। यद्यपि रूसी जनतामें इस सन्धिपत्रसे प्रसन्नताकी लहर दौड़ गई है, जापानमें बड़ा असन्तोष फैला है और उसके कम होनेके कोई लक्षण नहीं दीख रहे हैं। सन्धिपत्र तैयार हो जानेपर बिना ढील-ढालके उसपर हस्ताक्षर करनेके उपरान्त दोनों पक्षोंके वकील अपने-अपने देश लौट जानेके लिए अधीर हो रहे हैं, ऐसा अन्तिम तारोंसे पता चलता है। जापानके राजदूत स्वदेश लौटनेपर अच्छे स्वागतकी जरा भी आशा नहीं करते बल्कि उन्हें डर है कि जनता उनको क्रोधपूर्ण दृष्टिसे देखेगी।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन ९-९-१९०५

७९. चीनी खान-मजदूरोंपर अत्याचार

श्री लिटिल्टनसे एक संसद-सदस्यने उक्त विषयमें प्रश्न किया था। उसके उत्तरमें उन्होंने जाँच करनेका तथा कोड़े लगाना बन्द करनेका वचन दिया। चीनियोंको किस प्रकार कोड़े लगाये जाते हैं, उसका वर्णन जोहानिसबर्गके *डेली एक्सप्रेस* में दिया गया है, वह बहुत करुणाजनक है। उसमेंसे मुख्तसर हाल हम नीचे दे रहे हैं। लेखकने यह बताया है कि जो-कुछ उसने लिखा है वह या तो स्वयं अपनी आँखोंसे देखा हुआ है या हजारों मनुष्योंको बेंत या कोड़े लगानेका हुक्म जिन व्यक्तियोंने दिया था उनकी गवाहीपर आधारित है। इस वर्षके प्रारम्भमें जोहानिसबर्गकी एक खानमें औसतन बयालीस चीनियोंको प्रतिदिन कोड़े लगाये जाते थे। इसमें अपवाद रविवारका भी नहीं है। यह सब इस प्रकार होता है: एक मजदूरके विरुद्ध पहले तो उसका सरदार शिकायत करता है, फिर उसको अहातेके मैनेजरके कार्यालयमें ले जाया जाता है। वे भाई साहब अपराधके अनुसार दस पन्द्रह अथवा बीस बेंत मारनेका हुक्म देते हैं। फिर दो चीनी सिपाही उसको करीब पन्द्रह कदम दूर ले जाते हैं। सिपाहीका हुक्म होते ही कैदी फौरन झुक जाता है। वह अपनी पतलून आदि कपड़ा उतार देता है और औंधे मुँह जमीनपर लेट जाता है। एक सिपाही उस बेचारेके पैर दबा लेता है और दूसरा उसका सिर पकड़ लेता है। इसके बाद बेंत लगानेवाला आदमी तीन फुट लम्बे और तीन इंच मोटे हत्थेवाले बेंतसे आदेशके अनुसार धीरे-धीरे अथवा जोरसे उसकी पीठपर प्रहार करता है। यदि इस बीच पीड़ा सहन न हो सकनेसे वह थोड़ा भी हिलता-डुलता है तो एक और आदमी उसे अपने पैरोंसे दबा लेता है और तब गिनती पूरी की जाती है।

१. इस सन्धिपत्रपर ५ सितम्बर १९०५को पोर्ट्समाउथ (न्यू हैम्पशायर अमरीका)में हस्ताक्षर किये गये।

किसी-किसी खानमें कोड़ोंके बदले लकड़ीसे पीटा जाता है। उसकी चोटें इतनी तेज होती हैं कि उनके कारण मांस उभर आता है और चमड़ी फट जाती है। नोर्स डीपकी खानमें मैने चर कुकके समयमें यदि कोई चीनी बरमेसे ११ इंच गहरा छेद न कर पाता तो वह उसे सजाका हुक्म देता था। सजा देनेका उसका तरीका और भी क्रूर था। वह उस मजदूर काठीसे काम लेनेकी आज्ञा देता था और उससे आँखोंके पीछे जहाँ बिलकुल ही सहन न हो ऐसे स्थलपर, चोट मारनेका हुक्म देता था और सूजनकी मार चल जानेपर भी प्रहारोंकी संख्या पूरी की जाती थी। कभी-कभी तो इतनी सख्त चोट लग जाती थी कि बेचारे चीनीको अस्पताल भेजना पड़ता था। इस दुष्ट कुककी जगह बादमें प्लेस नामका व्यक्ति नियुक्त किया गया। वह चोरोंमें साहू माना जाता था इसलिए वह काठीके बदले रबड़के टुकड़े काममें लेता था। कुछ समय बाद खानके अधिकारियोंने देखा कि प्रतिमास जो काम होना चाहिए वह नहीं हो रहा है इसलिए प्लेसको अधिक सख्ती करनेका हुक्म दिया गया। प्लेसने ऐसा करनेसे इनकार कर दिया और उसे त्यागपत्र देना पड़ा। इसपर लोकसभामें चर्चा होनेसे अधिकारियोंने कोड़ोंके बदले और कोई सजा देनेका निर्देश किया। इसपर प्लेसने जिसे चीनका अनुभव था चीनका प्रचलित रिवाज दाखिल किया। वह अपराधी चीनीको बिलकुल नंगा कर देता। फिर उसको अहातेमें खड़े तख्तेके साथ सलीकी चोटीसे बँधवा देता और वहाँ चाहे जितनी ठंड अथवा चाहे जैसी कड़ी धूप हो दो-तीन घंटे तक खड़ा रखता। फिर वह दूसरे चीनियोंको यह आदेश देता कि वे अपराधीको थूक दिखा-दिखा कर चिढ़ावें। दूसरा तरीका यह था कि अपराधीके बायें हाथमें एक पतली रस्सी बाँधी जाती। फिर उस रस्सीको कड़ेमें डालकर बेचारे मजदूरको इस प्रकार लटकाया जाता कि उसे केवल पैरोंकी अँगुलियोंके सिरोंके सहारे ही दो-तीन घंटे तक खड़ा रहना पड़ता था। कहीं-कहीं तो बेचारे मजदूरके हाथमें हथकड़ी डालकर जमीनसे दो फुट ऊँचे पाटसे बाँध दिया जाता था और इस तरह बिना हिले-डुले उसे दो-तीन घंटे तक रहना पड़ता था। इस प्रकारकी सजा तो ताड़से छूटकर भाड़में गिरनेके समान हुई। लोकसभामें बेंतकी मारके बारेमें चर्चा हुई तो खानोंके निर्दयी अधिकारियोंने बेंत लगाना बन्द कर दिया किन्तु संसदमें यह कहना भूला दिया गया कि उसके बदले अधिक पीड़ा पहुँचानेवाली सजा निश्चित की गई है।

इस बातको प्रकाशमें लाकर डेली एक्सप्रेस के सम्पादक श्री पेकमानने सैकड़ा चीनियोंका मूक आशीर्वाद प्राप्त किया है। यदि यह सब सच हो — और शक करनेका कोई कारण नहीं है — तो खानके अधिकारी अपने सिरजनहारके सामने क्या जवाब दे सकेंगे? दक्षिण आफ्रिकाके गरीब मजदूरोंकी हायसे अगर वे बेरबाद हो जायें तो क्या आश्चर्य? अंग्रेजोंने लड़ाई करके ट्रान्सवाल जीता उसका प्रयोजन क्या यही था?

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, –९–१९ ५

८० फ्लॉरेन्स नाइटिंगेल[1]

हम पिछले एक अंकमें नेक महिला एलिज़ाबेथ फ्राइके कार्यकलापका वर्णन कर चुके हैं। जिस प्रकार उसने कैदियोंकी हालतमें परिवर्तन किया और उनके लिए अपना जीवन अर्पित किया उसी प्रकार फ्लोरेंस नाइटिंगेलने फौजी सैनिकोंके लिए अपने प्राण दिये। सन् १८५४ में[2] जब क्रीमियाकी जबरदस्त लड़ाई हुई तब ब्रिटिश सरकार अपनी परिपाटीके अनुसार सो रही थी। कुछ भी तैयारी नहीं थी। और जिस प्रकार बोअर युद्धमें हुआ था उसी प्रकार क्रीमियाकी लड़ाईमें भी आरम्भमें भूलें करनेके कारण करारी हार हुई। घायलोंकी सेवा-शुश्रूषा करनेके जितने साधन आवश्यक हैं, उतने पचास वर्ष पूर्व नहीं थे। सहायताकार्यके लिए आज जितने मनुष्य निकल पड़ते हैं, उतने उस समय नहीं निकलते थे। शल्य-चिकित्साका जोर जितना आज है उतना उन दिनोंमें नहीं था। घायल मनुष्योंकी सेवाके लिए जानेमें पुण्य है, यह स्त्रियोंका काम है, ऐसा समझनेवाले उस समय विरले ही थे। ऐसे समय इस महिला — फ्लोरेंस नाइटिंगेल — ने इस प्रकारके काम किये मानो वह फरिश्ता ही बनकर आई हो। सैनिक कष्टमें हैं, इस बातका पता उसे चला तो उसका हृदय विदीर्ण हो गया। वह स्वयं बड़े धनी कुलकी महिला थी। वह अपना ऐश-आराम छोड़कर रोगियोंकी सेवा-शुश्रूषाके लिए चल पड़ी। फिर उसके पीछे-पीछे और भी बहुत सी महिलाएँ निकलीं। १८५४ के अक्तूबरकी २१ तारीखको वह घरसे चली। इंकरमैनकी लड़ाईमें उसने जबरदस्त मदद पहुँचाई। उस समय घायलोंके लिए न बिस्तर थे न और कुछ सुविधा ही। अकेली इस महिलाकी देखभालमें १[3] घायल थे। जब यह महिला वहाँ पहुँची तब मृत्यु-संख्या प्रति सैकड़ा ४२ थी। इसके पहुँचते ही वह एकदम ३१ तक आ गई और अन्तमें वह संख्या प्रति सैकड़ा ५ तक आ पहुँची। यह घटना चमत्कारी है, फिर भी सहज ही समझमें आ सकती है। इन हजारों घायल मनुष्योंका रक्त बहना रोका जाये जख्मपर पट्टी बाँधी जाये और आवश्यक आहार दिया जाये तो निःसन्देह जान बच सकती है। केवल दया और सेवा-शुश्रूषाकी आवश्यकता थी जो नाइटिंगेलने पूरी कर दी। यह कहा जाता है कि बड़े और मजबूत लोग जितना काम नहीं कर सकते थे उतना नाइटिंगेल करती थी। वह दिन-रातमें मिलाकर २ -२ घंटे काम किया करती थी। जब उसके हाथके नीचे काम करने-वाली महिलाएँ सो जातीं तब वह अकेली मध्य-रात्रिमें मोमबत्ती लेकर रोगियोंकी खाटोंके पास जाती उनको आश्वासन देती और अगर कुछ खुराक वगैरह आवश्यक होती तो उन्हें अपने हाथसे देती। जहाँ लड़ाई चलती होती वहाँ जानेमें भी नाइटिंगेल डरती नहीं थी। खतरेको वह कुछ समझती ही नहीं थी। भय केवल भगवानका मानती थी। कभी-न-कभी मरना ही है, ऐसा समझकर औरोंका दुःख कम करनेके लिए जो भी तकलीफ उठानी पड़ती वह उठाती थी।

इस महिलाने कभी ब्याह नहीं किया। इसी प्रकारके भले कामोंमें उसने अपना सारा जीवन बिताया। कहा जाता है कि जब उसकी मृत्यु हुई तब हजारों सैनिक छोटे बच्चोंके समान ऐसे फूट-फूटकर रोये मानो उनकी माँ मर गई हो।

१ (१८२०–१९१०), प्रसिद्ध परिचारिका और अस्पतालोंकी अग्रणी सुधारक।
२. रूसमें क्रीमियाकी लड़ाई २८ मार्च १८५४ को शुरू हुई।
३ या ५ हजारकी हो

जहाँपर ऐसी महिलाएँ पैदा होती हैं वह देश क्यों न फले-फूले। इंग्लैंड राज्य करता है, सो अपने बलके बूतेपर नहीं बल्कि इस प्रकारके स्त्री-पुरुषोंके पुण्यबलपर।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन ९-९-१९०५

८१ स्वर्गीय कुमारी मैनिंग[1]

इंडिया के ताजा अंकसे हमें यह शोकजनक संवाद मिला है कि राष्ट्रीय भारतीय संघ (नेशनल इंडियन असोसिएशन) की कर्मठ मन्त्री कुमारी मैनिंगका देहान्त हो गया। इस श्रेष्ठ महिलाके त्याग पूर्ण कार्यसे ही इस संघमें जीवन आया था। जो तरुण भारतीय अध्ययनके लिए इंग्लैंड जाते थे उनकी वे सच्ची मित्र थीं और उनके स्वागतके लिए उनका द्वार सदा खुला रहता था। वे उनके मार्ग प्रदर्शित करनेके लिए सदा तैयार रहती थीं। उनके यहाँ जो बैठकें होती थीं वे एक वार्षिक कार्यक्रममें परिणत हो गई थीं। ये बैठकें भारतीयों और आंग्ल-भारतीयोंको एक दूसरेके समीप लातीं और इस प्रकार दोनोंमें पारस्परिक सद्भाव बढ़ाया करतीं। कुमारी मैनिंगमें दिखाव बिलकुल नहीं था। इंडिया ने लिखा है कि वे सार्वजनिक प्रतिष्ठा प्राप्तिकी कोशिशें करनेकी अपेक्षा पीछे रहना अधिक पसन्द करती थीं। उनकी मृत्युसे अध्ययन तथा अन्य कार्योंके लिए वर्ष-प्रतिवर्ष अधिकाधिक संख्यामें इंग्लैंड जानेवाले तरुण भारतीयोंकी निश्चित हानि हुई है। इनके सम्बन्धमें अधिक जानकारीके लिए हमारे पाठक हमारी लन्दनकी चिट्ठी पढ़ें।[2]

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन १६-९-१९०५

१. एलिज़ाबेथ एडोल्फ़ मैनिंग; आरम्भिक भारतीयोंके मित्र और विख्यात यूनिटेरियन जेम्स मैनिंगकी पुत्री थीं। वे नेशनल इंडियन एसोसिएशनकी मन्त्री और लेडीज़ कॉलेज, कैम्ब्रिजके संस्थापकोंमें से थीं। वे १८७७ में राष्ट्रीय भारतीय संघकी अवैतनिक मन्त्री चुनी गईं और १ अगस्त १९०५ तक, जब वे ७० वर्षकी आयु पाकर स्वर्गवासी हुईं, इस पदपर बनी रहीं। वे इंडियन मैगज़ीन एंड रिव्यूका सम्पादन करती थीं और भारतके अनेक सामाजिक आन्दोलनोंमें भाग लेती थीं।

२. प्रतीत होता है गांधीजी जब इंग्लैंडमें कानूनके अध्ययनके लिए गये थे तब उनके यहाँ प्रायः जाते-आते थे। देखिए, आत्मकथा भाग १, अध्याय २२।

८२ आगामी कांग्रेसका अध्यक्ष कौन?

इंडिया 'में खबर प्रकाशित हुई है[1] कि आगामी कांग्रेसके अध्यक्षके चुनावके लिए निम्नलिखित नाम सुने जा रहे हैं: माननीय श्री गोपालकृष्ण गोखले, श्री अरडली नॉर्टन[2], राव बहादुर मुधोलकर[3], सर गुरुदास बनर्जी[4], डॉ॰ रासबिहारी घोष[5] और बाबू कालीचरण बनर्जी[6]। ये सभी सज्जन बहुत योग्य हैं और इन्होंने भारतकी बड़ी सेवाएँ की हैं। उनमें भी श्री गोखलेका नाम आजकल तो सबसे आगे है। बड़ी धारासभामें उन्होंने लॉर्ड कर्ज़नसे बहुत अच्छी टक्कर ली है।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन १६-९-१९०५

८३ बड़ौदाके महाराजा गायकवाड़ और उनके दीवान

महाराजा गायकवाड़ने श्री दत्तको[7] अपना दीवान नियुक्त किया है। यह कर्ज़न साहबको पसन्द नहीं आया। बंगाली 'में दी गई खबरसे मालूम होता है कि इसलिए उन्होंने भारतके हर राजाके पास इस आशयका गुप्त परिपत्र भेजा है कि यदि भविष्यमें नौकरीसे इस्तीफा देनेवाले इंडियन सिविल सर्विसके व्यक्तिको कोई अपने यहाँ नियुक्त करनेका इरादा करे तो वह उसकी नियुक्तिसे पूर्व सरकारसे अनुमति ले। यह लॉर्ड कर्ज़नकी आखिरी लड़ाइयोंमें से एक जान पड़ती है।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन १६-९-१९०५

१ वैसी मद्रास मेलमें दी गई थी।

२ मद्रासके एक बैरिस्टर और कांग्रेसमैन।

३ पीछे १९१२में कांग्रेसके बांकीपुर अधिवेशनके अध्यक्ष बने। मूलमें मधोलकर दिया गया है।

४ भूतपूर्व न्यायाधीश और बंग राष्ट्रीय शिक्षा-परिषदके अध्यक्ष।

५ सन् १९०८में मद्रास कांग्रेस अधिवेशनके अध्यक्ष हुए।

६ एक भारतीय ईसाई, जो कांग्रेस कार्योंमें बहुत दिलचस्पी लेते थे।

७ श्री रमेशचन्द्र दत्त (१८४८–१९०९) भारतीय नागरिक सेवा (इंडियन सिविल सर्विस) के सदस्य, बंगालकी प्राचीन संस्कृति और सभ्यताके सुगम अध्येता और इकॉनॉमिक हिस्ट्री ऑफ इंडिया सिन्स द एडवान्ट ऑफ द ईस्ट इंडिया कम्पनीके लेखक। १८९९ की लखनऊ कांग्रेसके अध्यक्ष हुए और अपने जीवनके अन्तिम तीन वर्षोंमें बड़ौदाके महाराजाके अमात्य रहे। पहले राजस्वमंत्री बने और बादमें दीवान। देखिए खण्ड ४ पृष्ठ ४८०।

८४ ब्रिटिश मध्य आफ्रिकाके सम्बन्धमें समाचार

परिश्रमी लोगोंके लिए बढ़िया अवसर

ब्रिटिश मध्य आफ्रिकामें रेलकी पटरी बिछानेका काम चल रहा है। हमें खबर मिली है कि वहाँ मजदूरोंकी जरूरत है। इस सम्बन्धमें हम और भी जानकारी प्राप्त कर रहे हैं। तबतक जो लोग उधर जाना चाहते हों वे अपने नाम और पते साफ अक्षरोंमें लिखकर हमारे पास भेज दें। *हम उनकी सूची बना लेंगे और यदि हमें वहाँकी परिस्थिति जाननेके लिए अनुकूल जान पड़ेगी तो इस समाचारपत्रमें खबर दे देंगे।*

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन १६-९-१९०५

८५ इटलीमें भूकम्प

कुछ दिन पहले इटलीके कैलेब्रिया[1] नामक स्थानमें एक भारी भूचाल आया था। उससे हजारों लोग बेघर-बार हो गये हैं और मददके लिए करुण पुकार कर रहे हैं। इटलीके राजाने चार हजार पौंड सहायतामें दिये हैं। पारगेली नामक स्थानमें तीन सौ जेलखानोंमें दो सौ और मार टेरेनोके पास दो हजार लोग मरे या सख्त घायल हुए हैं। भूचालके इस बड़े धक्केके दो-तीन दिन बाद और एक साधारण-सा धक्का आया था। लोग घबराकर इधर-उधर भाग रहे हैं, और कुछ तो देश छोड़कर चले जा रहे हैं। मरे और घायल हुए लोगोंकी संख्या पाँच हजार कूती जाती है। १८५७ में जब विस्तृत क्षेत्रमें भूकम्पके धक्के लगे थे तब लगभग दस हजार लोगोंकी प्राणहानि हुई थी। कैलेब्रियापर इस प्रकारके संकट बहुत अर्सेसे पड़ते चले आ रहे हैं। १८५७ से ७२ वर्ष पहलेकी अवधिमें कुल मिलाकर एक लाख ग्यारह हजार लोगोंकी प्राणहानि हुई जिसकी औसत लगानेपर कहा जा सकता है कि प्रतिवर्ष पन्द्रह सौ लोगोंका विनाश हुआ। पिछले पचास वर्षोंमें कैलेब्रियामें अनेक बार भूचाल आ चुके हैं परन्तु उनमें ऐसा विनाशकारी भूचाल एक भी न था। बहुत-से गाँव नष्ट हो गये हैं और प्रायः एक लाख लोग बेघर हो गये हैं। वहाँकी सरकार उन्हें सहायता पहुँचानेकी भरसक कोशिश कर रही है।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन १६-९-१९०५

[1] सुदूर दक्षिण पश्चिमी इटलीका पहाड़ी क्षेत्र।

८६. चीनी और भारतीय : एक तुलना[1]

जोहानिसबर्गमें बहुत-से चीनी रहते हैं। यह नहीं कहा जा सकता कि उनकी मासी हालत भारतीयोंकी अपेक्षा अच्छी है। उनमेंसे अधिकतर तो कारीगर हैं। मुझे उनका रहन-सहन देखनेका अवसर कुछ दिन पहले मिला था। उसे देखकर और उससे अपने लोगोंके रहन-सहनकी तुलना करके मुझे खेद हुआ।

उन लोगोंने सार्वजनिक कामके लिए चीनी संघकी स्थापना की है। उसके लिए उनके पास एक बड़ा हाल है। उस हालको साफ-सुथरा और सुन्दर रखा जाता है। वह पक्की ईंटोंका बना हुआ है। वे लोग इसका खर्च एक बड़ी किरायेकी जमीनको दुबारा किरायेपर उठाकर निकालते हैं। चीनियोंके लिए रहने आदिकी सुविधा न होनेके कारण उन्होंने कैंटनी क्लब कायम किया है। वह मिलनेकी जगहका रहनेकी जगहका तथा पुस्तकालयका काम देता है। इस क्लबके लिए उन्होंने लम्बे पट्टेपर जमीन ली है और उसपर एक पक्का दुमंजिला मकान बनाया है। इसमें सब लोग बड़ी स्वच्छतासे रहते हैं। वे जगहका लोभ नहीं करते। और बाहरसे तथा भीतरसे देखनेपर ऐसा प्रतीत होता है मानो कोई बढ़िया यूरोपीय क्लब हो। उसमें बैठनेका कमरा भोजनका कमरा सभा करनेका कमरा कमेटीका कमरा मन्त्रीका कमरा और पुस्तकालयका कमरा इत्यादि जुदा-जुदा रखे गये हैं जिनका वे दूसरे कामोंके लिए उपयोग नहीं करते। इन कमरोंसे लगे हुए जो कमरे हैं, वे सोनेके लिए किरायेपर दिये जाते हैं। यह जगह ऐसी साफ और अच्छी है कि कोई भी आगन्तुक चीनी सज्जन वहाँ टिकाया जा सकता है। उन्होंने क्लबका प्रवेश शुल्क ५ पौंड रखा है और मासिक शुल्क व्यक्तिके रोजगारके अनुसार होता है। इस क्लबमें लगभग १२ सदस्य हैं। वे हर रविवारको मिलते हैं और वहाँ खेलते-कूदते हैं। अन्य दिनोंमें भी सदस्य उसका उपयोग कर सकते हैं।

हम लोग ऐसी कोई भी संस्था नहीं दिखा सकते। किसी भी अजनबी भारतीयके ठहरने योग्य स्वतन्त्र जगह सारे दक्षिण आफ्रिकाके किसी शहरमें नहीं है। हमारी मेहमानदारी अवश्य अच्छी है, फिर भी वह सीमित होती है। अगर एक क्लब जैसी कोई जगह हो तो उसके कई अच्छे उपयोग किये जा सकते हैं। एक-दूसरेके घर अपना समय बितानेके बदले लोग यदि सार्वजनिक स्थानपर समय बिता सकें तो उससे बहुत लाभ होता है। किसी एक व्यक्तिके ऊपर बोझ नहीं पड़ता। *मैत्री-सम्बन्ध बढ़ सकता है और इससे हमारी प्रतिष्ठामें वृद्धि होती है।* स्वच्छता-सम्बन्धी नियमोंका भी पालन किया जा सकता है। यह काम बहुत कम खर्चमें किया जा सकता है और यह आवश्यक है, इसमें कोई सन्देह नहीं।

चीनियोंने जो क्लब स्थापित किया है वह बिलकुल ही सबक लेने योग्य और अनुकरणीय है। हमपर गन्देपनका जो आरोप है वह बिलकुल अकारण नहीं है। इस प्रकारके क्लबकी स्थापना करना उस आरोपको मिटानेका एक अच्छा उपाय है।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, १६–१–१९०९

१. यह "हमारे जोहानिसबर्गके संवाददाता द्वारा प्रेषित" रूपमें छपा था।

८७ ईश्वरचन्द्र विद्यासागर

हम इन स्तंभोंमें यूरोपके कुछ अच्छे स्त्री-पुरुषोंके जीवन वृत्तान्त संक्षेपमें छाप चुके हैं। इन वृत्तान्तोंको छापनेमें हमारा उद्देश्य यह है कि इनसे हमारे पाठकोंका ज्ञान बढ़े और वे जीवनमें उनके उदाहरणोंका अनुकरण करके उसे सार्थक बनायें।

बंगालमें विलायती मालके बहिष्कारका जो जोरदार आन्दोलन चल रहा है वह मामूली नहीं है। बंगालमें शिक्षा बहुत है और लोग बहुत ही चतुर हैं, इसलिए वहाँ ऐसा आन्दोलन हो सका है। सर हेनरी कॉटन कह चुके हैं कि बंगाल कलकत्तासे पेशावर तक शासन चलाता है। इसका कारण जाननेकी जरूरत है।

यह निश्चित है कि प्रत्येक जातिकी उन्नति और अवनति उसके महापुरुषोंपर अवलम्बित है। जिस जातिमें अच्छे लोग पैदा होते हैं उसपर उन लोगोंका प्रभाव पड़े बिना नहीं रहता। बंगालमें जो विशेषता दिखाई देती है उसके कारण कई हैं। किन्तु उनमें एक मुख्य कारण यह है कि बंगालमें पिछली शताब्दीमें बहुत महापुरुष उत्पन्न हुए। राममोहन राय[1] के बाद वहाँ वीर पुरुषोंकी एक परम्परा आरम्भ हुई जिससे दूसरे प्रान्तोंके मुकाबले बंगालकी स्थिति बहुत अच्छी हो गई। यह कहा जा सकता है कि इन लोगोंमें ईश्वरचन्द्र विद्यासागर महानतम थे। विद्यासागर ईश्वरचन्द्रकी उपाधि थी। उनका संस्कृत भाषाका ज्ञान इतना ऊँचा था कि कलकत्तेके विद्वानोंने उसीके कारण उनको "विद्याके सागर" की उपाधि प्रदान की। परन्तु ईश्वरचन्द्र केवल विद्याके ही सागर नहीं थे बल्कि दया उदारता और अन्य अनेक सद्गुणोंके सागर भी थे। वे हिन्दू थे और हिन्दुओंमें भी ब्राह्मण। परन्तु उनके मनमें ब्राह्मण और शूद्र तथा हिन्दू और मुसलमान समान थे। वे जो भी अच्छा काम करते थे उसमें ऊँच और नीचका भेद नहीं करते थे। उनके प्राध्यापकको हैजा हुआ तो उन्होंने खूब सेवा-शुश्रूषा की। प्राध्यापक गरीब थे इसलिए वे उनके लिए अपने खर्चसे ही डॉक्टर लाये और उनका मल-मूत्र भी उन्होंने खुद ही उठाया।

वे जहानाबादमें अपने रुपयेसे कुल्फी[2] और दही खरीदकर गरीब मुसलमानोंको खिलाते और जिनको पैसेकी मददकी जरूरत होती उनको पैसा भी देते थे। रास्तेमें कोई अपंग या दुःखी मनुष्य मिलता तो उसको अपने घर ले जाकर उसकी सार-सँभाल खुद करते थे। वे पराये दुःखमें दुःख और पराये सुखमें सुख मानते थे।

उनका अपना जीवन अत्यन्त सीधा-सादा था। शरीरपर मोटी धोती ओढ़नेकी वैसी ही मोटी चद्दर और स्लिपर — यह थी उनकी पोशाक। वे ऐसी पोशाक पहनकर ही गवर्नरोंसे मिलते और उसीको पहनकर गरीबोंकी आवभगत करते। वह व्यक्ति सचमुच एक फकीर, संन्यासी या योगी था। इसके जीवनपर विचार करना हमारे लिए बहुत ही उचित होगा।

ईश्वरचन्द्र मिदनापुर ताल्लुकेके एक छोटेसे गाँवमें गरीब माँ-बापके घर पैदा हुए थे। उनकी माँ बड़ी साध्वी थीं और उनको बहुतसे गुण अपनी माँ से ही मिले थे। उन दिनों भी उनके पिता थोड़ी अंग्रेजी जानते थे। उन्होंने अपने पुत्रको अंग्रेजीकी उच्च शिक्षा दिलानेका निश्चय किया। ईश्वरचन्द्रका विद्यारम्भ पाँच वर्षकी आयुमें हुआ और आठ वर्षकी आयुमें उन्हें अध्ययनके लिए

१ (१७७४ १८३३) भारतके महान धर्म सुधारक ब्रह्मसमाजकी स्थापना की, सती प्रथाका उन्मूलन करवाया, और भारतमें शिक्षा-प्रसारके लिए अथक परिश्रम किया।

२. कुल्फी — एक प्रकारकी कमीटी या बफ टीपी।

साठ मील दूर पैदल कलकत्ता जाना पड़ा और व वहाँ संस्कृत कालेजमें भर्ती हो गये। उनकी स्मरणशक्ति ऐसी अद्‌भुत थी कि उन्होंने मार्गमें मीलके अंकोंको देख-देखकर अंग्रेजी अंक सीख लिये थे। सोलह वर्षकी आयु तक वे संस्कृतका बहुत अच्छा अध्ययन कर चुके थे और संस्कृतके अध्यापक नियुक्त कर दिये गये थे। वे एक-एक सीढ़ी चढ़ते-चढ़ते अन्तमें उसी कॉलेजके आचार्यके पदपर जा पहुँचे जिसमें वे पढ़े थे। सरकार उनका अत्यन्त आदर करती थी। परन्तु स्वतन्त्र स्वभावके होनेसे उनको शिक्षा-विभागके निरीक्षककी बात सहन नहीं हो सकी इसलिए उन्होंने इस्तीफा दे दिया। बंगालके लेफ्टिनेंट गवर्नर सर फ्रेडरिक हैलीडेने उनको बुलाया और कहा कि वे अपना इस्तीफा वापस ले लें किन्तु ईश्वरचन्द्रने उसको वापस लेनेसे साफ इनकार कर दिया।

इस प्रकार नौकरी छोड़नेके बाद ईश्वरचन्द्रकी महानता और मानवता अच्छी तरह विकसित हुई। उन्होंने देखा कि बंगला बहुत अच्छी भाषा है किन्तु उसमें नई रचनाएँ नहीं हैं इसलिए वह निर्धन लगती है। अतः उन्होंने बंगला पुस्तकोंकी रचना शुरू की। उन्होंने बहुत अच्छी पुस्तकें लिखी हैं। आज बंगला भाषा समस्त भारतमें विकसित हो रही है और उसका बहुत विस्तार हो गया है। इसका मुख्य कारण विद्यासागर ही हैं।

परन्तु उन्होंने देखा कि पुस्तकें लिखना ही काफी नहीं है। इसलिए उन्होंने स्कूल खोले। कलकत्तेका मैट्रोपॉलिटन कॉलेज विद्यासागरका ही स्थापित किया हुआ है और उसको भारतीय ही चलाते हैं।

जिस प्रकार ऊँची शिक्षा जरूरी है, उसी प्रकार प्रारम्भिक शिक्षा भी। इसी कारण उन्होंने गरीबोंके लिए प्रारम्भिक शालाएँ स्थापित कीं। यह काम बहुत बड़ा था। उनको इसमें सरकारकी सहायताकी जरूरत थी। लेफ्टिनेंट गवर्नरसे कहा कि इसका खर्च सरकार देगी। वाइसराय लॉर्ड ऐलनबरो इसके विरुद्ध थे। इस कारण विद्यासागरने जो खर्चका चिट्ठा पेश किया वह मंजूर नहीं किया गया। लेफ्टिनेंट गवर्नर बहुत दुःखित हुए और उन्होंने ईश्वरचन्द्रको सूचित किया कि वे उनपर दावा कर दें। और ईश्वरचन्द्रने जवाब दिया "साहब! मैं अपने लिए इन्साफ हासिल करनेके उद्देश्यसे कभी अदालत नहीं गया। तब मैं आपके ऊपर दावा करूँ यह कैसे हो सकता है। उस समय दूसरे अंग्रेज ईश्वरचन्द्रकी मदद किया करते थे और उन्होंने उनको रुपये पैसेकी अच्छी सहायता दी। वे खुद बहुत मालदार नहीं थे इसलिए दूसरोंका दुःख दूर करनेकी खातिर वे बहुत बार खुद कर्जदार हो जाते थे। फिर भी उन्होंने अपने लिए सार्वजनिक चन्दा करनेकी बात स्वीकार नहीं की।

उनको ऊँची शिक्षा और प्रारम्भिक शिक्षाकी मजबूत नींव रखकर सन्तोष नहीं हुआ। उन्होंने देखा कि स्त्री-शिक्षाके अभावमें लड़कोंको शिक्षा देना ही काफी नहीं है। उन्होंने मनुस्मृतिमें से ढूँढ़कर एक श्लोक निकाला जिसका आशय था कि स्त्रियोंको शिक्षा देना कर्तव्य है। उसका उपयोग करके उन्होंने उनके लिए पुस्तकें लिखीं और बेथ्यून साहबके सहयोगसे स्त्रियोंकी शिक्षाके लिए बेथ्यून कॉलेजकी स्थापना की। परन्तु कॉलेजकी स्थापनाकी अपेक्षा उसमें स्त्रियोंको लाना ज्यादा कठिन था। वे स्वयं साधु-जीवन व्यतीत करते थे और महान् विद्वान थे। इस कारण सभी लोग उनका बहुत सम्मान करते थे। इसलिए उन्होंने प्रतिष्ठित लोगोंसे भेंट की और उनको अपनी लड़कियाँ कॉलेजमें भेजनेके लिए समझाया। इस तरह लोगोंकी लड़कियाँ पढ़नेके लिए आने लगीं। आज इस कॉलेजमें बहुत-सी ऐसी प्रतिष्ठित बुद्धिमती और गुणशील स्त्रियाँ हैं जो इसकी व्यवस्था भी चला सकती हैं।

१. १८४२–४८ में भारतके गवर्नर-जनरल।

८८ पत्र लेफ्टिनेंट गवर्नरके निजी सचिवको

ब्रिटिश भारतीय संघ

बॉक्स नं० ६५२२
जोहानिसबर्ग
सितम्बर १८, १९०५

सेवामें
निजी सचिव
परमश्रेष्ठ लेफ्टिनेंट गवर्नर
प्रिटोरिया

महोदय

मुझे आपके इसी ११ तारीखके पत्र क्रमांक एलजी ९७/१ की पहुँच स्वीकार करनेका सौभाग्य प्राप्त हुआ। उसमें आपने मुख्य अनुमतिपत्र सचिवको भिजे गये मेरे पहली सितम्बरके पत्रके बारेमें कुछ पूछताछ की है।

बीच-बीचमें कुछ दिनोंको छोड़कर इस पत्रका लेखक १८८१ से उपनिवेशमें रहा है और यहाँके भारतीय समाजसे उसका घनिष्ठ सम्पर्क रहा है। उसका प्रतिनिधित्व करनेका सौभाग्य प्राप्त करते हुए उसे अब बारह वर्षसे भी अधिक हो गये हैं। इसलिए, युद्धके पहले ट्रान्सवालमें १५, ००० से अधिक ब्रिटिश भारतीय वयस्क पुरुष थे इस वक्तव्यके समर्थनमें पहले सबूतके रूपमें लेखकका अपना अनुभव सेवामें प्रस्तुत है।

आगे मेरा संघ निम्नलिखित बातें इस वक्तव्यके समर्थनमें पेश करता है

१ सन् १८९९ में तत्कालीन ब्रिटिश एजेंटने महामहिमकी सरकारको एक प्रतिवेदन पेश किया था जिसमें ब्रिटिश जनसंख्याके बारेमें मोटे आँकड़े दिये गए थे। ये आँकड़े समाचारपत्रोंमें प्रकाशित हुए थे। जहाँतक लेखकको याद है, उसमें ब्रिटिश भारतीयोंकी संख्या १५, ००० दी गई थी।

२ सन् १८९५ में ट्रान्सवालके ब्रिटिश भारतीयोंने महामहिमके उपनिवेश-मन्त्रीकी सेवामें एक प्रार्थनापत्र प्रस्तुत किया था। वह दक्षिण आफ्रिकाके ब्रिटिश भारतीयोंकी शिकायतोंसे सम्बन्धित सरकारी रिपोर्टमें प्रकाशित हुआ है।[1] उस समय ट्रान्सवालमें ब्रिटिश भारतीयोंकी आबादीका जो मोटा अन्दाज दिया गया था उसके मुताबिक तब कमसे-कम ५, ००० भारतीय वयस्क पुरुष थे। किन्तु सन् १८९५ और १८९९ के बीचमें जो दक्षिण आफ्रिकामें रहे हैं वे जानते हैं कि ट्रान्सवालमें भारतीयोंकी संख्यामें सर्वाधिक वृद्धि इसी अवधिमें हुई। यह वृद्धि इतनी असाधारण मानी गई कि आजके कुछ भारतीय-विरोधी आन्दोलनकारियोंने भूतपूर्व राष्ट्रपति क्रूगरसे कार्रवाई करनेकी प्रार्थना की किन्तु जहाँतक भारतीय प्रवासका सम्बन्ध है सौभाग्यसे भूतपूर्व

१. देखिए, "दक्षिण आफ्रिका ब्रिटिश भारतीयोंकी" पृष्ठ ५० ।

उनका तीसरा वक्तव्य भारतीयोंके बड़ी संख्यामें नेटालसे ट्रान्सवालमें आनेके बारेमें है। जिन्होंने यह वक्तव्य दिया है वे कुछ भी नहीं जानते कि नेटालमें गिरमिटिया मजदूरोंसे सम्बन्धित कानून किस तरह लागू किया जाता है और फिर भी इस आशयका वक्तव्य दिया गया है कि ट्रान्सवालमें जो लोग बड़ी संख्यामें आये हैं वे इसी वर्गके हैं। जहाँतक मेरे संघको मालूम है भारतीय-विरोधियोंने जो बहुत-से वक्तव्य दिये हैं उन्हें सिद्ध करने योग्य कोई प्रमाण देनेमें वे अभीतक सफल नहीं हुए। और सबसे बड़ी बात जिसपर उन्होंने कभी ध्यान ही नहीं दिया यह है कि युद्धसे पहले जोहानिसबर्गमें ही सबसे ज्यादा भारतीय रहते थे और जोहानिसबर्गसे ही वे उपनिवेशके दूसरे हिस्सोंमें फैले हैं। जहाँतक भारतीयोंका सम्बन्ध है युद्धसे पहले जोहानिसबर्गका व्यापार, चूँकि डच और वतनियोंके हाथमें था बहुत ही अच्छा था। लेकिन आज डच और वतनी दोनोंका व्यापार बहुत बुरी हालतमें है। इसका नतीजा यह हुआ है कि जिन व्यापारियोंके लिए ट्रान्सवालमें अपनी जीविका चलाना असम्भव हो गया था व अब ट्रान्सवालके दूसरे हिस्सोंमें जा बसे हैं। जोहानिसबर्गकी बस्ती बहुत-से भारतीय जमींदारोंका अवलम्ब थी। ये लोग न केवल निर्धन बना दिये गये हैं बल्कि इन्हें जोहानिसबर्ग छोड़कर उपनिवेशके दूसरे हिस्सोंमें जानेपर मजबूर किया गया है। यदि जोहानिसबर्गकी हालत पहले जैसी हो जाये और ब्रिटिश भारतीयोंको युद्धके पहले जमीनकी मिल्कियतके बारेमें जो संरक्षण प्राप्त था उसका फिरसे आश्वासन मिल जाये तो जो भारतीय आबादी उपनिवेशमें इधर-उधर फैल गई है वह सब जोहानिसबर्गमें आ जायेगी और भारतीय-विरोधी लोगोंको यह जानकर सन्तोष होगा कि बहुत-से नगर भारतीय-विहीन हो गये हैं।

इस बयानमें जो-कुछ भी कहा गया है उसके एक-एक शब्दको प्रमाणित करनेके लिए जाँच की जाये तो मेरे संघको सबूत देनेमें खुशी होगी। चूँकि मुख्य अनुमतिपत्र सचिवने मेरा १ सितम्बरका पत्र परमश्रेष्ठके पास निर्णयके हेतु भेजा है, इसलिए क्या मैं यह आशा कर सकता हूँ कि यूरोपीयों द्वारा उल्लिखित जिन नियमोंको मेरे संघने अमान्य माना है उन्हें अविलम्ब वापस ले लिया जायेगा? ब्रिटिश भारतीयोंके सम्बन्धमें तरह-तरहके निराधार वक्तव्य पेश किये जानेसे निर्दोष और ईमानदार आदमियोंको बिना अपराध असुविधा और हानि उठानी पड़ती है। व जब पराये झंडेके नीचे थे तब भी उन्हें ऐसी कठिनाइयाँ नहीं झेलनी पड़ी थीं।

आपका आदि
अब्दुल गनी
अध्यक्ष
ब्रिटिश भारतीय संघ

[अंग्रेजीसे]

प्रिटोरिया आर्काइव्ज : एल जी ९२/२१३२ पत्र संख्या १४

ग्लैडस्टनका ध्यान इस बातकी ओर उचित ही खींचा है कि उन्हें अवश्य ही निकट भविष्यमें ऑरेंज रिवर उपनिवेशमें प्रवेशका अधिकार प्राप्त होनेकी आशा है और यदि उनकी यह आशा न्यायपूर्ण हो तो जो प्रतिबन्धक कानून भविष्यमें बनाया जायेगा उसपर आपत्ति की जा सकती है। यह मामला ऐसा है कि इसपर तुरन्त कार्रवाई करनेकी आवश्यकता है और हमें आशा है कि लॉर्ड ग्लैडस्टन कृपापूर्वक उन ब्रिटिश भारतीयोंके प्रति जो ऑरेंज रिवर उपनिवेशमें बस गये हैं या जिन्हें निकट भविष्यमें वहाँ जाना पड़ सकता है न्याय करानेकी व्यवस्था करेंगे।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन २१–९–१९११

१२. उपनिवेशमें उत्पन्न प्रथम भारतीय बैरिस्टर[1]

हम श्री बर्नार्ड गैब्रियलका जो हाल ही में इंग्लैंडसे पूर्ण बैरिस्टर बनकर लौटे हैं, हार्दिक स्वागत करते हैं। साधारण परिस्थितियोंमें किसी नवयुवकके बैरिस्टर बन जानेपर खास तौरसे उल्लेख करनेका कोई कारण न होता परन्तु जिस घटनामें इस समय हमारी दिलचस्पी है वह बहुत अर्थपूर्ण है। श्री गैब्रियलके माता-पिता उन भारतीयोंमें से हैं जो इस उपनिवेशमें पहले-पहल आकर बसे थे और जो गिरमिटिया वर्गके थे। उन्होंने और उनके बड़े पुत्रोंने अपने सर्वस्वकी आहुति देकर अपने सबसे छोटे पुत्रको उच्च कोटिकी शिक्षा दिलाई है। यह उनके लिए बड़े-बड़े श्रेयकी बात है। इससे उनकी सार्वजनिक भावना और पैतृक वत्सलता प्रकट होती है। उन्होंने उन गरीब भारतीयोंको जिन्हें अपनी जीविकाके लिए गिरमिटिया बनकर काम करना पड़ा है सब विचारवान लोगोंकी दृष्टिमें ऊँचा उठाया है। श्री बर्नार्ड गैब्रियलने यह भी दिखा दिया है कि इन परिस्थितियोंमें भी गरीब भारतीयोंके बालक ऊँची योग्यता प्राप्त करनेमें समर्थ हैं और हमारा तो खयाल है कि इस घटनापर उपनिवेशियोंको भी गर्व करना चाहिए। इसका एक दूसरा पहलू भी है। जहाँ एक भारतीयके नाते श्री बर्नार्ड गैब्रियलको कानूनकी शिक्षा पाकर बैरिस्टर बन जानेपर अपने आपको बधाई देनेका पूरा अधिकार है वहाँ उन्हें मानना चाहिए कि यह उनके उपजीवनका आरम्भ-मात्र है। उन्हें चाहिए कि वे अपने आपको जीवनके उसी क्षेत्रके अपने साथी भारतीय युवकोंका न्यासी समझें। यदि उन्होंने अच्छा उदाहरण उपस्थित किया तो अन्य माता-पिताओंको भी अपने बालकोंको शिक्षा पूरी करनेके लिए इंग्लैंड भेजनेकी प्रेरणा मिलेगी। उन्होंने एक सम्मानित पेशा अपनाया है परन्तु यदि उन्होंने इस पेशेको जोड़नेका साधन बनाया तो सम्भव है उनके हाथ असफलता ही लगे। यदि उन्होंने अपनी योग्यताका उपयोग समाजकी सेवाके लिए किया तो यह अधिकाधिक बढ़ती चली जायेगी। अतः हमें आशा है कि श्री गैब्रियल अपने पेशेको

[1] श्री बर्नार्ड गैब्रियलको एक मानपत्र [illegible] १ [illegible] डर्बनमें [illegible] भारतीयोंकी ओर[illegible] भेंट किया गया था। (इंडियन ओपिनियन २१-९-१९११)। [illegible] होता है कि गांधीजी उस उत्सवमें शामिल नहीं थे और हस्ताक्षरकर्ताओंमें भी उनका नाम नहीं था। फिर भी असम्भव नहीं कि मानपत्रका मसविदा उन्होंने तैयार किया हो। उसमें यह कहा गया है: "हम [illegible] कोई सन्देह नहीं कि आप [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] और [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] निश्चित होंगे।"

सेक्रेटरीका ध्यान इस बातकी ओर उचित ही खींचा है कि उन्हें अवश्य ही निकट भविष्यमें ऑरेंज रिवर उपनिवेशमें प्रवेशका अधिकार प्राप्त होनेकी आशा है और यदि उनकी यह आशा न्यायपूर्ण हो तो जो प्रतिबन्धक कानून भविष्यमें बनाया जायेगा उसपर आपत्ति की जा सकती है। यह मामला ऐसा है कि इसपर तुरन्त कार्रवाई करनेकी आवश्यकता है और हमें आशा है कि लॉर्ड सेल्बोर्न कृपापूर्वक उन ब्रिटिश भारतीयोंके प्रति जो ऑरेंज रिवर उपनिवेशमें बस गये हैं या जिन्हें निकट भविष्यमें वहाँ जाना पड़ सकता है न्याय करानेकी व्यवस्था करेंगे।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन २१-९-१९०५

९२ उपनिवेशमें उत्पन्न प्रथम भारतीय बैरिस्टर[1]

हम श्री बर्नार्ड गैब्रियलका जो हाल ही में इंग्लैंडसे पूर्ण बैरिस्टर बनकर लौटे हैं हार्दिक स्वागत करते हैं। साधारण परिस्थितियोंमें किसी नवयुवकके बैरिस्टर बन जानेपर खास तौरसे उल्लेख करनेका कोई कारण न होता परन्तु जिस घटनामें इस समय हमारी दिलचस्पी है वह बहुत मर्मपूर्ण है। श्री गैब्रियलके माता-पिता उन भारतीयोंमें से हैं जो इस उपनिवेशमें पहले-पहल आकर बसे थे और जो गिरमिटिया वर्गके थे। उन्होंने और उनके बड़े पुत्रोंने अपने सबस्वकी आहुति देकर अपने सबसे छोटे पुत्रको उच्च कोटिकी शिक्षा दिलाई है। यह उनके लिए बड़ेसे-बड़े श्रेयकी बात है। इससे उनकी सार्वजनिक भावना और पैतृक वत्सलता प्रकट होती है। उन्होंने उन गरीब भारतीयोंको जिन्हें अपनी जीविकाके लिए गिरमिटिया बनकर काम करना पड़ा है सब विचारवान लोगोंकी दृष्टिमें ऊँचा उठाया है। श्री बर्नार्ड गैब्रियलने यह भी दिखा दिया है कि इन परिस्थितियोंमें भी गरीब भारतीयोंके बालक ऊँची योग्यता प्राप्त करनेमें समर्थ हैं और हमारा तो खयाल है कि इस घटनापर उपनिवेशियोंको भी गर्व करना चाहिए। इसका एक दूसरा पहलू भी है। जहाँ एक भारतीयके नाते श्री बर्नार्ड गैब्रियलको कानूनकी शिक्षा पाकर बैरिस्टर बन जानेपर अपने आपको बधाई देनेका पूरा अधिकार है वहाँ उन्हें मानना चाहिए कि यह उनके उपजीवनका आरम्भ-मात्र है। उन्हें चाहिए कि वे अपने आपको जीवनके उभी क्षेत्रके अपने साथी भारतीय युवकोंका स्वामी समझें। यदि उन्होंने अच्छा उदाहरण उपस्थित किया तो अन्य माता-पिताओंको भी अपने बालकोंको शिक्षा पूरी करनेके लिए इंग्लैंड भेजनेकी प्रेरणा मिलेगी। उन्होंने एक सम्मानित पेशा अपनाया है, परन्तु यदि उन्होंने इस पेशा को पैसा बनाया तो सम्भव है उनके हाथ असफलता ही लगे। यदि उन्होंने अपनी योग्यताका उपयोग समाजकी सेवाके लिए किया तो वह अविवादिक बड़ी बनी जायेगी। अतः हमें आशा है कि श्री गैब्रियल अपने पेशेकी

[1] श्री गाडफ्रेका यह स्वागत समारोह [illegible] १९ सितम्बरको डर्बनमें [illegible] भारतीयोंकी ओर [illegible] किया गया था (इंडियन ओपिनियन २३-९-१९०५)। [illegible] होता है कि [illegible] उस समय [illegible] नहीं थे और [illegible] भी उनका [illegible] नहीं था। फिर भी [illegible] कि [illegible] इसमें यह [illegible] है [illegible] इंडियन [illegible] और [illegible] [illegible]

तुमने चि० मणिलालका समय-विभाजन ठीक रखा है। उसकी रुचि खेतीमें है तो उसको घरके आसपास काम करनेके लिए कहना। मुख्य बात तो है जमीनके उस बड़े टुकड़ेको साफ करनेकी और उसमें पानी देनेकी। वह पेड़ोंपर ध्यान रखेगा तो उसे अपने-आप विशेष बातें मालूम हो जायेंगी। वह क्या पढ़ता है? मैं उसे अंग्रेजीमें कम्पोज करनेके लिए लिखूँगा। वह गुजरातीमें भी प्रशिक्षण ले तो अच्छा होगा।

मुझे तुम्हारा मन कुछ कमजोर होता दिखता है। वास्तवमें कुछ महीने तुम्हारा यहाँ रहना जरूरी है। लेकिन यह संभव नहीं दिखता। तुम छापेखानेमें रहनेके लिए दृढ़संकल्प हो इतना काफी नहीं है। मैंने तुमको दो और दो चारकी तरह असंदिग्ध रूपमें बता दिया है कि छापाखाना बन्द नहीं होगा। तुमने तब सहमति प्रकट की थी और अब लिखते हो कि परिस्थितियाँ दुस्सह और अनिश्चित हैं। मैं इसीको निर्बलताका चिह्न समझता हूँ। छापेखानेमें क्या है, तुम्हारा अपना कर्तव्य क्या है और लोगोंको किस तरह सँभाला जाये इसका विचार तुम नहीं कर सके। उसके लिए तुम्हें अवकाश नहीं मिला। और विपरीत परिस्थितियोंके कारण तुम्हारी निर्बलता प्रकट हुई है। ऐसा होना भी मैं अच्छा समझता हूँ। लेकिन तुम स्वयं उसका तात्पर्य समझ सको तभी वह अच्छा है। यह सब मैं पत्र द्वारा नहीं समझा सकता। सिर्फ इतना ही लिखता हूँ कि (१) जबतक एक भी मनुष्यकी अनन्य भक्ति होगी तबतक छापाखाना टूट नहीं सकता। (२) तुम्हारे और दूसरोंके लिए मैं छापेखानेके सिवा दूसरे किसी कामको अनुकूल नहीं समझता। (३) मनुष्य कितना ही तीखे मिजाजका हो फिर भी यदि हम उसकी ओर मन, वचन और कायासे निर्मल प्रेम रख सकें तो वह तुरंत ठिकानेपर आये बिना नहीं रहेगा। (४) लेकिन वह ठिकानेपर आये या न आये हमारा कर्तव्य यही है कि हम निश्चिन्त होकर एक ही दिशामें चलते रहें। मैं मानता हूँ कि तुम हेमचन्दको सिखा लो और चिन्ताओंसे कुछ छूट जाओ तो बहुत अच्छा हो। मैं यह चाहता भी हूँ।

मोहनदासके आशीर्वाद

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ४२४२) से।

९६. पत्र : छगनलाल गांधीको

जोहानिसबर्ग
सितम्बर २९, १९०५

चि० छगनलाल,

वेस्टने मुझे लिखा है कि तुमने रामको एक किताबकी जिल्द बाँधनेका ऑर्डर सीधा दे दिया और उनकी शिकायत है कि अगर वे फोरमैन हैं तो यह अनियमित था। वे यह भी कहते हैं कि किताबकी जिल्द अच्छी नहीं बाँधी गई है। मैंने उनको लिखा है कि अगर तुमने ऐसा किया है और ऑर्डर सीधा दिया है तो यह अनियमित है, मगर इसमें सम्भवतः तुम्हारा इरादा उन्हें नाराज करनेका या नियम तोड़नेका नहीं हो सकता। मैंने उनसे यह भी कहा है कि वे तुमसे आमने-सामने बातचीत कर लें। इसलिए मैं चाहता हूँ कि तुम उनसे बातें कर लो और मामला क्या है यह मुझे भी सूचित करो। यह बात बिलकुल ठीक है कि ऑर्डर

उत्तरमें इस प्रकारके सबूत सरकारको दिये गये हैं और यह भी बताया गया है कि श्री बक्ले[1] तथा अन्य लोग जो विवरण देते हैं, वह बिलकुल झूठा है। इसलिए सरकारको उसपर ध्यान नहीं देना चाहिए और जो गरीब भारतीय अब भी बाहर हैं उनको तुरन्त प्रविष्ट होने देना चाहिए।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, २१-९-१९०५

९४. पत्र : छगनलाल गांधीको

जोहानिसबर्ग
सितम्बर २१, १९०५

चि० छगनलाल,

तुम्हारा पत्र मिला। किचिनके सम्बन्धमें तुमने जो लिखा है उससे आश्चर्य होता है। उसके स्वभावसे तुम्हारा कोई सम्बन्ध नहीं। वह तुम्हारे ऊपर तो है नहीं। वह जो-कुछ कहे उसका तुम जवाब दे सकते हो। लेकिन इतना ही जरूरी है कि तुम गुस्सा न करो। तुम दोनों एक समान हो और परस्पर प्रश्नोत्तर कर सकते हो। वह जो-कुछ भी कहे उसे सहन करनेका अर्थ यह नहीं कि तुम उसे जवाब न दो बल्कि इतना ही है कि तुम उसका आवेशपूर्वक विरोध न करो। वेस्टका किस्सा जानता हूँ। इसमें मुझसे भूल हुई है। मैंने उसे कहा था कि वह उनके यहाँ चला जाये। किन्तु मैं यह भूल गया कि किचिन साहब किसीका भी दाब बर्दाश्त नहीं कर सकते। उनमें यह अवगुण है। इसका खयाल नहीं करना चाहिए।

मैंने तुम्हें अच्छी तरह समझा दिया है कि किचिन या कोई और भी आदमी जाये तो मुझे उसकी परवाह नहीं। इससे छापाखाना बन्द न होगा। मेरा अन्तिम आधार तो तुम और वेस्ट हो। तुम दोनों जबतक बैठे हो तबतक छापाखाना बन्द नहीं होगा। इतनेपर भी यदि तुम्हारे मनमें शंका उत्पन्न होती है तो मैं इसे तुम्हारी कमजोरी मानता हूँ।

छापेखानेमें बिजलीकी रोशनी वगैरहपर जितना खर्च हो वह मुझसे पूछे बिना तय नहीं होगा। फिर भी तुम बैठकमें कह सकते हो कि यह खर्च मुझसे पूछे बिना नहीं किया जायेगा। मैंने इस सम्बन्धमें ज्यादासे-ज्यादा ४ पौंड तक की स्वीकृति देनेको कहा है। मैंने उनके घरमें छापखानेके खर्चसे दफ्तर बनानेकी अनुमति नहीं दी है। टेलीफोनके लिए मैं इनकार नहीं करता।

मेर्गारिगको पैसे दिये जायें।

कालाभाईको तुम्हें कहना चाहिए। उसे कितने रुपये दिये गये थे यह तो मुझे याद नहीं है। लेकिन उसने सम्भवतः ५ रुपये रेवाशंकर मारफत लिये हैं। तुम कहो तो मैं फिर

1. नेटालकी विधान-परिषदके सदस्य; देखिए "श्री बक्ले और ब्रिटिश भारतीय", खण्ड ४, पृष्ठ ११२-१३।
2. किचिन थे।
3. गांधीजीके चचेरे भाई करसनदासके पुत्र गोकुलदास उर्फ कालाभाई।

तुमने चि॰ मणिलालका समय-विभाजन ठीक रखा है। उसकी रुचि खेतीमें है तो उसको वरके आसपास काम करनेके लिए कहना। मुख्य बात तो है जमीनके उस बड़े टुकड़ेको साफ करनेकी और उसमें पानी देनेकी। वह पेड़ोंपर ध्यान रखेगा तो उसे अपने-आप विशेष बातें मालूम हो जायेंगी। वह क्या पढ़ता है? मैं उसे अंग्रेजीमें कम्पोज करनेके लिए लिखूँगा। *वह गुजरातीमें भी प्रशिक्षण ले तो अच्छा होगा।*

मुझे तुम्हारा मन कुछ कमजोर होता दिखता है। वास्तवमें कुछ महीने तुम्हारा यहीं रहना जरूरी है। लेकिन वह संभव नहीं दिखता। तुम छापेखानेमें रहनेके लिए दृढ़संकल्प हो इतना काफी नहीं है। *मैंने तुमको दो और दो चारकी तरह असंदिग्ध रूपमें बता दिया है कि छापा*खाना बन्द नहीं होगा। तुमने तब सहमति प्रकट की थी और अब लिखते हो कि परिस्थितियाँ दुस्सह और अनिश्चित हैं। मैं इसीको निर्बलताका चिह्न समझता हूँ। छापेखानेमें क्या है, तुम्हारा *अपना कर्तव्य क्या है और लोगोंको किस तरह सँभाला जाये इसका विचार तुम नहीं* कर सके। उसके लिए तुम्हें अवकाश नहीं मिला। और विपरीत परिस्थितियोंके कारण तुम्हारी निर्बलता प्रकट हुई है। ऐसा होना भी मैं अच्छा समझता हूँ। लेकिन तुम स्वयं उसका तात्पर्य समझ सको तभी वह अच्छा है। यह सब मैं पत्र द्वारा नहीं समझा सकता। सिर्फ इतना ही लिखता हूँ कि (१) जबतक एक भी मनुष्यकी अनन्य भक्ति होगी तबतक छापाखाना टूट नहीं सकता। (२) तुम्हारे और दूसरोंके लिए मैं छापेखानेके सिवा दूसरे किसी कामको अनुकूल नहीं समझता। (३) मनुष्य कितना ही तीखे मिजाजका हो फिर भी यदि हम उसकी ओर मन, वचन और कायासे निर्मल प्रेम रख सकें तो वह दुरुस्त ठिकानेपर आये बिना नहीं रहेगा। (४) लेकिन वह ठिकानेपर आये या न आये हमारा कर्तव्य यही है कि हम निश्चिन्त होकर एक ही दिशामें चलते रहें। मैं मानता हूँ कि तुम हेमचन्द्रकी चिन्ता छोड़ो और चिन्ताओंसे कुछ छूट जाओ तो बहुत अच्छा हो। मैं यह चाहता भी हूँ।

मोहनदासके आशीर्वाद

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल गुजरातीकी फोटो-नकल (एस॰ एन॰ ४२५२) से।

९६. पत्र : छगनलाल गांधीको

जोहानिसबर्ग

सितम्बर २८, १९१२

चि॰ छगनलाल,

कॉर्डीने मुझे लिखा है कि तुमने रामको एक किताबकी जिल्द बाँधनेका ऑर्डर सीधा दे दिया और उनकी शिकायत है कि अगर वे फोरमैन हैं तो यह अनियमित था। वे यह भी कहते हैं कि किताबकी जिल्द अच्छी नहीं बाँधी गई है। मैंने उनको लिखा है कि अगर तुमने ऐसा किया है और ऑर्डर सीधा दिया है तो यह अनियमित है मगर इसमें सम्भवतः तुम्हारा इरादा उन्हें नाराज करनेका या नियम तोड़नेका नहीं हो सकता। मैंने उनसे यह भी कहा है कि वे तुमसे आमने-सामने बातचीत कर लें। इसलिए मैं चाहता हूँ कि तुम उनसे बातें कर लो और मामला क्या है यह मुझे भी सूचित करो। यह बात बिलकुल ठीक है कि ऑर्डर

इन कायदों या भोजन-गृहोंको परवाने लेनेके लिए बाध्य करनेका अधिकार दिया गया है, जिनका उपयोग सम्भवतः केवल एशियाई लोग करते हैं। हमारा खयाल है इसके लिए ट्रान्सवालके एशियाइयोंको कुछ चीनी दूकानदारोंको धन्यवाद देना चाहिए। ये चीनी भोजन-गृह खोलनेके लिए तो उतावले थे परन्तु इन्हें यह पता नहीं था कि उनके लिए परवाना लेनेकी आवश्यकता नहीं है। इन्होंने सरकारको प्रार्थनापत्र दिया कि उन्हें भोजन-गृह खोलनेकी सुविधाएँ दी जायें। सरकारने इनके साथ वही सलूक किया जिसके वे लायक थे। अब सब एशियाई भोजन-गृहोंके मालिकोंको छोटे-छोटे उपाहार-गृहों तक पर नगरपालिकाओंके नियन्त्रणका मजा चखना पड़ेगा। सफाईके विचारसे नगरपालिकाके नियन्त्रणकी बात हम समझ सकते हैं और उसका स्वागत भी करते हैं परन्तु जहाँतक ब्रिटिश भारतीयोंका सम्बन्ध है जो रोजगार मुश्किलसे कायम रख सकते हैं उनके लिए भी परवानेकी शर्त रखना सर्वथा अनुचित है। परन्तु ब्रिटिश भारतीय भी तो एशियाई हैं इसलिए ट्रान्सवाल सरकारका तर्क यह है कि यदि ४२, चीनियोंकी भोजन-व्यवस्था करनेवाले भोजन-गृहोंपर परवाना लेनेका नियम लागू किया जाता है तो १२, भारतीयोंके भोजन-गृहोंपर यह क्यों न लागू किया जाये? उसे यह नहीं सूझा कि भारतीय भोजन-गृह हैं ही बहुत कम क्योंकि उनके रीति-रिवाज ऐसे हैं कि उन्हें भोजन-गृहोंकी आवश्यकता नहीं पड़ती। निश्चय ही वे इतने कम हैं कि उनकी ओर अबतक किसीका ध्यान नहीं गया था।

इनके अतिरिक्त राजस्व-परवाना अध्यादेश है। उसके अनुसार फेरीवाले और ठेलोंपर सौदा बेचनेवाले लोग परवानोंके अधिकारी तभी हो सकेंगे जब पहले वे मजिस्ट्रेटों शान्ति रक्षक न्यायाधिकारियों (जस्टिस ऑफ द पीस) या पुलिस अधिकारियोंसे प्रमाणपत्र प्राप्त कर लेंगे। अपवाद केवल उन लोगोंके लिए होगा जिनके पास पहलेसे परवाने होंगे परन्तु इन भाग्यवान् लोगोंको भी यह सुविधा तभी मिलेगी जब वे अपने परवाने मियाद खतम होनेसे पहले चौदह दिनके भीतर अपने जिलेके राजस्व-अधिकारियोंको सौंप देंगे।

जोहानिसबर्गके भूमि अध्यादेशके अनुसार,

> लेफ्टिनेंट गवर्नर इस अध्यादेशके साथ संलग्न अनुसूचीमें वर्णित किसी भी भूमिको जोहानिसबर्ग नगरपालिकाकी परिषदको दे देता है तो वैसा करना कानून-सम्मत माना जायेगा बशर्ते कि यह भूमि इस प्रकारसे और ऐसी शर्तोंपर दी जाये जिस प्रकारसे और जैसी शर्तों पर नगरपालिका परिषद देना उचित समझे और उस भूमिमें किसी व्यक्तिका उस समय कोई अधिकार हो तो उसका ध्यान रख लिया जाये।

जिस भूमिपर इसका प्रभाव पड़ता उसमें जोहानिसबर्गकी मलायी बस्ती भी है। यह बस्ती चार वर्ष या इससे भी अधिक समयसे वहाँ बसी है। इसके विरुद्ध इसके निवासियोंकी आदतों या उनकी सफाईके कारण कभी किसीने कोई आपत्ति नहीं उठाई। इससे पहले ब्रिटिश [illegible] जो वहाँ सरकारका प्रतिनिधित्व करते थे इस बस्तीके निवासियोंमें सुरक्षाकी भावना उत्पन्न कर दी थी और इसीलिए उन्होंने वहाँ पक्के मकान बना लिये थे। परन्तु कानूनी दृष्टिसे उनका अधिकार केवल मासिक किरायेदारके रूपमें है। अब यदि यह कल्पना की जाये कि उनको जमीन छीन लिया जायेगा तो प्रश्न यह उठता है कि उन्हें मुआवजा क्या मिलेगा? हम यहाँ यह जिक्र किये बिना नहीं रह सकते कि भारतीयोंके एक भाग और दूसरे भागमें अत्यन्त ईर्ष्याजनक भेद किया गया है क्योंकि इस नयी बस्तीकी बस्ती [illegible] है। जिस भागमें पुराने [illegible] यूरोपीय [illegible] उनके साथ सरकारने

९९. चीनी और अमेरिकी

चीनियों द्वारा अमेरिकी मालके बहिष्कारके फलस्वरूप अमेरिकाको प्राय: ५ पौंडका नुकसान हो चुका है ऐसा प्रतीत होता है। इससे अमेरिकी व्यापारियोंने सरकारसे प्रार्थना की है कि चीनियोंके खिलाफ जो कानून हैं वे रद कर दिये जायें। इसके विरोधमें अमेरिकाके मजदूर-वर्गके लोगोंने बड़ी-बड़ी सभाएँ करके प्रस्ताव स्वीकार किये हैं कि व्यापारियोंको चाहे कितना ही नुकसान क्यों न हो चीनियोंके खिलाफ बनाये गये कानून रद नहीं किये जाने चाहिए। इस प्रकार अमेरिकामें एक ओर व्यापारियों और कारीगरोंके बीच फूट चल रही है और दूसरी ओर तारों द्वारा प्राप्त समाचारोंसे पता चलता है कि चीनियोंने जो ऐक्य कायम किया है, वह और भी मजबूत होता जा रहा है। चीनियोंने जो प्रस्ताव किया है वह उन सब देशोंके सम्बन्धमें है जिनमें चीनी-विरोधी कानून लागू हैं। यह भी कहा जाता है कि गोरोंके विरुद्ध दुर्भावना इस हद तक भड़क उठी है कि चीनके अन्दरूनी भागोंमें जिन गोरोंकी रिहाइश है उनके लिए खतरा मालूम दे रहा है। कहा नहीं जा सकता कि इन सारे आन्दोलनोंका क्या परिणाम होगा।

उन्नीसवीं शताब्दीमें जो बड़े-बड़े काम हुए माने जाते हैं उन सबकी कसौटी इस बीसवीं शताब्दीमें हो रही है। और ऐसा प्रतीत होता है कि इस शताब्दीमें बहुत बड़ी उथल-पुथल होनेकी सम्भावना है। इस सारी हलचलमें यह बात दिखाई देती है कि जहाँ ऐक्य है वहीं बल है और वहींपर जीत है। यह बात ऐसी है जो प्रत्येक भारतीयको अपने मनमें अंकित कर लेनी चाहिए। चीनी कमजोर होनेपर भी ऐक्यके कारण बलवान दिखाई देते हैं और चींटियाँ मिलकर काले नागके भी प्राण ले लेती हैं[1] इस कहावतको चरितार्थ कर रहे हैं।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन ९-९-१९०५

१००. नेटालमें उद्योगोंको प्रोत्साहन देनेका आन्दोलन

गवर्नर द्वारा नियुक्त आयोग

इस बारेके गवर्नमेंट गजट से पता चलता है कि नेटालमें एक आयोगकी नियुक्ति की गई है जो यह बतायेगा कि नेटालमें जो-जो वस्तुएँ खपती हैं वे कैसे बनाई जा सकती हैं और इसके लिए क्या-क्या उपाय करने चाहिए तथा इस प्रकार उत्पन्न की गई वस्तुओंकी खपतको बढ़ावा देनेके लिए चुंगीकी दरमें परिवर्तन किया जाये या नहीं। इस आयोगमें सदस्योंके रूपमें श्री मूअर, डॉ. गबीन्स, श्री अरनेस्ट ऐकर्, श्री जेम्स किंग, श्री जॉर्ज पैडन, श्री सॉडर्स और श्री मैकमिमनकी नियुक्ति की गई है। हम समझते हैं कि इस आयोगके सामने हमारे व्यापारी गवाही दें तो बहुत अच्छा हो। ऐसी बहुत-सी चीजें हैं जो नेटालमें पैदा की जा सकती हैं और अनुभवी व्यापारी इस दिशामें सहायता कर सकते हैं।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन ९-९-१९०५

१ चीनी मजदूरोंका बोझ ढोनेके लिए बनाये गये।

१०१ नेटालकी पाठशालाएँ

शिक्षा-विभागके अधीक्षककी रिपोर्ट

नेटालके शिक्षा विभागके अधीक्षक श्री मुडीने अपनी वार्षिक रिपोर्टमें [illegible] र अन्य काले लोगोंकी पाठशालाओंमें बच्चोंकी स्वच्छतापर [illegible] [illegible]। श्री मुडीकी यह बात सदा ध्यानमें रखने योग्य है। यद्यपि श्री मुडी हमारे [illegible] फिर भी वे जहाँ हमारी भूल बतायें वहाँ हमें विचार करनेकी जरूरत है। इस बारेमें पूरा-पूरा ध्यान देना चाहिए। हम लोग स्वयं स्वच्छताके [illegible] हों तो भी बच्चोंको यह शिक्षा देना जरूरी है। अगर वे सीखेंगे तो एक परिवर्तन होनेकी सम्भावना है। लड़कोंके सम्बन्धमें निम्नलिखित बातें याद रखनी चाहिए:

(१) उनके दाँत साफ होने चाहिए। इसके लिए सुबह और सोनेसे पहले दतौन करवाना चाहिए।

(२) उनके बाल साफ होने चाहिए। इसके लिए उनके बाल रोज धोने, हमेशा और कंघी किये हुए रखने चाहिए। तेल डालना आवश्यक नहीं है।

(३) उनके नख स्वच्छ होने चाहिए, और समय-समयपर उन्हें काटना और चाहिए।

(४) जूते और कपड़े चाहे जितने ही सस्ते हों फिर भी साफ होने चाहिए।

(५) उनका बस्ता और उनकी किताबें भी इसी प्रकार साफ होनी चाहिए। इसलिए उनको चाहिए कि हाथ साफ हों तभी वे पुस्तकोंको पकड़ें।

यह कहनेकी आवश्यकता नहीं है कि इन सूचनाओंको याद रखने और [illegible] पालन करवानेसे लाभ होगा।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन १-९-१९ ५

१०२ जोहानिसबर्गवासियोंको सूचना

हम जोहानिसबर्गके अखबारोंमें देखते हैं कि वहाँ बुखारका मौसम शुरू हो गया है। नगर-पालिकाने घोषित किया है कि जो लोग अपने पाखाने गन्दे रखेंगे उनपर मुकदमा चलाया जायेगा। वहाँ कायदा यह है कि प्रत्येक पाखानेमें जब-जब उसका उपयोग किया [illegible] सदैव सूखी मिट्टी अथवा राख अथवा जन्तु-नाशक चूर्ण डाली जाये ताकि मैला [illegible] जरा भी सीलन अथवा बदबू न रहने दी जाये। यदि इसके अमलमें कोई [illegible] तो पाँच पौंड तक जुर्माना किया जाता है। यह नियम बहुत अच्छा है। इस [illegible] निःशुल्क [illegible] पैसा नहीं लगता। हम अपने पाठकोंसे खास सिफारिश करते हैं कि वे पाखानोंमें निःशुल्क [illegible] रखें और जब-जब पाखानेको काममें लायें तब-तब मैलेपर डिब्बेसे मिट्टी अथवा राख डालें।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन १०-९-१ ५

१०३ आज वाशिंगटन

अमेरिकाका पहला राष्ट्रपति

अंग्रेजीके प्राय: पुस्तकोंमें पढ़ चुके हैं कि एक दिन बालक जॉर्जने एक चेरीका पेड़ जो उनके पिताको अत्यन्त प्रिय था खेल-खेलमें काट दिया था। पिताने जब अपने पेड़का यह हाल देखा तब उसके बारेमें जॉर्जसे पूछा। जॉर्जने उत्तर दिया "पिताजी मुझसे झूठ तो नहीं बोला जा सकता। यह पेड़ मैंने काटा है।" पिताने यह प्रश्न बहुत जोशमें किया था। लेकिन जॉर्जने जब आँखोंमें आँसू भरकर निर्भीक उत्तर दिया तो वे खुश हो गये और उन्होंने अपने पुत्रके अपराधको दरगुजर कर दिया। उस समय जॉर्ज बहुत ही छोटा था।

जिस लड़केके मनमें सत्य इस तरहसे बद्धमूल था वह अपनी ५५ वर्षकी उम्रमें अमेरिकाका जिसका नाम आज दुनियामें फैला हुआ है, पहला राष्ट्रपति बना। उसके राष्ट्रपति बननेके समय लोग उसे राजा बनाने तथा मुकुट पहनानेके लिए तैयार थे। लेकिन उसने वह प्रस्ताव ठुकरा दिया।

जॉर्ज वाशिंगटनका जन्म २२ फरवरी १७३२ को वर्जिनिया राज्यके वेस्ट मोरलैंड शहरमें एक धनी घरमें हुआ था। उसके जीवनके पहले सोलह वर्षका हाल पूरी तरह किसीको मालूम नहीं है। १६ वर्षकी उम्र तक उसने बहुत कम पढ़ा-लिखा था। उसके बाद वह एक जमींदारीका मैनेजर नियुक्त किया गया। इस समय उसने अपनी होशियारी और बहादुरी दिखाई। यहाँतक कि २३ वर्षकी उम्रमें वह वर्जिनियाकी फौजका प्रधान सेनापति बना दिया गया।

उस समय उत्तर अमेरिका इंग्लैंडके अधिकारमें था। लेकिन अमेरिकाके लोगों और इंग्लैंडके बीच संघर्ष चला करता था। अमेरिकामें कुछ कर लगाये गये। अमेरिकावासियोंको वे ठीक नहीं लगे। इस समय और भी झगड़े थे। इससे आखिरमें अमेरिका और इंग्लैंडके लोगोंके मन इतने खट्टे हो गये कि लड़ाई शुरू हो गई। अंग्रेजी सेना कवायद सीखी हुई और तैयार थी। बेचारे अमेरिकी लोग देहाती थे। उन्हें हथियारोंका प्रयोग करना भी पूरी तरह नहीं आता था। वे फौजके अनुशासित जीवन और कष्टोंसे अपरिचित थे। ऐसे लोगोंको काबूमें रखने उनसे काम लेकर अमेरिकाको स्वतंत्र करने और अंग्रेजोंके बन्धनोंसे मुक्त होनेका काम वाशिंगटनपर आया। लोगोंने उसको प्रधान सेनापति बनाया। उस वक्त वाशिंगटनने कहा — "मैं इस सम्मानके योग्य बिलकुल नहीं हूँ। फिर भी आप मुझे नियुक्त करते हैं तो मैं आपलोगोंकी सेवाके लिए यह पद बिना वेतन स्वीकार करता हूँ।" ऐसे ही शब्द उसने अपने एक मित्रको भी लिखे थे इसलिए ये सिर्फ कहने भरके लिए कहे गये हों यह बात नहीं थी। दरअसल वह सच मानता था कि उसमें पर्याप्त बल नहीं है। फिर भी जब उसपर जिम्मेदारी आ ही गई तब उसने हर तरहकी जोखिम उठाकर और रात-दिन काम करके लोगोंके मनोंपर इतना प्रभाव डाला कि लोग उसकी आज्ञाका पालन तुरन्त करते थे और वह जो भी कष्ट सहन करनेके लिए कहता सहन कर लेते थे। आखिर अंग्रेजी फौजें हारीं और अमेरिका स्वतंत्र हुआ। अमेरिकाके स्वतंत्र होते ही जॉर्ज वाशिंगटनने अपना पद छोड़ दिया। लेकिन लोगोंका हाथ तो [illegible] लगा था व उसे छोड़नेवाले न थे। उसके बाद स्वराज्य प्राप्त होनेपर सन् १७८९ में अमेरिकाका पहला राष्ट्रपति बनाया गया। इस तरह [illegible] बाद भी उसके मनमें स्वार्थ [illegible] कभी नहीं आई। [illegible] बार भारी वैभव बरतनेवाले [illegible] स्वभाव पड़ [illegible] है। इस सबका वाशिंगटन

(४) अनिवार्य उपस्थिति वयमें १ दिनसे अधिक नहीं हो।
(५) नियमका उल्लंघन-कर्ताओंके विरुद्ध कार्रवाई फौजदारी कानूनके अन्तर्गत नहीं केवल दीवानी कानूनके अन्तर्गत की जाये और उनपर किये गये जुर्मानेकी वसूली भी दीवानी अदालतसे की जाये।

श्री कोटावालाने विशेष उत्साह दिखाया और वे उलझन-भरी गम्भीर कठिनाइयोंसे डरे नहीं। उन्होंने ऐसे दस गाँव चुने जो रियासतमें सबसे अधिक पिछड़े हुए थे (क्योंकि महाराजा गायकवाड़की इच्छा थी कि इस पद्धतिपर अधिकतम प्रतिकूल परिस्थितियोंमें अमल करके देखा जाये) और उनमें ऊपर लिखे सिद्धान्तोंको लागू किया। शिक्षा-निरीक्षकने गाँवोंके पटेलोंसे कई बार भेंट की। उन्होंने लोगोंके विरोधका सामना किस प्रकार किया और उनकी जिद-भरी भावनाओंको अपने विचारोंके अनुकूल कैसे बनाया ये सब घटनाएँ बड़ी रोचक हैं। परन्तु यहाँ हम केवल इस प्रयोगका परिणाम लेखकके अपने शब्दोंमें बतायेंगे।

इस प्रकार मैं बड़ौदा रियासतके सबसे पिछड़े हुए भागमें बहुत कम समयके भीतर अनिवार्य शिक्षा शुरू करनेमें समर्थ हो गया। मुझे इस योजनाको सफलतापूर्वक चलानेके लिए महीनों विशेष ध्यान देना पड़ा। वर्ष समाप्त होते-होते अनिवार्य शिक्षाकी आयुके प्रायः सभी अर्थात् ९९ प्रतिशतसे अधिक बच्चे स्कूलोंमें भर्ती हो गये। यह परिणाम ऐसा है जो इंग्लैंड तथा अन्य उन्नत देशोंमें भी प्राप्त नहीं हो सका है। इस कानूनपर सफलतापूर्वक अमल होनेसे महाराजाको दस-दस नये गाँवोंके समूहोंमें अनिवार्य शिक्षा लागू करनेकी प्रेरणा मिली। अमरेली ताल्लुकेमें अनिवार्य शिक्षा बारह वर्षसे अधिक समय तक सफलतापूर्वक कसौटीपर कस कर देखी जा चुकी है और सदा यह देखा गया है कि शत-प्रतिशत बच्चे स्कूलोंमें हाजिर रहे और लोगोंने इसके विरुद्ध कभी कोई गम्भीर शिकायत नहीं की। हालमें महाराजाने एक योजना स्वीकृत की है कि रियासतके जो भागोंमें अनिवार्य शिक्षा कानून उन बच्चोंपर लागू किया जाये जिनके माता-पिताओंकी एक निश्चित वार्षिक आय है।

यह सफलता ध्यान देने योग्य है। फिर भी भारतके करोड़ों निरक्षर लोगोंका खयाल करते हुए यह एक छोटा-सा अंकुर-मात्र है। कोई भी यह भविष्यवाणी नहीं कर सकता कि कालान्तरमें यह अंकुर कितना बड़ा हो जायेगा। इस प्रयोगसे हम दक्षिण आफ्रिकी लोगोंको भी कुछ न-कुछ शिक्षा अवश्य मिलती है। हम विभिन्न सरकारोंसे भारतीय बालकोंके लिए उपयुक्त शिक्षाकी व्यवस्था करनेकी आशा कर, यह उचित ही है। जिन भारतीयोंकी स्थिति अन्य भारतीयोंसे अच्छी है और जो शिक्षाके मर्मसे परिचित हैं उनका कर्तव्य है कि यदि दक्षिण आफ्रिकी सरकारें उनकी सहायता नहीं करतीं तो वे स्वयं भारतीय बालकोंकी शिक्षाकी उपयुक्त व्यवस्था करें।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन ७-१०-१९१२

भर्त्सना और तीखी निन्दा करनेके सामर्थ्यसे नापने लगेंगे तो यह उनकी भारी भूल होगी। सर मंचरजी सरीखे व्यक्तियोंकी अधिक नरम सम्मतियोंका प्रभाव उत्तेजनशील परिवर्तनवादी लोगोंकी तीव्र वक्तृताओंसे कहीं अधिक होता है। भारतको पूर्ण न्यायकी प्राप्ति केवल शान्ति-युक्त तर्कजनित समाधानसे हो सकती और इस कारण सर मंचरजी अपने देशवासियोंकी कृतघ्नताके भाजन होनेके तमाम कारणोंमें सबसे कम अधिकारी हैं।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन ७–१–१९०५

१११ बहिष्कार

भारतसे हालमें प्राप्त हुए समुद्री तारों और अखबारोंसे स्पष्ट है कि बंगालका बहिष्कार आन्दोलन यों ही अगौरवास्पद ढंगसे बैठ नहीं जायेगा। यद्यपि अंग्रेजी मालके बहिष्कारके पीछे बहुत-कुछ मार-जबर्दस्ती दिखाई पड़ती है तथापि आन्दोलन इतना व्यापक है कि उससे पता चलता है कि यह जनताकी तीव्र भावनाका परिणाम है। बंग-भंगके विरुद्ध वर्तमान आन्दो-लनका परिणाम चाहे जो हो, बहिष्कारका प्रभाव भारतके लिए हितकर ही होगा। इससे देशी उद्योगोंको आश्चर्यजनक प्रोत्साहन मिला है। हमारा विश्वास है कि ये उद्योग निरन्तर बढ़ते ही जायेंगे। यह परिणाम अप्रत्याशित है परन्तु इसकी वांछनीयता तनिक भी कम महत्त्वपूर्ण नहीं है। भारतकी असली आवश्यकता यही है कि राष्ट्रीय विशेषताओंको आश्रय दिया जाये और सुधारा जाये। यदि केवल भारतीय वस्तुओंके प्रयोगका संकल्प यथासम्भव स्थिर रखा जाये तो राष्ट्रीय भावनाके विकासमें इससे सहायता कुछ कम नहीं होगी।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन ७–१०–१९०५

११२ डॉक्टर बरनार्डो

गत मास डॉक्टर बरनार्डोकी देहान्तकी खबर दुनिया भरमें तारोंसे भेजी गई। ये डॉक्टर कौन थे यह जाननेकी उत्सुकता हमारे पाठकोंको अवश्य ही होगी। हम ऐसा समझकर उन भले डॉक्टरका जीवन वृत्तान्त इस अंकमें दे रहे हैं।

डॉक्टर बरनार्डो अनाथोंके बाप या पिता माने जाते थे। वे अपने जीवनके प्रारम्भ-कालमें बिना माँ-बापके बच्चोंको देखकर बहुत निराश होते थे। परन्तु उनके पास कुछ भी साधन नहीं था। वे स्वयं गरीब आदमी थे। फिर भी उनके मनमें यह विचार आया कि अनाथ बच्चोंका पालन-पोषण करके उन्हींसे उनका गुजर-बसर भी किया जाये।

ऐसेकी चाहिए बड़े, करे गुदड़ी दान इस कहावतके अनुसार हमारी इच्छा यह रहती है कि पहले बहुत-सा पैसा जमा हो और बादमें उसका अच्छा उपयोग करें। किन्तु ऐसा करते करते बहुतोंका पूरा जीवन ही निकल जाता है। कुछ लोग जब पैसे जमा कर लेते हैं तब अपने मनमें लिया हुआ संकल्प भूल जाते हैं। दूसरे कुछ लोग पैसा जमा करनेवाले उन पैसोंका अच्छा उपयोग कर [illegible] नहीं सकता था और फिर उस तरह अपने कामोंमें बरबाद कर[illegible]

–१

बच्चे काममें खर्च करनेका संतोष मान लेते हैं। चूँकि कोई बच्चा काम [illegible] होता इसलिए वे स्वयं उनका कोई उपयोग नहीं कर पाते।

यह सब बुद्धिमान डॉक्टर बरनार्डोने देख लिया था। इससे उन्होंने [illegible] मेरा मन तो साफ है। जो लोग मुझपर विश्वास करके मुझे पैसा देते हैं, मुझे अपना पेट भी इसके सहारे भरना चाहिए। लेकिन यदि मैं बिना सोचे-समझे पालन करूँगा तो उनकी अन्तरात्मा दुखा देगी। और लोग भी देख सकेंगे कि मेरा [illegible] मारनेका नहीं है। इस तरह दृढ़ संकल्प होकर वे बहादुर डॉक्टर मैदानमें कूद पड़े [illegible] अनाथाश्रम सम्भवके स्टीवेनी कॉजवेमें खोला। आरम्भमें तो सब लोगोंने [illegible] और कहने लगे कि यह तो धोखा देकर पैसे पैदा करनेका धन्धा [illegible] [illegible] बरनार्डो इससे निराश नहीं हुए। उन्होंने अनाथ [illegible] बच्चोंको [illegible] करना शुरू किया। धीरे-धीरे बच्चे जमा होने लगे। वे आवारा बननेके बजाय [illegible] तथा ईमानदार बने और रोजगारमें लग गये। इस प्रकार जितने भी बच्चे पले उन डॉक्टर बरनार्डोके आश्रमकी ख्याति बढ़ाई। उन बच्चोंने महसूस किया कि स्वयं बरनार्डो उनके माता-पिताकी अपेक्षा अधिक हिफाजत करते हैं। डॉक्टरने ऐसे आश्रम और अन्तमें लन्दनसे … मीलकी दूरीपर जंगलमें एक गाँव बसाया। उस गाँवमें मकानात और गिरजा-घर आदिका निर्माण किया और वह स्थान इस समय इतना अधिक [illegible] गया कि बहुत लोग उसको ऐसी पवित्र भावनासे देखने जाते हैं मानो तीर्थयात्रा करने जा रहे हों। उसकी ख्याति इतनी बढ़ गई है कि संसारके बहुत-से भागोंमें उस प्रकारके आश्रम [illegible] गये हैं। इस प्रकार डॉक्टर बरनार्डोने अपनी जिन्दगीमें ५६, बालकोंकी परवरिश की थी। कुछ दुष्ट माँ-बाप इस सुविधाका अनुचित लाभ भी उठाते थे। वे अपने बच्चोंको रातमें देखकर डॉक्टर बरनार्डोके अहातेमें डाल जाते थे। डॉक्टर बरनार्डो इनसे भी हार नहीं मानते थे। वे उन बच्चोंकी भलसे परवरिश करते और जब माँ-बाप अपने बालकोंको वापस लेने आते तब उनको सौंप देते थे। हर साल इन बच्चोंका मेला लन्दनके विशाल [illegible] हालमें लगता है। हजारों मनुष्य इस मेलेको पैसे देकर देखनेके लिए हर साल आते हैं। डॉक्टरके देहान्तके बाद पता चला है कि उन्होंने अपने जीवनका ● … पौंडका बीमा करवाया था। वसीयतनामेमें यह लिख गये हैं कि यह सारा धन उनके स्थापित किये हुए आश्रमोंके संचालनमें खर्च किया जाये।

डॉक्टर बरनार्डो ऐसे महान पुरुष थे। वे स्वयं धार्मिक और अत्यन्त दयालु थे। बीमा कराना आदि विचार हमारे धार्मिक मतसे अलग पड़ते हैं। फिर भी यह हमें कबूल करना चाहिए कि पश्चिमके उस प्रकारके रिवाजके अनुसार डॉक्टरने जो किया वह सूझ-बूझका काम था।

एक व्यक्ति गरीब होते हुए अपने उत्साह और अपने दया-भावके बलपर कितना काम कर सकता है इसका डॉक्टर बरनार्डोने इस युगमें सर्वोत्तम उदाहरण उपस्थित किया है।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन ७–१०–१९०५

११३. एक भारतीय कवि

श्री मार्डने हाली साहबके काव्योंका अनुवाद अंग्रेजीमें करके उनका नाम प्रसिद्ध किया है। कहा जाता है कि हाली साहबकी बराबरीका दूसरा कोई कवि नहीं है। उनका पूरा नाम मौलवी सैयद अलताफ हुसैन अनसारी है। उनका जन्म दिल्लीके पास पानीपतमें हुआ था। उनकी अधिकतर कविताएँ उर्दूमें हैं यद्यपि फारसीमें भी उन्होंने बहुत लिखा है। १८८७ की जयन्तीके[1] मौकेपर उन्होंने ऐसी उत्कृष्ट कविता लिखी कि वह सारे उत्तर भारतमें गूँज उठी। उन्होंने जो कुछ लिखा है वह मौज-शौकके सम्बन्धमें नहीं लिखा बल्कि इस जमानेमें मुसलमानोंका क्या फर्ज है, हिन्दू और मुसलमान दोनों आपसमें कैसा बरताव रखें और खुदाको किस तरह पहचाना जाये इत्यादि उपयोगी विषयोंपर लिखा है। लाहौरके सेठ अब्दुल कादिर लिखते हैं कि वे जब मदरसेमें थे तब उनका काव्य पढ़ते थे और जब बड़े हुए तब भी पढ़ते थे। वे उसे अपनी सभाओंमें भी गाते थे और अब अपनी अंजुमनोंमें भी सुनते हैं फिर भी वे उसे पढ़ते और सुनते थकते नहीं हैं। हाली साहबने शेख सादीका जीवन-वृत्तान्त बहुत सुन्दर भाषामें लिखा है। प्रोफेसर मॉरिसन उनकी रचनाओंके सम्बन्धमें लिखते हैं कि अमीर मुसलमानोंने कौमके लिए जितना किया है उससे ज्यादा इस एक गरीब कविने किया है। सरकारने उनकी कौमके प्रति की गई सेवाओंकी कद्र करनेके लिए उनको शम्स-उल-उलेमाका खिताब दिया है। हमें दुःख है कि उनके उर्दू काव्य हमारे हाथमें नहीं हैं। लेकिन हम अपने पाठकोंसे सिफारिश करते हैं कि वे उनके काव्य मँगवा कर पढ़ें।

[गुजरातीसे]
इंडियन ओपिनियन, ७-१०-१९१२

११४. पत्र : छगनलाल गांधीको

जोहानिसबर्ग
अक्तूबर ७, १९१२

चि० छगनलाल,

तुम्हारा पत्र मिला। कार्यालय अलग किया यह ठीक किया। प्रेसके बाबत स्वच्छता रखनेकी सीख देते रहना। हेमचन्दने कहाँ रहना तय किया है, सो लिखना। उसके सम्बन्धमें हमारे बीच गलतफहमी हो गई है। लेकिन मैंने तुम्हें संक्षेपमें बताया था इसलिए मैं अपना दोष मानता हूँ। वेस्टको पत्र लिखा है। अधिक उसमें देख लेना। हेमचन्द काममें पूरा सन्तोष देता है या नहीं लिखना। रामनाथ कहाँ है? उसे चि० जयशंकरके सुपुर्द किया या नहीं? जयशंकरके पास आसामियोंकी बही रखी है। साथके पतेपर *ओपिनियन* भेजो। उसके पैसे मैं यहीं वसूल करूँगा। मेरे खाते नामे लिख लेना।

मर्क्युरी लेनमें कार्यालय ले जानेसे क्या हिन्दी ग्राहकोंकी संख्यामें फर्क नहीं पड़ेगा? अब्दुल-कादिर सेठने कुछ कहा? फील्ड स्ट्रीट या वे स्ट्रीटमें कार्यालयके लिए जगह क्यों नहीं ढूँढी?

गुजराती सामग्री आज भेज रहा हूँ। ज्यादा कल भेजूँगा।

मोहनदासके आशीर्वाद

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ५२२८) से।

१. महारानी विक्टोरियाके शासनकी स्वर्ण जयन्ती।
२. १३ वीं [illegible] पत्र [illegible] नहीं।

११६. पॉचेफस्ट्रूमके भारतीयोंका वक्तव्य[1]

[पॉचेफस्ट्रूम
अक्तूबर १, १९०५ से पूर्व]

परमश्रेष्ठकी सेवामें निवेदन है कि

यदि हमें यह पता न होता कि तथाकथित एशियाई-विरोधी पहरेदार संघकी ओरसे आपकी सेवामें विशेषत: पॉचेफस्ट्रूमके ब्रिटिश भारतीयोंके सम्बन्धमें प्रार्थनापत्र पेश किया जायेगा तो हम परमश्रेष्ठको किसी भी प्रकारका कष्ट न देते विशेषत: इस कारण कि हम जानते हैं कि परमश्रेष्ठ शीघ्र ही जोहानिसबर्गमें ब्रिटिश भारतीय संघके एक शिष्टमण्डलसे मिलनेवाले हैं।

श्री लवडेने कहा है कि पॉचेफस्ट्रूममें नेटालसे गिरमिटिया भारतीय उमड़े चले आ रहे हैं। इसका हम प्रबल प्रतिवाद करना चाहते हैं। हममें से कुछ लोग नेटालके कानूनसे परिचित हैं और हम जानते हैं कि किसी भी गिरमिटिया भारतीयके लिए अब नेटाल छोड़ जाना प्राय: असम्भव है। कुछ भी हो इस बयानको सच्चा सिद्ध करनेके लिए अभीतक एक भी उदाहरण नहीं दिया गया है।

जोहानिसबर्गके महापौरने जब वे यहाँ थे एक और बात कही थी। उन्होंने कहा बताते हैं कि यहाँ एशियाइयोंको युद्धसे पहले व्यापारियोंके उन्नीस परवाने दिये गये थे, यहाँ अब उनको छियानवे परवाने व्यापारियोंके और सैंतीस फेरीवालोंके प्राप्त हैं। जहाँतक व्यापारियोंका सम्बन्ध है, यह कथन सत्य नहीं है। हमने युद्धसे पहले ब्रिटिश एजेंटको पॉचेफस्ट्रूम नगरके ब्रिटिश भारतीय व्यापारियोंकी एक सूची दी थी और तब इस नगरमें ब्रिटिश भारतीयोंकी बाईस दुकानें थीं। जिलेके अन्य स्थानोंमें जो दूकानें थीं सो अलग। ब्रिटिश एजेंटको जो सूची दी गई थी उसकी नकल हमारे पास है और हम आज भी न केवल उनके नाम बता सकते हैं बल्कि प्रत्येकका पता भी दे सकते हैं। श्री गॉप युद्धसे पहलेके उन्नीस परवानोंके सिलसिलेमें अब व्यापारियोंके छियानवे परवानोंका जिक्र करते हैं। हम समझते हैं कि उनका मतलब यह है कि ये छियानवे परवाने पॉचेफस्ट्रूम नगरके ही हैं। यदि ऐसी बात हो तो यह सर्वथा असत्य है। आज इस नगरमें ब्रिटिश भारतीयोंकी केवल चौबीस दूकानें हैं। हम यह बात पूरी जिम्मेदारी और जानकारीके साथ कह रहे हैं और अपने निन्दकोंको इसे अन्यथा सिद्ध करनेकी चुनौती देते हैं।

तीसरी बात जो पॉचेफस्ट्रूममें हमारे विरुद्ध कही गई है वह यह है कि हमारे मकान और दूकान गन्दे रहते हैं। या तो इनकी हालत देखनेसे अपने आप मालूम हो जाता है परन्तु जब यह आक्षेप किया गया तब हमने अपनी जगहें पॉचेफस्ट्रूमके जिला-सर्जनको दिखलाईं थीं और उसने यह रिपोर्ट दी थी

> मुझे यह कहते खुशी होती है कि विभिन्न अहातोंको देखनेपर मेरे मनपर हर जगहका बहुत अच्छा असर पड़ा। मैंने अन्दरसे और बाहरसे भी देखा है। कुल बातोंका खयाल करते हुए, पीछेके आँगन बिलकुल साफ और स्वास्थ्यकर हैं। मैंने कहीं ढेर लगे नहीं

[1] यह पॉचेफस्ट्रूम भारतीय संघके मन्त्री श्री अब्दुल रहमान और [illegible] हस्ताक्षरोंसे [illegible] भेजा गया था।

करनेवाले अंग हैं। शेष भारतीय समाजके साथ हम भी यह आशा करते हैं कि परमश्रेष्ठ तथा उनका परिवार इस सुरम्य उपनिवेशमें रहते हुए प्रसन्नता अनुभव करेंगे और अपने साथ इसकी मधुर स्मृतियाँ ले जायेंगे।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन १४–१०–१९०५

११९ गिल्टीवाला प्लेग

प्लेगने अड्डा जमा लिया है। यह एक व्यापक दूत है जो वर्ष-प्रतिवर्ष आकर अन्धकार, गन्दगी और अति घनी बस्तीके विरुद्ध चेतावनी दे जाता है। यह जहाँ-कहीं एक बार दिखाई पड़ा वहाँ अबतक बिना चूके थोड़ी-बहुत नियमितताके फिर-फिर आता रहा है। खबर मिली है कि यह चिन्ने तक पहुँच गया है। डर्बन बहुत दूर नहीं है। इसलिए प्रत्येक अच्छे नागरिकको चाहिए कि वह इस राक्षसको पास न फटकने देनेके लिए आवश्यक एहतियात रखे। हम भारतीयोंको भुलाना नहीं चाहिए कि भारतीय अन्य जातियोंकी अपेक्षा प्लेगकी विनाश-लीलाके शिकार ज्यादा होते हैं, ठीक वैसे ही जैसे गोरोंको मोतीझरा होनेकी सम्भावना भारतीयोंकी अपेक्षा ज्यादा रहती है। इस कारण भारतीयोंको दुगुनी सावधानी रखनी चाहिए। घरों और दूकानोंके आसपासके स्थान पूरी तरह साफ रखे जाने चाहिए। लोगोंको जितनी भी हो सके उतनी रोशनी धूप और हवा मिलनी चाहिए और सभी सन्दिग्ध मामले तुरन्त ही अधिकारियोंको सूचित कर देने चाहिए। रोग एक बार आ पहुँचनेके बाद बहुत-सा खर्च करने बल्कि यों कहना चाहिए धन बरबाद करनेकी अपेक्षा ये कुछ सरल सावधानियाँ बरतना कहीं अधिक प्रभावशाली सिद्ध होगा। इस सम्बन्धमें भारतीय समाजके नेताओंका कर्तव्य स्पष्ट है। प्रत्येक शिक्षित भारतीयको एक अनुपम अवसर प्राप्त है। वह स्वास्थ्य और सफाईका प्रचारक बन सकता है।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन १४–१०–१९०५

१२० नमक-कर

अफवाह है कि आगामी नवम्बर मासमें युवराज (प्रिंस ऑफ वेल्स) की भारत-यात्राके समय इस राजकीय यात्राकी याद हमेशा कायम रखने और साथ-साथ भारतके लोगोंको सन्तोष देनेके लिए नमक-कर बिलकुल माफ कर दिया जायेगा। प्रत्येक भारतीय हृदयसे चाहेगा कि इस अफवाहकी बुनियाद मजबूत हो और वह सही निकले।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन १४–१०–१९०५

१. १९०५ मई ८ और अक्टूबर में हुई कांग्रेस पर [illegible]।

१२१ सर हेनरी लॉरेंस

इस महान पुरुषका जन्म सीलोनमें[1] १८०६ के जूनकी २८ [illegible] शहरमें जन्मा था इसलिए उसकी माँने सिलोनमें उत्पन्न रत्न मनुष्यके रूप [illegible] यह सचमुच हीरा ही निकला। सन् १८२१ में वह कलकत्ता आया और [illegible] नौकर हो गया। उसका जिम्मेवारीका पहला काम बर्माकी लड़ाई [illegible] [illegible]में अपना कर्तव्य पूरा करते-करते वह बीमार पड़ गया और उसे विलायत जाना पड़ा। वहां उसने अपना समय खेल-कूदमें नष्ट करनेके बजाय अध्ययनमें बिताया। जब वह दुबारा भारतमें आया और अपनी पलटनमें शामिल हो गया। तब उसने उर्दू और फारसीका अध्ययन किया। वह अपना निजी समय एकान्तमें बिताता। उसका ध्येय यह था कि वह अपनी माँ के लिए यथासम्भव पैसा बचाना चाहता था। उसको इस बार बड़ी जिम्मेवारीका काम दिया गया। उसने इसमें अपनी बीमारीके समय इंग्लैण्डमें जो सीखा था उसका पूरा उपयोग किया। उसको पश्चिमोत्तर सीमाप्रान्तमें [illegible] सम्बन्धमें सर्वेक्षणका काम सौंपा गया। लॉरेंसके अच्छे गुण इस समय प्रकाशमें आये। सैनिक था फिर भी उसका हृदय बड़ा कोमल और दयालु था। उसे सर्वेक्षणका काम करते गरीब लोगोंके सम्पर्कमें आनेका मौका मिला। इससे वह ग्रामीण लोगोंकी भावना और रिवाजोंको समझ सका। वह लोगोंके साथ समानताका भाव रखकर मिलता-जुलता था। स्वयं अत्यन्त परिश्रमी और बड़े धीरजका व्यक्ति था इसलिए उसके मातहतोंमें जो लोग आलसी थे वे उससे द्वेष करते थे। जो आदमी काम न करता उसपर उसकी कड़ी नजर [illegible] था। एक बार एक सर्वेक्षकने एक बड़ी भूल की। उस भूलको सुधारनेके लिए लॉरेंसने उसको वहाँ दुबारा जानेका आदेश दिया। उसे जहाँ जाना था वह स्थान दस मील दूर था इसलिए उसने वहाँ जानेमें आनाकानी की। तब लॉरेंसने उसे डोलीमें बैठाकर भिजवाया। किन्तु वह व्यक्ति जिद्दी था इसलिए इतना होनेपर भी उसने काम करनेसे इनकार कर दिया। तब लॉरेंसने उसको एक आमके पेड़पर बिठा दिया और नीचे नंगी तलवारें लेकर दो पहरेदार खड़े कर दिये। सर्वेक्षक जब भूख और प्याससे व्याकुल हो गया तब उसने लॉरेंस साहबसे क्षमा माँगते हुए काम करना मंजूर किया और नीचे उतरनेकी अनुमति माँगी। इसके बाद वह सुधर गया और लॉरेंसकी मातहतीमें बहुत अच्छा काम करने लगा।

हम लोगोंने सुना है कि पुराने जमानेमें भाई-भाईके लिए, मित्र-मित्रके लिए, [illegible] लिए, बेटा माँ-बापके लिए और स्त्री पुरुषके लिए प्राण देनेको तैयार रहते थे। यही इस जमानेमें करके बताया है। अफगानिस्तानकी लड़ाईमें[2] उसका बड़ा भाई गिरफ्तार हो [illegible] अफगान सरदारने उसको कुछ दिनकी छुट्टी दी। छुट्टी पूरी होनेपर वह लौटकर जानेको बैठा था। भाईकी सेवाएँ अधिक उपयोगी हैं ऐसा सोचकर लॉरेंसने उसके बदले खुद कैदमें जानेका प्रस्ताव किया। यह उसके भाईने स्वीकार नहीं किया परन्तु लॉरेंस तो यह [illegible] यह करके रहा।

१ सीलोनके दक्षिण तटपर एक बन्दरगाह।
२. १८५४-८।

जब लॉरेंस नेपालमें राजदूत बना उस समय उसकी भली पत्नी अपना जीवन भलाईके कामोंमें बिताया करती थी। उन दोनोंने मिलकर अपने धनसे यूरोपीय सैनिकोंके बच्चोंके संवर्धन तथा शिक्षा-दीक्षाके लिए हिमालयकी तराईमें एक विशाल भवन बनवाया। उसके बाद तो ऐसे भवन भारतमें जगह-जगह बनाये गये हैं और उन सभीको लॉरेंस भवन कहा जाता है। सन् १८४६ में सिख-युद्ध हुआ। इसमें लॉरेंसने बड़ी बहादुरी दिखाई। इस समय उसकी पत्नी बीमार थी। उस मुद्दतपर जानेका आदेश मिला। आदेशके मिलते ही बीमार स्त्रीको छोड़कर वह चौबीस घंटेके अंदर युद्धमें जानेके लिए तैयार हो गया। युद्धके बाद शाही राजदूतके रूपमें उसने लाहौरमें बड़ा अच्छा काम किया। इससे उसको सर का खिताब दिया गया। सन् १८४९ में जब पंजाब जोड़ लेनेका इरादा हुआ तब लॉर्ड डलहौजी जैसे गवर्नर जनरलके साथ अकेले लॉरेंसने टक्कर ली। वह अपनी बातमें सफल नहीं हुआ। फिर भी गवर्नर जनरलको उसपर इतना अधिक विश्वास था कि उसने पंजाबमें मुख्य उत्तरदायित्वका काम उसीको सौंपा। वह सिख लोगोंके बड़े घनिष्ठ सम्पर्कमें आया था। वे लोग उसे बहुत चाहते थे। इसीसे पंजाब शान्त हुआ।

लॉरेंसने सबसे महत्त्वपूर्ण काम १८५७ के विप्लवके समय किया। इस समय तक लॉरेंसका स्वास्थ्य टूट चुका था और उसको छुट्टी मंजूर कर दी गई थी। फिर भी गदर शुरू हो जानेसे वह अपनी छुट्टीका लाभ न लेकर लखनऊ गया। कहा जाता है कि उसकी सूझबूझ और बहादुरीकी बदौलत सैनिक उसे बहुत मानते थे। इसीसे लखनऊमें अंग्रेजोंकी इज्जत बची। लखनऊके घेरेमें ९२७ यूरोपीय और ७६५ देशी सैनिक थे। लॉरेंस दिन-रात काम करता था और घिरे हुए लोगोंकी भी काम देता था। जिस कोठरीमें वह बैठकर काम करता था उसीपर गोले आकर गिरते थे और वह उनकी परवाह नहीं करता था। १८५७ की जुलाईकी दूसरी तारीखको गोलेके एक टुकड़ेसे वह जख्मी हो गया। डॉक्टरोंने उससे कहा कि आप आठ दिन और उसका ४८ घंटेसे अधिक जिन्दा रहना सम्भव नहीं है। इस समय उसको असह्यनीय कष्ट हो रहा था फिर भी वह आदेश देता रहा और ४ तारीखको इस प्रार्थनाके साथ उसने अपने प्राण त्याग दिये — हे परमेश्वर, तू मेरा दिल साफ रख। तू ही महान है। तेरा यह जगत किसी दिन जरूर पाप-रहित होगा। मैं स्वयं बालक हूँ परन्तु तेरे बलसे बलवान बन सकता हूँ। तू मुझे सदैव नम्रता न्याय सुविचार और शान्ति सिखाना। मैं मनुष्योंके विचार नहीं चाहता। तू मेरा न्यायाधीश है और तू मुझे अपने विचार सिखाना क्योंकि मैं तुझसे डरता हूँ। वह भारतीयोंसे बहुत प्रेम करता था। विद्रोहके समय जो अत्याचार किये जाते थे वह उनकी बहुत निन्दा करता था और वह मानता था कि प्रत्येक अंग्रेज भारतका स्वामी है। स्वामीके रूपमें अंग्रेजोंका काम भारतको लूटना नहीं बल्कि लोगोंको समृद्ध बनाना स्वभामन सिखाना और देशको सुपहाल कर भारतीयोंको सौंप देना है। लॉरेंस जैसे व्यक्ति अंग्रेज जातिमें पैदा हुए हैं, इसीसे वह जाति बड़ी है।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन १४–१०–१९०५

किया जाता है तो इसका उत्तर होगा — ब्रिटिश संविधान ही ऐसा है। जहाँ यह रक्षा करनेमें बहुधा बलशाली सिद्ध होता है, वहीं प्रायः प्रत्यक्ष अन्यायसे बचा सकनेमें असमर्थ भी होता है। इस बातपर विश्वासतक होना कठिन है कि उस व्यक्तिको जो बहुत समयतक बाकायदा व्यापार करता रहा उसके आधे दर्जन प्रतिस्पर्धियोंके कहने मात्रसे अपना व्यापार जारी रखनेके अधिकारसे वंचित कर दिया गया। ये प्रतिस्पर्धी इतने कायर हैं कि वे उसका खुली प्रतिस्पर्धामें मुकाबला नहीं कर सकते और इसलिए उसको बदनाम और बरबाद करनेके लिए अपने हाथोंमें अस्थायी रूपसे आये हुए अधिकारोंका प्रयोग करते हैं। वर्तमान मामलेमें ठीक यही हुआ है। नटालके विक्रेता-परवाना अधिनियमका जिक्र इन स्तंभोंमें कई बार किया जा चुका है। उसके अंतर्गत छोटे-छोटे दुकानदारों और भारतीय व्यापारियोंको उन स्थानीय निकायोंकी दया-पर छोड़ दिया गया है जिनके सदस्य बड़े-बड़े व्यापारी हैं। और बड़े व्यापारियोंने इस प्रकार प्राप्त अधिकारोंका प्रयोग निर्दयतापूर्वक करनेमें बिलकुल संकोच नहीं किया है। यह कानून बनाया ही गया था भारतीयोंको कुचलनेके लिए। जब उनका काम तमाम हो जायेगा या वे रास्ता नाप लेंगे तब इसका प्रयोग छोटे गोरे व्यापारियोंके विरुद्ध किया जायेगा। यह संघर्ष अत्यंत दिलचस्प होगा। बेचारे गरीब भारतीय तो वैधानिक ढंगसे लड़ते हैं। उस ढंगकी लड़ाईको स्थानिक निकाय तीव्रतम अवहेलनाकी दृष्टिसे देखते हैं, क्योंकि उनके हाथोंमें अकस्मात ही जो अधिकार आ गये हैं, उनके कारण वे मतवाले हो उठे हैं।

दादा उस्मानके मामलेमें फ्राईहीड निकायने जो कार्रवाई की है उसमें औचित्य रत्ती-भर भी नहीं है। उस नगरमें वे एकमात्र भारतीय व्यापारी थे। उनका मार्गमापन भय परवानेके लिए नहीं था। उनकी दुकान असाधारण रूपसे संतोषजनक अवस्थामें रखी जाती थी। परन्तु निकायके गोरे सदस्योंने उनकी दुकान केवल इस कारण कोई मुआवजा दिये बिना बन्द कर दी कि उनकी चमड़ीका रंग भूरा था। इतना ही नहीं उन्होंने उनके वकीलका यह प्रार्थना-पत्र भी अस्वीकृत कर दिया कि उनकी दुकान तबतक खुली रहने दी जाये जबतक वे ऊपरके अधिकारियोंसे राहत पानेका यत्न कर रहे हैं। यह *मामला सिर्फ फ्राईहीड स्थानिक निकाय बनाम* दादा उस्मानका नहीं है। यह मामला सारी ब्रिटिश प्रजा और गोरे विरोधी *बनाम* ब्रिटिश भारतीय समाजका है। प्रत्येक भारतीय व्यापारीको यह मामला इसी दृष्टिसे देखना चाहिए और श्री लिटिलटनको भी इसी दृष्टिसे इसपर विचार करना चाहिए।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन २१-१-१९०५

१. देखिए विक्रेता-परवाना अधिनियम, खण्ड ४, पृष्ठ १२७-८ और १२९।

१२४. सिगरेटसे हानि

दक्षिण आस्ट्रेलियाकी सरकारके देखनेमें आया है कि सिगरेट पीनेसे
है और उनके शरीरोंको बहुत क्षति पहुँचती है। चिरूट पीनेसे जितना नुकसान
अधिक सिगरेट पीनेसे होता है क्योंकि सिगरेट छोटी और सस्ती होनेके कारण
ता है। यह सोचकर दक्षिण आस्ट्रेलियाकी सरकारने सिगरेट बनानेके कारखानोंमें
बेचनेकी मनाहीका कानून बनानेका निश्चय किया है।

आजकल हम छोटे-बड़े सभी लोगोंमें सिगरेट पीनेकी लत बहुत घर कर गई है। रिवाज अंग्रेजोंकी नकल है। पिछले जमानेमें यद्यपि अपनी बीड़ी पीनेका रिवाज था, लोग उसमें मर्यादा पालते थे। वे चाहे जहाँ बीड़ी पीनेमें शरमाते थे इसलिए निश्चित एकान्तमें जाकर पीते थे। रास्तेमें अथवा चलते-फिरते पीना बुरा माना जाता था। बाहर पीनेका रिवाज कम था। इसीसे कहा है कि

> खावे सो खून बिगाड़े पीवे तो घरको
> सूँघेसो वसन बिगाड़े तमाखू किस कामको।

अब तो अंग्रेज लोग चाहे जहाँ सिगरेट पीनेमें कुछ विचार ही नहीं करते और हम भी उनकी नकल करते हैं। दक्षिण आस्ट्रेलिया जैसे मुल्कमें सिगरेट पीनेकी हानियाँ समझमें आयी हैं, तो हमें आशा है कि हम लोग भी इस सम्बन्धमें कुछ विचार करेंगे।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन २१-१०-१९०५

१२५. राजा सर टी० माधवराव

सर माधवराव १८२८ में कुम्भकोणम शहरमें जन्मे थे। उनके पिता श्री आर० रंगराव त्रावनकोरके दीवान थे और उनके चाचा राय आर० वेंकटराव त्रावनकोरके दीवान तथा कमिश्नरके पदपर रहे थे। सर माधवरावने अपनी बाल्यावस्था मद्रासमें बिताई और वहीं उन्होंने शिक्षा प्राप्त की। उन्होंने प्रेसिडेंसी कॉलेजमें श्री पॉवेलके पास अध्ययन किया था। माधवराव परिश्रमी विद्यार्थी और गणित तथा विज्ञानमें बड़े होशियार थे। उन्होंने खगोल विद्या श्री पॉवेलके घरकी छतपर बैठकर सीखी थी और उसके लिए सूर्यबीन तथा दूरबीन जैसे शीशे स्वयं अपने हाथसे बनाये थे।

श्री पॉवेलने ऐसे होशियार शिष्यको अपने पाससे जाने देना नहीं चाहा इसलिए उन्हें वहाँ गणित और भौतिक शास्त्रके शिक्षकके स्थानपर नियुक्त कर लिया। इसके बाद एकाउण्टेण्ट जनरलके दफ्तरमें एक अच्छी जगह मिल गई और कुछ समय बाद उनसे त्रावनकोरके राजकुमारके शिक्षककी हैसियतसे काम करनेका प्रस्ताव किया गया जिसे उन्होंने स्वीकार किया। पहले-पहल वे इस प्रकार एक देशी रियासतकी सेवामें प्रविष्ट हुए। उनके राजकुमारोंका विद्यार्थी जीवन बहुत ही सफल रहा और शासन भी उन्होंने बहुत अच्छा किया

१. मद्रासमें।

१२६. मानपत्र : प्रोफेसर परमानंदको

जोहानिसबर्ग
अक्तूबर २७, १९०५[1]

सेवामें
प्रोफेसर परमानन्द, एम० ए०, इत्यादि
जोहानिसबर्ग

प्रिय महोदय,

हम लोग जिनके हस्ताक्षर नीचे दिये हुए हैं स्वागत समितिकी ओरसे आपके जोहानिसबर्ग पधारनेके अवसरपर आपका हार्दिक स्वागत करते हैं।

महोदय, आप उन स्वार्थत्यागी कार्यकर्ताओंमें से हैं जिन्हें भारतने आर्यसमाजसे पाया है। अपने साथियों और सहयोगियोंकी भाँति आपने भी धर्म और शिक्षाके निमित्त अपना जीवन अर्पित कर दिया है। अतएव आपके प्रति आदर प्रदर्शित करनेमें हम लोग गौरव अनुभव करते हैं।

हम आशा करते हैं कि दक्षिण आफ्रिकामें आपके कुछ समयके लिए पधारनेके फलस्वरूप आर्यसमाज दक्षिण आफ्रिकी भारतीयोंके बीच काम करनेके लिए कुछ त्यागी शिक्षा-शास्त्रियोंको भेजनेका निर्णय करेगा। दक्षिण आफ्रिकी भारतीयोंकी एक सबसे बड़ी आवश्यकता ठीक ढंगकी शिक्षा है।

हमें आशा है कि आप जितने दिन यहाँ हैं उतने दिन आनन्दसे रहेंगे और लौटते समय अपने साथ यहाँकी कुछ सुखद स्मृतियाँ ले जायेंगे।

आपके विश्वस्त,

एम० एस० पिल्ले	वी० एम० मुदलियार, अध्यक्ष
मूलजी पटेल	एन० बी० पिल्ले
जी० ए० देसाई	एम० ए० नायडू
बी० दयालजी	एस० ए० मुदलियार
सी० पी० लक्ष्मीराम	एस० पी० पाथर
बी० जी० महाराज	एम० ए० पदियाची
सी० केवलराम	मीकमदास प्रदर्स

मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, ४-११-१९०५

१. ४-११-१९०५ के इंडियन ओपिनियनसे मालूम होता है कि यह मानपत्र १८ अक्तूबरको एक सार्वजनिक सभामें दिया गया था। इस अवसरपर प्रोफेसर परमानन्दने उत्तरमें भाषण दिया था। गांधीजी उस सभामें थे और उन्होंने भाषणका अनुवाद किया था।

१२७. जोहानिसबर्गमें प्लेगका इतिवृत्त

गत वर्ष जोहानिसबर्गमें जो गिल्टीवाला प्लेग फैला था उसकी विस्तृत रिपोर्ट प्रकाशित हो गई है। यह एक सौ तीन पृष्ठोंकी एक मोटी जिल्द है। इसमें [illegible] द्वारा इस महामारीका प्रत्यक्ष चित्र खींच दिया गया है। इसके लेखक डॉ० [illegible]ने इसे तैयार करनेमें भारी श्रम किया है और जनताके सामने एक अति दिलचस्प [illegible] उपस्थित कर दिया है। अवश्य ही रिपोर्टका वह भाग सर्वाधिक रोचक होगा [illegible] उत्पत्ति बताई गई है। डॉ० पैक्सके तर्क ठीक होते तो उनके निष्कर्ष हम उचित मानते। परन्तु हमें सन्देह है कि उनके बहुतसे महत्त्वपूर्ण तर्क बिलकुल गलत हैं।

शायद यह अत्यन्त दुर्भाग्यकी बात है कि रिपोर्ट तैयार करनेपर इतना मूल्यवान और श्रम व्यय करनेसे पहले प्लेगकी शुरुआतके बारेमें मुनासिब अच्छी जाँच नहीं की गई। डॉ० पैक्सने इसका जो आश्चर्यजनक कारण बताया है वह [illegible]के विरुद्ध तो है ही नेटालमें पहले-पहल प्लेग फैलनेपर नेटाल-सरकार द्वारा नियुक्त आयोगकी और स्वर्गीय श्री एस्कम्बको प्राप्त भारत-सरकारके तारके भी विरुद्ध है। डॉ० पैक्सका है कि पहले-पहल बीमारी बम्बईसे आयातित उस चावलसे शुरू हुई जिसमें प्लेगकी छूत थी। हमने अभी जिन अधिकारियोंका हवाला दिया है वे सब इस निष्कर्षपर पहुँचे थे कि प्लेगकी छूत नहीं फैलती। डॉ० पैक्सने जिन आधारोंपर अपने निष्कर्ष निकाले हैं कुछ ये हैं: पहले-पहल यह बीमारी दूकानदारोंको हुई, भारतीय दूकानदार दिसम्बर १९ में बम्बईसे चावलका आयात करते थे और उन्होंने निश्चित रूपसे कहा कि उन चावलोंके बोरोंकी थैलियाँ थीं और बम्बईसे उस चावलका निर्यात रोकनेमें कोई विशेष सावधानी नहीं बरती गई जिसमें शायद छूत थी।

अब डॉ० पैक्सके सिद्धान्तके लिए दुर्भाग्यकी बात यह है कि उनके ये सब तर्क निराधार हैं। पहली भूल रिपोर्ट तैयार करनेमें उन्होंने यह की है कि वे रोग फैलनेकी केवल सरकारी तारीखको मानकर चले हैं और उन्होंने उससे पहलेके सारे ज्ञात इतिहासकी उपेक्षा कर दी है। तब यह कहा गया था और वस्तुतः असन्दिग्ध रूपसे सिद्ध कर दिया गया था कि जोहानिसबर्गमें प्लेग १८ मार्चसे भी पहले वर्तमान था। जिस पत्र-व्यवहारकी[1] ओर लोक-अधिकारियोंका ध्यान उनके पत्रकी हैसियतसे खींचा जा चुका था उस सबको डॉ० पैक्सने अपनी रिपोर्टमें उपेक्षित कर देना ठीक समझा है। उन्होंने स्वर्गीय डॉ० मैरेके बयानोंकी भी उपेक्षा कर दी है, जिससे कि असन्दिग्ध रूपसे यह प्रकट हो जाता है कि यह रोग [illegible] कारण स्वयं उनका देहान्त होनेसे बहुत पहले वर्तमान था। इसलिए यह सिद्धान्त कि प्लेगका आरम्भ दूकानदारोंसे हुआ झूठा सिद्ध हो जाता है। इतना ही नहीं जिन दो व्यक्तियोंके [illegible] डॉ० पैक्सने दिये हैं और कहा है कि वे दूकानदार थे वे वस्तुतः दूकानदार थे ही नहीं [illegible] कि हमें संयोगसे मालूम हुआ है। यदि रोग १८ मार्चसे शुरू माना जाये तो इस रोगके पहले शिकार वे मजदूर हुए थे जो खानोंसे आये थे।

हम जानना चाहेंगे कि यह सूचना उन्हें कहाँसे मिली कि चावलका आयात बम्बईसे किया जा रहा था। साधारणतया चावल बम्बईसे नहीं कलकत्तेसे आयात किया जाता है, और जब

1. देखिए "[illegible]" खण्ड ४ पृष्ठ १६८-९, २४३ तथा २५४।

यह बम्बईसे आता है तब भी इसकी बोरी-बन्दी कलकत्तेमें ही की जाती है। भारत सरकारपर यह एक गम्भीर आरोप है कि बम्बईमें उस चावलका निर्यात रोकनेके लिए कोई विशेष सावधानी नहीं बरती गई, जिसमें शायद चूहे थी। जिन्हें भारतमें यात्रा करनेकी कुछ भी जानकारी है वे जानते हैं कि बम्बईमें कितनी कड़ी सावधानी बरती जाती है। इसलिए डॉ० पेक्सने जो निष्कर्ष निकाले हैं उनपर पहुँचानेवाले सभी महत्त्वपूर्ण तर्क हमारी सम्मतिमें सत्य सिद्ध नहीं किये जा सकते। फिर, चावलका आयात तो भारतीय पहले भी किया करते थे उसके बावजूद जोहानिसबर्ग प्लेगसे कैसे बचा रहा? क्योंकि यह नहीं कहा जा सकता कि जोहानिसबर्गमें चावलका आयात पहले-पहल १९०४में हुआ था। यह शायद कभी भी ज्ञात नहीं होगा कि इस महामारीके फैलनेका वास्तविक कारण क्या था और जबतक यह ज्ञात नहीं होगा तबतक इस फैलावको रोकनेके उपाय भी असफल होते रहेंगे। हम यह नहीं कहते कि जोहानिसबर्गमें प्लेग फिर फैल जायेगा। जोहानिसबर्ग इतनी ऊँचाईपर बसा है कि वहाँ अत्यन्त गम्भीर परिस्थितियाँ उत्पन्न हुए बिना प्लेगका फैलना अति कठिन है। डॉ० पेक्स साधारणतया निष्पक्ष हैं परन्तु भारतीयोंने अधिकारियोंको सम्बन्ध मामलोंकी सारी सूचना और बस्तीका प्रबन्ध नगरपालिकाके हाथमें आनेके बाद उसकी अवस्थाके विषयमें उन्हें चेतावनी देकर रोगको फैलनेसे रोकनेका जो गम्भीर प्रयत्न किया था उसकी सर्वथा उपेक्षा करके डॉ० पेक्सने भारतीयोंके साथ न्याय नहीं किया। हमें लगता है कि उन्होंने भारतीय बस्तीकी उस समयकी स्थितिके विषयमें सम्बद्ध क्षेत्र-आयोगके सामने दी हुई डॉ० पोर्टरकी गवाहीके अंश उद्धृत करके असली बातको टाल दिया है। रोगको नष्ट करनेके लिए जो उपाय किये गये थे उन सबका वर्णन इस रिपोर्टमें ठीक-ठीक किया गया है, और उनसे योग्य डॉक्टर तथा उनके सहायकोंको बहुत अधिक श्रेय मिलता है। बस्ती और जोहानिसबर्ग मार्केटको जिस प्रकार सँभाला गया था वह भारी प्रशंसाके योग्य है और निःसंदेह डॉ० पेक्स तथा उनके योग्य सहायक डॉ० मैकेंजी द्वारा की गई तुरतमें कार्रवाइयोंकी बदौलत ही रोग इतने शीघ्र उन्मूलित हो गया।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन २८-१०-१९०५

१२८ भूल-सुधार

पॉचेफ्स्ट्रूम बजट ने लॉर्ड सेल्बोर्नके उस भाषणपर की गई हमारी टिप्पणीपर अपना विचार प्रकट किया है जिसमें उन्होंने अपने पदकी हैसियतसे वचन दिया था कि ट्रान्सवालमें जबतक प्रातिनिधिक शासन कायम नहीं हो जाता तबतक जो लोग पहले यहाँ मौजूद थे उनके सिवा अन्य भारतीयोंको यहाँ प्रविष्ट नहीं होने दिया जायेगा। हमारा सहयोगी लिखता है

> यह शिकायतों का एक नया कारण है और स्पष्ट है कि एक ऐसी भीतिका सूत्रपात है जिसके कारण यहाँ पहलेसे बसे हुए भारतीयोंके साथ गोरी आबादीका नरम-वर्ग जो सहानुभूति प्रकट करता आ रहा है वह नष्ट हो जायेगी। यदि वे समझदार हैं तो स्वयं अपने लाभके लिए हमें यह माननेके लिए विवश करनेसे बाज रहेंगे कि उनका अन्तिम लक्ष्य ट्रान्सवालमें हजारों भारतीय प्रवासियोंको भर देना है। इंडियन ओपिनियन विश्वास करता है कि एक-एक भारतीयको इस उपनिवेशसे निकाल बाहर करनेका प्रयत्न किया

१२९. नेल्सन-शताब्दी महोत्सव : एक सबक[1]

पिछले हफ्ते जो नाम साम्राज्यके एक छोरसे दूसरे छोर तक गूँज उठा था, वह था — होरेशियो नेल्सन। इस महीनेकी २१ तारीखको हुए समारोहोंसे बहुत ही गम्भीर विचार उत्पन्न होते हैं। भारतीयोंको तो उनसे स्पष्ट ज्ञात हो जाना चाहिए कि ब्रिटेनकी सफलताका रहस्य क्या है। मैक्समूलर अपने लेखोंमें इस नतीजेपर पहुँचे हैं कि भारतीय दर्शनमें जीवनका अर्थ एक छोटेसे शब्द — स्वधर्म (कर्तव्य) — से सूत्ररूपमें व्यक्त किया गया है। परन्तु, कदाचित् आजके औसत दर्जेके भारतीयके आचरणमें जीवनका यह अर्थ नहीं झलकता। ऐसी स्थितिमें लॉर्ड नेल्सनके जीवनके अनुशीलनसे आद्योपान्त स्वधर्म-पालनका अत्यन्त हृदयग्राही उदाहरण उपस्थित होता है।

“इंग्लैंड अपेक्षा करता है कि प्रत्येक व्यक्ति अपने कर्तव्यका पालन करेगा” — यह ऐतिहासिक मन्त्र ब्रिटिश हृदयोंमें सुप्रतिष्ठित हो गया है। यह मन्त्र अपने उद्घोषकके अविचल कर्तृत्वसे पवित्र हो गया था और अब एक सदी तक कार्यरूपमें परिणत होते रहनेसे समादरणीय बन गया है। इंग्लैंडकी सफलताका माप इसी बातका माप तो है कि अंग्रेजोंने अपने जीवनमें इस मन्त्रको कहाँतक ग्रहण किया है। यदि उस साम्राज्यमें कभी सूर्य अस्त नहीं होता जिसका एक संस्थापक स्वयं नेल्सन था तो इसका कारण यह है कि उसके सपूतोंने अबतक कर्तव्य-पथका अनुसरण किया है।

आज साम्राज्यमें नेल्सनकी जितनी पूजा होती है, उतनी और किसीकी नहीं — इसलिए नहीं कि वह एक बहादुर सैनिक था इसलिए भी नहीं कि उसने कभी यह नहीं जाना कि भय क्या चीज है बल्कि इसलिए कि वह कर्तव्य-निष्ठाकी सजीव प्रतिमा था। उसकी दृष्टिमें उसका देश पहले था और अपना अस्तित्व पीछे। वह लड़ा क्योंकि लड़ना उसका कर्तव्य था। फिर क्या आश्चर्य कि उसके अनुगामियोंने वह जहाँ-कहीं भी गया उसका अनुसरण किया। इंग्लैंडको समुद्रका स्वामी उसीने बनाया था। परन्तु, उसकी महानता इससे भी अधिक थी। उसकी सेवामें स्वार्थका लेश भी न था। उसकी देशभक्तिका स्वरूप शुद्धतम था।

दक्षिण आफ्रिका जैसे महादेशमें हम नेल्सनके बताये सही रास्तेसे बराबर भटकते रहते हैं। अतः अच्छा हो अगर हम उसके जैसे महत् चरित्रका स्मरण करें। उससे हमारे पूर्वग्रह कम होने चाहिए, और हमें अपने अधिकारोंकी अपेक्षा दायित्वोंका ध्यान अधिक करनेकी प्रेरणा मिलनी चाहिए। विशेषतः यदि दक्षिण आफ्रिकाके कुछ-कुछ असन्तोषकर जीवनसे भारतीयोंके मनमें अपने साथ कठोर बरताव करनेवाले अंग्रेजोंके प्रति कटुता पैदा हो गई है तो उनको गत सप्ताहकी घटनाओंसे यह भरोसा होना चाहिए कि अंग्रेज फिर भी नेल्सनके देशवासी हैं और जबतक अपनी स्मृतिमें नेल्सनको सहेजे हैं तबतक वे कर्तव्य-पथका सर्वथा त्याग नहीं कर सकते। इसमें हमारे लिए आशाका एक हेतु, और अंग्रेजोंके दोषोंके बावजूद उनसे प्यार करनेकी प्रेरणा निहित है।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, २८-१ -१९ ५

१. यह “एक भारतीय द्वारा प्रेषित” संवादके रूपमें छपा था।

(१५) इन सब कागजोंको एक लिफाफेमें बन्द करके उसपर "गुजराती सम्पादक, इंडियन ओपिनियन, फीनिक्स" का पता लिखें और उसके कोनेमें गुजराती अक्षरोंमें "परवाने बाबत" लिखकर तुरन्त भेजें।

इस प्रकार जाने-पहचाने व्यक्ति प्रत्येक स्थानसे सावधानीपूर्वक समाचार भेजेंगे तो हमारी धारणा है कि बहुत लाभ होगा। यह काम बहुत सरल है और बिना परिश्रम तथा बिना पैसे हो सकता है। हम इस जानकारीका उपयोग अंग्रेजी लेखों और सरकारके साथ पत्र-व्यवहारमें करना चाहते हैं।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन २८ १ -१९०५

१५१ बहादुर बंगाली

जान पड़ता है कि इस समय बंगाल सचमुच जाग उठा है। हर सप्ताह समाचार आते हैं कि ज्यों-ज्यों सरकार बंगालके विभाजनके लिए तत्पर हो रही है त्यों-त्यों बंगाली उसके प्रतिरोधके लिए कमर कस रहे हैं। उधर सरकारने धूमधामके साथ ढाकामें नया गवर्नर बैठानेकी विधि सम्पन्न की उसी दिन कलकत्तेमें बंगालियोंने हड़ताल की और विराट सभा करके जिसमें [1] लोग इकट्ठे हुए थे अपनी एकताके सूचक एक संघ-भवनका शिलान्यास किया। स्वदेशी वस्तुएँ ही खरीदने और उन्हींका व्यवहारमें लानेका आन्दोलन जोर पकड़ता जा रहा है।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन २८-१०-१९०५

१५२ हमारा कर्तव्य

हमें मालूम हुआ है कि कुछ भारतीय हमारे प्लेग-सम्बन्धी लेखोंसे नाराज हुए हैं। इसका हमें खेद है लेकिन इससे आश्चर्य नहीं होता। सामान्यतः लोगोंका ध्यान इस ओर दिलानेपर तो हमारी प्रशंसा की जानी चाहिए। ऐसा न करके हमारा दोष बताया जाता है इसकी वजह यह है कि लोग दोष बतानेमें बिलकुल हिचकते नहीं। भारतमें बहुत-से गाँव प्लेगसे बरबाद हो गये हैं, बहुत-से कुटुम्ब बिलकुल मिट गये हैं और लोगोंमें भगदड़ मची हुई है। भारतके बाहर जहाँ-जहाँ प्लेग पहुँचा है वहाँ उसका सबब अकसर हम लोग ही होते हैं। और उन इलाकोंमें से प्लेग जल्दी दूर होनेका सबब यह देखनेमें आता है कि उसे दूर करनेका इन्तजाम दूसरे लोगोंके हाथोंमें होता है। ऐसे मौकोंपर पत्रकारोंका यानी हमारा फर्ज क्या है? हम लोगोंको खुश रखनेकी खातिर उनके दोषोंको छिपाकर वाहवाही लूट सकते हैं, लेकिन ऐसा करके हम अपने कर्तव्यसे च्युत होंगे। हमारा काम लोगोंकी सेवा करना है। उनके अधिकारोंकी रक्षा करते हुए जो भी दोष दिखाई दें वे हमें बताने ही चाहिए। अगर हम ऐसा न करें और झूठी चापलूसी करते रहें तो हमारा यह कार्य शत्रुके समान होगा। हम पहले ही कह चुके हैं कि हमारे शत्रु जब हमारे बारेमें कोई गलत बात कहेंगे तब हम पूरी हिम्मतसे बचाव करेंगे। उसी तरह जब हम अपने लोगोंमें ही दोष देखेंगे तब उनको भी साफ-साफ बतायेंगे और उनको दूर करनेकी बेखटके

१ अक्तूबर १६, १९०५ को।

१३७. सर टॉमस मनरो

सर टॉम्स मनरो १७६१ के मई महीनेमें ग्लासगोमें उत्पन्न हुआ था। [illegible] ईस्ट इंडिया कम्पनीने मद्रासमें नियुक्त किया। इस समय अंग्रेजोंकी [illegible] हैदरअली अंग्रेजोंको निकाल बाहर करनेकी तैयारी कर रहा था। [illegible] आपसमें ही लड़ रहे थे। ऐसे समयमें सर टॉमस मनरोने बहुत अच्छी सेवा [illegible]

वह पाँच वर्ष तक लड़ाईकी कार्रवाइयोंमें व्यस्त रहा। उसके बाद उसको [illegible]रामपुर तहसीलमें राजस्व विभागमें नियुक्त किया गया। उसने भी [illegible] तरह इस अवसरका पूरा लाभ उठाया। वह लोगोंके साथ रहने लगा। वह [illegible] मिलता उनके साथ टहलने जाता और गरीब किसानोंकी लम्बी-लम्बी बातें कहानियाँ सुनता। जब वह लोगोंसे बातचीत करता तब अपने पास किसी भी दुभाषियेको नहीं रखता था। वह बहुत सादा जीवन बिताता था। एक पत्रमें उसने लिखा है [illegible] आटेके बदले मेंहूँके आटेका दलिया बनाया और प्रतीत होता है कि अब भी कुछ नहीं खाऊँगा। आजकल मैं गाँव-गाँव फिरता और किसानोंका लगान निर्धारित [illegible] इस समय मुझे और कुछ करना सूझता ही नहीं। मुझे अपने किसी कामके लिए फुर्सत नहीं मिलता। यह पत्र लिखते समय मेरे पास दस-बारह लोग बैठे हैं। प्रातः पाँच बजेसे आना शुरू कर दिया है। इस समय बारह बजे हैं। इस प्रकार मनरोने [illegible] तक काम किया लोगोंको खुश रखा और सरकारी मालगुजारीको वसूल किया। अब उसकी बारी इससे भी अधिक उत्तरदायित्वका काम करनेकी [illegible] तालुकेमें तालुकेदारकी जगह दी गई। कनाराकी दशा बहुत खराब थी फिर [illegible] वर्ष [illegible] लिये बिना अपना कर्तव्य समझकर २१ महीने काम किया। वह लोगोंके सुख दुःखमें प्रतिदिन दस-दस घंटे लगाता था। वह लिखता है कि मैं समुद्रके किनारे किसी बढ़िया मकानमें रहनेकी अपेक्षा लोगोंके बीच छोटी-सी झोंपड़ीमें रहकर उनके दिलोंको ज्यादा आकर्षित कर सकता हूँ और आज ये लोग हमारी वफादार रैयत बन रहे हैं। वह दोनोंके लिए एक खेमेकी चारपाई, हल्का गद्दा और एक तकिया रखता था। वह सवेरे-सवेरे उठनेपर बाहर निकलते ही जो लोग जमा हो जाते थे उनके साथ बातचीत करता था। फिर वह भोजनके पश्चात् तुरन्त आदेश देता चिट्ठियाँ लिखता और फिर कचहरी जाता। शामको पाँच बजे थोड़ा-सा कुछ और फिर रातको आठ बजे तक कचहरीमें बैठता। और कभी-कभी आधी रात तक सुनता। उसने इस प्रकार कनारा तालुकेके लोगोंको सुख-शान्ति दी। उसके बाद उसको परगनेमें और भी महत्त्वपूर्ण काम दिया गया। वहाँ पिछले वर्षोंमें अकाल पड़नेसे कंगाल हो गये थे। लूटपाट बढ़ गई थी। बदमाशोंका सब जगह बोल-बाला था। पर अपने सतत उद्योगसे इस राज्यको भी हरा-भरा कर दिया।

इस प्रकार सेवा करते हुए मनरोको २७ वर्ष हो गये थे। इसलिए वह इंग्लैंड चला गया और वहाँ उसने विवाह कर लिया। सन् १८१४ में मद्रास इलाकेमें जाँचके लिए एक आयोग नियुक्त किया गया। वह उसका अध्यक्ष बनकर फिर यहाँ [illegible] उसने इस समय हमारे देशवासियोंके प्रति अपनी सद्भावना अच्छी भाँति व्यक्त की। और विभागमें देशी लोगोंको ऊँचे पद देनेका परामर्श दिया। इस आयोगके काममें १८१७ के

युद्धके कारण विलम्ब हो गया। वह इस लड़ाईमें फँस गया। उसकी फौज अप्रशिक्षित और कम थी फिर भी उसकी प्रतिष्ठा सैनिकोंमें इतनी अधिक थी कि वे प्रसन्नतापूर्वक उसके अनुशासनमें रहे। इस लड़ाईमें मनरो इतना अधिक व्यस्त रहा और उसने अपने शरीरको इतना अधिक कष्ट दिया कि उसका स्वास्थ्य गिर गया। इसलिए वह १८१९ में लड़ाई समाप्त होते ही फिर इंग्लैंड लौट गया। १८२० में उसको सरका खिताब दिया गया और वह मद्रास इलाकेका गवर्नर बना कर भेजा गया। इस पदपर वह अपनी मृत्युके दिन तक रहा। वह जितना कठिन श्रम अपने छोटे पदपर किया करता था उतना ही कठिन गवर्नर बन जानेके बाद भी करता रहा। तब भी उसकी सादगी पहले जैसी ही थी। वह स्वयं अकेला ही टहलने निकल जाता था और जो कोई उससे मिलना चाहता उससे मिलता था। जब कभी मौका मिलता तब भारतीयोंको अधिकारी नियुक्त करता और आगे बढ़ाता। सन् १८२७ में वह भला गवर्नर हैजेकी बीमारीसे चल बसा। उसने कभी अपने स्वार्थपर निगाह नहीं रखी। उसका अपना फर्ज क्या है और वह किस तरह अदा किया जाये उसने सदा इसीपर ध्यान दिया। उसको भारतीयोंसे बहुत प्रेम था और उसका सबसे सही खिताब था "रैयतका दोस्त"। ऐसे सीधे-सादे और रहमदिल अंग्रेज पहले जमानेमें हो गये और अब भी निकल आते हैं इसीसे बहुत-से दोष होनेपर भी अंग्रेजी राज्यका सितारा जगमगाता रहता है।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन २८-१-१९०५

१३८. दुःखद प्रसंग

जेल-सुधार आयोग (प्रिजन्स रिफॉर्म कमिशन) की कार्रवाईके कारण नेटालकी कुछ खास जेलोंमें गिरमिटिया भारतीयोंकी दशाके विषयमें अनेक आशंकाएँ उत्पन्न हो गई हैं। ट्रान्सवाल लीडर में प्रकाशित रायटरके एक तारमें बतलाया गया है कि हालमें वेरुलममें जेल-अधिकारियोंने इस आशयकी गवाही दी है कि कुछ मालिक जो भारतीयोंको बड़ी संख्यामें नौकर रखते हैं अपने कुलियोंके बीमार हो जानेपर उन्हें किसी छोटे अपराधके लिए दण्डित करवा देते हैं जिससे कि उनका इलाज सरकारी खर्चपर हो जाये और वे अच्छे होकर कामपर लौटें। यह आरोप सुनने तक में इतना अमानुषिक और अविश्वसनीय लगता है कि इसे यदि किसी बाहरी व्यक्तिने लगाया होता तो उसे तिरस्कार ही फटकारके साथ अदालतसे बाहर निकाल दिया जाता। हम स्वयं इसपर विश्वास करना नहीं चाहते परन्तु जिन्होंने यह गवाही दी है उन्होंने अपनी जिम्मेदारी अच्छी तरह समझकर ही वैसा किया होगा। हम तो यह मानकर चलते हैं कि उन्होंने तथ्योंको बढ़ा-चढ़ाकर कहनेके बजाय कुछ घटाकर ही दिया होगा। यह मामला इतना संगीन है कि इसे जहाँका-तहाँ नहीं छोड़ा जा सकता। और यह भी गम्भीर बात है कि नेटालके अखबारोंको पहले-पहल इतने संगीन आरोपका समाचार अपनी सीमाओंके बाहरसे मिला है। हमारा खयाल है कि नेटालके सब समाचारपत्र इस मामलेमें चुप्पी साधे रहे। केवल नेटाल मर्क्युरी ने अपनी एक सम्पादकीय टिप्पणीमें वेरुलम जेलमें ऐसी धोखा देनेवाली अवस्था होनेकी चर्चा की थी। आयोगकी रिपोर्ट प्रकाशित होनेमें यथासम्भव समय लगेगा ही। तबतक हमें प्रतीक्षा करके ही सन्तुष्ट रहना पड़ेगा। उससे पहले हम ठीक-ठीक नहीं जान सकेंगे कि गवाही क्या थी।

तो हमारी सम्मतिमें वे प्रथम व्यक्ति होंगे जो बहिष्कार-आन्दोलनको प्रोत्साहन देंगे और साथ ही वे उस लोकमतको शान्त करनेका यत्न करेंगे जो कि अब इतना भड़क चुका है। इससे अधिक स्वाभाविक बात और क्या हो सकती है कि लोग अपने देशमें ही उत्पन्न और निर्मित हुई वस्तुओंसे अपना तन ढँकना, पेट भरना और लोगोंकी अपनी अन्य आवश्यकताएँ पूरी करना पसन्द करें? हम देखते हैं कि इस प्रकारके आन्दोलन अन्य उपनिवेशोंमें इससे भी अधिक व्यापक रूपमें चल रहे हैं। जनतामें इन विचारोंका फैलना न्यायसंगत और शुभ है, और ब्रिटिश शासनके प्रति निष्ठाकी भावनासे सामंजस्यका भी असंगत नहीं है। यह उस भविष्यवाणीकी पूर्तिमात्र है जो भारतके विषयमें मैकॉलेने की थी।

परन्तु भारतके शासकोंको यदि यह आन्दोलन युक्तियुक्त दिखलाई नहीं पड़ता तो भारतीयोंको भी क्यों न दिखाई पड़े? यह सत्य है कि एक हद तक भारतमें ब्रिटिश शासनका प्रवेश आन्तरिक फूटके कारण ही सम्भव हुआ था, परन्तु यह कर्तव्य और अधिकार भी तो अब ब्रिटेनका ही है कि वह भारतके दो बड़े सम्प्रदायोंमें मेल करा दे और उनके लिए ऐसी विरासत छोड़ जाये जिसके कारण न केवल करोड़ों भारतीय उसके प्रति कृतज्ञ रहें, अपितु सारा संसार निःसंकोच भावसे प्रशंसा करे। इसलिए दोनों सम्प्रदायोंको चाहिए कि उन्हें जो अवसर मिला है उसका वे पूरा लाभ उठायें और अपने सामूहिक हितके लिए आपसी मतभेद तथा ईर्ष्या-द्वेष भुला दें। कोई तीसरा पक्ष उनके झगड़ेमें पड़कर दोनोंसे अपना फायदा कर न जाये, इससे कहीं अच्छा तो यह है कि दोनों भाई एक-दूसरेके हाथों नुकसान उठा लें। जो भी इन पंक्तियोंको पढ़ें उन सबसे हम अनुरोध करते हैं कि वे हमारे साथ मिलकर प्रार्थना करें कि बंगालका वर्तमान आन्दोलन बलशाली होता चला जाये क्योंकि उसमें विभिन्न जातियोंमें एकता करा सकनेका अंकुर विद्यमान है, और ढाका तथा अन्य स्थानोंके लोगोंको, वे चाहे हिन्दू हों चाहे मुसलमान, यह सुबुद्धि प्राप्त हो कि वे ऐसा कोई भी काम न करेंगे जिससे भारतकी जनताका भविष्य उज्ज्वल होनेकी सम्भावना नष्ट हो जाये।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन ४-११-१[illegible]

१४० दादा उस्मानकी अपील

इस अपीलके विषयमें हमारे कथनको रद्द करनेके बाद फ्राइहीड हेराल्ड ने कहा है कि प्रश्न यह नहीं है कि

> दादा उस्मानको परवाना मिलना चाहिए या नहीं, बल्कि यह है कि उन्हें नगरके किसी भी भागमें व्यापार करनेका अधिकार है या नहीं। यद्यपि दादा उस्मानको कुछ बरस तक व्यापार करनेका परवाना प्राप्त था, फिर भी इतने मात्रसे सदाके लिए नगरमें रहनेका उनका निहित अधिकार सिद्ध नहीं होता। १८८६ से पूर्व कुछ भारतीय ट्रान्सवालमें आये थे तब उनको परवाने इस शर्तपर दिये गये थे कि वे केवल उन बस्तियों और स्थानोंमें व्यापार करेंगे जो सरकारने उन्हें बतला दिये हैं और अब प्रश्न यह है कि दादा उस्मानको किसी बस्तीमें चला जाना चाहिए या नहीं।

१ देखिए "परवाना रद्द और बहाल" पृष्ठ १८०।

१४१. लॉर्ड मेटकाफ़

भारतीय समाचारपत्रोंके तारक

"राज्यकर्ता प्रजाको सुख पहुँचाये तभी उसे राज्याधिकार सौंपा देगा" यह कहनेवाले और उसके अनुसार आचरण करनेवाले चार्ल्स थेओफिलस मेटकाफका जन्म कलकत्तेमें ३० जनवरी सन् १७८५ को हुआ था। १५ वर्षकी आयुमें उन्होंने पढ़ाई छोड़ी। विलायतमें जैसी-तैसी शिक्षा लेकर बाद १६ वर्षकी आयुमें वे कलकत्ता [आये]। इस समय ईस्ट इंडिया कम्पनी अपने कर्मचारियों-पर बहुत सख्ती बरतती थी। इसलिए जो युवक काफी पढ़े-लिखे न होते उन्हें नौकरीमें नहीं लिया जाता था। अतः लॉर्ड मेटकाफको कलकत्तेके कॉलेजमें दाखिल होना पड़ा। इस प्रकार कुछ समय तक शिक्षा लेनेके बाद चार्ल्स मेटकाफको एक छोटीसी जगह मिली। १९ वर्षकी आयुमें वे जनरल लेकके सरिश्तेदार बने। जनरल लेक और उनके मातहत अधिकारी दीवानीके काममें इस कच्चे जवानकी नियुक्तिसे नाराज हुए। चार्ल्स मेटकाफ चेत गये और उन्होंने लड़ाईके मैदानमें अपनी बहादुरी बतानेका निश्चय किया। डिगके किलेको तोड़नेमें उन्होंने पहल की और ऐसा अच्छा काम किया कि उनपर जनरल लेक खुश हो गये। तीन वर्ष बाद मेटकाफको बड़े गंभीर कामपर भेजा गया। पंजाबमें महाराजा रणजीतसिंहके साथ फ्रांसीसी लोग सांठ-गांठ कर रहे थे। इस सांठ-गांठको खतम कर देनेका काम मेटकाफको सौंपा गया और उनकी कोशिशसे अंग्रेज सरकार और रणजीतसिंहके बीच समझौता हो गया। इससे लॉर्ड लेक इतने प्रसन्न हुए कि उनकी सिफारिशमें २९ वर्षकी आयुमें रेजिडेंटका काम सौंपा गया।

अब उन्होंने जनताको सुख पहुँचानेका काम शुरू किया। जमींदारोंके अधिकारोंको ठोस बुनियादपर कायम कर दिया। इस सम्बन्धमें उन्होंने इस प्रकार लिखा है:

> हमें लोगोंकी जमीनकी लम्बी मुद्दतके लिए मुकर्रर कर देनी चाहिए, ताकि लोग काफी मुनाफा कमा सकें और हम लोगोंको दुआ दें। उनकी जमीन आगे चलकर हाथसे निकल जायेगी ऐसा डर बना रहनेके बजाय उनके मनमें यह विश्वास जमा देना चाहिए कि उनके हाथसे कोई जमीन लेनेवाला नहीं है। यह करेंगे तो लोगोंके मन शान्त होंगे और अपने ही स्वार्थके कारण वे ऐसा मानेंगे कि हमारा राज्य बड़ा अच्छा है। कुछ व्यक्तियोंकी धारणा है कि यदि लोग स्वतन्त्र और बन्धनमुक्त हो जायेंगे तो भविष्यमें अंग्रेजी राज्यको हानि पहुँचेगी। इस सम्भावनाको मान लिया जाये तब भी प्रजाके अधिकारोंको किस तरह छीना जा सकता है? उदार राज्यकर्ता इस प्रकारकी दलीलोंको महत्त्व कैसे दे सकते हैं? मनुष्यके राज्यके ऊपर ईश्वरका राज्य चलता है। वह महाप्रभु इतना बड़ा है कि घड़ीमें राज्य छीन सकता है और घड़ीमें दे सकता है। उसके हुक्मके सामने इन्सानकी चतुराई काम नहीं दे सकती। इसलिए राज्यकर्ताओंका केवल यही फर्ज है कि प्रजाकी सुख-सुविधा बढ़ाते रहें। इस प्रकार हम अपना फर्ज अदा करेंगे तो भारतीय प्रजा हमारा उपकार मानेगी और दुनिया सदाके लिए हमारी

१. मूलमें यहाँ वाक्य अधूरा है।

२. [illegible] किया; मूलमें [illegible] दिया है।

१४२. पत्र : छगनलाल गांधीको

[जोहानिसबर्ग]
नवम्बर ६, १९०५

चि० छगनलाल,

तुम्हारा पत्र मिला। रेवाशंकरके नामका पत्र वापस भेजता हूँ। अभयचन्दसे पत्रोंको वापस लेनेके लिए कहूँगा। वह प्रिटोरिया गया है।

तुमने किचिनके बारेमें लिखा सो ठीक किया है। तुम्हारी दलील गलत नहीं है। साधारणतः उन्हें जो सुविधाएँ दी गई हैं, वे आवश्यकतासे अधिक हैं। उन्हें जो रकम दी जा रही है वह उनकी निपुणताके लिए नहीं बल्कि मेरी भूलके कारण दी जा रही है। और मेरी भूलको सुधारनेका कोई दूसरा रास्ता न था। मैंने उन्हें जानेकी छूट दे दी थी। परन्तु वे कहने लगे कि मुझसे अब कहीं कोई काम नहीं हो सकता। जोहानिसबर्गमें मैं फिरसे काम शुरू नहीं कर सकता। उनका अपना बड़ा कारोबार था उसे उन्होंने बन्द कर दिया इसमें जरा भी शक नहीं। ऐसी परिस्थितिमें मुझे लगा मैं उन्हें एकदम बरखास्त कर दूँ यह हो ही नहीं सकता। इसलिए सबसे अच्छा रास्ता यह दीख पड़ा कि उन्हें वेतन दिया जाये और वह केवल उनके खर्च-भरके लिए। फिर भी उनको और मुझे एक माहकी सूचनापर इस व्यवस्थाको भंग करनेकी स्वतन्त्रता है। इसलिए मान लो कि प्रेसकी हालत बिगड़ जाये और आमदनी बिलकुल न हो तो मैं एक माहकी पूर्व सूचना देकर उन्हें हटा सकता हूँ। प्रेसकी हालत अच्छी हो तो भी उन्हें १ पौंडसे अधिक देनेकी न तो शर्त है और न उसकी जरूरत ही है। इसलिए वे हमेशा इतना ही वेतन लिया करेंगे ऐसा मान बैठनेका कोई कारण नहीं है। पोलकके लौटनेपर उनकी और इनकी नहीं बनेगी यह भी हमें नहीं मानना चाहिए। यदि नहीं बनी तो इन्हें जाना पड़ेगा। पोलकको वहाँ जानेमें अभी कमसे-कम ढाई वर्ष लगेंगे। इसलिए इतने दूरकी हम आज चिन्ता न करें। तबतक मुझे लगता है कि हमारी स्थितिमें बहुत परिवर्तन होंगे। किचिनको घर और जमीन दिये बिना कोई चारा न था। उनका मन फीनिक्समें है — वहाँका जीवन उन्हें निःसन्देह पसन्द है। उनके सम्बन्धमें तुमको अगर कुछ भी करनेकी जरूरत आ पड़े तो जरा भी संकोच न करना। आदमीके अच्छे गुणोंका मनन करना है उसके दोषोंका खयाल हम नहीं रख सकते। अगर हमारे असुविधाएँ या संकट भोगनेसे दूसरे सुखी रहें, दूसरोंका कल्याण हो तो हमें सन्तोष मानना है। दो एकड़ जमीन तो जिसे चाहिए उसे — जैसे तुमको तथा वेस्ट, बीन और आनन्दलालको — देनेमें जरा भी दिक्कत नहीं है। मुझे लगता है यह मैंने पहले ही कह दिया है। पोलकने भी दो एकड़ जमीन माँगी है। मैं मानता हूँ कि यदि किचिन रह जायेंगे तो उनका स्वभाव बदल जायेगा और वे अच्छा काम करेंगे। यदि उनके स्वभावमें परिवर्तन न हुआ तो वे खुद ही हट जायेंगे। और भी खुलासेकी जरूरत हो तो माँगना। हमेशा बेधड़क होकर मुझे लिखना।

चिरंजीव गोकुलदास स्वभावका अच्छा है। परन्तु इसके संस्कारके कारण उसमें तेरा-मेरा बहुत आ गया है। तुम्हारे प्रति उसकी दृष्टि निर्मल नहीं है। मैंने उसे बहुत समझाया है, परन्तु मैं देखता हूँ कि बचपनके बरसोंमें उसके दिलमें यह खयाल घर कर गया है कि मामा पागल हैं। उसका धन कमानेकी ओर अधिक ध्यान है। उसकी वृत्ति निर्मल बने इस दिशामें हमें अधिक ध्यान देना है। तुम उसे सँभालना और धीरे-धीरे मोड़ना। मेरा खयाल है कि यह परिश्रम

हमारे पाठक उनसे परिचित हो चुके हैं[1]। कांगड़ा जिलेमें भयंकर भूकम्पके कारण जो विपत्ति आ गई थी उससे लोगोंको राहत दिलानेका स्वेच्छया अंगीकृत कार्य उन्होंने पूरा ही किया था कि कर्तव्यकी पुकारपर वे इंग्लैंडके लिए चल पड़े। इंग्लैंडमें माननीय श्री गोखले समयपर उनके साथ नहीं हो सके इस कारण वे अमेरिका चले गये और वहाँकी महान् जनतामें भारतीय परम्पराओंका प्रचार करते रहे। बोस्टन ट्रान्सक्रिप्ट ने उनके विषयमें लिखा है :

> बहुत सप्ताह नहीं हुए कि कर्नल यंगहस्बेंडने लन्दनमें घोषणा की थी कि अध्यात्म-वाद और बौद्धिक जीवनकी सभी बातोंके लिए हम ऐंग्लो-सैक्सन लोगोंको हिन्दुओं तथा अन्य प्राच्य लोगोंके चरणोंमें विद्यार्थी बनकर बैठना होगा। जिन बातोंको हम सप्ताह भरमें केवल एक बार गिरजाघरके एकान्तमें बिताये हुए एक घंटेके लिए पृथक रख देते हैं उन्हें वे कितने ही युगोंसे मानव वृत्तियोंके उच्चतम और सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण अंगके रूपमें पोषित करते रहे हैं और आज भी कर रहे हैं। स्वस्थकाय और गुण-सम्पन्न हिन्दू युवक श्री राय उच्च वर्णके हिन्दुओंकी सुन्दरता और प्रतिभा कितनी भव्य है ! भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेसका यह प्रतिनिधि जिसने इस सप्ताह यहाँ दो बार व्याख्यान दिया है, इंग्लैंड जा रहा है।

ऐसे हैं हमारे नेता जो इस समय भारतकी वकालत करने इंग्लैंड पहुँचे हुए हैं। वे वहाँ ब्रिटिश मतदाताओंको यह बतलाने गये हैं कि भारतको अधिक अच्छा प्रतिनिधित्व मिलना चाहिए और शासकोंकी ओरसे उसकी सेवा अधिक अच्छी तरह होनी चाहिए। संसद-सदस्य श्री स्मालके शब्दोंमें इन प्रतिनिधियोंके जिम्मे

> भारतीय जनताकी भावनाओं आकांक्षाओं महत्त्वाकांक्षाओं और सुधारकी अभिलाषाओंको मुखरित करनेका काम सौंपा गया है। भारतके लोगोंकी इच्छा अधिक अच्छी शिक्षा पाने भारतके विभिन्न भागोंकी विभिन्न आवश्यकताओंके अनुसार जमीनका बन्दोबस्त करने और स्वशासनके अधिक अधिकार पानेकी है श्री गोखले जिन लोगोंके प्रतिनिधि हैं वे समझते हैं कि बहुत-से भारतीय अपने देशके शासनमें भाग लेनेके सर्वथा योग्य हैं।

यह प्रतिनिधिमण्डल और इस समय भारतमें घटित होनेवाली अन्य अनेक बातें असन्दिग्ध रूपसे समयकी गतिकी सूचना दे रही हैं। कहीं ऐसा न हो कि उपनिवेशके राजनीतिज्ञ उनका गलत अर्थ लगायें अथवा उनकी उपेक्षा कर दें। यदि वे ब्रिटिश झंडेकी छायामें रहना चाहते हैं तो भारतको उन्हें साम्राज्यका एक अविच्छेद्य अंग और, इसलिए, सब प्रकारसे विशेषाधिकारका अधिकारी मानकर चलना होगा। साम्राज्य दृढ़तासे एक सूत्रमें ग्रथित रहेगा अथवा परस्पर विरोधी स्वार्थोंके कारण छिन्न-भिन्न हो जायेगा इस प्रश्नका उत्तर बहुत-कुछ उस भावनापर निर्भर करेगा जिससे प्रेरित होकर उपनिवेशी ब्रिटिश और भारतीय राजनीतिज्ञ अपना कार्य करेंगे।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन ११-११-१९०५

1. इस विषयपर प्रो० परमानन्दके भाषण ४, ११ और १८ नवम्बर, १९०५ के इंडियन ओपिनियन में प्रकाशित हुए थे।

प्रवासी-प्रतिबन्धक विभागकी ओरसे दिये गये थे। इसपर श्री बावाने प्रधान प्रवासी प्रतिबन्धक अधिकारीके पास दरख्वास्त की। उसने निर्वासनके सम्बन्धमें श्री बावाको कोई भी जानकारी देनेसे इनकार करते हुए मामला खतम कर दिया और कहा: "मैं अन्तर्विभागीय प्रबन्धोंके सम्बन्धमें बाहरसे की गयी पूछताछका जवाब देना जरूरी नहीं समझता।" दुर्व्यवहारकी बातसे इनकार नहीं किया जाता; सिपाहीकी कार्रवाईको शुरूसे आखीर तक सही करार दिया जाता है और जब लोग यह जानना चाहते हैं कि उनसे जिन विनियमोंके पालनकी अपेक्षा की जाती है वे क्या हैं तब जवाब मिलता है कि यह पूछना उनका काम नहीं है। यह प्रशासनका निराला ही तरीका है। अबतक तो लोगोंको उन कानूनोंके स्वरूपसे परिचित करा दिया जाता था जिनके पालनकी उनसे अपेक्षा की; परन्तु अब सरकारने निश्चय किया है कि प्रवासी विभाग अपने विनियमोंका प्रशासन गुप्त रूपसे करे और, जिन लोगोंपर इन विनियमोंका असर पड़ता है उनसे अपेक्षा की जाये कि वे उन विनियमोंका अन्दाजा लगाकर, उनका पालन करें। हम सरकारका उल्लेख विशेष करते हैं, क्योंकि श्री हैरी स्मिथने ऐसा अनुप्रेरित होकर ही किया है। जहाँतक हमें मालूम है उन्होंने जनतासे कभी किसी जानकारीका दुराव नहीं किया है। हम नहीं जानते कि सरकार अपने बहुमूल्य विनियमोंको गुप्त रखकर किस लाभकी आशा करती है। परन्तु, हम इतना अवश्य जानते हैं कि सिपाहीकी कार्रवाई, निस्सन्देह गैर-कानूनी थी और वादीको जानकारीसे वंचित रखकर किसी गैर-कानूनी कार्रवाईको शह देनेका प्रयत्न कमसे-कम कहा जाये तो घोर अशिष्ट है।

हम अपने सहयोगीको एक ऐसी बातको जो किसी निन्द्य प्रसंगसे जरा भी कम नहीं है प्रकाशमें लानेके लिए बधाई देते हैं। वह इसलिए और अधिक बधाईका पात्र है कि उसने इसपर कड़े शब्दोंमें सम्पादकीय टिप्पणी लिखी है।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन ११-११-१९०५

१४८ रूस और भारत

रूसमें इन दिनों जो खलबली मची हुई है उससे हमें बहुत-कुछ समझना है। रूसका सम्राट इस समय दुनिया-भरमें सबसे बड़ा तानाशाह है। रूसके लोग बहुत कष्ट भोग रहे हैं। गरीब लोग कर-भारके नीचे दबे हैं, पुलिस जनताको कुचल रही है और ज़ारके मनमें जैसा आता है, लोगोंको उसीके मुताबिक करना पड़ता है। हाकिम सत्ताके नशेमें चूर हैं। जनताके सुखका उन्हें कतई खयाल नहीं है। अपना बल कैसे बढ़े और ज्यादा पैसे कैसे बटोरें, बस यही वे अपना कर्तव्य मानते हैं। जनताकी मर्जी बिलकुल नहीं थी फिर भी ज़ारने जापानसे लड़ाई करके रूसी सिपाहियोंके खूनकी नदी बहाई और हजारों मजदूरोंके गाढ़े पसीनेकी कमाईको अतलान्तक समुद्रमें फेंक दिया।

१. ज़ार निकोलस द्वितीय (१८६८-१९१८), १८९४ में गद्दीपर बैठा।

२. रूस व जापानकी लड़ाई १९०४ की फरवरीमें शुरू हुई थी। इसमें रूसकी हारके बाद ५ सितम्बर १९०५ को सन्धि हुई।

१४९ सर टी॰ मुतुस्वामी ऐयर, के॰ सी॰ आई॰ ई॰

सर टी॰ मुतुस्वामी ऐयरका जन्म तंजोरके एक गरीब परिवारमें २८ जनवरी १८३२ को हुआ था। बहुत ही छोटी उम्रमें पिताका देहान्त हो जानेके कारण बचपनसे ही उनपर पैसा कमानेका बोझा आ पड़ा। इससे वे एक रुपये मासिक वेतनपर ग्राम-लिपिकके रूपमें काम करने लगे। सन् १८४६ तक यह सिलसिला चला। इस बीच इस बालककी बुद्धि और उद्यमशीलता देखकर मुतुस्वामी नायकर नामक एक सज्जनके मनमें स्नेह पैदा हो गया। एक बार किसी गाँवकी नदीका बाँध टूट जानेकी खबर मुतुस्वामी नायकरको मिली। उसने अपने मुंशीको बुलाया। वह हाजिर नहीं था इसलिए बालक मुतुस्वामीने उत्तर दिया। नायकरने उसको जाँच करनेका काम सौंपा। मुतुस्वामी सब जगह घूमकर, सारी जानकारी ले आये। श्री नायकरको उसपर विश्वास नहीं हुआ। लेकिन जल्दी थी इसलिए उन्होंने उसकी रिपोर्टको मंजूरी दे दी। बादमें उन्हें खबर मिली कि मुतुस्वामीकी लाई सारी जानकारी सही थी। इसपर श्री नायकर बहुत प्रसन्न हुए।

मुतुस्वामीको अपने इस प्रकारके जीवनसे सन्तोष नहीं था। उसने दृढ़तापूर्वक आगे बढ़नेका निश्चय किया और जब-जब समय मिलता वह पाठशालाओंमें चला जाता। इससे श्री नायकरने उसको १८ महीने तक नेगापत्तम्के एक मिशन स्कूलमें रखा। फिर मद्रास हाई स्कूलमें भेजा और राजा सर टी॰ माधवरावके नाम परिचय-पत्र दिया। दिनों-दिन मुतुस्वामी पढ़नेमें प्रगति करने लगा। उस समय श्री पॉवेल मुख्य शिक्षक थे। उन्होंने मुतुस्वामीका मूल्य आँक लिया था और उसपर विशेष ध्यान देते थे। सन् १८५४ में एक अंग्रेजी निबन्ध लिखकर उसने ५ रुपयेका इनाम लिया। हाई स्कूलमें अपना अध्ययन पूरा करनेके बाद उसको ६ रुपयेपर शिक्षककी जगह मिली। बादमें तरक्की करते-करते उसे शिक्षाके अधिकारीकी जगह मिली। इस बीच सरकारने वकालतकी सनदकी परीक्षा शुरू की। मुतुस्वामीने इस परीक्षाकी तैयारी की और उसमें पहले नम्बरपर उत्तीर्ण हुआ। मुनसफोंकी जाँच करनेके लिए समय समयपर न्यायाधीश दौरा किया करते थे। एक बार न्यायाधीश होलोम अकस्मात् आ पहुँचा। वह मुतुस्वामी ऐयरका काम देखकर इतना अधिक खुश हुआ कि उसने कह डाला कि मुतुस्वामी उसके बराबरीकी कुर्सी लेने योग्य है। मुतुस्वामीकी योग्यता इतनी अधिक प्रकट होने लगी कि उनको मद्रासमें मजिस्ट्रेटकी जगह दी गई। न्यायाधीश होलोमे उनपर बड़ा प्रसन्न हुआ। उसने उनको और भी अध्ययन करनेको कहा। मुतुस्वामीने ऐसा ही किया। अध्ययनमें सहायता मिलनेकी दृष्टिसे उन्होंने जर्मन भाषा सीखी। मुतुस्वामी अत्यन्त स्वतन्त्र प्रकृतिके व्यक्ति थे। एक बार एक भारतीयने उच्च न्यायालयके एक न्यायाधीशपर मार-पीटका इल्जाम लगाया। मुतुस्वामीने वेस्टके उक्त न्यायाधीशके नाम सम्मन जारी कर दिया। बड़े मजिस्ट्रेटने सूचना दी कि उस न्यायाधीशको पेश होनेके लिए बाध्य न किया जाये। मुतुस्वामीने इसकी परवाह नहीं की। न्यायाधीशको उपस्थित रहना पड़ा और उसपर तीन रुपये जुर्माना हुआ। इसके बाद मुतुस्वामी ऐयर कम्बकार न्यायालयके न्यायाधीश बने। सन् १८७८ में उनको के॰सी॰ आई॰ ई॰ का खिताब मिला और वे उच्च न्यायालयके न्यायाधीश नियुक्त हुए। इस न्यायालयके न्यायाधीश नियुक्त होनेवालोंमें वे प्रथम भारतीय थे। उनके फैसले इतने उत्तम हुआ करते थे कि आज तक ऐसा कहा जाता है कि सर्वश्रेष्ठ अंग्रेज न्यायाधीशोंके साथ वे टक्कर ले सकते हैं। सुप्रसिद्ध श्री विटली स्टोक्स कहते हैं कि मुतुस्वामी ऐयर और सैयद महमूदके फैसलोंकी मुकाबलेके फैसले उन्होंने कम देखे

१५१. बन्दरगाहमें भारतीयोंके साथ दुर्व्यवहार

सामानी जहाजके भारतीय यात्रियोंके[1] साथ नेटाल बन्दरगाह पहुँचनेपर दुर्व्यवहार होनेकी जो बात कही गई है उसके विषयमें गत सप्ताह हम लिख चुके हैं। इस कथनके समर्थनमें हमें एक दूसरे व्यक्तिका पत्र मिला है। उसने गुजरातीमें लिखा है। उसका भाव यह है :

> जिन लोगोंके पास ट्रान्सवालके अनुमतिपत्र नहीं थे परन्तु जो लोग ट्रान्सवालके शरणार्थी थे और जिन अन्य लोगोंके पास नेटालके पास नहीं थे उन्हें बहुत तकलीफ दी गई। तीन दिन तक उन लोगोंको जहाजके गोदाममें रखा गया। वे अपने भोजनके लिए भी किन्हीं चीजोंका प्रबन्ध नहीं कर सके। तीसरे दिन डर्बनके व्यापारी श्री हासम जुमाने वकीलकी मारफत तजवीज की और लगभग पाँच लोगोंको उतरवाया। जब श्री हासम जुमा स्वयं जमानत दाखिल करने गये तब वह मंजूर नहीं की गई। वकीलके आने पर ही बड़ी मुश्किलसे वे उतारे गये। जो यात्री डेलागोआ-बेमें नहीं उतर सके थे, उन्हें भी तालेमें रखा गया और उन्हें भोजन बनानेकी आज्ञा नहीं मिली।

हम ऊपर कही गयी बातकी ओर भी हैरी स्मिथका ध्यान आकर्षित करते हैं। यदि यह सच है तो इस बातको सभ्यतामें नहीं कहा जा सकता। और यदि यह सच हो कि किसी वकीलके हस्तक्षेपपर ही यात्राके पासोंकी अनुमति मिली तो यह बहुत स्पष्ट है कि कहीं-न-कहीं कोई बड़ी खराबी जरूर है। वस्तुस्थिति यह है कि बेचारे भारतीयोंको उपनिवेशमें बसने या अस्थायी तौरपर रहनेके अपने अधिकारोंकी पूर्ति करानेके लिए बहुत परेशानी और खर्च उठाना पड़ता है। प्रवासी-प्रतिबन्धक अधिनियमको उचित ढंगसे लागू करनेके खिलाफ हमें कुछ नहीं कहना है। किन्तु हम निश्चय ही यह चाहते हैं कि जिन्हें उपनिवेशमें उतरनेका अधिकार है अथवा जिन्हें किसी पड़ोसी उपनिवेशमें जानेके लिए नेटालसे होकर गुजरनेकी प्रत्येक सुविधा दी जानी चाहिए उनपर केवल नियम-निर्वाहके लिए वकील करनेका खर्च नहीं लादा जाना चाहिए।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन १८-११-१९ २

१. देखिए "नेटालका प्रवासी-अधिनियम" पृष्ठ १३१।

१५२ जोहानिसबर्गमें भारतीय बस्ती

जोहानिसबर्ग नगर-परिषदने प्रस्ताव किया है कि आगामी वर्षमें बस्तीके निकट रहनेवाले काफिरोंको क्लिपस्प्रूट भेजा जायेगा। क्लिपस्प्रूट [illegible]र है। अतः इसमें शक है कि इतनी दूर काफिर कैसे रह सकेंगे। [illegible]र साथ ही परिषद भारतीय बाजार बनानेका विचार कर रही है [illegible] परिषदको जब सत्ता मिलेगी तब वह बाजार बनायेगी [illegible]गामी बस्ती से हटानेकी हलचल चल रही है। इसलिए भारतीयोंको [illegible] सबसे अच्छा रास्ता यह है कि जोहानिसबर्गमें ही बाजार [illegible] कर लेनी चाहिए, यद्यपि हम जानते हैं कि गलती भारतीयोंकी [illegible] समय लगेगा और आगामी चुनावके पहले भारतीयोंके लिए कोई कानून बनना [illegible]

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन १८-११-१९ ५

१५३ ट्रान्सवालके भारतीयोंको अनुमतिपत्रके सम्बन्धमें सूचना

हमें पता चला है कि अनुमतिपत्रकी अर्जी देनेवालोंसे जो और गवाहियाँ [illegible] ली जाती थीं वह तरीका अब बन्द कर दिया गया है और अब पहलेकी तरह काम चल जायेगा। आज तक भारतीय गवाहोंको बुलाकर पूछा नहीं [illegible] भारतीय गवाहोंकी मौखिक गवाही सुनने ही की जायेगी। इसलिए हमारी सिफारिश है कि बहुत सावधानीसे गवाह उपस्थित किये जायें।

लड़कोंके अनुमतिपत्रके सम्बन्धमें भी यह खुलासा हो गया दीखता है कि जिनके माता-पिता ट्रान्सवालमें हों और जो १६ वर्षकी आयुसे छोटे हों उनको अनुमतिपत्र मिल सकेगा। उनके सम्बन्धमें जो छपे हुए फार्म हैं उन्हें उनके अभिभावकों या पिताओंको भरना होगा।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन १८-११-१ ५

१५४ जापान और ब्रिटिश उपनिवेश

ब्रिटिश सरकार जापानके साथ अपने सम्बन्धोंके बारेमें संकट अनुभव करने लगी है। ब्रिटिश सरकारने जापानके साथ सन्धि की है। जापान बड़ा राज्य है, यह उसने स्वीकार किया है। सन्धिपत्रसे जाहिर होता है कि जापान इंग्लैंडकी बराबरीका है। नौसेनापति तोगोको अंग्रेज नेल्सनके बराबर मानते हैं और जापानके जो प्रजाजन इंग्लैंड जाते हैं उनका वे लोग आदर मान करते हैं।

जब इंग्लैंडमें यह स्थिति है तब न्यूज़ीलैंड उपनिवेशके प्रधानमन्त्री श्री सेडन कहते हैं कि इंग्लैंड और जापानके बीच जो सन्धि हुई है उससे हमारा कोई सम्बन्ध नहीं है। हम जापानके एक भी आदमीको न्यूज़ीलैंडमें घुसने नहीं देंगे।

पश्चिम आस्ट्रेलियामें जिस प्रकार एशियाके लोगोंके लिए सख्त कानून है उसी प्रकार जापानी जनताके लिए भी है। इससे जापानका दिल दुखा है। जापानके राजदूतने लिखा-पढ़ी की है कि ये कानून रद हो जाने चाहिए। इसपर उपनिवेश-मन्त्री श्री लिटिलटनने लिखा है कि आस्ट्रेलियाके उस कानूनमें परिवर्तन किया जाना चाहिए। पश्चिम आस्ट्रेलियाके मन्त्रीने उत्तर दिया है कि उस कानूनमें परिवर्तन इस प्रकार किया जायेगा कि जापानका अपमान न हो परन्तु उसका असर तो ज्यों-का-त्यों रहेगा। अर्थात् अब जापानको कड़वी गोली चाँदीके वर्कमें लपेटकर दी जायेगी।

ऐसी हालतमें इंग्लैंड क्या करेगा? यदि एक ब्रिटिश उपनिवेशकी प्रजा इस प्रकार ब्रिटेनकी राजनीतिके विरुद्ध बरताव करती रहे तो या तो उस उपनिवेशको इंग्लैंडको छोड़ देना पड़ेगा या फिर उपनिवेशके साथ बैठकर उसे भी अपनी राजनीतिमें परिवर्तन करना होगा।

जो बात जापानपर लागू होती है वही बात भारतपर भी लागू होती है। फिर भारतका हक तो और भी मजबूत माना जायेगा क्योंकि वह ब्रिटिश राज्यका एक हिस्सा है।[१]

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन १८-११-१९०५

१५५ केपका प्रवासी-कानून

केपके प्रवासी-कानूनमें सख्ती बढ़ती जा रही है। अबतक सिर्फ समुद्री मार्गसे आनेवाले लोगोंपर सख्ती होती थी। अब जो व्यक्ति ट्रान्सवाल पार करके आयेगा उसपर भी सख्ती की जानेवाली है। केपके गज़टमें कानून प्रकाशित हुआ है कि जो व्यक्ति ट्रान्सवालके रास्ते केप पहुँचे उसके पास यह प्रमाण होना चाहिए कि वह केपका निवासी है। यदि वह केपमें प्रवेश पानेका अधिकार सिद्ध नहीं करेगा तो उसे वापस भेजनेमें जो व्यय होगा वह उसे केप सरकारको क्षति-पूर्तिके रूपमें चुकाना पड़ेगा। इसलिए केपके सत्ताधीश यह सूचित करते हैं कि जो लोग केपमें जाना चाहते हों वे पहलेसे केपका पास प्राप्त कर लें। केपमें पास प्राप्त करनेमें बहुत कठिनाइयाँ होती हैं। जिस व्यक्तिके पास जमीन न हो और उसके बच्चे केपमें न हों उसको

१ मालूम पड़ता है, मूलमें यहाँ छपाईकी भूल है। यहाँ नहीं के बदले हाँ छपा है।

होल्कर आदि अंग्रेजोंपर चढ़ाई करनेके लिए अधीर हो उठे थे। पूनाका पेशवा अंग्रेजोंके पक्षमें था। परन्तु वह बहुत कमजोर था। उसका दीवान त्र्यंबकजी बड़ा खटपटी था। उसने कोई घोर कुकर्म किया था इसलिए पेशवाकी मंशा न होनेपर भी उसे कैद कर लिया गया था। कैदसे वह भाग निकला था और हाथ नहीं आ रहा था। एल्फिन्स्टनको पता चला कि स्वयं पेशवा अंग्रेजी राज्यके खिलाफ चाल चल रहा है। उसके पास बचावके लिए साधन-सामग्री बहुत कम थी फिर भी वह डरा नहीं। यद्यपि उसकी जानकारीमें सारी बातें आती रहती थीं फिर भी वह इतनी गम्भीरतासे रहा कि उसकी तैयारियोंको कोई जान न सका। अन्तमें पेशवाने खुल्लम-खुल्ला विरोध किया। पेशवाई फौजने अंग्रेजी छावनीपर धावा बोल दिया और एल्फिन्स्टनने अपने मुट्ठी भर आदमियोंकी मददसे उस फौजको भगा दिया। इस बीच जनरल स्मिथ *एल्फिन्स्टनकी सहायताको आ गया।* बाजीराव पेशवाकी पूरी हार हुई और पूना अंग्रेज सरकारने ले लिया। बाजीरावको पेंशन दी गई। एल्फिन्स्टनकी इस समयकी बहादुरीके बारेमें विख्यात कैनिंग कह गया है:

एल्फिन्स्टन दीवानी अधिकारी है। हम अपने दीवानी अधिकारियोंसे युद्धमें पराक्रमकी आशा नहीं रखते। हमारे पास योद्धा हैं। इन योद्धाओंमें एल्फिन्स्टन शानदार योद्धा है, यह उसने पेशवाओंकी लड़ाईमें दिखा दिया है। वह दीवानी काममें सर्वप्रथम है यह सब जानते हैं।

बाजीरावके साथकी लड़ाई समाप्त होनेपर एल्फिन्स्टनका काम और भी कठिन हो गया। अब उसे लोगोंपर राज्य करना था। उस समयके अंग्रेज शासक जनताके प्रति बड़ी सद्भावना रखते थे। जनतापर राज्य करते समय नये कानून बनाते थे। वे पहले यह विचार करते कि लोग किस प्रकारके राज्यसे परिचित हैं और उनको किस प्रकारका राज्य पसन्द आयेगा। एल्फिन्स्टनने यही *किया। पुराने मराठा परिवार किस प्रकार बने रहें* इस सम्बन्धमें उसने बहुत सावधानी बरती। उनकी जागीरोंको हाथ नहीं लगाया और इसी विचारसे उसने शिवाजीके उत्तराधिकारियोंके लिए सतारा राज्यकी स्थापना की। मराठे लोग इससे बहुत खुश हुए। उसने लोगोंकी भावनाओंको जाननेका प्रयत्न किया और उनको ठेस न पहुँचे यह खयाल रखा।

इस प्रकार सहृदय एल्फिन्स्टन सन् १८१९ में बम्बईका गवर्नर नियुक्त हुआ। उसने लोगोंके मन हर लिये। शिक्षापर उसने बहुत ध्यान दिया। भारतमें लोगोंको शिक्षा देना अंग्रेज सरकारका प्रथम कर्तव्य है ऐसा समझनेवालोंमें एल्फिन्स्टन पहला व्यक्ति माना जा सकता है। इस समय बम्बईमें जो एल्फिन्स्टन कॉलेज है वह इस लोकप्रिय गवर्नरकी स्मृतिमें स्थापित हुआ है। न्याय विभागमें भी उसने बहुत सुधार किये हैं। इस प्रकार उसने बम्बईमें आठ वर्ष तक राज्य सचालन किया। जब उसने बम्बईका राज्यपद छोड़ा तब हर कौमकी ओरसे उसका बहुत सम्मान किया गया। इसके बाद उसने अपना बाकी समय विलायतमें बिताया और भारतका इतिहास लिखा। उस पुस्तककी प्रशंसा आज भी की जाती है। उसको गवर्नर जनरलका पद देनेकी विलायतमें दो बार कोशिश की गई परन्तु अपने स्वास्थ्यकी खराबीके कारण उसने यह पद वह लेनेसे इनकार कर दिया। दिसम्बर २१ १८५९ को ८१ वर्षकी आयुमें इस महान पुरुषकी मृत्यु हो गई।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन १८-११-१९०५

देशमें श्रमपर कर नहीं लगाया जाता क्योंकि श्रम तो स्वयं सर्वोत्तम प्रकारका दान है। किसी भी देशकी समृद्धि श्रमपर ही निर्भर करती है।

इसमें सन्देह नहीं कि व्यक्ति-करका सबसे अधिक प्रभाव वतनी और भारतीय लोगोंपर पड़ेगा। हमारे ट्रान्सवालके सहयोगियोंने इस बातको बिना कठिनाईके मान लिया है। यूरोपीयोंको तो बीचमें केवल इसलिए लाया गया है कि यह सभी लोगोंके लिए बनाया गया आम कानून प्रतीत हो परन्तु हमारी इच्छा इसे उस दृष्टिसे देखनेकी नहीं है। कानून बन चुका है, और यद्यपि हम इसके लिए सरकारको उससे ज्यादा बधाई नहीं दे सकते जितनी कि स्वयं सरकार अपने-आपको दे सकती है, तथापि हम सबको इस निर्णयके सामने सिर झुकाना चाहिए। इसके साथ ही हम अधिकारियों और साधारण जनतासे अनुरोध करते हैं कि वे इसी अंकमें प्रकाशित व्यक्ति-कर सम्बन्धी हमारे विशेष लेखको ध्यानसे पढ़ें।

परन्तु इस कानूनको बनानेमें कानून बनानेवालोंका इरादा चाहे कुछ भी रहा हो हमारा काम शिकायत करनेका नहीं है यद्यपि हमारी सम्मतिमें इस कानूनकी कल्पनासे और जो सत्य हमने ऊपर प्रकट किये हैं उनसे भी असन्दिग्ध रूपसे यह स्पष्ट हो जाता है कि जो लोग सचमुच कर नहीं दे सकते उन्हें इससे मुक्त रखनेमें सरकारको अपने अधिकारका विचारपूर्वक उपयोग करना पड़ेगा। इस कारण यह अत्यन्त आवश्यक है कि इस करकी वसूलीके लिए जो नियम प्रकाशित किये जा चुके हैं उनपर फिर विचार कर लिया जाये और वसूल करनेवालोंको यह अधिकार दे दिया जाय कि वे अपनी समझके अनुसार समाजके निर्धनतम व्यक्तियोंको अदायगीसे बरी कर दें। इस प्रकारके करकी वसूली सरकार और उससे प्रभावित समुदायोंमें आपसी समझौतेसे ही की जा सकती है वरना जैसा कि हालमें एक वतनी जनताने चीफ मजिस्ट्रेट द्वारा बुलाई गई सभामें अर्थगर्भित शब्दोंमें कहा था "सरकारको कर न देनेवालोंको बसानेके लिए उपनिवेशकी सड़कोंको जेलोंकी पंक्तियोंसे युक्त करना पड़ेगा।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन २५-११-१९०५

१५९. श्री हैरी स्मिथ और भारतीय

सोमाली जहाजपर भारतीय यात्रियोंके साथ हुए दुर्व्यवहारके विषयमें हमारी सम्पादकीय टिप्पणीके[1] उत्तरमें प्रवासी-प्रतिबन्धक अधिकारीने जो पत्र लिखा था उसे हमने गत सप्ताह प्रकाशित किया था।

श्री स्मिथने इतना शीघ्र उत्तर दिया इसके लिए हम उनके कृतज्ञ हैं। परन्तु हमें कहना पड़ेगा कि यह उत्तर निराशाजनक है। स्पष्ट है कि जो बातें हमारे संवाददाताने लिखी थीं और जिनका समर्थन एक दूसरे संवाददाताने भी किया था वे सब प्रायः सत्य थीं। श्री स्मिथने हमारे संवाददाताकी शिकायतोंको ४ भागोंमें बाँटा है। उनमें से तीसरा सम्बन्ध जहाजपर की व्यवस्थासे है। श्री स्मिथ इसमें से किसीकी भी जिम्मेदारी लेनेसे इनकार करते हैं और कहते हैं कि इसके लिए जिम्मेदार लाने-ले जानेवाली हैसियतसे जहाजी कम्पनी ही है। निःसन्देह नियमोंकी

१. देखिए "[illegible]" इंडियन ओपिनियन २५-११-१९०५।
२. देखिए "[illegible]" पृष्ठ ११६।

अनुचित व्यवहारसे उनकी रक्षा करे। हम मानते हैं कि जिन भारतीयोंपर इस कानूनका प्रभाव पड़ता है उनमें से कई तुनुक-मिजाज भी होते हैं परन्तु इसमें आश्चर्यकी बात कुछ नहीं है। शायद यह भी सत्य है कि अपने इस स्वभावके कारण वे कभी-कभी अनजाने ही ज्यादती कर बैठते हैं। परन्तु दक्षिण आफ्रिकामें भारतीयोंको जिन परिस्थितियोंमें रहना पड़ता है उनमें रहनेवाले व्यक्ति इससे भी बहुत आगे बढ़ते देखे गये हैं। भारतीय उतना आगे न कभी बढ़े हैं और न उनसे वैसी सम्भावना की जा सकती है। जिस अधिकारीको निरन्तर लोगोंकी स्वाभाविक स्वतन्त्रताको नियन्त्रित करते रहनेके अप्रिय कर्तव्यका पालन करते रहना पड़ता हो उसका स्वभाव ऐसा हो जाना सम्भव है कि वह उस कामको भी अपराध मान बैठे जो परेशानियों और यातनाओंकी परिस्थितिमें किसी भी मनुष्यकी मानसिक अवस्थाका अति स्वाभाविक परिणाम हो सकता है। भारतीयोंको जिस विचित्र परिस्थितिमें डाल दिया गया है उसमें रहनेवाले लोगोंके साथ अंशमात्र भी न्याय करना हो तो सूक्ष्मदर्शी व्यक्तियों तक को उक्त बात सदा अपने ध्यानमें रखनी होगी।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन २५-११-१९०५

१६० बदरुद्दीन तैयबजी[1]

बदरुद्दीन तैयबजीका नाम भारतमें सुविख्यात है। बम्बई इलाकेमें तो उनका नाम सभी जानते हैं। बदरुद्दीन तैयबजीने बहुत छोटी उम्रमें ही अपनी शक्तिका परिचय दिया और पाठशालामें वे बहुत अच्छे विद्यार्थी थे। उनकी पढ़ाई इतनी अच्छी थी कि उनके बुजुर्गोंने उन्हें विलायत भेजनेका विचार किया। सर फीरोजशाह और बदरुद्दीन तैयबजी हमजोलीके साथी थे और एक ही समयके विद्यार्थी थे।

बम्बईसे विलायत जानेवाले भारतीयोंमें वे लगभग पहले व्यक्ति थे। विलायतमें उन्होंने बहुत अच्छा विद्याभ्यास किया। वहाँ सम्मान प्राप्त करके वे बम्बई लौट आये और बैरिस्टरके रूपमें उन्होंने बहुत ख्याति प्राप्त की। बदरुद्दीन तैयबजीकी तुलना सदैव बड़े अंग्रेज बैरिस्टरोंसे की जाती थी। उन्होंने सुप्रसिद्ध बैरिस्टर ऐन्स्टे तथा इनवेरारिटीसे टक्करें ली थीं। जब वे बैरिस्टरी करते थे तब क्वचित् ही ऐसे बड़े मुकदमे होते थे जिनमें दोनों पक्षोंमें से किसी एकमें उन्हें न रखा गया हो। उनकी वक्तृत्व-शक्ति और कानूनी ज्ञान बड़े ऊँचे दर्जेका था इसलिये वे न्यायाधीशोंको खुश करते थे और पंचोंका मन हर लेते थे। सौराष्ट्रमें बड़े रियासती मुकदमोंके लिए वे बहुत बार आये और विजयी हुए हैं। किन्तु नवाबजादा नसरुल्ला खाँके बचावका मुकदमा उनका सबसे बड़ा मुकदमा माना जायेगा। सूरतके कलक्टर श्री लेलीने नवाबजादापर १ रुपयेकी रिश्वत देनेका इल्जाम लगाया था। श्री लेलीने इस संबंधमें बहुत कड़ी गवाही दी और बम्बईके मुख्य मजिस्ट्रेट श्री स्लेटरने बड़ा कठोर निर्णय दिया और नवाबजादाको छ महीनेकी कैदकी सजा दे दी। इस निर्णयके खिलाफ अदालतमें जनाब बदरुद्दीन तैयबजीको खड़ा किया गया था। उन्होंने ऐसी बढ़िया कानूनी दलीलें पेश की कि न्यायमूर्ति

1. (१८४४–१९०६)
2. देखिए खण्ड ६, पृष्ठ १९५।

तो इसमें असाधारण बात कुछ नहीं है। हमारा निवेदन है कि यदि ऐसे बच्चोंको जिन्हें अबतक छेड़ा नहीं गया था देशसे निकाल दिया गया या उपनिवेशमें प्रविष्ट नहीं होने दिया गया तो यह बहुत गम्भीर अन्याय होगा। इसके अतिरिक्त सरकार चाहती है कि जो भारतीय यहाँ रहते हैं उनकी सम्बन्धिनी स्त्रियोंको भी पुरुषोंके समान ही पंजीकृत किया जाये। ब्रिटिश भारतीय संघने इस प्रकारकी कार्रवाइयोंका तीव्र प्रतिवाद किया है, और यहाँ तक कहा है कि हम इस प्रश्नपर अदालत तक में लड़नेको तैयार हैं, क्योंकि हमें सलाह दी गई है कि यहाँके निवासी भारतीयोंकी पत्नियोंको अपना नाम पंजीकृत कराने और ३ पौंड देनेकी आवश्यकता नहीं है।

खास मुनीमोंका अस्थायी प्रवेश

किसीको कितनी ही आवश्यकता क्यों न हो सरकार नये अनुमतिपत्र नहीं देती। हम सब समाचारपत्रोंमें परमश्रेष्ठकी यह दृढ़ घोषणा पढ़कर अत्यन्त प्रसन्न हुए थे कि जो भारतीय पहलेसे इस देशमें बसे हुए हैं उनके निहित अधिकारोंको छेड़ा या छुआ न जाये। बहुत-से व्यापारियोंको अपना व्यापार चलानेके लिए विश्वस्त मुनीम आदि निरन्तर भारतसे बुलाते रहना पड़ता है। यहाँ बसी हुई आबादीमें से विश्वस्त आदमियोंका चुनना सरल नहीं होता। सभी स्थानों और जातियोंके व्यापारियोंका अनुभव यही है। इसलिए यदि अबतक प्रातिनिधिक शासन स्थापित नहीं हो जाता तबतक नये भारतीयोंके लिए देशका द्वार बन्द रखा जायेगा तो यह कार्रवाई निहित अधिकारोंमें भारी हस्तक्षेप होगी। यह भी समझमें नहीं आता कि योग्य और शिक्षित व्यक्तियोंको उनके शरणार्थी होने-न-होनेका विचार किये बिना प्रार्थनापत्र देनेपर अनुमतिपत्र क्यों न दिया जाये। इन सब कठिनाइयोंके बावजूद हमारे भारतीय-विरोधी मित्र यह कहते कभी नहीं थकते कि जो ब्रिटिश भारतीय ट्रान्सवालमें कभी नहीं रहते थे उनकी देशमें बाढ़ आ गई है। उनको यह कहनेकी आदत-सी पड़ गई है कि जो कोई भी भारतीय देशमें पहले मौजूद था वह पंजीकृत किया जा चुका था। मुझे इस प्रश्नपर अधिक कहनेकी आवश्यकता नहीं जान पड़ती क्योंकि परमश्रेष्ठको यह पहले बतलाया जा चुका है कि इस आक्षेपके सम्बन्धकी सब बातें झूठी हैं। परन्तु १८९१ के एक मामलेका जिक्र करनेके लिए परमश्रेष्ठ मुझे क्षमा करें। शायर और इस्माइल मजदूरोंके दो बड़े ठेकेदार थे। एक बार वे देशमें / भारतीय मजदूर एक साथ लाये थे। और कितनोंको वे लाये मुझे मालूम नहीं। उस समयके सरकारी न्यायवादीने जोर दिया कि उन सबको पंजीकरणका प्रमाणपत्र लेना और ३-३ पौंड देना चाहिए। शायर और इस्माइलने इस बातका उच्च न्यायालयमें परीक्षण किया। उस समयके मुख्य न्यायाधीश श्री कोट्जेने फैसला दिया कि कानूनके अनुसार इन आदमियोंको ३ पौंड देनेकी आवश्यकता नहीं है क्योंकि ये व्यापार करनेके लिए यहाँ नहीं आये और यदि ये आदमी ठेकेकी मियाद खत्म होनेके बाद यहीं रह गये तो भी मैं सरकारकी सहायता नहीं कर सकूँगा। यह तो केवल एक उदाहरण है जिसका खण्डन नहीं किया जा सकता। इसमें सैकड़ों भारतीय ३-३ पौंड दिये बिना इस देशमें रह गये थे। ब्रिटिश भारतीय संघ निजी अनुभवके आधारपर बराबर यह कहता रहा है कि सैकड़ों भारतीय जिन्होंने व्यापार करनेके परवाने नहीं लिए अपना-अपना बिना पंजीयन कराये और बिना ३-३ पौंड दिये ही देशमें रह गये थे।

बाजार और बस्तियाँ

अब मैं १८८५ के कानून ३ पर आता हूँ। बहुधा यह कहा जाता है कि इस देशमें ब्रिटिश सरकारकी स्थापनाके पश्चात् भारतीयोंको व्यापारके परवानोंके विषयमें रियायत मिल गई है। परन्तु यह बात सत्यसे जितनी दूर है उतनी और कोई नहीं हो सकती। युद्धसे पहले हम परवाने

ब्रिटिश भारतीयों अथवा एशियाइयोंके लिए विशेष रूपसे कानून बनानेपर जोर दिया गया है। उसमें अनिवार्य पृथक्करणपर भी जोर दिया गया है और ये दोनों बातें ब्रिटिश भारतीयोंको बार-बार दिये गये आश्वासनोंके विरुद्ध हैं। मैं अधिकतम आदरके साथ कहूँगा चाहूँगा कि सर आर्थर लालीने नेटालमें जो-कुछ देखा उससे वे पथभ्रान्त हो गये हैं। नेटालका उदाहरण देकर कहा गया है कि ट्रान्सवाल भी ऐसा ही हो जायेगा परन्तु नेटालके जिम्मेदार राजनीतिज्ञ हमेशा मानते रहे हैं कि भारतीयोंके कारण ही नेटाल सँभला रहा। सर जेम्स हुलेटने वतनी मामलोंके आयोग (नेटिव अफेयर्स कमिशन) के सामने कहा था कि व्यापारीके रूपमें भी भारतीय अच्छा नागरिक है और वह थोकफरोश गोरे व्यापारियों और वतनी लोगोंमें अच्छे बिचौलियेका काम करता है। सर आर्थर लालीने यहाँ तक कहा था कि ब्रिटिश भारतीयोंके साथ यदि कोई वादे किये भी गये होंगे तो वे उन हालातसे अनजान होनेके कारण कर दिये गये होंगे जो कि आज मौजूद हैं और इसलिए उन्हें पूरा करनेकी अपेक्षा उन्हें तोड़ देना ही अधिक बड़ा कर्तव्य होगा।[1] मैं अत्यन्त आदरके साथ निवेदन करनेका साहस करता हूँ कि वादोंके सम्बन्धमें ऐसा सोचना गलत है। यद्यपि हम महारानीकी १८५८ की घोषणापर महान प्रतिज्ञापत्र (मैग्ना कार्टा) के रूपमें विश्वास करते हैं, परन्तु इस समय हम पचास बरस पहले किये हुए वादोंका जिक्र नहीं कर रहे हैं। उस घोषणाको एकाधिक बार पुष्ट किया जा चुका है। वाइसरायपर वाइसराय दृढ़तापूर्वक कहते रहे हैं कि इस प्रतिज्ञाका पालन किया जायेगा। औपनिवेशिक प्रधान मंत्रियोंके सम्मेलनमें भी श्री चेम्बरलेनने इसी सिद्धान्तका प्रतिपादन किया था और प्रधान मंत्रियोंको बतला दिया था कि विशेषतः केवल ब्रिटिश भारतीयोंको प्रभावित करनेवाले किसी कानूनको स्वर्गीया सम्राज्ञीकी सरकार सहन नहीं करेगी। ऐसा कानून सम्राटके करोड़ों राजभक्त प्रजाजनोंको सर्वथा अनावश्यक रूपसे अपमानित करनेवाला होगा और इसलिए जो भी कानून पास किया जाये वह सर्व-सामान्य रूपका होना चाहिए। इसी कारणसे आस्ट्रेलियाके प्रथम प्रवासी-प्रतिबन्धक अधिनियमपर निषेधाधिकारका प्रयोग किया गया था। प्रथम नेटाल मताधिकार अधिनियम (फ्रैंचाइज ऐक्ट) भी इसी कारण निषिद्ध ठहरा दिया गया था और इसी कारण नेटालके उपनिवेशको केवल एशियाइयोंपर लागू होनेवाला एक विधेयक पेश करनेके बाद उसका मसविदा फिर तैयार करना पड़ा था। ये सब मामले पुराने जमानेके नहीं हालके बरसोंके हैं। यह भी नहीं कहा जा सकता कि इस सबको बदलनेके लिए आज कोई नये हालात सामने आ गये हैं। युद्धसे ठीक पहले भी मन्त्रियोंने इस आशयकी घोषणाएँ की थीं कि युद्धका एक कारण ब्रिटिश भारतीयोंके अधिकारोंकी रक्षा करना भी है। अन्तिम बात यह है परन्तु इसका महत्त्व कुछ कम नहीं है कि स्वयं परमश्रेष्ठने भी युद्ध छिड़नेसे ठीक पहले यही विचार प्रकट किया था। इसलिए यद्यपि हमारा विनम्र मत यह है कि सर आर्थर लालीने इस प्रश्नपर जिस प्रकार विचार किया वह अति अन्यायपूर्ण और ब्रिटिश परम्पराओंसे असंगत है तथापि यह प्रमाणित करनेके लिए कि हम गोरे उपनिवेशियोंके साथ सहयोग करना चाहते हैं हमने पहले ऐसा कोई कानून न होते हुए भी यह सुझाव रखा है कि अब एक प्रवासी अधिनियम केप या नेटालके अधिनियमोंके आधारपर बना दिया जाये परन्तु उसमें ये दो अपवाद रखे जायें कि एक तो शिक्षणकी कसौटीमें प्रधान प्रधान भारतीय भाषाओंको भी सम्मिलित कर लिया जाये और, दूसरे पहलेसे बसे हुए ब्रिटिश भारतीय व्यापारियोंको यह सुविधा दी जाये कि वे जिन व्यक्तियोंको अपना व्यापार चलानेके लिए आवश्यक समझें उन्हें अस्थायी रूपसे भारतसे बुला सकें। इससे वह भय एकदम दूर हो जायेगा जिसे कि एशियाई हमलेका नाम दिया गया है।

[1] देखिए खण्ड ३ पृष्ठ ४८८।

(ग) पुराने ३ पौंडी पंजीयनवाले जो लोग बिना अनुमतिपत्रोंके देशमें आते हैं वे यद्यपि अधिकारी हैं फिर भी उन्हें वापस भेजा जा रहा है और उनसे बाकायदा अर्जियाँ माँगी जा रही हैं।

(घ) ट्रान्सवाल निवासियोंकी स्त्रियोंसे भी आशा की जाती है कि वे यदि अकेली हैं तो अनुमतिपत्र लें और पंजीयनके लिए ३ पौंडी शुल्क जमा करें — चाहे वे अपने पतियोंके साथ हों चाहे उनके बगैर। (अब इस सम्बन्धमें सरकार और ब्रिटिश भारतीय संघके बीच पत्र-व्यवहार हो रहा है।)

(ङ) सोलह वर्षसे कम आयुके बच्चोंको यह सिद्ध न कर सकनेपर कि उनके माता पिता मर गये हैं या वे ट्रान्सवालके निवासी हैं वापस भेज दिया जाता है या अनुमतिपत्र देनेसे इनकार कर दिया जाता है। इस तथ्यकी ओर ध्यान ही नहीं दिया जाता कि उनकी परवरिश शायद ऐसे सम्बन्धी करते हों जो उनके अभिभावक हैं और जो ट्रान्सवालमें रहते हैं।

(च) गैर-शरणार्थी भारतीयोंको चाहे वे किसी भी हैसियतके क्यों न हों उपनिवेशमें प्रवेश नहीं करने दिया जाता। (इस अन्तिम प्रतिबन्धके फलस्वरूप जमे-जमाये व्यापारियोंको अत्यन्त असुविधाका सामना करना पड़ रहा है क्योंकि इसी कारण वे विश्वासपात्र व्यवस्थापकों और मुनीमोंको भारतसे नहीं बुला सकते।)

१८८५ का कानून ३

स्वर्गीय राष्ट्रपति क्रूगरके मन्त्रियोंकी घोषणाओं और नागरिक शासन-व्यवस्था स्थापित करनेके बाद राहत देनेके उनके आश्वासनोंके बावजूद कानूनकी पुस्तकमें यह कानून अभी मौजूद है और पूर्ण रूपसे अमलमें लाया जा रहा है यद्यपि बहुत-से कानूनोंको जिन्हें ब्रिटिश संविधानके प्रतिकूल समझा गया था ट्रान्सवालमें ब्रिटिश सत्ताकी उद्घोषणा होते ही रद कर दिया गया था। १८८५ का कानून ३ ब्रिटिश भारतीयोंके लिए अपमानजनक है और वह केवल गलतफहमीके कारण ही स्वीकार कर लिया गया था। यह भारतीयोंपर निम्नलिखित पाबन्दियाँ लगाता है

(क) यह उन्हें नागरिक अधिकारोंके उपभोगसे वंचित करता है।

(ख) यह उन सड़कों, मुहल्लों या बस्तियोंको छोड़कर जो कि भारतीयोंके रहने-बसनेके लिए अलग छोड़ दी गई हैं अन्यत्र अचल सम्पत्तिके स्वामित्वपर रोक लगाता है।

(ग) इसका उद्देश्य नगर-सभाओंके नियन्त्रणमें बस्तियोंमें भेजकर ब्रिटिश भारतीयोंका अनिवार्य पृथक्करण है।

और (घ) यह प्रत्येक भारतीयपर जो व्यापार या इसी प्रकारके अन्य उद्देश्यसे उपनिवेशमें प्रविष्ट हो ३ पौंडी कर लागू करता है।

ब्रिटिश भारतीय संघकी ओरसे सादर निवेदन किया जाता है कि शान्ति-रक्षा अध्यादेशको इस प्रकार अमलमें लाया जाये कि

(क) इससे सभी शरणार्थियोंको अविलम्ब प्रवेशकी सुविधा उपलब्ध हो जाये।

(ख) यदि १६ बरससे कम आयुके बच्चोंके माता-पिता या अभिभावक उनके साथ हों तो उन्हें हर तरहकी पाबन्दियोंसे मुक्त कर दिया जाये।

(ग) भारतीयोंके परिवारकी स्त्रियोंको प्रवेशाधिकार-सम्बन्धी बाधा या पाबन्दीसे बिलकुल मुक्त रखा जाये। तथा

(घ) अधिवासी व्यापारियोंकी प्रार्थनापर सीमित संख्यामें ऐसे भारतीयोंके लिए भी जो शरणार्थी नहीं हैं, मैनेजर, मुनीम या नौकर रूपमें काम करनेके लिए अनुमतिपत्र उपलब्ध किया जाये बशर्ते कि

वे व्यापारी अनुमतिपत्र अधिकारीको यह तसल्ली दे सकें कि उन्हें ऐसे आवश्यकता है।

और (ङ) शिक्षित भारतीयोंको प्रार्थनापत्र देनेपर, उपनिवेशमें आनेकी चाहिए।

१८८५का कानून ३ और शान्ति-रक्षा अध्यादेश इन दोनों कानूनोंको [illegible] भारतीयोंपर असर डालनेवाले अन्य रंग सम्बन्धी कानूनोंको जितनी जल्दी हो सके, रद [illegible] चाहिए। और उनकी निम्नलिखित बातोंके बारेमें आश्वासन दिया जाना चाहिए

क) जमीन-जायदाद रखनेका उनका अधिकार।

ख) उपनिवेशके स्वास्थ्य-सम्बन्धी आम कानूनोंका पालन करते हुए वे जहाँ चाहें रह सकें। किसी भी प्रकारके विशेष शुल्कसे अदायगीसे छूट।

ग) आम तौरपर विशेष कानूनोंसे मुक्ति तथा नागरिक अधिकारों एवं स्वतंत्रताका [illegible] भोग जिस हद तक कि दूसरे उपनिवेशी करते हैं।

भारतीय पक्ष यूरोपीय निवासियोंकी इस आशंकासे सहमत नहीं कि भारतीयोंके [illegible] हानिकारक रहा। [illegible] उससे वे संकटमें पड़ जायेंगे फिर भी उनके साथ मेल-जोलसे काम करने तथा सौहार्द स्थापित करनेकी सच्ची भावनासे उसने सबेत यह निवेदन किया है

(क) शान्ति-रक्षा अध्यादेशकी जगह केप या नेटालके आधारपर एक साधारण प्रवासी-कानून बनाया जाये बशर्ते कि शैक्षणिक कसौटी महान भारतीय भाषाओंको मान्यता दे दे और ऐसे भारतीयोंको जिनकी जरूरत व्यापारमें पहलेसे ही जमे भारतीय व्यापारियोंको हो निवास-सम्बन्धी अनुमतिपत्र देनेका अधिकार सरकारको दे दिया जाये।

(ख) एक ऐसा साधारण विक्रेता-परवाना कानून पास किया जाये जो रंगभेदके बगैर लागू हो और जिसके द्वारा नगर-परिषदें या स्थानिक निकाय नये व्यापारिक परवाने देनेपर नियन्त्रण रख सकें बशर्ते कि इस प्रकारकी परिषदों या स्थानिक निकायोंके निर्णयोंकी समीक्षाके लिए सर्वोच्च न्यायालयमें अपील करनेका अधिकार हो। इस कानूनके अन्तर्गत एक ओर तो केवल उस हालतको छोड़कर जब कि मकान या दूकान स्वच्छ अवस्थामें न हों, तत्कालीन परवानोंका संरक्षण होगा और दूसरी ओर नये परवानेके लिए नगर-परिषदों या स्थानिक निकायोंकी स्वीकृति लेनी पड़ेगी। फलतः परवानोंकी अभिवृद्धि प्राय उपर्युक्त संस्थाओं-पर निर्भर करेगी।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन २–१२–१९ ५ और ९–१२–१९ ५

१६२ कटौती और व्यक्ति-कर

गत मंगलवारको डर्बन नगर-परिषदकी बैठकमें महापौरने बताया कि नगरपालिकाके जिन विभागोंमें वतनी और भारतीय कर्मचारी काम करते हैं उन सबके अध्यक्षोंके साथ उन्होंने भेंट की और इस सुझावपर विचार किया कि वतनी और भारतीयोंकी मासिक मजदूरीमें दस प्रतिशतकी कमी कर दी जाये। इसे परिषदने भी स्वीकार कर लिया है और इसपर १ नवम्बरसे अमल शुरू हो जायेगा।

स्पष्ट है कि न तो परिषदने और न विभागीय अध्यक्षोंने इस बातपर विचार किया कि जिन अभागे व्यक्तियोंपर इस निर्णयका असर पड़ेगा उनकी कठिनाई कितनी अधिक बढ़ जायेगी। जो स्वतन्त्र भारतीय नगर-निगममें काम करते हैं वे प्रायः सभी गिरमिटिया वर्गसे आये हैं और उनको ब्रिटिश उपनिवेशमें स्वतन्त्र ब्रिटिश प्रजा कहलानेका विशेषाधिकार पानेके लिए ३ पौंड वार्षिक कर देना पड़ता है। अब इसके (गरीब आदमीके लिए तो यही बहुत अधिक है) अतिरिक्त १ पौंड वार्षिक कर और लगेगा। ये लोग इस अतिरिक्त बोझको कैसे उठायेंगे और अपने कर कैसे अदा करेंगे यह तो अधिकारी ही जानें। हम केवल इतना ही कह सकते हैं कि वेतनमें कटौतीकी इस विधिसे परिषदकी मानव-भावनापर कोई अच्छा प्रकाश नहीं पड़ता और यह कि इसपर अमल करनेका यह अवसर विशेष रूपसे असामयिक है।

उसी बैठकमें परिषदने निश्चय किया कि नगरके बिजली-इंजीनियरके सहायकका वेतन बढ़ाकर ४० पौंड वार्षिक कर दिया जाये। कटौतीकी यह विधि सारे उपनिवेशमें लागू होती है। इसपर हमारे जायस्क सहयोगी ट्रेड ऐंड ट्रान्सपोर्ट ने लिखा है

> अभीतक अक्सरने यह नहीं बताया कि सरकारने जिन नागरिक कर्मचारियों (सिविल सर्वेंट्स) को इसलिए चुना था कि आर्थिक कठिनाईमें उपनिवेशकी सहायता करनेके प्रयोजनसे वे अपने वेतनमें कटौती स्वीकार कर लेंगे उनमें एक ऐसा भी था जिसने ऐसा करनेसे एकदम इनकार कर दिया; और सरकार इस रहनेके स्थान पर इस व्यक्तिकी अपने साथियोंके साथ इस सम्मिलित बोझको उठानेमें भाग लेनेकी अनिच्छाके सामने झुक गई। इतना ही नहीं उसके साथ यहाँतक रियायत की कि उसके वेतनमें अच्छी-खासी वृद्धि कर दी और इस उदारताके लिए बहाना यह पेश किया कि इस आदमीने एक ऐसे आयोजनमें जिसका इस कृपापात्रके खास विभागसे संलग्न कर्तव्योंसे कोई वास्ता नहीं था उल्लेखनीय सेवा प्रदान की थी।

यदि डर्बन नगर-परिषद पहले उन विभागीय अध्यक्षोंके जो वतनी और भारतीय कर्मचारियोंकी कटौती करानेके लिए तैयार थे ऊँचे वेतनोंमें समुचित कमी करके अपने व्यय में बचत करती तो १ पौंड प्रतिवर्षकी जो तुच्छ राशि उन्होंने अपने निर्धनतम कर्मचारियोंपर बोझ लाद कर बचाई है उसकी पूर्ति सुगमतासे हो जाती। उस अवस्थामें अधिकसे-अधिक बुरा यह होता कि अब जिस कठिनाईका सामना बहुतोंको करना पड़ेगा उसका सामना केवल थोड़ेसे व्यक्तियोंको करना पड़ता। परन्तु यह तो वही पुरानी कहानी है जिसके पास है, उसीको दिया जायेगा और उसके पास और बहुतायत हो जायगी परन्तु जिसके पास नहीं है उससे वह भी ले लिया जायेगा जो उसके पास है।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन २–१२–१९ ५

और ऐसे किसी भी स्वयंसेवकको

> कुशल नहीं माना जायगा जो प्रतिवर्ष बारह दिन तक प्रतिदिन चार घंटेके हिसाबसे अथवा चौबीस दिन तक प्रतिदिन दो घंटेके हिसाबसे अथवा अड़तालीस दिन तक प्रतिदिन एक घंटेके हिसाबसे कवायद न कर चुका हो; और एक घंटेसे कमकी किसी भी कवायदकी गिनती नहीं की जायेगी।

प्रवासी भारतीयोंके स्वयं-सैनिकदलका जो सदस्य वास्तविक सैनिक-सेवा करते हुए घायल होगा अथवा अन्य प्रकारसे गम्भीर चोट खा जायेगा उसे मुआवजा देनेका और जो स्वयंसेवक मैदानमें लड़ते हुए अथवा लड़ाईमें लगे हुए घावोंके कारण मर जायेगा उसके मेटाल्में पीछे छूटे हुए बाल-बच्चोंको पेंशन देनेका विधान भी किया गया था। इस प्रकार, यदि सरकार इच्छा-भर करे कि प्रवासी भारतीय उपनिवेशकी प्रतिरक्षामें भाग लें जिसके लिए कि वे अबसे पहले अपनी तत्परता प्रकट कर चुके हैं, तो उसके लिए कानूनकी व्यवस्था पहलेसे विद्यमान है।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन २-१२-१९०५

१६५ डर्बन निगमके भारतीय कर्मचारी

हमने सुना है कि नगर-निगमके भारतीय कर्मचारियोंका वेतन प्रतिमास दो शिलिंगके हिसाबसे घटा दिया गया है। यदि यह खबर सही हो तो बहुत खेदजनक है। ऐसा क्यों होता है यह समझमें नहीं आता। इसके अतिरिक्त यह भी सुना है कि गोरोंका वेतन उतना ही रखा गया है। अधिक निश्चित जानकारी मिलनेपर इस सम्बन्धमें हम विशेष लिखेंगे।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन २-१२-१९०५

१६६ हास्यका सुधार

काल कोठरी (ब्लैक होल) तो एक कलकत्तेकी ही कही जाती है। लेकिन अब एक काल कोठरी स्टैंगरमें बनी है। यह कलकत्तेकी काल कोठरीको भी मात देने लायक है। सरकारी जेलमें केवल ४ कैदियोंके रहने लायक जगह है। वहाँ पिछले सप्ताह २ कैदी बन्द कर दिये गये थे। इसका असर इतना बुरा हुआ कि दुर्गन्धके मारे जेलमें घुसना भी मुश्किल हो गया था। कैदी बड़े बेचैन थे। क्या यह सुधार है?

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन २-१२-१९०५

१. लगभग २० फुट लम्बी १४ फुट चौड़ी एक बन्द कोठरी जहाँ कहा जाता है सिराजुद्दौलाने १७५६ में १४६ अंग्रेजोंको एक रात बन्द रखा था, जिनमेंसे १२३ की मृत्यु हो गई। अब ऐसा माना जाता है कि यह ईस्ट इंडिया कम्पनीके किसी अधिकारीके कल्पनाशील मस्तिष्ककी उपज मात्र थी।

२. डर्बनसे ४५ मील उत्तर-पूर्व बसा हुआ एक नगर।

१६७. पीली जमातपर हमला

न्यूज़ीलैंडका एक गोरा चीनियोंसे इतना चिढ़ गया है कि उसने एक चीनीको बिना-वजह बन्दूकसे मार डाला। फिर वह खुद ही पुलिस थानेमें जाकर गिरफ्तार हो गया। म[ुकद]मा चलाया गया। अदालती पंचोंने उसको पागल समझकर मृत्यु-दण्ड न देनेकी राय दी। [...]पर वह बोल उठा कि मैंने खून पागलपनमें नहीं किया है। उसकी मान्यता यह [...]नियोंसे गोरोंको बहुत नुकसान पहुँचता है। इसलिए एक उदाहरण प्रस्तुत करनेके [...] खून किया है और वह स्वयं फाँसीपर चढ़नेके लिए तैयार है।

[...] [...]नियन २-१२-१९ ५

१६८. नेटाल प्रवासी-अधिनियम

सोमाली जहाजके यात्रियोंको जो तकलीफें उठानी पड़ी हैं उनके बारेमें श्री हेरी स्मिथने हमें लिखा है कि हमने जो शिकायतें की हैं वे सही हैं। लेकिन जो तकलीफें यात्रियोंको भुगतनी पड़ीं उसमें अपना दोष स्वीकार करनेके बदले वे जहाज-मालिकोंको दोषी ठहराते हैं और लिखते हैं कि कुछ यात्री जानबूझकर अपने लिए तकलीफें बुलाते हैं। हम इन सब बातोंका ब्योरेवार जवाब दे चुके हैं। वह अंग्रेजी विभागमें छप भी चुका है[1]। श्री स्मिथ यह कहनेमें चूक करते हैं, क्योंकि वे प्रवासी-अधिनियमके अमलसे उत्पन्न कष्टोंका उत्तरदायित्व दूसरोंपर नहीं डाल सकते। जिन सवारियोंको जहाजसे उतरनेकी अनुमति न दी गई हो उनको तकलीफ न हो ऐसा प्रबन्ध करना भी स्मिथका कर्तव्य है।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन २-१२-१९ ५

१६९. वन्देमातरम्: बंगालका शौर्यमय गीत

पश्चिमके प्रत्येक राष्ट्रका एक अपना राष्ट्रगीत है। यह गीत अच्छे अवसरोंपर गाया जाता है। अंग्रेजीमें "गॉड सेव द किंग" गीत ही प्रसिद्ध है। उसको गाते समय अंग्रेजोंमें जोश जगता है। जर्मनीका राष्ट्रगीत भी प्रख्यात है। फ्रान्सका "मारसेल" गीत इतने ऊँचे दर्जेका है कि वह जब गाया जाता है तब फ्रांसीसी लोग उन्मत्त हो जाते हैं। इस प्रकारके अनुभवोंसे बंगाली कवि बंकिमचन्द्रके मनमें बंगाली लोगोंके लिए एक गीत बनानेका विचार आया। उन्होंने "वन्दे-मातरम्" नामका गीत रचा है जो इस समय सारे बंगालमें फैला हुआ है। बंगालमें स्वदेशी मालके व्यवहार-सम्बन्धी आन्दोलनके सिलसिलेमें विराट सभाएँ की गई हैं। उनमें लाखों लोग एकत्रित हुए हैं और सभीने बंकिमचन्द्रका गीत गाया है। कहा जाता है कि यह गीत इतना लोकप्रिय हो गया है कि राष्ट्रगीत बन गया है। अन्य राष्ट्रोंके गीतोंसे यह मधुर है और इसमें

१ देखिए "श्री हेरी स्मिथ और सरकार" पृष्ठ १४७-८।

विचार उत्तम हैं। दूसरे राष्ट्रोंके गीतोंमें अन्य राष्ट्रोंके बारेमें खराब विचार होते हैं। इस गीतमें ऐसी कोई बात नहीं है। इस गीतका मुख्य हेतु सिर्फ स्वदेशाभिमान पैदा करना है। इसमें भारतको माताका रूप देकर उसका स्तवन किया गया है। जिस प्रकार हम अपनी माँमें सभी गुणोंका भाव मानते हैं उसी प्रकार कविने भारत मातामें सभी गुण माने हैं। जिस प्रकार हम माँको श्रद्धापूर्वक पूजते हैं उसी प्रकार इस गीतमें भारत माताकी प्रार्थना की गई है। इसमें अधिकतर शब्द संस्कृतके हैं किन्तु सरल हैं। भाषा बंगला है परन्तु वह भी सरल ही रखी गई है। इसलिए इस गीतको सभी समझ सकते हैं। यह गीत इतने उच्च कोटिका है कि हम उसके शब्दोंको ज्यों-का-त्यों गुजरातीमें दे रहे हैं और साथ ही हिन्दी विभागमें भी।

[गुजरातीसे]

वन्दे मातरम्
सुजलां सुफलां मलयज-शीतलां
शस्यश्यामलां मातरम् —वन्दे मातरम् १
शुभ्रज्योत्स्नापुलकितयामिनीं
फुल्लकुसुमितद्रुमदलशोभिनीं
सुहासिनीं सुमधुरभाषिणीं
सुखदां वरदां मातरम् —वन्दे मातरम् २
सप्तकोटि-कंठकलकलनिनादकराले
द्विसप्तकोटि-भुजैर्धृतखरकरवाले
के बोले मा तुमि अबले?
बहुबलधारिणीं नमामि तारिणीं
रिपुदल-वारिणीं मातरम् —वन्दे मातरम् ३
तुमि विद्या तुमि धर्म तुमि हृदि तुमि मर्म
त्वं हि प्राणाः शरीरे।
बाहुते तुमि मा शक्ति। हृदये तुमि मा भक्ति।
तोमारइ प्रतिमा गड़ि मन्दिरे मन्दिरे —वन्दे मातरम् ४
त्वं हि दुर्गा दशप्रहरणधारिणी
कमला कमलदलविहारिणी
वाणी विद्यादायिनी नमामि त्वाम्।
नमामि कमलां अमलां अतुलां
सुजलां सुफलां मातरम् —वन्दे मातरम् ५
श्यामलां सरलां सुस्मितां भूषितां
धरणीं भरणीं मातरम्
वन्दे मातरम्

[हिन्दी विभागसे उद्धृत]

इंडियन ओपिनियन २-१२-१ ५

१-२. [illegible]

१७०. लॉर्ड सेल्बोर्न और ब्रिटिश भारतीय

ट्रान्सवालके ब्रिटिश भारतीय संघकी ओरसे गत तारीख २९, बुधवारको एक
लॉर्ड सेल्बोर्नसे मिला था। उस भेंटका विवरण[1] हम अन्यत्र प्रकाशित कर रहे हैं।

ब्रिटिश भारतीय संघने लॉर्ड सेल्बोर्नके सामने विस्तारसे परिस्थिति रखकर अच्छा किया। ट्रान्सवालके ब्रिटिश भारतीयोंकी ओरसे लॉर्ड सेल्बोर्नके सामने जो बातें पेश की गई हैं, वे हमें [illegible] और नरम लगी हैं। परमश्रेष्ठको भी वे ऐसी ही प्रतीत हुई होंगी। वास्तवमें परम-[illegible] वक्तव्यकी इस अत्यधिक तर्कसंगति को स्वीकार किया कि जो प्रतिबन्ध हुए [illegible] हों केवल वही प्रभावकारी हो सकते हैं। यदि इस दृष्टिसे जाँच की जाये तो [illegible] परमश्रेष्ठके समक्ष जो निवेदन किया है उसमें मुख्य रूपसे दो बातें सामने आती [illegible] मानते हैं कि ट्रान्सवालमें उनके विरुद्ध पूर्वग्रह है और वे यह भी मानते हैं कि [illegible] भारतीय व्यापारियों द्वारा अनुचित व्यापारिक स्पर्धा और देशमें भारतीयोंके अनुचित प्रवेशका भय है (जहाँतक प्रस्तुत विषयका सम्बन्ध है यह देखना आवश्यक नहीं है कि यह भय उचित या अनुचित है)। भारतीय इन दोनों आपत्तियोंका निराकरण जिस ढंगसे करना चाहते हैं, वह ढंग उन सब लोगों द्वारा प्रशंसित होगा जिन्होंने अतिवादकी पूर्वग्रहके कारण अपनी न्यायबुद्धि खो नहीं दी है। यदि शैक्षणिक कसौटीके लिए भारतीय भाषाओंकी शर्तें व्यवस्था करके केप या नेटालके आधारपर सर्वसाधारण ढंगका प्रवासी-प्रतिबन्धक कानून बनाया जाये तो उससे सब उचित जरूरतें पूरी हो जाना सम्भव है। साधारणतया आत्मत्याग जैसी बातकी आशा नहीं की जा सकती। पर ब्रिटिश भारतीय संघ तो इससे भी आगे गया है और उसने सुझाया है कि सभी नये व्यापारिक अनुमतिपत्रोंपर उपनिवेशके सर्वोच्च न्यायालयमें पुनर्विचारके अधिकारके साथ स्थानीय निकायों और नगरपरिषदोंका नियन्त्रण स्वीकार किया जायेगा। यह ट्रान्सवालके भारतीय-विरोधी आन्दोलनकारियोंके सामने एक स्वीकृति योग्य शान्ति-प्रस्ताव है। यही लोग भारतीय अनुमतिपत्रोंके विरुद्ध चिल्लाते हैं और यही वे लोग हैं जो नगरपालिकाओंके प्रतिनिधि चुनते हैं अथवा स्वयं इस प्रकारके प्रतिनिधि चुने जाते हैं। भारतीय व्यापारियोंके समाजको इनकी ईमानदारी और न्याय-बुद्धिपर इतना भरोसा है कि वे अपना भविष्य उनके हाथोंमें सौंपते हुए हिचकते नहीं हैं। इससे अधिक करनेकी आशा उससे नहीं की जा सकती और यदि कुछ अधिक किया जाता है और ऐसा मित्रतापूर्ण हाथ बढ़ानेके बावजूद धर्मभेदपर आधारित कानून जान-बूझ कर बनाया जाता है, तो यह सारी-की-सारी तर्कसंगति व्यर्थ चली जायेगी और, जैसा कि शिष्टमण्डलने कहा है, उस स्वतंत्रताका अन्त हो जायेगा जिसे ब्रिटिश झंडेके नीचे रहते हुए भारतीय अपनी अमूल्य विरासत समझने लगे हैं। शान्ति-रक्षा अध्यादेशके अमलका ढंग जानकर बहुतोंको बड़ा दुःख और आश्चर्य होगा। लॉर्ड सेल्बोर्नका ध्यान उन बातोंकी ओर आकर्षित किया गया था और यद्यपि वे उन बातोंपर चुप रहे, हमारा खयाल है कि उन्होंने अवश्य ही उनमें से कुछको तीव्र असहमतिकी दृष्टिसे देखा होगा। ११ सालसे कम उम्रके बच्चोंसे ऐसी आशा रखना कि यदि उनके माता-पिता ट्रान्सवालके निवासी न हों तो उन्हें अपने साथ अनुमतिपत्र रखने चाहिए, अन्यथा उन्हें वापस भेज दिया जायेगा और भारतीय स्त्रियोंसे भी पंजीकरणके प्रमाण पत्र निकलवानेकी माँग करना — ये बड़ी ही शर्मनाक बातें हैं। इस तरहके प्रतिबन्धोंसे सभी

१. देखिए "शिष्टमण्डल लॉर्ड सेल्बोर्नकी सेवामें" पृष्ठ १५०–८।

तरीकोंकी तेज गन्ध आती है। हम आशा करते हैं कि साम्राज्यके उज्ज्वल नाम और यशको ध्यानमें रखते हुए लॉर्ड सेल्बोर्न अपने वचनके अनुसार मामलेकी छानबीन करेंगे और भारतीयोंको सन्तोष देंगे जो उन्हें अधिकार और न्यायकी दृष्टिसे मिलना चाहिए, क्योंकि लॉर्ड सेल्बोर्न साम्राज्यके उज्ज्वल नाम और यशके योग्य संरक्षक हैं।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन ९-१२-१९०५

१७१. उद्धरण : दादाभाई नौरोजीके नाम पत्रसे[1]

[जोहानिसबर्ग]
दिसम्बर ११, १९०५

ब्रिटिश भारतीय संघकी ओरसे लॉर्ड सेल्बोर्नसे[2] जो शिष्टमण्डल मिला था उसका पूरा विवरण इस सप्ताहके *इंडियन ओपिनियन* में आयेगा।

इस भेंटमें जो प्रश्न उठाये गये और जिनपर विचार हुआ वे मेरी विनम्र रायमें बहुत महत्त्वपूर्ण हैं और इनमें सबसे महत्त्वपूर्ण सर आर्थर लाली द्वारा प्रतिपादित वर्ग-विधानके सिद्धान्तका प्रश्न और ब्रिटिश भारतीय संघ द्वारा उसका विरोध है। सर आर्थर लालीके सुझावोंका मंशा है यूरोपीय विरोधसे समझौता कर लेना। ब्रिटिश भारतीय संघका भी यही प्रस्ताव है। यदि कोई भेद है तो ब्रिटिश भारतीय संघका प्रस्ताव सर आर्थर लालीके सुझावकी अपेक्षा अधिक पूर्णताके साथ यूरोपीय दृष्टिकोणको तुष्ट करता है। यह समझना कठिन है कि उन्होंने वर्गोंके बीच भेदभावपर इतना अधिक जोर क्यों दिया है। परन्तु यदि यह सिद्धान्त मान लिया जाये तो दक्षिण आफ्रिकामें ब्रिटिश भारतीयोंपर लगाये जानेवाले नियन्त्रणोंका कोई अन्त नहीं रहेगा। इसलिए यह सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण मुद्दा है। ब्रिटिश भारतीय संघने जिन मामलोंपर जोर दिया उनपर लॉर्ड सेल्बोर्नने खुलकर विचार नहीं किया, इससे प्रकट होता है कि श्री लिटिलटनने सर आर्थरके सुझावोंको अभीतक अंगीकार नहीं किया है।

[अंग्रेजीसे]

इंडिया ऑफिस : ज्यूडीशियल ऐंड पब्लिक रेकर्ड्स ४२८९/१९०५

१. श्री दादाभाई नौरोजीने भारत-मन्त्रीके नाम अपने जनवरी ३, १९०६के पत्रमें उद्धृत किया था।
२. देखिए "शिष्टमण्डल लॉर्ड सेल्बोर्नकी सेवामें", पृष्ठ १५७-८।

१७२ केपका प्रवासी-अधिनियम

केपके प्रवासी-अधिनियमके बारेमें हम दूसरे स्तम्भमें एक बहुत महत्त्वपूर्ण परीक्षात्मक मुकदमा उद्धृत कर रहे हैं। केपके ब्रिटिश भारतीयोंको इस बारेमें बहुत सावधान रहना होगा कि यह अधिनियम कैसे लागू किया जाता है। नरोत्तम लालू नामका एक व्यक्ति जो [illegible] नगरमें रह रहा है केपमें प्रवेश करनेसे इस आधारपर रोक दिया गया कि वह [illegible] अधिवासी नहीं है। यद्यपि उसके पास नेटालका प्रमाणपत्र था [illegible] पूर्व अधिवासी [illegible] खारिज कर दिया गया। इसका कारण यह बताया गया कि उसके स्त्री-बच्चे [illegible] थे और न दक्षिण आफ्रिकामें ही थे। केपके प्रवासकोंने अपने अधिकारियोंको [illegible] जबतक प्रार्थी यह न सिद्ध करे कि दक्षिण आफ्रिकामें उसकी जायदाद सम्पत्ति [illegible] बच्चे दक्षिण आफ्रिकामें हैं तबतक उसके दावे खारिज किये जायें। न्याय-मूर्ति [illegible] एक अच्छा-खासा निर्णय दिया है। उन्होंने कहा है कि दक्षिण आफ्रिकामें स्त्री और बच्चोंकी उपस्थितिकी शर्त यद्यपि यह अधिवासी होनेके पक्षमें एक बहुत बड़ा तथ्य है पूर्णतया आवश्यक नहीं है। विद्वान न्यायाधीशने यह भी निर्धारित किया है कि नेटालका अधिवासी होनेका प्रमाणपत्र पूर्व अधिवासी होनेका सबूत नहीं है क्योंकि यह किसी न्यायालय या न्याय-सम्बन्धी अधिकारीके तय करनेका प्रश्न है। इस निर्णयका विशुद्ध परिणाम यह होगा कि केवल वे भारतीय जो दक्षिण आफ्रिकामें अपना दीर्घकालीन निवास और वहीं जमे बने रहनेका अपना इरादा सिद्ध कर सकेंगे उन्हींके अधिवासी होनेके दावे माने जायेंगे। यहाँ तक यह संतोषजनक है। परन्तु, जैसा कि अनुमान किया गया था और यह बहुत उचित भी था उसके विपरीत वे नेटालके अधिवासी होनेका प्रमाण दिखानेपर बिना किसी परेशानीके केपमें प्रवेश करनेमें समर्थ नहीं होंगे। अब केपका कानून दक्षिण आफ्रिकाके किसी भी भागके अधिवासको मान्यता देता है। और इस कानूनके सही अमलके हकमें यह बहुत जरूरी है कि नेटाल सरकार द्वारा प्रदत्त प्रवेश-पत्र केपमें भी स्वीकार किये जायें नहीं तो अनावश्यक उलझनें और परेशानियाँ उठ खड़ी होंगी। जैसा कि प्रार्थीके वकीलने कहा है अधिवाससे सम्बन्ध रखनेवाला कानून नेटालमें लगभग वैसा ही है जैसा कि केपमें है। इसलिए कोई कारण नहीं है कि अधिवासके जो प्रमाणपत्र जैसा कि सब लोग जानते हैं बड़ी जाँच-पड़तालके बाद नेटालमें जारी किये जाते हैं वे शुभाशा अंतरीपके उपनिवेशमें स्वीकार न किये जायें।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन १६-१२-१९ ५

१७३. मध्य दक्षिण आफ्रिकी रेल प्रणाली और यात्री

ट्रान्सवाल सरकारके इस महीनेकी ८ तारीखके गज़ट में मध्य दक्षिण आफ्रिकी रेल प्रणाली (सेंट्रल साउथ आफ्रिकन रेलवे) में यात्रियोंके यातायातको नियन्त्रित करनेके लिए एक उपनियम प्रकाशित हुआ है। यह उपनियम लॉर्ड सेल्बोर्नकी उस जाँचका परिणाम है जो कि उन्होंने "रैंड पायोनियर्स"[१] और, कुछ महीने हुए, रंगदार लोगोंके एक शिष्टमण्डलकी शिकायतपर की थी। यह उपनियम शुद्ध अवैयक्तिक है और जाहिरा तौरपर सर्वथा निर्दोष प्रतीत होता है। यह कहता है

> यात्रियोंको चाहिए कि वे किस डिब्बेमें यात्रा करें या किस जगहपर बैठें, इस बारेमें स्टेशन मास्टर, गार्ड या अन्य सरकारी अधिकारियों द्वारा दी गई हिदायतोंको मानें और यदि ऐसा कोई अधिकारी किसी व्यक्तिको किसी डिब्बे या स्थानको रिक्त करनेके लिए कहे तो उसे वहाँसे चला जाना चाहिए। यदि परिस्थितिवश किसी यात्रीको उससे निचले दर्जेके डिब्बेमें यात्रा करनी पड़ जाये जिसका कि उसके पास टिकट हो तो यातायात-प्रबन्धकसे प्रार्थना करनेपर किरायेमें जो अन्तर होगा वह उसे रेलवे विभाग द्वारा वापस कर दिया जायेगा।

इस उपनियमका पालन करनेसे इनकार करनेपर चालीस शिलिंग तक जुर्माने और सात दिन तक कैदकी सजा दी जा सकती है। रेल प्रणाली अधिकारियोंको ये सब अधिकार सदासे प्राप्त थे परन्तु उपनियम वास्तविकतापर जोर देता है। प्रतीत होता है कि इस उपनियमके व्यावहारिक परिणामस्वरूप रंगदार यात्रियोंके पास जिस दर्जेके टिकट होंगे उन्हें उससे निचले दर्जेके डिब्बोंमें यात्रा करनेको बाध्य होना पड़ सकता है। इस नियमके पालनका परिणाम किसी दुष्टताके रूपमें प्रकट होगा या नहीं यह बहुत कुछ उन लोगोंपर निर्भर करेगा जिन्हें यात्रायोंका नियन्त्रण करनेका अधिकार सौंपा जायेगा और यदि असुविधा और दुर्व्यवहारको टालना है तो बहुत बड़ी चतुराईसे काम लेना पड़ेगा।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, १६-१२-१९०५

१. रान्डवासी गोरे युवक अनुदार दल था।

जानना है कि हमारे अधिकार क्या हैं, यह समझना है कि अधिकारोंके साथ हमारे ऊपर दायित्व और कर्तव्य क्या हैं। इस प्रकारकी शिक्षा पाँच-पचीस व्यक्तियोंको मिल जाये उतना बस नहीं है। उसे करोड़ों लोगोंमें फैलाना है। यह कैसे होगा? उसके लिए हमें तैयार होना होगा। उसके लिए हमें अपना समय देना होगा। सरकार इस प्रकारकी शिक्षा देगी यह आशा नहीं रखनी है। ऐसे नौजवानोंकी संख्या दिनादिन बढ़नी चाहिए। यह शिक्षा हमें दादाभाईकी जीवनीसे प्राप्त करनी है। तभी हमने उनका सम्मान किया यह कहा जा सकता है। उनका नम्र स्वभाव, उनकी सादगी, उनका न्याय, उनकी आशा, उनकी दृढ़ता — इन सब गुणोंका बखान करनेमें फायदा नहीं है, बल्कि उन गुणोंका अनुशीलन करना है। हमें देशके लिए बलिदान होनेकी उमंग रखनी चाहिए। अगर इस तरहके जोशीले नौजवान बड़ी संख्यामें तैयार हो जायें तो इस दुनियामें ऐसा कोई नहीं है जो हमें सता सके। यह होगा तभी हमारे ऊपरसे घटाएँ टलेंगी, तभी हम विजय पायेंगे, तभी भारत आगे बढ़ेगा, तभी हमारा दैन्य दूर होगा, और हमारा देश संसारमें प्रकाशित होगा और तभी आज हम जिसका स्वप्न देख रहे हैं वह साकार होगा।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, १६-१२-१९०५

१७५. ट्रान्सवालके अनुमतिपत्र

भारतीयोंको अनुमतिपत्र देनेके सम्बन्धमें बड़े फेरफार हो रहे हैं। जो अनुमतिपत्र-कार्यालय जोहानिसबर्गमें चल रहा है उसका कब्जा पूरी तरहसे औपनिवेशिक कार्यालयको देनेका आदेश लॉर्ड सेल्बोर्नने दिया है। जान पड़ता है यह परिवर्तन व्यापारिक शिष्टमण्डलके[1] प्रयत्नोंके कारण हुआ है। अब भारतीयोंकी स्थितिका सुधरना या बिगड़ना इस परिवर्तनके ऊपर निर्भर है। हमारी धारणा है कि यह सुधरेगी, भले फिलहाल थोड़े समयके लिए हमें कुछ परेशानियाँ भोगनी पड़ें।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, १६-१२-१९०५

१. देखिए "शिष्टमण्डल: लॉर्ड सेल्बोर्नकी सेवामें", पृष्ठ १०७-८।

१७६. पत्र: छगनलाल गांधीको

जोहानिसबर्ग
सितम्बर २१, १९०५

चि० छगनलाल,

[illegible] पत्र और तार दोनों मिले। अगर हेमचन्द निकम्मा हो गया हो या [illegible] कर [illegible] गया हो[1] तो गोकुलदाससे काम ले सकते हो। मेरी जोरदार सिफारिश तो यह है कि [illegible] नमिल विभागमें चला जावे। अगर वह जावे तो फिर मैं कल्यानदासको भेज [illegible]

[illegible] बहुत सस्ता है। मैं तुम्हारे अनुमतिपत्रकी कोशिश कर रहा हूँ और तु[illegible] जाने तक वह तुम्हें मिल जायेगा। मुझे बहुत खुशी है कि आखिर तुमने आना तय कर [illegible] है।

रेकामाबा-बेस हारमसजी ईदुलजीने १ पौंड ७ शिलिंग और ६ पेन्सका एक ड्राफ्ट भेजा है। वे लिखते हैं कि रसीद उन्हें सीधी प्रेससे मिले। तो तुम उन्हें इस रकमकी रसीद भेज देना। इसमें विज्ञापनका पैसा और चंदा दोनों शामिल हैं। उनकी शिकायत है कि कुछ दिनोंसे उनके पास पत्र नहीं पहुँचता। यह देख लेना।

तुमने लिखा कि तुमने एक टोकरी आड़ भेजे थे। अभीतक तो वे मुझे नहीं मिले हैं।

वीरजी इस महीनेके अन्त तक चले जायेंगे। उन्हें उनका वेतन नकद (कैश) या लिखकर और जहाजमें भोजनके लिए कुछ दे देना। मामूली तौरपर क्या दिया जाता है यह मैं नहीं जानता। तुम उनसे बात कर लेना। परन्तु बहुत दाम-दिरम करनेकी जरूरत नहीं है। इस महीनेके आखिरी दिन यह सब उन्हें मिल जाये।

तुम्हारा शुभचिन्तक
मो० क० गांधी

श्री छगनलाल खुशालचन्द गांधी
फीनिक्स

[अंग्रेजीसे]

मूल अंग्रेजी प्रतिकी फोटो-नकल (एस० एन० ४२६७) से।

१. देखिए "पत्र: छगनलाल गांधीको", पृष्ठ [illegible] २।

१७७ पत्र उपनिवेश-सचिवको

जोहानिसबर्ग
दिसम्बर २२, १९०५

महोदय

मैं परमश्रेष्ठका ध्यान उन दो अध्यादेशोंके मसविदोंकी ओर दिलाना चाहता हूँ जो इस मासकी १५ तारीखके ऑरेंज रिवर उपनिवेशके सरकारी गजट में प्रकाशित हुए हैं। उनके नाम ये हैं: पासोंके कानूनोंमें संशोधन करनेके लिए और "ऑरेंज रिवर कालोनीकी सीमाके भीतर या बाहर काम या मजदूरी करनेके लिए रंगदार लोगोंकी भरती या नियुक्तिका नियमन और नियन्त्रण करनेके लिए" अध्यादेशोंके मसविदे।

मेरा संघ इन दो अध्यादेशोंके विवरणोंका विस्तारसे जिक्र करना नहीं चाहता है, परन्तु परमश्रेष्ठका ध्यान इस तथ्यकी ओर दिलानेका साहस करता है कि ब्रिटिश भारतीयोंके "रंगदार लोगों" शब्दकी व्याख्याके अन्तर्गत आनेके कारण ये दोनों अध्यादेश उनपर भी लागू होते हैं। व्यावहारिक रूपमें इनमें से कोई अध्यादेश ब्रिटिश भारतीयोंपर लागू नहीं होगा। इसलिए मेरे संघका खयाल है कि उक्त व्याख्यामें व्यक्त अपमान नितान्त अहेतुक है।

इसलिए यदि परमश्रेष्ठ ब्रिटिश भारतीय संघकी तरफसे हस्तक्षेप करनेकी तथा इस अध्यादेशको आपत्तिजनक परिभाषासे, जो उपनिवेशको कोई लाभ तो पहुँचाती नहीं है, उल्टे ब्रिटिश भारतीयोंके लिए बहुत ही अपमानजनक है, मुक्त करनेकी कृपा करें तो मेरा संघ आभार मानेगा।

आपका आज्ञाकारी सेवक
अब्दुल गनी
अध्यक्ष
ब्रिटिश भारतीय संघ

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन ३०-१२-१९०५

१७८. फसल

फसल तो बेशक बहुत अच्छी है, परन्तु काटनेवाले थोड़े हैं। कार्यकर्ताओंके बिना बहुत-से काम करनेको पड़े हैं और उनमें से प्रत्येक परमावश्यक है। परन्तु यदि हमें यह चुनाव करना हो कि इन सबमें सबसे पहले कौन-सा काम करना चाहिये तो भारतीयोंमें शिक्षा प्रसारको स्थान सर्वप्रथम देंगे।

अब बड़े दिनकी छुट्टियाँ चल रही हैं। यह वर्ष शीघ्र ही समाप्त हो जायेगा। बहुत-से ब्रिटिश भारतीयोंके लिए जो इन सप्ताहोंमें पहले से भी गम्भीर आध्यात्मिक चिन्तनके अवसर होने चाहिए क्योंकि ईसाइयोंके लिए ये दिन पवित्रताके दिन होते हैं। इसलिए हम उन भारतीय युवकोंसे जो दक्षिण आफ्रिकामें ही जन्मे और शिक्षित हुए हैं और दक्षिण आफ्रिका ही जिनका घर है, इस ओर कोशिश करनेका आग्रह करना चाहते हैं। उनमें से जो शिक्षित

भारतीय युवकोंसे यह अपील करते हुए हम उनका ध्यान उन ज्ञानोज्ज्वल शब्दोंकी ओर आकर्षित करेंगे जो कि प्रोफेसर गोखलेने लंदन भारतीय समाज (लन्दन इंडियन सोसाइटी) के सामने श्री दादाभाई नौरोजीके और अपने सम्मानमें आयोजित एक स्वागत-समारोहके अवसरपर कहे थे। भारतके इस पितामहका उदात्त उदाहरण अपने श्रोताओंके सामने स्पष्टतासे प्रस्तुत करनेके पश्चात् उन्होंने कहा था

> हमें यह नहीं भूलना चाहिए कि हमारे चारों ओर बड़ी-बड़ी घटनाएँ घटित हो रही हैं और यदि हम संसारके इतिहासमें अपनी भूमिका पूरी करना चाहते हैं तो हमें अपने आपको उसके योग्य बनाकर दिखलाना होगा। मेरा खयाल है कि अब समय आ गया है जब कि हमारे कुछ युवकोंको अपने देशकी सेवाके लिए सर्वस्व निछावर कर देना चाहिए। हमारे सामने जो कार्य पड़ा है उसकी विशालताका यह जबरदस्त तकाजा है। यदि हम सब अपने-अपने धन्धोंमें लगे रहें अपना ध्यान मुख्यतः व्यक्तिगत स्वार्थोंमें लगायें और देशको भाग्य-भरोसे छोड़ दें तो काम जिस गतिसे चल रहा है उससे ज्यादा शीघ्रतासे न चलनेपर हमें शिकायत करनेका कोई अधिकार नहीं होगा। जबतक हमारे देशमें शिक्षाका व्यापक प्रसार नहीं होता — और शिक्षासे मेरा मतलब केवल शिक्षाकी प्रारम्भिक बातोंसे नहीं है बल्कि अपने अधिकारोंके अपने ज्ञानके और इन अधिकारोंके साथ जो जिम्मेदारियाँ लगी हैं, उनके ज्ञानसे है — जबतक इस शिक्षाका सर्वसाधारण जनतामें खूब प्रसार नहीं हो जाता तबतक हमारी आशाएँ अनिश्चित काल तक निरी आशाएँ ही बनी रहेंगी। इसलिए हमारी कठिनाइयोंका एकमात्र हल यह है कि हम ऐसी शिक्षाकी आवश्यकता — परम आवश्यकताको भलीभाँति समझ लें और हममें से जो इसका प्रसार करनेके योग्य हों वे अपना कर्तव्य समझकर आगे बढ़ें और इस कामको अपने कन्धोंपर उठा लें। मेरा खयाल है कि मात्र इससे अधिक देशभक्तिका काम दूसरा नहीं हो सकता। यही वह जिम्मेवारी है जो हमारे परम श्रद्धेय नेताके वचनोंसे हमपर पड़ी है और मैं साहसपूर्वक कहता हूँ कि देशको ऐसी आशा रखनेका अधिकार है कि उसके कुछ युवक — वे आरम्भमें भले ही थोड़े हों परन्तु उनकी संख्या निरन्तर बढ़ती जायेगी — कर्तव्यकी इस पुकारको पूरे ध्यानसे सुनेंगे और उसका प्रत्युत्तर देंगे। इतनी बात यदि पूरी हो जाये तो परिस्थिति समय-समयपर कितनी ही अन्धकारपूर्ण क्यों न प्रतीत हो अन्तमें हमारे प्रयत्न अवश्य सफल होंगे क्योंकि हमारी संख्या इतनी अधिक है कि यदि हम स्वयं ही न लड़खड़ा जायें तो संसारकी कोई भी शक्ति हमारी प्रगतिको नहीं रोक सकती।

स्मरण रखना चाहिए कि जो सचाई प्रोफेसर गोखलेके इन शब्दोंमें व्यक्त हुई है उसपर वे बीस वर्ष अपने जीवनमें अमल कर चुके हैं और इन शब्दोंमें एक भी बात ऐसी नहीं जो हम दक्षिण आफ्रिकी भारतीयोंपर लागू न होती हो। तो क्या कोई समयकी पुकार सुनकर आगे आयेगा? जो कमर कसकर कटनेको तैयार है वह प्रभूत और समृद्ध है।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन २१-१२-१९०५

१७९. नेटाल-सरकार रेल-प्रणाली और भारतीय

नेटाल-सरकार रेल-प्रणालीके कुछ स्टेशनोंपर भारतीय यात्रियोंको अनावश्यक असुविधाओंका सामना करना पड़ता है। इस सम्बन्धमें हमारे पास तीन भारतीयोंके हस्ताक्षरसे एक शिकायत आई है। उसे हम इस पत्रके गुजराती-स्तम्भोंमें प्रकाशित कर रहे हैं। पत्र-लेखकोंने लिखा है:

> हम आशा है कि आप हमारी शिकायतोंकी ओर अधिकारियोंका ध्यान खींचेंगे। ११ दिसम्बरको हमारे मित्र श्री वली आरिफ चार बजेकी डाक-गाड़ीसे जा रहे थे। हम विदा करनेके लिए पेनीन स्टेशनके प्लेटफॉर्मपर जाना चाहते थे परन्तु वहाँ एक कर्मचारीने हमें वहाँ जानेसे असभ्यतापूर्वक रोक दिया। जब हमने उससे पूछा कि क्यों रोकते हो उसने कठोरतासे जवाब दिया कि मैं तुम कुलियोंको नहीं आने दूँगा।

ऐसा ही और लिखा है। हम मानते हैं कि ऐसे अवसर हो सकते हैं जब यात्रियोंको विदा करनेके लिए मित्रोंको असीमित संख्यामें भीतर जाने देना सम्भव न हो परन्तु हमारा कहना है कि जब कभी लोगोंको प्लेटफॉर्मपर जानेसे रोका जाये उन्हें समुचित उत्तर पाने और कारण जाननेका अधिकार तो होना ही चाहिए। हमें निश्चय है कि रेल-प्रणालीके प्रबन्धकर्ता भी हमारी यह बात मानेंगे। आशा है कि इस मामलेकी जाँच की जायेगी और हमारे पत्र-लेखकोंने जिस व्यवहारकी शिकायत की है उसकी पुनरावृत्ति न होने दी जायेगी।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन २१-१२-१९०५

१८०. केपके भारतीय व्यापारी

पिछले सप्ताह हमारे केप-संवाददाताने भारतीय व्यापारियोंके प्रश्नपर लिखा था। हमें अपने पाठकोंको यह बतलानेकी आवश्यकता नहीं कि हमारे विशेष संवाददाताओंके लिए जरूरी नहीं कि वे इस पत्रके विचारों या नीतिके समर्थक ही हों। नियमानुसार हम किसी भी प्रश्नके सब पहलुओंको प्रकट करनेका यत्न करते हैं। यदि हमारे केप-संवाददाताने भारतीय व्यापारियोंके प्रश्नपर विस्तारसे चर्चा न की होती तो हमें इस बातपर और लिखनेकी जरूरत न पड़ती। हमारा विचार है कि छोटे भारतीय व्यापारियोंसे उपनिवेशको लाभ पहुँचा है। इस सम्बन्धमें हम हालमें सर जेम्स हुलेट और कुछ वर्ष पूर्व सर वाल्टर रैग स्वर्गीय सर हेनरी बिन्स और अन्य कई सज्जनों द्वारा प्रकट किये हुए विचारोंसे सहमत हैं कि छोटा भारतीय व्यापारी अपने वर्गके अपने साथी व्यापारीकी अपेक्षा बहुत अच्छा आदमी है, और वह एक बहुत बड़ी आवश्यकताकी पूर्ति करता है। इसलिए उसकी स्वतन्त्रतापर कोई भी पाबन्दी लगाना उसके साथ भारी अन्याय होगा और केपके भारतीयोंको चाहिए कि इस दिशामें जो भी आक्रमण किया जाये उसका वे डटकर मुकाबला करें।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन २१-१२-१९०५

१८१ हिन्दू-मुसलमानोंके बीच समझौता

श्री हाजी हबीबने इस विषयपर हमें एक पत्र लिखा है। उसे हम अन्यत्र प्रकाशित[1] कर रहे हैं। कराचीके महाजनोंके बारेमें उन्होंने जो-कुछ लिखा है वह यदि सही हो तो हमें खेद है। हम यह भी मानते हैं कि हिन्दुओंकी संख्या बड़ी होनेके कारण उन्हें अधिक नम्रतासे चलना है। श्री हाजी हबीबका कहना है कि अगर हिन्दू-मुसलमानोंके बीच एकता रही होती तो भारतीय कांग्रेस जिन-जिन अधिकारोंको माँगती है वे कभीके प्राप्त हो गये होते। यह हम भी मानते हैं।

इसमें कोई शक नहीं कि ऐसी बातोंमें सब कौमोंके मुखियोंको मिलकर कोई समझौता कर लेना चाहिए। और हमें ऐसे आसार भी नजर आ रहे हैं कि कुछ समयमें ऐसा होकर रहेगा।

फिर भी हम जो-कुछ इससे पहले कह गये हैं उस बातपर तो हमें जोर देना चाहिए। वह बात यह है कि दोनों कौमोंके बीच चाहे जैसा झगड़ा हो उसका इन्साफ तीसरेके हाथमें नहीं जाना चाहिए। भाई-भाई आपसमें लड़ मरें, यह बर्दाश्त करना ज्यादा आसान है। लेकिन दोनोंके पास जो कुछ हो वह तीसरा व्यक्ति ले जाये यह बर्दाश्त नहीं किया जा सकता। हम सबकी भावना इसी तरहकी होनी चाहिए। जैसाकि जनाब रसूलने बताया है तीसरे आदमीके बीचमें पड़नेसे झगड़नेवालोंमें से किसीको भी फायदा होना सम्भव नहीं है।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन २३-१२-१९०५

१८२ ईश्वरकी लीला अद्भुत है

एक रोचक कहानी

बड़े दिनके अवसरपर तमाम यूरोपमें तरह-तरहकी पुस्तिकाएँ प्रकाशित होती हैं। उनमें बहुतसी जानने योग्य बातें होती हैं। इंग्लैंडके प्रख्यात श्री स्टैडने जो पुस्तिका प्रकाशित की है उसमें उन्होंने काउंट टॉल्स्टॉयका जीवन-वृत्तान्त दिया है। हम इस पत्रमें काउंट टॉल्स्टॉयका परिचय दे ही चुके हैं। वे यद्यपि धनपती हैं, फिर भी अत्यन्त गरीबीकी हालतमें रहते हैं। संसारमें उन जैसे विद्वान बहुत कम हैं। उन्होंने जो कुछ लिखा है वह बतानेके लिए कि मनुष्योंका

१. ३०-१२-१९०५ के अंकमें।

२. श्री हाजी हबीबने शिकायत की थी कि हिन्दू व्यापारियोंने मुसलमान व्यापारियोंके लिए बी-एक-सिमें चन्दा देना अनिवार्य कर दिया है।

३. "नटाल "में प्रकाशित समाचारके अनुसार, श्री ए. रसूलने मुसलमानोंकी एक आम सभाकी अध्यक्षता करते हुए बंगालके हिन्दुओं और मुसलमानोंसे अपील की थी कि वे बंग-भंग और स्वदेशी-आन्दोलन सहित सभी मामलोंपर एक हो जायें।

४. ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस द्वारा प्रकाशित अंग्रेजी अनुवाद — टॉल्स्टॉय सेन्टनरी एडीशन (टॉल्स्टॉय शताब्दी संस्करण)— में इस कहानीका शीर्षक "गॉड सीज़ दि ट्रुथ बट वेट्स" दिया गया है।

५. देखिए "काउंट टॉल्स्टॉय" पृष्ठ ५९-६।

जीवन किस प्रकार सुधर सकता है। इस दृष्टिसे उन्होंने छोटी-छोटी कहानियाँ भी उनमें से एक अच्छी मानी जानेवाली कहानीका अनुवाद हम नीचे दे रहे हैं। उसका है जो हमने इस लेखके शीर्षकमें दिया है। इस कहानीके सम्बन्धमें हम अपने पाठकोंसे चाहते हैं। यदि यह पाठकोंको पसन्द आयी और इससे फायदा मालूम हुआ तो हम ऐसी और कहानियाँ भी देंगे। कहा जाता है कि इस कहानीकी मूल घटनाएँ सच्ची हैं।

[इसके बाद मूल अंग्रेजी कहानीका गुजराती अनुवाद दिया गया है।]

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन २१-१२-१९५

१८३. पर्यवेक्षण

इस समय दक्षिण आफ्रिकाके भारतीय मामलोंकी स्थितिका पर्यवेक्षण किया जा रहा है। य ... िकाला ही इसलिए गया है, और इस स्थितिको सुधारना ही इसका उद्देश्य है।

हम चाहते तो यह थे कि अपने पाठकोंके सामने उत्साहवर्धक तस्वीर पेश कर सकें, परन्तु परिस्थितियाँ जैसी हैं उनमें ऐसा नहीं हो सकता। भारतीयोंके भाग्यमें ही बेइज्जत करना, दुःख सहना और बाट जोहते रहना बदा है और हम यह नहीं कह सकते कि गत वर्ष वे अपनी कुछ बोझ उतार फेंकनेमें सफल हो गये। नेटाल ट्रान्सवाल केप या ऑरेंज रिवर कालोनी, चाहे जिसे देखें हमें ऐसी किसी बातकी याद नहीं आ सकती जिसकी गिनती सफलताओंमें का सके। हमें जो लेखा पेश करना है, वह नये घाटेको रोकनेका लेखा है। भारतीय शक्ति नई दस्तन्दाजीको रोकनेमें ही लगी है।

नेटालमें मानो भारतीयोंके लिए मानव-जनित कष्ट ही पर्याप्त नहीं थे स्वयं प्रकृति भी उनके लिए क्रूर सिद्ध हुई है। भारतीयोंमें ही सबसे अधिक लोग भयंकर बाढ़के शिकार हैं। इस विपत्तिमें जिन लोगोंकी जानें गई हैं उनकी कुछ संख्यात्मक क्षति तो शायद कभी नहीं भरेगा। परन्तु इससे यह प्रकट हो गया कि भारतीय क्या कर सकते हैं। भारतीय समाजके नेताओंने ही प्रायः सारा सहायता-कार्य हाथमें लिया और कुशलतापूर्वक सम्पन्न किया था।

नागरिकताके मामलोंमें — राजनीतिक स्वतन्त्रता तो नेटालमें भारतीयोंको है ही नहीं — विक्रेता-परवाना अधिनियम पूर्ववत् कष्टका सबसे बड़ा कारण बना हुआ है। डुंडीका[1] और दादा उस्मानके[2] दो मामले इसके प्रमुख उदाहरण हैं। उनसे भली भाँति स्पष्ट हो जाता है कि नेटालमें प्रत्येक भारतीय व्यापारीकी स्थिति कितनी अनिश्चित है।

नगरपालिका कानून सुधारक विधेयक (म्यूनिसिपल लॉज कन्सॉलिडेशन बिल) भारतीयोंको नगरपालिका मताधिकारसे वंचित कर देता है। व्यक्ति-कर कानून लागू तो सबपर होता है परन्तु उसका सबसे अधिक विपरीत प्रभाव भारतीयोंपर ही पड़ता है। प्रवासी-प्रतिबन्धक अधिनियमका प्रयोग बहुत कठोरतासे किया जा रहा है और जैसा कि इस पत्रके स्तम्भोंमें हालमें ही प्रमाणित किया गया है, भारतसे नेटालमें आनेवाले भारतीय यात्रियोंकी अवस्था भी किसी प्रकार ईर्ष्यायोग्य नहीं है।

१ देखिए खण्ड ४ पृष्ठ १ १ ३१५ और ३३० ।
२ देखिए खण्ड ३ पृष्ठ १८ ।

केपका सरकार प्रवासी-अधिनियमकी प्रतिबन्धक धाराओंकी गलत व्याख्या करके भारतीय व्यापारियोंको अधिकाधिक जकड़ती जा रही है। “अधिवासी” शब्दकी व्याख्या इस प्रकार की गई है कि पुराने बसे हुए भारतीय व्यापारी तक उस गिनतीमें न आने पायें। प्रसन्नताकी बात इतनी ही है कि सर्वोच्च न्यायाध्यक्षने रक्षा कर ली है, और अब इन व्यक्तियोंके लिए उप-निवेशमें फिर प्रवेश करना या वहाँ बने रहना सम्भव हो गया है।

ट्रान्सवालमें जहाँ कि मुख्य संघर्ष चल रहा है, स्थिति वैसी ही अनिश्चित है जैसी कि गत वर्ष थी। भारतीयोंका जो शिष्टमण्डल लॉर्ड सेल्बोर्नसे मिला था उसे वे कोई निश्चित उत्तर नहीं दे सके हैं। हाँ उन्होंने शान्ति-रक्षा अध्यादेशके अमलसे उत्पन्न शिकायतोंको दूर करनेका वचन दिया है।

जहाँतक ऑरेंज रिवर कालोनीका सम्बन्ध है, कुछ महीने पूर्व लॉर्ड सेल्बोर्नने ब्रिटिश भारतीय संघके[1] प्रार्थनापत्रका जो उत्तर दिया था उससे प्रकट होता है कि इस उपनिवेशके द्वार भारतीयोंके लिए — वे चाहे कोई भी क्यों न हों — अब भी नहीं खोले जायेंगे।

परन्तु भारतीय जनताके सामाजिक जीवनमें उन्नतिके लक्षण स्पष्ट दिखाई देते हैं। लोगोंमें परस्पर अधिक मिलकर काम करने और भारतीय युवकोंको अधिक अच्छी शिक्षा देनेकी उत्सुकता है। श्री अल्बर्ट क्रिश्चियन प्रथम भारतीय हैं जिन्हें उपनिवेशमें जन्म लेनेपर भी ऊँची शिक्षा मिली है और जो इंग्लैंडसे बैरिस्टर बनकर आये हैं। समाजको अधिकार है कि वह उनसे अच्छे कामकी आशा रखे।

प्रोफेसर परमानन्दका आगमन और यहाँ हुआ उनका स्वागत इस बातके सूचक हैं कि भारतीय समाज चाहता है कि शिक्षित और सुसंस्कृत भारतीय उसके बीच ज्यादा आयें। आशा है कि समाजकी यह इच्छा निकट-भविष्यमें ही कार्यान्वित हो जायेगी और समाजकी शिक्षा सम्बन्धी आवश्यकताएँ स्वयं ही पूरी करनेकी दिशामें केन्द्रित प्रयत्न किये जाने लगेंगे।

यह पर्यवेक्षण निराशापूर्ण तो बहुत है परन्तु इसमें आशाके चिह्नोंका अभाव नहीं है। अनिवार्य पृथक्करणके सिद्धान्तकी स्थापना करके भारतीय समाजको नीचा दिखानेके प्रयत्न बार बार किये जानेपर भी अबतक असफल रहे हैं। समाचारपत्र भारतीय शिकायतोंको पहलेसे अधिक मुस्तैदीसे प्रकाशित करने लगे हैं। भारतीयोंसे स्वयंसैनिकका काम लिया जानेका प्रश्न पहले उठाया तो हमने था परन्तु अन्य समाचारपत्रोंने भी उसका अच्छा स्वागत किया।

नेटाल जेल-आयोगके सामने गिरमिटिया भारतीयोंकी दशाके विषयमें जो बातें प्रकट की गई थीं उनका भी नेटाली पत्रों द्वारा कुछ प्रचार हुआ है और यद्यपि स्वयं ये घटनाएँ असलियतको बहुत कम प्रकट करती हैं तथापि इतना तो निश्चित रूपसे बतला ही देती हैं कि समाजको उसी मार्गपर चलना होगा जो उसने संघर्षके आरम्भ होनेपर अपने लिए निर्धारित कर लिया था अर्थात् संघर्षको औचित्यके साथ — जैसा कि लॉर्ड सेल्बोर्नने भी माना है — धैर्यके साथ और फिर भी दृढ़तासे जारी रखना।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, १-१२-१९०५

1. देखिए “ट्रान्सवालके भारतीयोंका आवेदन”, पृ० ११-३।

हम जिम्मेदार अधिकारियोंका ध्यान उन कुछ अध्यादेशोंकी असंगतियोंकी ओर, जो ऑरेंज रिवर कालोनीके १४ दिसम्बर १९०५के सरकारी गजट में प्रकाशित हुए हैं, और कुछ नगर-नियमोंकी ओर आकृष्ट करना चाहते हैं। प्रथम अध्यादेशका शीर्षक है, "परवानोंके अनुसूचित न करनेके लिए"। इसके अनुसार प्रत्येक रंगदार व्यक्तिको एक निश्चित अवधि तक अपने परवाना रखना पड़ेगा जो समय-समयपर फिर नया कराना पड़ा करेगा। एक और ऑरेंज रिवर कालोनीकी सीमाके भीतर या बाहर, काम या मजदूरी करनेके लिए रंगदार भरती या नियुक्तिका नियमन और नियन्त्रण करनेके लिए है। जिन व्यक्तियोंको रंगदार मजदूर उपलब्ध कर सकेंगे वह है मजदूर एजेंटोंका परवाना लेना। मजदूर भरती करने उन्हें दूसरोंको देने और उनकी व्यवस्था करनेके लिए रख सकेंगे। उन इकरारोंको भी ५ शिलिंगका परवाना लेना होगा। मजदूर एजेंटोंको परवाने दिये जायेंगे उन्हें नियमित करनेवाली धाराओंके अतिरिक्त इस अध्यादेशमें परवानोंका दुरुपयोग अथवा मजदूर एजेंटों द्वारा गलत इस्तेमाल रोकनेके लिए भी साधारण सावधानियाँ बरती गई हैं। हमारा खयाल है कि दक्षिण आफ्रिकामें काफिरोंको काम करनेके लिए राजी करनेको इस प्रकार मजदूर एजेंट नियत करनेका रिवाज ही एक बुराई है। कुछ लोग तो इस रिवाजको नरमीसे समझाने-बुझानेका नाम देते हैं और दूसरे इसे वेगारका सुधरा हुआ रूप बतलाते हैं। जो नीति इतने लम्बे अरसेसे चली आ रही है उसकी आलोचना हम नहीं कर सकते और वैसा करना हमारे क्षेत्रका विषय भी नहीं है। परन्तु दुर्भाग्यवश, सदा रंगदार व्यक्ति शब्दोंका जो मतलब ऑरेंज रिवर कालोनीमें समझा जाता है वह है: वे रंगदार व्यक्ति जो कानून या रीति-रिवाजके अनुसार रंगदार कहलाते हों या जिनके साथ ऐसा व्यवहार किया जाता हो फिर उनकी जाति या राष्ट्रीयता चाहे कुछ भी हो। इसलिए इन शब्दोंमें एशियाई मलय और दूसरे लोग भी आ जाते हैं। उपर्युक्त दोनों अध्यादेश, इस कारण अत्यन्त आपत्तिजनक हैं। हम समझ नहीं सकते कि इन शब्दोंमें निहित चोखा-खासा अपमान जारी रखकर चीज क्या बढ़ाई जाती है। ब्रिटिश भारतीय उसकी बजाय ऐसे हर लोंद मन्त्रोंमेंने माना है कि ऑरेंज रिवर कालोनीमें बहुत कम हिन्दुस्तानी हैं। इस स्थितिमें यह आपत्तिजनक परिभाषा क्यों कायम रखी जानी चाहिए? यदि व्यवहारमें इसका उपयोग कुछ नहीं है तो इसे जारी रखनेका एकमात्र प्रयोजन ऑरेंज रिवर कॉलोनीके निवासियोंका यह स्वैर मानस हो सकता है जो कि उन्हें एशियाई जातियोंको इस प्रकार अपमानित और पददलित और अपने आपको विजेता माननेमें मिलता है। ये वही महानुभाव हैं जो स्वराज्यके आन्दोलनमें भारतीयोंके विषयमें यह कहकर शून्य हुआ करते थे कि वे अपनी स्त्रियोंको आत्माविहीन समझते हैं और उन स्त्रियोंकी बीमारियोंके लिए अस्पताल हैं जिनसे वे पीड़ित हैं। क्या मूर्खता तथा अज्ञानपूर्ण पूर्वग्रहकी यह आग सुलगाते रहना अधिकारियोंके लिए उचित है?

हमने ऊपर नगर-नियमोंका भी जिक्र किया है। हम देखते हैं कि ब्लूमफॉंटीन और हैरिस्मिथ जैसे सुन्दर नामवाले दोनों नगरोंकी नगरपालिकाओंमें वही पुरानी कहानी दुहराई जा रही है। ये नियम वैसे ही हैं जैसे हमने बहुधा इन स्तम्भोंमें प्रस्तुत किये हैं। इनमें रंगदार लोगोंका और यहाँ तक कि उनके ढोरों घोड़ों गदहों और भेड़-बकरियोंका भी आवागमन

करता हूँ कि ऑरेंज रिवर उपनिवेशकी विधि-संहितामें पहलेसे ही एक ऐसा विधेय जिसका प्रभाव एशियाइयोंपर, इसलिए ब्रिटिश भारतीयोंपर भी पड़ता है।

आपका आज्ञाकारी
अनुयायी
सेवक
ब्रिटिश भारतीय।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, २-१-१९०९

१८९. पत्र म० ही० नाजरको

[जोहानिसबर्ग]
जनवरी ५, १९०९

प्रिय श्री नाजर,

मैं हिन्दी और तमिलके सम्पादनके प्रश्नपर ध्यानपूर्वक चर्चा करता हूँ। मैं देखता रहा हूँ जितनेको तो जाना ही होगा। उसकी जगह लेनेवाला कोई है नहीं। मैं जितना सोचता हूँ उतना अधिक यही लगता है कि फिलहाल हमें हिन्दी और तमिल दोनोंको बन्द कर देना चाहिये। हम ठीक सामग्री नहीं देते। हम ऐसा करनेकी स्थितिमें ही नहीं हैं। मैं जानता हूँ कि इसमें बाधाएँ हैं। किन्तु मुझे लगता है बाधाओंको स्वीकार कर लेना चाहिए क्योंकि हिन्दी और तमिल छोड़नेके लाभ भी बहुत होंगे। जब हम ऐसा निश्चित वक्तव्य दे चुके हैं कि ठीक कार्यकर्ताओंके मिलते ही हम फिरसे हिन्दी और तमिल विभाग शुरू करनेका इरादा करते हैं, तबतक मेरी समझमें डरनेकी कोई बात नहीं है। मैं कुछ तमिलोंको कामके लिए तैयार करनेकी पूरी कोशिश कर रहा हूँ। मगनलाल और छोटालाल भी यही चाहते हैं किन्तु उस वक्ततक तो मेरे खयालसे दोनों स्थगित कर देना बहुत जरूरी है। तमिल तो हर हालतमें छोड़नी है तब हिन्दी भी उसके साथ चली जाये। इस बारेमें जितनी जल्दी बने अपनी राय देनेकी कृपा करें।

आपका शुभचिन्तक

श्री मनसुखलाल हीरालाल नाजर
पो० ऑ० बॉक्स १८२
डर्बन

दफ्तरी अंग्रेजी प्रतिकी फोटो-नकल (एस० एन० ४२९५) से।

पिछले हफ्ते हमने अभी समाप्त सालमें दक्षिण आफ्रिकी भारतीयोंकी स्थितिका पर्यवेक्षण[1] किया था। इस हफ्ते हम भविष्यमें पैठकर देखना चाहते हैं कि सुखतर आशाकी कोई सम्भावना है या नहीं। हमारा खयाल होता है ऐसी सम्भावना है। पहले तो इसलिए कि भारतीय पक्ष न्यायपूर्ण है और हर न्यायपूर्ण पक्ष अपना बल आप ही होता है। अतएव स्वयं भारतीय ही उसको अपनी निराशा और तज्जनित निष्क्रियतासे नष्ट कर सकते हैं। दूसरे, यद्यपि लॉर्ड सेल्बोर्नने अपनी ब्रिटिश भारतीय-सम्बन्धी नीतिका कोई संकेत नहीं दिया है फिर भी उन्होंने सम्राटकी सम्पूर्ण प्रजाकी निष्ठापूर्वक सेवा करनेकी इच्छा व्यक्त की है। उनकी यह इच्छा इस बातकी आशा रखनेका एक बहुत अच्छा आधार है कि जब ट्रान्सवालमें वास्तविक कानून बनेगा तब वे उसे ऐसा रूप दे देंगे जिससे कमसे-कम वर्तमान असहनीय अनिश्चितता तो समाप्त हो ही जायेगी और वर्तमान एशियाई कानूनमें निहित मनमाने अपमानका भी अन्त हो जायेगा। अगर ट्रान्सवालमें ऐसी हालत कायम हो जायेगी तो शायद यह खयाल करना अनुचित न होगा कि इससे दक्षिण आफ्रिकाके दूसरे हिस्सोंमें भी भारतीयोंकी स्थिति एक हद तक सुधर जायेगी क्योंकि अन्य आफ्रिकी उपनिवेश ट्रान्सवालका अनुकरण करते हैं। किन्तु हमें अधिकार है कि हम सबसे पहले हम नई ब्रिटिश सरकारसे स्थितिमें सुधारकी आशा करें। श्री जॉन मॉर्ले[2] कोटि-कोटि भारतीयोंके हितोंके रक्षक हैं। हमारे पास यह खयाल करनेका पर्याप्त आधार है कि यह सरकार अगले आम चुनावको झेल ले जायेगी और ब्रिटिश लोकसभामें अच्छा-खासा कामचलाऊ बहुमत प्राप्त कर लेगी। श्री जॉन मॉर्लेने जिस कामको भी हाथमें लिया है उसको अबतक कभी बेमनसे नहीं किया है। सभी जानते हैं कि उनकी सहानुभूति दुर्बल पक्षके साथ रहती है। इसलिए वे दक्षिण आफ्रिकी भारतीयोंकी विनम्र अपीलको अवश्य ही भली भाँति सुनेंगे। स्वशासित उपनिवेशोंकी स्वतन्त्रतामें हस्तक्षेप कितना ही अकर्तव्य क्यों न हो दुर्बल पक्षपर बलवान पक्षके अत्याचारको रोकनेका उपाय अवश्य ही उनके हाथमें है। और यह आशा करनेका आधार भी है कि लॉर्ड एलगिन[3] ब्रिटिश भारतीयोंके हितोंका बलिदान न करेंगे। परन्तु, अवश्य ही सबसे ज्यादा जरूरी है भारतीय समाजका आन्तरिक प्रयत्न। हमने बाह्य परिस्थितियोंकी ओर संकेत यह दिखानेके लिए किया है कि दक्षिण आफ्रिकामें ब्रिटिश भारतीयोंकी स्थिति बिलकुल खराब नहीं है किन्तु उस स्थितिमें किसी प्रकारके सुधारका प्रमुख उपाय स्वावलम्बन ही हो सकता है। जबतक स्वयं भारतीय हार्दिक सहयोग न दें तबतक कोई भी उपनिवेश-मंत्री या भारत-मंत्री या [illegible] भारतीयोंकी कोई खास भलाई नहीं कर सकता चाहे वह उनसे कितनी ही सहानुभूति रखता हो और उनकी कितनी ही सहायता करना चाहता हो। भारतीयोंको अपनी लड़ाई लड़नेमें अपने उद्देश्यकी उपयोगिता, सहकार और अथक श्रमका परिचय देना ही चाहिए। हमारे गुजराती स्तम्भोंसे प्रकट है कि समस्त दक्षिण आफ्रिकामें लोग इन गुणोंको अधिकाधिक मात्रामें प्राप्त करनेकी आकांक्षा रखते हैं। आज बंगालमें जो कुछ हो रहा है उससे हमें अधिक प्रयत्न करनेका पर्याप्त प्रोत्साहन मिला है। उस प्रान्तके भारतीय अत्यन्त प्रतिकूल परिस्थितियोंमें भी सहकार, आत्मत्याग और धैर्यकी अभूतपूर्व मात्रामें

१ देखिए "[illegible]" पृष्ठ १०९–७।
२ (१८३८–१९२३) भारत-मन्त्री १९०५–१०।
३ [illegible] मन्त्री, १९०५–८।
४ यह [illegible] के लिए [illegible] की ओर है।

एक स्पष्ट उत्तर दिया। तबसे बराबर जोरदार कोशिशें की जाती रही हैं और उनका नतीजा यह निकला है कि लॉर्ड कर्जनने भारतीय जनताको सब स्थिति बताना मुनासिब समझा और पिछले बजट सम्बन्धी भाषणके अवसरका उपयोग इस मामलेकी गोपनीयताको भंग करनेमें किया (यद्यपि नेटाल सरकार न जाने किस कारण इसकी गोपनीयताकी रक्षा अब भी दृढ़ताके साथ कर रही है)। उन्होंने इस मामलेमें अपनी सरकारका रुख और रवैया सार्वजनिक रूपसे घोषित कर दिया। इस तरह अपने संरक्षणमें स्थित करोड़ों लोगोंको लॉर्ड कर्जनने यह संतोष प्रदान किया कि वे और उनके सलाहकार स्थितिकी गम्भीरताके प्रति पूर्णरूपसे सजग हैं और सम्राट्के उन लाखों वफादार और प्यारे प्रजाजनोंके हकमें इन्साफ हासिल करनेके प्रयत्नोंमें कोई भी कसर बाकी न रखेंगे जो साम्राज्यके अन्दर अपनी साम्पत्तिक स्थिति सुधारनेके अभिप्रायसे इन उपनिवेशोंमें आये हैं।

उस अवसरपर लॉर्ड कर्जनने अपनी महत्त्वपूर्ण घोषणामें ये शब्द कहे थे

> हमने नेटाल सरकारको सूचित कर दिया है कि उस उपनिवेशमें प्रवासके बारेमें जो भी कार्रवाइयाँ हमें जरूरी मालूम हों उन्हें किसी भी समय करनेका हम अपना पूरा अधिकार सुरक्षित रखते हैं। हेतु यह है कि हमारे भारतीय प्रवासियोंके प्रति उचित व्यवहार किया जाये। और हमने हालमें ही गिरमिटके अन्तर्गत मजदूरोंका प्रवास सरल बनानेकी कार्रवाइयोंमें तबतक योग देनेसे पुनः इनकार कर दिया है जबतक कि नेटालके अधिकारी अपने रुखमें बहुत-कुछ सुधार नहीं कर लेते।

लेकिन इस मामलेमें एक मुद्देकी बात है — और वह मुख्य बात है — जिसपर अभी तक काफी जोर नहीं दिया गया है। ऐसा जान पड़ता है कि दक्षिण आफ्रिकाके ब्रिटिश भारतीयोंके प्रति व्यवहारके प्रश्नको जोरोंकी सतहसे जरा भी ऊपर नहीं उठाया गया है और नेटाल सरकारने गिरमिटकी शर्तोंके अन्तर्गत विशेष सेवाओंके परे ब्रिटिश प्रजाके रूपमें भारतीयोंके अधिकारोंकी भी यथासम्भव उपेक्षा की है और भारत सरकारने भी इस पहलूपर यथोचित जोर नहीं दिया है। लॉर्ड कर्जनने यह माना है कि दक्षिण आफ्रिकामें भारतीयोंके प्रति सामान्यतः अधिक अच्छा बरताव प्राप्त करनेके लिए गिरमिटियोंकी जरूरत हमारे हाथमें एक प्रबल साधन सिद्ध हो सकती है परन्तु जैसा हमने कहा है इस रियायतका अर्थ होगा जोर जबर्दस्तीसे कुछ राहत पाना न कि उच्च साम्राज्यीय भावनाके आधारपर। इससे तो यह प्रतीत होता है कि अगर गिरमिटिया मजदूरोंकी उपलब्धि बन्द कर दी जाये तो भारत सरकार अपने दक्षिण आफ्रिकावासी प्रजाजनोंकी रक्षा करनेमें अपनेको असहाय अनुभव करेगी। यदि ऐसी बात हो तो ब्रिटिश भारतीयोंकी स्थिति सचमुच सोचनीय हो जायेगी। लेकिन ब्रिटिश झंडेके नीचे ऐसा होना बहुत ही असंगत होगा। इस समय हमें श्री जॉन मॉर्ले जैसे ईमानदार और बहुत ही योग्य भारत-मन्त्री मिले हैं और लॉर्ड एलगिन जैसे उदार-विचार तथा परम अनुभवी राजनीतिज्ञ उपनिवेश-मन्त्री जो स्वयं भारतके वाइसराय भी रह चुके हैं। जब हम याद करते हैं कि भारतके वर्तमान वाइसराय लॉर्ड मिंटो कभी कैनडाके गवर्नर-जनरल थे तब उचित रूपसे यह आशा की जा सकती है कि ब्रिटिश भारतीयोंके दर्जेका सवाल निकट भविष्यमें ही निश्चित और संतोषजनक रूपसे हल हो जायेगा।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, ६–१–१९०६

इससे भी एक कदम आगे जा सकते हैं और कह सकते हैं कि निर्धनतम व्यक्ति कर चुकानेके लिए बीज-खादके निमित्त अपना धन गिरवी रखकर रुपया प्राप्त कर सकता है। परन्तु हम यहाँ यह बता दें कि इस कानूनकी धारा १४ (४) के अनुसार,

> जो व्यक्ति यह साबित कर देगा कि वह गरीबीके कारण कर नहीं चुका सकता वह फिलहाल इस करसे मुक्त कर दिया जायेगा किन्तु बादमें कर चुकाने योग्य होनेपर भी यदि वह कर नहीं चुकायेगा तो सरकार उसके इस बहानेके कारण उसपर मुकदमा चलाने या उसके विरुद्ध कार्रवाई करनेसे न रुकेगी।

इसलिए ऐसा प्रतीत होता है कि वे लोग जिनकी स्थिति ऐसी है जैसी संवाददाताने बताई है, अपनेको गरीब बता सकते हैं और बादमें अपनी फसलोंकी बिक्रीसे कर चुका सकते हैं। उन्हें अपनी कच्ची फसलोंपर कर्ज लेने (और देना ब्याज देने) की जरूरत नहीं होगी क्योंकि कानूनमें ऐसी ही अनिश्चित स्थितिके लिए व्यवस्था की गई है।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन २-१-१९६

१९४ मनसुखलाल हीरालाल नाजर[1]

दिसम्बर १८९६ के दुःसमयमें जब मनसुखलाल हीरालाल नाजर डर्बनमें उतरे तब वे बिलकुल अजनबी थे। वे यहाँ शान्तिपूर्ण जीवन बिताना चाहते थे परन्तु जब उन्होंने देखा कि उस कठिन कालमें उनके स्वदेशवासियोंको पथप्रदर्शककी आवश्यकता है तो उन जैसा देशभक्त चुप बैठा न रह सका। उस समय डर्बनमें भारतीय-विरोधी प्रदर्शन जोरपर था। भारतीयोंके प्रवेशके खिलाफ नगर सभा भवनमें विरोध सभाएँ की गईं। नादरी तथा कूरलैंड[2] जहाजोंके भारतीय मुसाफिरोंको धमकियाँ दी गईं कि वे नेटालके तटपर उतरनेका प्रयत्न करेंगे तो परिणाम भयानक होगा। तभी नाजर घटना-स्थलपर पहुँचे और भारतीयोंने उनका स्वागत अपने नेताके रूपमें किया। कोई भी नहीं जानता था कि वे कौन हैं किन्तु भारतीय नेता उनके आकर्षक व्यक्तित्वसे और उस अधिकारमय ढंगसे जिससे वे लोगोंके तत्कालीन कर्तव्यके बारेमें बोलते थे तुरन्त उनकी ओर आकर्षित हो गये। यह कहना कठिन है कि यदि श्री नाजर उस समय न आये होते तो भारतीय समाजने क्या किया होता। वे श्री लॉटन साथ जो भारतीयोंके सलाहकारके रूपमें काम कर रहे थे आवश्यक परामर्श करते रहे और मुझे खुद श्री लॉटनने बताया है कि *श्री नाजरने उस समय* उनको जो सहायता और सलाह दी वह अत्यन्त मूल्यवान सिद्ध हुई। उस दिनसे लेकर मृत्यु पर्यन्त श्री नाजरने सदा लोकहितको अपने हितोंके मुकाबले पहला स्थान दिया। उनका एकान्त जीवन बितानेका स्वप्न कभी पूरा नहीं हुआ और यद्यपि लोगोंको यह जाननेका मौका कभी नहीं मिला परन्तु अपने देश-बन्धुओंके हितार्थ व मरते दम तक कंगाल ही रहे। वे कभी-कभी बहुत दिनों तक लगातार डर्बनसे दूर मिडलड्रमट[3] एक एकान्त

१ जनवरी २, १९०६ को स्वर्गवास हुआ।
२. देखिए खण्ड १, पृष्ठ १६६ और आगे।
३ उनका वह कस्बा।

उन्होंने एकसे अधिक बार यूरोपका भ्रमण किया था। किन्तु उनको वहाँ व्यापारिक मामलोंमें वांछित सफलता नहीं मिली। इसलिए वे दक्षिण आफ्रिकामें आ गये। उन्होंने नेटालको अपना देश बना लिया था और यहाँ उन्होंने जो कुछ किया वह सबको मालूम ही है। वे अपने व्यवसायका विकास करनेके बजाय तन-मनसे सार्वजनिक कामोंमें जुट पड़े। १८९७ में वे ब्रिटिश भारतीयोंकी शिकायतोंको व्यक्त करनेके लिए विशेष प्रतिनिधि बनाकर इंग्लैंड भेजे गये। वहाँ वे स्वर्गीय सर विलियम विल्सन हंटर[1] सर लेपेल ग्रिफिन[2] माननीय दादाभाई नौरोजी सर मंचरजी भावनगरी और दूसरे कई आंग्ल-नेताओंसे मिले। सर विलियम हंटर तो श्री नाजरकी योग्यता और सौम्यतासे इतने अधिक प्रभावित हुए कि उन्होंने टाइम्स में श्री नाजरके कार्यका जिक्र करते हुए एक विशेष लेख लिखा। स्वर्गीय लॉर्ड नॉर्थब्रुक लॉर्ड रे तथा दूसरे आंग्ल भारतीयोंने धीरजसे उनकी बातें सुनीं और उनके परिश्रमका फल यह निकला कि पूर्व भारत संघने बड़ी सरगर्मीसे ब्रिटिश भारतीयोंके मामलेको हाथमें ले लिया। मैं इस सम्बन्धमें श्री नाजरके कार्यपर जोर देना नहीं चाहता। मैं कोई मतभेदकी बात कहना नहीं चाहता। उनका सबसे अधिक अमर काम तो गुप्त रूपसे ही किया गया था और वह काम था दक्षिण आफ्रिकाकी दो जातियोंके बीच पारस्परिक सद्भावके कोमल पौधेका सींचना। उन्होंने दोनोंके बीच कड़ीका काम किया। वे एक ऊँचे दर्जेके राजनीतिज्ञ थे। उनकी प्रवृत्ति उत्तेजना फैलानेकी तनिक भी न थी। उनका सब कार्य शान्तिपूर्ण होता था। वे एक जातिकी खूबियाँ दूसरीको बताया करते थे। उन्होंने हर मौकेपर अपने देश-बन्धुओंके अधिकारोंकी जोरदार वकालत की परन्तु साथ ही उनका ध्यान उनकी जिम्मेदारियोंकी ओर भी खींचा और उनको सदा बुद्धिमत्ता और धीरजसे काम करनेकी सलाह दी। वे विशेष रूपसे गरीबोंके मित्र थे। भारतीयोंके सबसे गरीब वर्गको उनके रूपमें एक सच्चा सलाहकार और मित्र मिला था। उन दिनों जब नेटाल भारतीय आहत-सहायक दलका संगठन किया गया तब उनको दिलकी बीमारी थी। इसलिए उनको मित्रोंने यह सलाह दी कि उनके काममें उनका अमली हिस्सा लेना जरूरी नहीं है। परन्तु उन्होंने किसीकी नहीं सुनी और उसके लिए सदस्यके रूपमें अपनी सेवाएँ अर्पित कीं। वहाँ उन्होंने अपने चिकित्सा शास्त्र-ज्ञानका एक सत्कार्यमें प्रयोग किया।

उनकी मददके बिना यह पत्र कभी न निकल पाया होता। श्री नाजरने इसकी प्रारम्भिक संकटावस्थामें लगभग समस्त सम्पादकीय भार अपने ऊपर ले रखा था और उन्होंने इसके सम्बन्धमें जो कार्य किया बहुत कुछ उसके कारण ही यह पत्र उदार नीति और गम्भीर विचारोंके लिए प्रसिद्ध है।

मेरा कथन है कि वे एक सच्चे त्यागी और विश्व-प्रेमी हिन्दू थे जो जाति और धर्म सम्बन्धी भेदोंको मानते ही न थे। इससे जो भारतीय इस विवरणको पढ़ेगा वह भली भाँति समझ जायगा कि वे क्या थे। उनका जीवनमें शान्ति देनेवाली एक-मात्र पुस्तक थी भगवद् गीता। उनको उसके तत्त्वज्ञानसे प्रेरणा मिली थी। मूल गीता उनका लगभग कण्ठस्थ थी और इस लेखकको व्यक्तिगत यह निजी जानकारी है कि वे गीताकी शिक्षाओंके प्रभावसे ही कठिन तम परीक्षाओंमें भी लगभग पूर्णतः शान्त चित्त बने रह सकते थे। और वे ऐसी बहुत-सी परीक्षाओंमें से निकले थे। एक कट्टर हिन्दूका उनके कुछ तौर-तरीके विचित्र मालूम होंगे किन्तु

१ (१८४ -१९) भारतीय मामलोंके विशेषज्ञ और सांख्यिकी (स्टैटिस्टिक्स) एवं ग्रन्थ लेखक। देखिए खण्ड १ पृष्ठ १५५।

२ भारतीय मामलोंके लेखक भारत और पंजाबके बड़े अधिकारी।

३ १८९९-१ २के बोअर युद्धमें गांधीजीने इसका संगठन किया था। देखिए खण्ड ३ पृष्ठ १४३-५२।

निस्सन्देह उनमें भिन्न-भिन्न बातोंका विविध मिश्रण था। उन गुणदोषोंकी परीक्षा करना इस लेखके लेखकका उद्देश्य नहीं है। श्री नाजरकी उपकारक क्षमताका भारतीयोंको पूरा-बोध उनके लोपके बाद ही मिल सकेगा। वे प्रशंसासे घृणा करते थे और अपनी प्रशंसा नहीं चाहते थे। कोई उनकी प्रशंसा करता या निन्दा उससे उनकी सार्वजनिक प्रवृत्तियोंपर कोई असर नहीं पड़ता था। ऐसे निःस्वार्थ कार्यकर्ता हमें सर्वत्र सुगमतासे नहीं मिलते। सभी जातियोंमें ये इने-गिने ही होते हैं। समय ही बतायेगा कि श्री नाजरकी मृत्युसे भारतीय समाजको क्या मैं कहूँ कि यूरोपीय समाजको भी कितनी हानि उठानी पड़ी है।

मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन २७-१-१९०६

१९५. काले और गोरे लोग

उक्त पीपल्स इसी[1] महीनेकी १ तारीखको श्री एच० डब्ल्यू० मैसिंघमने डेली न्यूज मे रंगदार जातियोंके प्रति दक्षिण आफ्रिकी गोरोंके रुखके बारेमें एक जोरदार लेख लिखा है। श्री मैसिंघमने मानव हितकी उसी भावनाके साथ जिसे हम उनके नामसे सम्बद्ध करनेके आदी हैं रंग-भेदके प्रश्नपर लोगोंमें फैले हुए एक भ्रमका निराकरण किया है और दक्षिण आफ्रिकाकी रंगदार जातियोंकी बहुत बड़ी सेवा की है। हम उनके इस विषयपर विचारनेके तरीकेमें कोई भी दोष नहीं पाते परन्तु उनके लेखके उस हिस्सेमें जहाँ उन्होंने ट्रान्सवालके ब्रिटिश भारतीयोंके सवालका जिक्र किया है, कुछ त्रुटियाँ हैं। हम उनको ही यहाँ बताना चाहते हैं। प्रकट है कि श्री मैसिंघमकी रायमें १८८५ के कानून ३ में भारतीयोंके द्वारा जमीनकी मिल्कियत लेनेका निषेध नहीं है। निस्सन्देह उनकी यह दलील बिलकुल गलत है। श्री मैसिंघमकी यह मान्यता भी गलत है कि भारतीयोंको "अब भी शहरोंमें पैदल-पटरियोंपर चलनेकी अनुमति है।" यह कानूनकी दृष्टिसे सही नहीं है क्योंकि एक विख्यात कानूनी फैसलेके अनुसार किसी भारतीयको नगरपालिकाकी पैदल-पटरियोंका इस्तेमाल करनेका अधिकार नहीं है और पुलिसका कोई भी सिपाही जो उसे पैदल-पटरीपर चलता देखे उसको गाड़ियोंके बीच सड़कपर चलनेकी आज्ञा दे सकता है। यहाँ बसी हुई रंगदार जातियोंके बारेमें विचार करते वक्त दक्षिण आफ्रिकी गोरोंमें अहम्मन्यताके साथ उपहास करनेकी दुर्भाग्यपूर्ण परम्परा पड़ गई है। श्री मैसिंघमने उसका जो सामयिक विरोध किया है उसका मूल्य उपर्युक्त त्रुटियोंसे कदापि कम नहीं होता।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन ३-२-१९०६

१. "इसी" शब्दसे स्पष्ट है कि यह लेख प्रकाशनसे कमसे-कम तीन दिन पूर्व जनवरीमें लिखा गया था। देखिए श्री मैसिंघमके लेखका परिशिष्ट।

१९६ सर डेविड हंटर

हमें यह लिखनेमें प्रसन्नता होती है कि सर डेविड हंटरने नेटालमें ही अपना अधिवास जारी रखनेका इरादा किया है और यह रजामंदी भी जाहिर की है कि दौरेसे लौटनेपर साथी नागरिक कहेंगे तो वे अपनी मर्जी ताकपर रखकर भी संसदमें प्रवेश करनेका विचार करेंगे। लोग उनसे अपना प्रतिनिधित्व करनेका अनुरोध करेंगे यह निश्चित है क्योंकि सभी मानते हैं कि वे संसदीय सेवाके लिए विशेष रूपसे उपयुक्त हैं। यद्यपि उनके निर्वाचनमें नेटालके भारतीय अधिवासी मत न दे सकेंगे फिर भी वे श्री हंटरके समर्थनमें अपनी आवाज उठायेंगे ही। भारतीय सर डेविडके बहुत ऋणी हैं क्योंकि वे देख चुके हैं कि सर डेविड नेटाल गवर्नमेंट रेलवेके जनरल मैनेजरकी हैसियतसे उनके साथ सदा शिष्ट व्यवहार ही न करते थे बल्कि उनका खयाल भी रखते थे। मुख्यतः उन्हींकी न्यायभावनाके फलस्वरूप भारतीयोंको रेलवेमें सामान्य सुविधाएँ प्राप्त हुई हैं अन्यथा जैसी उपनिवेशके अनेक लोगोंकी इच्छा थी उनका सिर्फ तीसरे दर्जेके डिब्बोंमें ही सफर करनेको मजबूर होना पड़ता। अगर कुछ रेलवे अधिकारियोंका बरताव वैसा नहीं है जैसा होना चाहिए, तो इसमें सर डेविडका कोई दोष नहीं है। उन्होंने भारतीयोंकी शिक्षामें भी सक्रिय और व्यावहारिक दिलचस्पी की है। सर डेविड एक भले अंग्रेज हैं और इस उपनिवेशने उनका सम्मान करके अपना ही सम्मान किया है। हमारी कामना है कि सर डेविडकी जल और थल-यात्रा सुखमय हो और वे शीघ्र वापस लौटें।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन १-२-१९ ६

१९७ हमारे तमिल और हिन्दी स्तम्भ

हमें यह घोषणा करते हुए खेद होता है कि हम फिलहाल अपने पत्रके तमिल और हिन्दी स्तम्भ बन्द करनेके लिए विवश हो रहे हैं। चूँकि आवश्यक सम्पादकों और कम्पोजीटरोंकी स्थायी सेवाएँ प्राप्त करना मुश्किल था इसलिए हमें इन स्तम्भोंको जारी रखनेके लिए बड़ी बड़ी कठिनाइयोंसे संघर्ष करना पड़ा है। हम इस बातको दुःखके साथ अनुभव करते रहे हैं कि कुछ समयसे हमारे तमिल और हिन्दी स्तम्भोंका स्तर वैसा नहीं रहा है जैसा हम चाहते हैं। इसलिए हम तबतक अनिच्छापूर्वक यह मार्ग ग्रहण करनेके लिए मजबूर हो गये हैं जबतक हमारे कार्यकर्ता-मण्डलके कुछ सदस्य जो अभी यह काम सीख रहे हैं तैयार नहीं हो जाते और दोनों महान भाषाओंके प्रति न्याय करनेके योग्य नहीं बन जाते।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन १-२-१९ ६

१९८. ईरानके शाह

ईरानके शाहने अपनी प्रजाको नया संविधान दिया है और कहा है कि जिस तरह पश्चिमी देशोंमें चलता है उसी तरह निर्वाचित संघके वे भी चलाना चाहते हैं। उन्होंने शासन-व्यवस्थामें हिस्सा दिया है। यदि इस प्रकार ठीक काम चला तो उनकी बादशाही बहुत बढ़ जायेगी। इसमें सन्देह नहीं कि यह सब जापानकी जीतका[1] ही

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन ३–२–१९०६

१९९. पत्र : उपनिवेश-सचिवको

जोहानिसबर्ग
फरवरी ९, १९०६

सेवामें
उपनिवेश-सचिव
प्रिटोरिया

महोदय

मेरे संघको अनेक सूत्रोंसे सूचना मिली है कि अनुमतिपत्र-कार्यालयमें परिवर्तन होनेके[2] बाद, भारतीय समाजको मेरे संघके द्वारा अथवा अन्य किसी प्रकारसे किसी प्रकारकी चेतावनी दिये बिना निम्नलिखित संशोधन किये गये हैं :

(१) उन बच्चोंकी नाबालिगीकी उम्र जो इस देशमें प्रवेश करना चाहते हैं, सोलह वर्षसे नीचेके बजाय बारह वर्षसे नीचे कर दी गई है।

(२) अभिभावकोंके हलफनामे स्वीकार नहीं किये जाते हैं। दूसरे शब्दोंमें वे ही बच्चे जिनके माता-पिता ट्रान्सवालमें रहते हैं, यहाँ प्रवेश पा सकते हैं।

(३) अब प्रिटोरियासे बाहरके शरणार्थियोंके प्रमाणोंकी भिन्न-भिन्न जिलोंकी बाबती समितियों द्वारा जिरह की जा रही है। परिणामस्वरूप अनेक शरणार्थियोंके प्रार्थनापत्र अभी अनिश्चित समयके लिए अटक गये हैं।

भारतीय समाजपर जो इस प्रकार अचानक ही ये तब्दीलियाँ लाद दी गई हैं, उनका मेरा संघ आदरपूर्वक विरोध करता है। जो भी परिवर्तन विचाराधीन रहे हैं उनके सम्बन्धमें साधारणतया मेरे संघको सूचना मिलती रही है और कुछ मामलोंमें सरकारने मेरे संघसे सलाह-मशविरा करनेका सौजन्य भी दिखाया है। अतएव मेरे संघको इस घटनासे अधिक आश्चर्य हुआ है कि अनुमतिपत्र सम्बन्धी विनियमोंमें भारतीय समाजपर असर करनेवाले भारी परिवर्तन कर डाले गये हैं और ऐसा करनेके पूर्व किसी प्रकारकी सूचना नहीं दी गई। और इसपर भी भारतीय समाजको इन बातोंका पता तभी चल पाया है जब वास्तविक घटनाएँ सामने आई हैं।

१. रूस और जापानके युद्धसे। देखिए “रूस और जापान” पृष्ठ १३०–४।
२. देखिए “ट्रान्सवालके भारतीय और अनुमतिपत्र” पृष्ठ १२१–२।

स्वयं शरणार्थियोंके बारेमें संघकी ओरसे निवेदन है कि उनका मंशा समाजको पहुँची क्षति पहुँचाना ही है। यह समझ पाना कठिन है कि नाबालिगोंकी उम्र और भी कम क्यों कर दी गई है। मेरा संघ आपका ध्यान इस तथ्यकी ओर आकर्षित करता है कि ब्रिटिश साम्राज्यके और किसी भी हिस्सेमें जहाँ-कहीं माता-पिताओंको प्रवेशका अधिकार दिया गया है, १६ वर्षसे कम उम्रवाले बच्चोंका प्रवेश वर्जित नहीं है।

भारतीय समाजके लिए यह बात बहुत बड़ा महत्त्व रखती है कि अधिवासी भारतीयोंको अपने बच्चे साथ लानेमें किसी प्रकारकी बाधा या कठिनाई न हो। उदाहरणार्थ यह बात समझमें नहीं आती कि तेरह या पन्द्रह वर्षके बालकको अपने माता-पिताके पास आकर रहने और उनकी संरक्षतामें शिक्षा प्राप्त करनेसे क्यों रोका जाये। मेरा संघ आपका ध्यान इस तथ्यकी ओर भी दिलाता है कि यह नियम ट्रान्सवालकी गैर-एशियाई जातियोंपर लागू नहीं होता।

जहाँतक दूसरे परिवर्तनकी बात है, अबतक अनाथ बच्चोंको अपने अभिभावकोंके साथ आनेकी अनुमति थी। नये कानूनके अनुसार ऐसे बच्चोंको भी ट्रान्सवालमें प्रवेश करनेसे रोका जायेगा। मेरे संघके लिए इस बातकी ओर ध्यान दिलाना जरूरी नहीं कि ऐसा नियम केवल मुसीबतें ही ला सकता है।

तीसरे संशोधनके बारेमें निवेदन है कि यदि आवासी मजिस्ट्रेटोंको जाँच-पड़तालका काम करना है तो उससे लगभग अनन्त विलम्ब होगा। ऐसे शरणार्थी भी हैं जिनकी अर्जियाँ पिछले नौ महीनेसे पड़ी हुई हैं और यदि इस प्रकारके सभी प्रार्थनापत्र भिन्न-भिन्न जिलोंमें आवासी मजिस्ट्रेटोंको सौंपे जायेंगे तो बहुत ज्यादा देर लग जायेगी। और फिर अगर प्रत्येक नगरका काम पृथक्-पृथक् उठाया जायेगा तो गवाहियाँ ली जानेकी विधिमें कोई एकरूपता न रह जायेगी।

मेरा संघ आगे निवेदन करता है कि जब गवाह लोग *प्रिटोरियाके बाहरके निवासी हैं* तब अगर सभी जगहोंके गवाहोंके बयान लेने और उनसे पूरी जिरह करनेके लिए एक ही अधिकारी नियुक्त किया जाये तो मामलोंका निपटारा बहुत कुछ शीघ्रतासे होगा और कार्य विधिमें एकरूपता सुलभ होगी।

इसके अतिरिक्त मेरा संघ आपको यह बतलाना चाहता है कि यह देखते हुए कि लगभग ७५ फी सदी शरणार्थी जोहानिसबर्ग या उनके आसपासके जिलोंमें आकर बसेंगे न्यायकी खातिर यह आवश्यक है कि जोहानिसबर्गमें अनुमतिपत्र चाहनेवालोंकी जरूरतें पूरी करनेके लिए किसी न-किसी अधिकारीको समय-समयपर वहाँ आते रहना चाहिए। मेरे संघकी विनम्र सम्मतिमें जहाँतक जोहानिसबर्गके शरणार्थियोंका सम्बन्ध है, केन्द्रीय कार्यालय भले ही प्रिटोरियामें रहे, लेकिन अनुमतिपत्र देने और अँगूठेका निशान लेनेका मामूली कार्य जोहानिसबर्गमें किया जाये।

इस प्रश्नके सम्बन्धमें कुछ भी मालूम नहीं हो पाया है कि भारतीय स्त्रियोंके पास अलगसे अनुमतिपत्र रहें या नहीं।

मेरा संघ निवेदन करता है कि इस आवेदनपत्रमें कही हुई बातें अत्यन्त महत्त्वपूर्ण हैं, और यह विश्वास करता है कि उनपर समुचित ध्यान दिया जायेगा। सविनय निवेदन है कि उत्तर शीघ्र भेजा जाये।

आपका आज्ञाकारी सेवक
अब्दुल गनी
अध्यक्ष
ब्रिटिश भारतीय संघ

[अंग्रेजीसे]
इंडियन ओपिनियन १७–२–१९ ६

२०० पत्र : टाउन क्लार्कको

जोहानिसबर्ग
फरवरी १०, १९०६

सेवामें
टाउन क्लार्क
जोहानिसबर्ग

महोदय,

मेरे संघका ध्यान जोहानिसबर्ग ट्रामवे प्रणालीके प्रबन्धककी कुछ सिफारिशोंकी ओर [आकृष्ट] किया गया है कि जो उन्होंने रंगदार लोगों द्वारा बिजलीकी ट्रामोंके उपयोगके [सम्बन्धमें] नगर-परिषदसे उसकी मंजूरीके लिए की हैं।

मेरा खयाल है कि इन सिफारिशोंको करते वक्त प्रबन्धकने रंगदार लोगोंकी, विशेषतः ब्रिटिश भारतीय समाजकी जिससे मेरे संघका सम्बन्ध है भावनाओंका कोई ख्याल नहीं रखा है। मेरा संघ अनुभव करता है कि इन सिफारिशोंका उद्देश्य ब्रिटिश भारतीयोंकी आवश्यकता पूरी करना नहीं है। यदि रंगदार नौकर अपने मालिकोंके साथ यात्रा करते समय ट्रामोंकी कारोंका उपयोग कर सकते हैं तो यह समझना बहुत कठिन है कि दूसरे रंगदार लोग उनका उपयोग क्यों नहीं कर सकते। विशेष ट्रामगाड़ियाँ चलानेका सुझाव व्यावहारिक नहीं है, क्योंकि तब रंगदार लोगोंको उसी प्रकारकी सेवा उपलब्ध न रहेगी जिसका उपयोग यूरोपीय समाज करेगा। मेरे संघकी विनम्र सम्मतिमें यह सिफारिश बहुत ही अपमानजनक है कि मामूली ट्रामोंके पीछे रंगदार लोगोंके उपयोगके लिए और पार्सलें ढोनेके लिए डब्बे जोड़ दिये जायें। मेरा संघ निवेदन करता है कि ट्रामोंके उपयोगके संबंधमें ब्रिटिश भारतीयोंको वे ही सुविधाएँ प्राप्त करनेका अधिकार है जो जोहानिसबर्गकी दूसरी जातियोंको प्राप्त हैं। साथ ही मेरा संघ द्वेषभावके वर्तमान अस्तित्वको पूरी तरह स्वीकार करता है और इसलिए सुझाव देता है कि ट्रामोंका भीतरी भाग केवल यूरोपीयोंके लिए सुरक्षित कर दिया जाये। इससे छतें दूसरी जातियोंके लिए रह जायेंगी। असलमें तो ट्रामगाड़ियोंके भीतरी भागोंमें भी विभाग क्यों न बनायें जायें इसका कोई कारण नहीं। किन्तु यदि ये न बन सकें तो मेरे संघका विश्वास है ऊपर दिया गया सुझाव नगर-परिषद द्वारा मंजूर कर लिया जायेगा। मैं यह उल्लेख कर दूँ कि इस समय जैसी स्थिति है, रंगदार लोग नगरपालिकाकी ट्रामोंका उपयोग करनेके लिए कानून द्वारा पूरी तरह स्वतन्त्र हैं। वे ट्रामोंका उपयोग नहीं करते इसमें केवल उनकी सहनशीलता ही बाधक है।

आपका आज्ञाकारी सेवक,
अब्दुल गनी
अध्यक्ष
ब्रिटिश भारतीय संघ

महाप्रबन्धककी जिन सिफारिशोंका ऊपर उल्लेख किया गया है वे निम्नलिखित हैं

१ रंगदार लोग जब घरेलू नौकर हों और अपने मालिक या मालकिनके साथ हों तो उनको उन्हीं गाड़ियोंमें यात्रा करने दी जाये जिनमें गोरे लोग चलते हैं और यह

जरूरी कर दिया जाये कि वे गाड़ीकी छतपर बैठें और पीछेकी सीटका उपयोग करें जो हर जिलेके कबीरमें होती है अर्थात् हर एक सिरेपर बनी चार सीटोंपर बैठें। उनसे किराया मामूली लिया जाये।

२ जहाँ किसी मार्गपर रंगदार लोगोंके लिए विशेष गाड़ियाँ फायदेके साथ चलानेके लायक काफी आमदरफ्त हो वहाँ एशियाई लोगोंको गाड़ियोंके भीतर और काफिरोंको बाहर बिठानेकी या इसके विपरीत व्यवस्था की जा सकती है। इसका प्रयोग अभी फोर्ड्सबर्ग और न्यूटाउनके मार्गोंपर किया जाये।

३ यदि बादमें यह मालूम हो कि विशेष गाड़ियोंको फायदेके साथ चलानेके लायक रंगदार लोगोंकी काफी आमदरफ्त नहीं है तो मामूली गाड़ियोंके साथ इकमंजिले छकड़े जोड़नेका प्रयोग किया जाये और ये छकड़ानुमा गाड़ियाँ और मामूली गाड़ियाँ, जो रंगदार लोगोंके लिए प्रयुक्त होंगी पार्सलें बाँटनेके काममें भी लाई जायें। प्रस्ताव है कि यह काम किसी बादकी तारीखको आरम्भ किया जाये।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन १७-२-१९०६

२०१ ईसाइयों और मुसलमानोंके सम्बन्धमें लॉर्ड सेल्बोर्नके विचार

लॉर्ड सेल्बोर्नने अभी हालमें गिरजेकी एक सभामें यह कहा बताते हैं

ऐसा जान पड़ता है कि हमारी जातिके लोग दो बातें भूल जाते हैं और इसलिए वे धर्मकी जितनी परवाह वस्तुतः करते हैं उससे बहुत कम परवाह करनेके दोषी ठहराये जाते हैं। जो आचार उनके धर्मको व्यक्त करते हैं उनके बारेमें वे बहुत उदासीन रहते हैं। और उनको यह खुलेआम बतानेमें संकोच होता है कि वे इस विश्वासमें हैं। ऐसा अक्सर हुआ है कि मेरे मित्र अपनी पूर्व यात्राओंमें मुसलमानोंकी धर्मनिष्ठासे प्रभावित हुए हैं। मुसलमान दिनमें खास वक्तपर जहाँ भी होता है अपना मुसल्ला बिछा लेता है और घुटने टेककर नमाज पढ़ता है। मेरे मित्रने उससे इसी बातपर कहा कि मुसलमान ईसाईसे बहुत ज्यादा अच्छा आदमी होता है। मेरे साथ ऐसी घटना अनेक बार हुई है। परन्तु उसके इस निष्कर्षका समर्थन तर्कसे नहीं होता। सम्भावना यह है कि मुसलमान अधिकांश ईसाइयोंसे बहुत ज्यादा बुरा आदमी हो पर उसमें एक बात परख की है जिसे हम भूल जाते हैं और वह है कि अगर किसीको दुनियामें अपना प्रभाव जमाना है तो उसे लोकमतसे नहीं डरना चाहिए और यह प्रकट करनेमें भी संकोच नहीं करना चाहिए कि वह किस पक्षमें है।

अगर परमश्रेष्ठके भाषणकी यह रिपोर्ट सही है तो हमें खेदके साथ कहना पड़ता है कि वे एक बड़े अविवेकके दोषी हैं। सम्भावना यह है कि मुसलमान ज्यादातर ईसाइयोंसे बहुत ज्यादा बुरा आदमी हो — ऐसी बात सम्राटके प्रतिनिधिको सम्राटकी मुस्लिम प्रजाके बारेमें न कहनी चाहिए। अपने पदके कारण परमश्रेष्ठको आदमी यह स्वतन्त्रता प्राप्त नहीं है जिसका उपभोग हममें कम हैसियतके लोग कर सकते हैं और उनके द्वारा प्रकट किये गये इन विचारोंसे

२०६. पत्र : छगनलाल गांधीको

जोहानिसबर्ग
फरवरी ११, १९ ६

चि॰ छगनलाल,

मैंने तुम्हें कुछ दिन हुए कुमारी मायफ्लीथका नाम ग्राहकोंमें दर्ज करनेके लिए भेजा था। मगर अभीतक दर्ज न किया हो तो कर लेना। उनका पोस्ट ऑफिस बॉक्स ४८८९, जोहानिसबर्ग है। जनवरी १ से सारे पिछले अंक भी उन्हें मिलने चाहिए।

मानजी एन॰ गेलानीने मुझे लिखा है कि उन्हें इस सालके दूसरे और तीसरे अंक नहीं मिले हैं। उन्हें हालमें पत्र नियमित रूपसे मिलता रहा है। इसलिए तुम उन्हें अंक दो और तीन भेजकर मुझे सूचित करना कि अंक भेज दिये हैं। उनका पता बॉक्स ११, प्रिटोरिया है।

कल्याणके भी रिचका पता बदलकर ४१ स्प्रिंगफील्ड रोड, सेंट जॉन्स वुड, लन्दन कर दिया जाये।

श्री नाजरके सामानकी बिक्रीका पैसा किसने जमा नहीं किया है, इसकी सूचना दो।[1]

मैं आगेसे ऐसे परिवर्तनोंकी तालिका तुम्हें दूँ या उनके बारेमें हेमचन्दको लिखा करूँ? मैं तुम्हें बहुत-से ऐसे मामूली कामकी जिम्मेदारीसे बरी करना चाहता हूँ किन्तु ऐसा सावधानीके साथ करना चाहता हूँ। अगर अन्तमें ये हिसाबतें हेमचन्दके पास जानेवाली हैं तो सीधे उसके पास भेजनेसे कुछ बचत होगी। तुम्हारा आजका मुख्य काम गुजराती सम्पादनकी देख-भाल और जितने जल्दी बने हिसाबके खातेको बाकायदा करके रोकड़-बाकी निकालना और हर इमारतकी लागत जानना है। इमारतोंकी लागत जानकर लागतकी खतौनीको बाकायदा करनेके कामकी प्रगतिकी सूचना देना।

इंडियन ओपिनियन का यह अंक मैंने कल तुम्हें सुधार कर भेजा है। मैं चाहता हूँ कि इन सब सुधारोंको सावधानीसे देखो और भविष्यमें उन्हें टालो। हमें चाहिए कि गुजराती-विभागको एकदम अद्वितीय बनायें और अगर इसके लिए हिसाबको छोड़कर केवल इसपर ही अपनी शक्ति तुम्हें लगानी पड़े तो सब कुछ छोड़कर इसीपर जुटना चाहिए। गुजरातीके केवल सात पृष्ठ हैं। ऐसा क्यों? अब गोकुलदास कितनी गुजराती कंपोजिंग कर पाता है? जमकर काम करता है? उससे कहो मुझे लिखे।

श्री मदनजीतको २ पौंड १ शिलिंग देनेके तुम्हारे सुझावके बारेमें मेरी समझमें उन्हें उतना तो देना ही चाहिए और अगर वे हमसे सम्पर्क बनाये रखें तो ज्यादा भी दे सकते हैं। यदि वे ऐसा न करें तो कुछ भी देना असम्भव होगा। वे दूर हिन्दुस्तानमें काम कर रहे हैं यह तो मैं खूब समझ सकता हूँ लेकिन उनके लेख ओपिनियन में आने चाहिए। मैंने उनसे साफ कहा था कि उनसे पत्रको मदद पहुँचानेकी आशा रखी जायेगी। अगर वे ऐसा

[1] देखिए “[illegible]” पृष्ठ १८०–१ ।

न करें तो मैं नहीं समझता हम उन्हें कुछ भी देनेके लिए बँधे हैं। उन्होंने मुझे प्रिटोरियासे तक जो कागज भेजे हैं, जरूरत पड़े तो उन्हें लगाना।[1]

शुभाशय
मो० क०

श्री छगनलाल खुशालचन्द गांधी
मारफत इंडियन ओपिनियन
फीनिक्स

मूल अंग्रेजी प्रतिकी फोटो-नकल (एस० एन० ४९ ७) से।

२०४ पत्र : टाउन क्लार्कको

२१-२४ कोर्ट चेम्बर्स
नुक्कड़ रिसिक व ऐंडर्सन स्ट्रीट्स
पो० ऑ० बॉक्स ६५२२
जोहानिसबर्ग
फरवरी ११, १९०९

सेवामें
टाउन क्लार्क
पो० ऑ० बॉक्स १४४
क्रूगर्सडॉर्प

महोदय

आपकी इसी महीनेकी १ तारीखकी चिट्ठी संख्या २४८/११२८/ ९ मिली।

मुझे आशा है कि आप उपनियम मंजूर होते ही मुझको इत्तिला देंगे। इस बीच, जैसा मैं आपको सूचित कर चुका हूँ मेरे मुवक्किलका ओषधालय चालू है।

आपका आज्ञाकारी सेवक,
मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]

क्रूगर्सडॉर्प नगर-परिषदके रेकर्डसे।

१ यह पंक्ति गुजरातीमें गांधीजीके हाथकी लिखी हुई है।

२०५ पत्र: कार्यवाहक मुख्य यातायात प्रबन्धकको

जोहानिसबर्ग
फरवरी १४, १९ ६

[सेवामें]
कार्यवाहक मुख्य यातायात प्रबन्धक
जोहानिसबर्ग

महोदय

श्री एम. एम. मूसाजीने मेरे संघको उस पत्र-व्यवहारकी प्रतिलिपियाँ दी हैं जो आपके विभाग और उनके बीचमें साढ़े आठ बजे जोहानिसबर्गसे रवाना होनेवाली गाड़ीके सम्बन्धमें हुआ है।

आपने श्री मूसाजीको इत्तिला दी है कि "रंगदार यात्रियोंको साढ़े आठ बजे प्रिटोरियासे जोहानिसबर्ग जानेवाली गाड़ीसे यात्रा करनेकी इजाजत नहीं है।" और मेरा खयाल है, वापसी यात्रापर भी यही बात लागू होती है।

इस इत्तिलासे मेरे संघको आश्चर्य भी हुआ है और दुःख भी। यह व्यापारी भारतीय व्यापारी समुदायके लिए अधिकारका ऐसा अपहरण है जिससे उसकी गतिविधिमें गम्भीर बाधा पड़ेगी। आम भारतीय समाजके लिए यह अत्यन्त अपमानजनक है।

मेरा संघ इस परिणामपर पहुँचे बिना नहीं रह सकता कि एक बड़े प्रशासन द्वारा स्थानीय लोगोंके द्वेषभावकी तृप्तिकी इस पद्धतिके फलस्वरूप रंगदार लोगोंकी स्थिति बिलकुल असहनीय हो जायेगी। यदि आप मुझे यह बतानेकी कृपा करेंगे कि क्या आपका इरादा यही है, तो मेरा संघ कृतज्ञ होगा और यदि ऐसा हो तो क्या आप कृपया मुझे यह बतायेंगे कि यह रोक किस कानून या कायदेके मुताबिक लागू की गई है। प्रसंगवश मुझे यह कहनेकी इजाजत दी जाये कि जिस तरीकेसे समय-समयपर ऐसे प्रतिबन्धक नियम सम्बन्धित समाजके इस मामलेपर किसी चेतावनी या सूचनाके बिना लागू किये जाते हैं उससे बहुत खीज और असुविधा होती है। मेरे संघका खयाल है कि ब्रिटिश भारतीयोंको उन कानून-कायदोंकी जानकारी पहलेसे पानेका हक है जो उनके सम्बन्धमें बनाये जायें।

मैं उत्तर शीघ्र देनेकी प्रार्थना करता हूँ।

आपका आज्ञाकारी सेवक
अब्दुल गनी
अध्यक्ष
ब्रिटिश भारतीय संघ

[अंग्रेजीसे]
इंडियन ओपिनियन, २४-२-१९ ६

२०९. 'लीडर' को जवाब

डर्बन

सेवामें
सम्पादक
'लीडर'

महोदय

मेरे देशबन्धुओं द्वारा ट्रामोंके उपयोगके प्रश्नपर मेरे संघने टाउन क्लार्कको [illegible][1] उसके विषयमें आपने छोटा-सा अग्रलेख लिखा है। उसपर मैं चन्द बातें [illegible] हूँ। आपने व्यंग्यमें लिखा है और धमकियोंका प्रयोग किया है। मैं [illegible] नहीं [illegible] सकता, परन्तु आपके सामने कुछ तथ्य रखनेकी धृष्टता करूँगा — आप चाहें मानें, चाहें उसका निराकरण कर दें:

(१) मेरे संघने कभी दावा नहीं किया कि सब भारतीयोंको ट्राम गाड़ियोंका [उपयोग] करने देना चाहिए। इस अधिकारका दावा तो सिर्फ उन्हींके लिए किया गया है जो [साफ] और स्वच्छ वस्त्र पहनते हों।

(२) भारतमें जो भी स्थिति हो मुझे आपके सामने यह प्रदर्शित करनेकी जरूरत [नहीं] कि कोई आदमी पैदाइशी कुली नहीं होता और जहाँतक ट्राम गाड़ियोंके उपयोगका [सवाल] है मुसाफिरोंकी वेशभूषा ही उसकी कसौटी हो सकती है।

(३) ट्रामोंके प्रश्नपर दो जातियोंके बीच बराबरीका सवाल उठाना क्या आपको [illegible] नहीं लगता?

(४) मेरे संघने जोर देकर अस्वीकार किया है कि वस्तुतः सुसंस्कृत भारतीयोंका अनिच्छुक यूरोपीयोंसे चाहे वे कोई हों सम्पर्क स्थापित करानेका उसका कोई इरादा है। इसीलिए उसने सुझाव रखा है कि गाड़ियोंका भीतरी भाग केवल यूरोपीयोंके लिए सुरक्षित [illegible] दिया जाये। उसका दावा है कि जो भारतीय अच्छी पोशाकमें हों वे गाड़ियोंकी ऊपरी [illegible] "असमानता" के पवित्र सिद्धान्तका उल्लंघन किये बिना वाजिब तौरसे कर सकते हैं।

(५) मेरे संघने सहनशीलताकी जो बात कही है वह बिलकुल तर्कसंगत है। जैसा मेरे संघको बताया गया है, जनताकी इच्छा — जहाँतक वह कानूनके रूपमें परिणत की [illegible] है — भारतीयोंको ट्रामगाड़ियोंपर चढ़नेके अधिकारका दावा करनेकी छूट देती है इसलिए दावा कानून-सम्मत होनेके कारण "बेहूदा" नहीं समझा जा सकता।

इस बारेमें क्या मैं आपसे कुछ सवाल पूछ सकता हूँ? क्या ट्रान्सवालके गोरोंके लिए टाउन या नेटाल जाते ही रंगदार लोगोंके साथ ट्रामपर चढ़ना तर्कसम्मत हो जाता है? क्या यह तर्कसंगत है कि रंगदार नौकर, जो "ऊँची जातियों" के न हों उन [illegible] जो भी मतलब हो ट्रामगाड़ियोंपर चढ़ें? क्या यह तर्कसम्मत है जैसा कि नगर-परिषदकी बैठकमें श्री वाउटरने कहा कि टट्टू गाड़ियोंकी सवारी करनेवाले गोरे रंगदार कोचवानोंकी बगलमें बैठें?

[1] देखिए "पत्र : टाउन क्लार्कको" पृष्ठ १९४-५।

हीरक जयन्तीके अवसरपर उपनिवेशोंके प्रधान मन्त्रियोंके सम्मेलनमें[1] श्री चेम्बरलेनने जिस नीतिकी रूपरेखा बताई थी वही मेरे संघके दावेका आधार है। परम माननीय महानुभावने कहा था

> हम आपसे यह भी कहते हैं कि आप अपने मानसमें उस साम्राज्यकी जो किसी प्रजाति या रंगके पक्ष या विरोधमें कोई भेद नहीं करता परम्पराओंका ध्यान रखें। और सम्राज्ञीकी सम्पूर्ण भारतीय प्रजाओंको या सम्पूर्ण एशियाइयोंको ही उनके रंग या जातिके कारण बहिष्कृत करना उन लोगोंके लिए एक ऐसा अपमानजनक कार्य होगा कि सम्राज्ञीके लिए उसपर स्वीकृति देना अत्यन्त व्यथाजनक हो जायेगा। यह बात नहीं कि कोई आदमी हमसे भिन्न रंगका होनेके कारण ही आवश्यक रूपसे अवांछनीय आव्रजक है, बल्कि वह तो इसलिए अवांछनीय है कि वह गन्दा है या दुराचारी है या कंगाल है या उसमें कोई ऐसी आपत्तिजनक बात है जिसकी किसी संसदीय अधिनियमके अनुसार व्याख्या की जा सकती है और जिसके द्वारा उन सब लोगोंके सम्बन्धमें जिन्हें आप वस्तुतः अलग रखना चाहते हैं, पृथक्करणकी व्यवस्था की जा सकती है।

आपका आदि
अब्दुल गनी
अध्यक्ष
ब्रिटिश भारतीय संघ

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन २४-२-१९०६

२०७ ट्रान्सवालके भारतीय और अनुमतिपत्र

निश्चय ही ट्रान्सवालमें ब्रिटिश भारतीयोंकी दशा बड़ी ही अनिश्चित और दुःखपूर्ण है। हम दूसरे स्तम्भमें एक पत्र[2] प्रकाशित करते हैं जो ब्रिटिश भारतीय संघके अध्यक्षकी ओरसे ट्रान्सवालके उपनिवेश-सचिवको भेजा गया है। इसे पढ़कर बहुत दुःख होता है। भारतीयोंके अनुमतिपत्र सम्बन्धी नियम समय-समयपर बदले जाते रहे हैं और इससे उनको बड़ी असुविधाएँ हुई हैं। लेकिन नये परिवर्तन बिलकुल आकस्मिक और रहस्यमय हैं। उपर्युक्त पत्रमें जिन नियमोंका हवाला दिया गया है वे श्री अब्दुल गनीके कथनानुसार, भारतीय समाजपर किसी पूर्व सूचनाके बिना ही थोप दिये गये हैं और, अगर श्री अब्दुल गनीको प्राप्त जानकारी सही है तो ये सभी भारतीयोंपर लागू होंगे। इसका नतीजा यह होगा कि जो लोग ऐसे किन्हीं नियमोंकी जानकारीके बिना दक्षिण आफ्रिकामें आ गये हैं उनपर बहुत विपरीत प्रभाव पड़ेगा। उनको शायद न नेटालमें कोई शरण मिलेगा और न केपमें ही। वे ट्रान्सवालमें प्रवेश करनेके निश्चित इरादेसे आये होंगे और यदि ये नियम लागू किये गये और इन शब्दोंमें प्रभावकारी समझे गए तो उनसे सम्बन्धित लोगोंको भीषण मुसीबत, खर्च और परेशानीका सामना करना पड़ेगा। एक

1. १८९७ में, देखिए खण्ड २, पृष्ठ १९९।
2. देखिए "पत्र : उपनिवेश-सचिवको" पृष्ठ १९२-३।

ब्रिटिश उपनिवेश या अधीनस्थ राज्यमें कमसे-कम इतनी उम्मीद तो की ही जाती है कि कानून काफी सोच-विचार और उचित चेतावनीके बाद बनाये जायेंगे। केप और नेटालके स्वशासित उपनिवेशोंमें भी जब प्रवासी-प्रतिबन्धक कानून पास किया गया तब सम्बन्धित लोगोंको काफी पहले चेतावनियाँ दी गई और कानून बन जानेके बाद भी वह तुरन्त सख्तीके साथ लागू नहीं किया गया। दोनोंमें जहाजी कम्पनियोंको और उस कानूनसे प्रभावित समाजको कानूनका असली रूप समझनेका समय दिया। केपके अधिकारियोंने कहीं अब जाकर, अर्थात् पास होनेके दो साल बा— सूचना दी है कि अब उनका इरादा कानूनपर पूरे तौरसे अमल करनेका है। परन्तु । —— है कि ट्रान्सवालमें अधिकारी उतावलीसे काम करनेमें विश्वास रखते हैं। शान्ति-रक्षा — — सैनिक कानूनके समयका अवशेष है इसलिए वह सरकारको स्वच्छन्द सत्ता प्रदान । युद्धकालमें तो ऐसी सत्ताका प्रयोग प्राय उचित ठहराया जाता है परन्तु जब — शान्ति है, तब एक निरापद समाजके विरुद्ध उस अध्यादेशका उक्त पत्रमें वर्णित —रना ब्रिटिश संविधानसे सम्बद्ध तरीकोंके अनुकूल नहीं है। उसमें ऐसी तरीकोंका —ना है। खुद नियमोंको कसौटीपर कसा जाये तो वे निस्सन्देह कष्टप्रद हैं। ऐसा —-भोंकी नाबालिगोंकी उम्र एकाएक घटाकर बारह सालसे भी नीचे कर दी गई — — —गा वे बालक जिनके रिश्तेदार ट्रान्सवालमें बसे हों ट्रान्सवालमें बिलकुल प्रवेश न करने पायेंगे। इसके अतिरिक्त नियमोंके अनुसार, किसी शरणार्थीके दावेके समर्थनमें जो गवाह पेश किये जायेंगे उनकी जाँच एक ही अधिकारीसे करानेके बजाय अब यह अधिकार विभिन्न जिलोंके मजिस्ट्रेटोंको हस्तान्तरित कर दिया गया है। जाँचकी कार्रवाई पूरी हो जानेके बाद भी अनुमतिपत्र प्राप्त करनेके मामूली कामके लिए, सब शरणार्थियोंको प्रिटोरिया जाना होगा। अभी उस दिन परमश्रेष्ठ लॉर्ड सेल्बोर्नने भारतीय शिष्टमण्डलसे कहा था कि सभी प्रतिबन्धात्मक कानून उचित होने चाहिए। वे तभी स्वीकार करने योग्य और प्रभावकारी हो सकते हैं। जैसे ये कानून हैं वैसे कानून क्या कभी उचित माने जा सकते हैं भले ही हम कितनी ही खींचतान क्या न करें?

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन १७–२–१९०९

२०८ जोहानिसबर्गकी ट्रामें और भारतीय

अन्यत्र वह पत्र[1] छापा जा रहा है जो ब्रिटिश भारतीय संघ जोहानिसबर्गके अध्यक्षने टाउन क्लार्क जोहानिसबर्गको लिखा है। वह रेलदार घोड़ा द्वारा बिजलीसे चलनेवाली ट्रामोंका उपयोग करनेके सम्बन्धमें प्रस्तावित विनियमोंके विषयमें है। हमें श्री अब्दुल गनीकी दलीलका समर्थन करनेमें कोई हिचकिचाहट नहीं है। महाप्रबन्धकने जो सिफारिशें की हैं वे बिलकुल मनमानी हैं और इस बातसे कि उन्हें अस्थायी रूपसे वापस ले लिया गया है, भारतीयोंको गुमराही झूठी भावनामें पड़कर शिथिल नहीं हो जाना चाहिए। वे इसलिए नहीं वापस ले ली गई हैं कि नगर-परिषदको जनरल मैनेजरकी अपेक्षा भारतीयोंका अधिक लिहाज है, बल्कि इसलिए कि जैसा कहा जाता है अभी उनके लिए समय ही उपयुक्त नहीं है—क्योंकि अभी कुछ समय तक ट्रामें चलेंगी ही नहीं। जोहानिसबर्ग या अन्य स्थानोंमें सार्वजनिक ट्रामोंके उप

१. देखिए “पत्र: टाउन क्लार्कको” पृष्ठ १५४–५।

योगका सवाल सिर्फ भावनाका सवाल नहीं है, बल्कि उसका आर्थिक महत्त्व भी है। भारतीय व्यापारियों और दूसरे रंगदार लोगोंका सार्वजनिक वाहनोंपर वही अधिकार है जो जोहानिसबर्गके किसी भी दूसरे समाजका है। वे देशका अंग हैं, करदान इत्यादिके रूपमें उनसे भी नागरिकताका भार-वहन करनेको कहा जाता है, और जोहानिसबर्ग नगरपालिका नगरपालिकाकी ट्रामोंका उपयोग करनेके अधिकारसे उनको वंचित करनेमें कठिनाई महसूस करती है। जो भी नियम बनाये जायेंगे उनपर लेफ्टिनेंट गवर्नरकी मंजूरी लेनी होगी, और हमें आशा है कि जिन नियमोंकी ओर हमने सार्वजनिक ध्यान आकर्षित किया है वे अगर परमश्रेष्ठके पास भेजे ही गये तो वे उन्हें नामंजूर करनेके अपने विशेषाधिकारका प्रयोग करनेमें हिचकिचायेंगे नहीं।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, १७-२-१९१२

२०९. पत्र : छगनलाल गांधीको

[जोहानिसबर्ग]
शनिवार, फरवरी १७, १९१२

चि. छगनलाल,

थोड़ी गुजराती आज भेज रहा हूँ। और कल भेजी जायेगी। जहाँतक बनेगा, हर हफ्ते जोहानिसबर्गकी चिट्ठी भेजूँगा। उसका स्थान तो एक ही रखना ठीक होगा। जहाँतक बने गुजराती विभागके हिस्से कर लेने चाहिए और हमेशा हर जगह उसी किस्मके लेख आयें ऐसा प्रयत्न करना चाहिए।

तुम हफ्तेमें एक दिन कहीं बाहर जानेके लिए जरूर रखो, जिससे उस स्थानका पत्र भी दिया जा सके। मुझे हर हफ्ते एक पत्र अवश्य तफसीलवार लिखा करो। हेमचन्द्र कैसा चल रहा है?

सारी गुजराती सामग्री ढंगसे सुधारी जाये। नेटालके गजट से जानकारोंकी विज्ञप्ति भी किसी हफ्तेमें नहीं चूकनी चाहिए।

तुमने जो गुजराती टाइप मँगाया है वह कितना मँगाया है सो लिखना। यानी कितने पृष्ठ बनाये जा सकेंगे? अबके वर्ष १२ पृष्ठ दे सकने योग्य टाइप हमें चाहिए। इस हिसाबसे यदि और आवश्यकता हो तो मुझे सूची भेजना, ताकि टाइप मँगाया जा सके।

वामन मैथ्यूजके बारेमें पत्र पढ़ा होगा। मेरा खयाल है कि वह आये तो ठीक होगा।

तुम अपनी बात ध्यानमें रखना। कम्पोज करनेमें तुम्हारी आँखोंको तकलीफ हो तो बिलकुल मत करना।

मोहनदासके आशीर्वाद

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल गुजराती प्रतिकी फोटो-नकल (एस० एन० ५६११) से।

मैं अब भी इस रायपर निश्चित हूँ कि फुटकर काम छोड़ दिया उसीमें अच्छा है। और तुम प्रेसमें हो यह ठीक है। अब चूँकि फुटकर कामकी चिन्ता नहीं रही इसलिए दफ्तरमें आदमी न हो उसकी भी चिन्ता नहीं रही। बदमियोंके बदले जहाँतक बने भारतीय हों तो ठीक मानता हूँ। फिर भी जैसा ठीक हो वैसा ही करना। उसमें मेरी अवज्ञपर निर्भर न रहना। भी आइजकको समझाऊँगा।

श्री आयनके बारेमें जैसा तुम कहते हो वैसा ही मेरे मनमें भी है। यदि वे जायें तो फिरहाल तो कम्पोजिंगका काम ही करें। तुम आनन्दलालसे भी दिक्कतोंकी पूरी बात करना और उससे हमदर्दी प्राप्त करना। उसकी सलाह भी लेना। उससे वह खुश भी रहेगा। मन खुश रखना।

काकामाईको अमीतक कमरा न मिला हो तो तुरन्त ही प्रबन्ध करना।

विज्ञापन हमारे हाथसे निकल गया उसके बारेमें जाँच-पड़ताल करूँगा।

तुम्हारे जूते इत्यादिकी खोज कल (सोमवारको) करूँगा। बाहरके पत्रोंको पढ़कर व्यवस्था करनेका काम हेमचन्दको ही सौंपना। श्रीरायामीसे कहना कि मुझे हुक्म अभीतक नहीं मिला। जैसे ही मिला मैं तुरन्त भेजूँगा।

अब मुझे लिखनेको नहीं बचता। तुम वेस्टके साथ विशेष रूपसे मिलना। पहले तुम दोनोंको एक-सी हो जाना है क्योंकि तुम दोनों ही योजनाको ज्यादा समझते हो। आनन्दलालको जैसे बने अपने साथ मिलाना। रंगको समझाना और बीनपर धीरे-धीरे सिंचन करना। वे मुझे चाहते हैं। योजना नहीं समझते। भले आदमी हैं, इसलिए छोड़ते नहीं हैं। पैसेकी तरफ ज्यादा ध्यान है, क्योंकि उनमें सच्ची सादगी नहीं है। फिर भी पैसेके लिए मरते हों सो नहीं। वे आगे चलकर अच्छा करेंगे। हमेशा हर हफ्ते कमसे-कम एक पत्र नियमित लिखते रहना जिसमें तुम्हारे मनकी सब बातें हों।

मोहनदास

[पुनश्च]

मेरा इस महीनेमें आना सम्भव नहीं होगा।

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल गुजराती प्रतिकी फोटो-नकल (एस एन ४७८१) से।

२११ पत्र छगनलाल गांधीको

जोहानिसबर्ग
फरवरी १९, १९०६

चि॰ छगनलाल

पत्रमित्र वापस भेज रहा हूँ। राभीके ऊपर टीपें लिख दी हैं। उन्हें देखना। वली मुहम्मद हाजीका उन्हींसे सम्बन्धित पत्र पोरबन्दर भेज देना और उन्हें लिखना कि ऐसा पत्र ओपिनियन में नहीं छापा जाता फिर भी तुमने उसे पोरबन्दरके निदेशक (डायरेक्टर) को भेज दिया है। सारे पत्र मेरे पास देखनेके लिए भेजना जरूरी नहीं है। उनमें से जिन पत्रोंमें शंका हो केवल वही मुझे भेजे जायें।

२११. दक्षिण आफ्रिकामें ब्रिटिश भारतीय[1]

ट्रान्सवाल और ऑरेंज रिवर उपनिवेशमें ब्रिटिश भारतीयोंके सम्बन्धमें वक्तव्य

जोहानिसबर्ग
फरवरी २२, १९०६

चूँकि नई सरकार आ गई है, उत्तरदायी शासन-प्रणाली लागू करनेकी घोषणा की गई है और ट्रान्सवाल तथा ऑरेंज रिवर उपनिवेशके लिए एक नया शासन-विधान तैयार किया जा रहा है, इसलिए मुझे भारतीय प्रश्नको नई सरकारके समक्ष प्रमुख ढंगसे प्रस्तुत करना अत्यावश्यक प्रतीत होता है।

ऐसा लगता है कि निषेध-सम्बन्धी अधिकार सम्राटके लिए सुरक्षित रखे जाने तथा किसी भी प्रकारके वर्गीय कानूनको सम्राटकी स्वीकृतिके लिए उठा रखनेसे सम्बन्ध रखनेवाली साधारण धाराएँ पर्याप्त नहीं हैं। यह देखते हुए कि रंगदार लोगोंके विरुद्ध तीव्र द्वेषभावना — इतनी तीव्र कि लगभग सनक जैसी — फैली हुई है, इन दकियानूसी कानूनोंसे जो भूले-भटके ही कार्यान्वित किये जाते हैं, काम चलनेका नहीं। अगर ब्रिटिश भारतीयोंकी रक्षाका उचित खयाल रखे बिना उत्तरदायी शासन-व्यवस्था स्वीकृत कर दी गई तो उसके अन्तर्गत उनकी दशा आजकलकी अपेक्षा कहीं बदतर हो जायेगी।

मेरा अनुभव बतलाता है कि किसी स्वशासित समाजमें किसी वर्ग विशेषको मताधिकारसे वंचित रखनेका अर्थ उसको पूर्ण रूपसे मिटा देना है। केवल वे ही सदस्य चुने जाया करते हैं जो मतदाताओंकी भावनाओंका प्रतिनिधित्व करते हैं। इसलिए ब्रिटिश भारतीयोंको कुछ प्रभावकारी प्रतिनिधित्व देना होगा या वहाँ रहनेवाले भारतीयोंके नागरिक अधिकारोंका दूसरे रूपसे पूर्ण संरक्षण करना होगा।

ट्रान्सवालमें स्थिति दिनपर-दिन बिगड़ती जा रही है। परवाना-सम्बन्धी प्रतिबन्ध केवल भारतीयोंपर ही लागू किये जा रहे हैं और, जैसा कि *इंडियन ओपिनियन* के पृष्ठोंसे प्रकट होगा वे बहुत ही ज्यादा कष्टकर हैं।

रेलवे प्रशासनने रंगदार लोगोंके लिए मनाही करना शुरू कर दिया है कि कुछ रेलगाड़ियोंसे वे कतई यात्रा न करें। जिन ब्रिटिश भारतीय व्यापारियोंको रेलगाड़ियोंके इस्तेमालकी आवश्यकता निरन्तर पड़ा करती है उनके हकमें इस निषेधका क्या अर्थ होगा इसकी कल्पना सहज ही की जा सकती है। जोहानिसबर्ग बड़े-बड़े फासलोंवाला स्थान है। वहाँ बिजलीकी ट्रामगाड़ी अभी हालमें ही चालू की गई है। रंगदार लोग जिनके लिए घोड़ागाड़ियोंका किराया चुकाना मुश्किल है व्यवहारतः इन ट्राम-गाड़ियोंका इस्तेमाल नहीं कर पाते।

१. यह वक्तव्य गांधीजी द्वारा श्री थियोडोर मॉरिसनको भेजा गया था और उन्होंने उसकी एक प्रति भारत-मंत्रीको २ मार्चको भेजी थी।

तुम्हारा भेजा हुआ पत्र-व्यवहारका बस्ता मिला है। उसे देखकर पार्शिवारको आगे रवाना कर दूंगा।

तुम्हारा शुभचिन्तक
मो० क० गांधी

श्री छगनलाल खुशालचन्द गांधी
मारफत इंडियन ओपिनियन
फीनिक्स

टाइप की हुई मूल अंग्रेजी प्रतिकी फोटो-नकल (एस० एन० ४११३) से।

२१५. सम्राट्‌का भाषण

सम्बन्धित व्यक्तियोंके कथनानुसार जीवित मानवोंकी स्मृतिमें सम्राट्‌के भाषणकी प्रतीक्षा इतनी चिन्ता अथवा आशाके साथ शायद कभी नहीं की गई, जितनी इस सप्ताह साम्राज्यीय संसदके उद्घाटनके अवसरपर सम्राट् एडवर्ड द्वारा दिये गये भाषणकी। और इसमें सन्देह नहीं कि यह एक दूरगामी महत्त्वकी घोषणा है। जिनको उदार दलकी नीतिसे भय है उनकी चिन्ता और भी गहरी हो जायेगी और जिनको उदार दलसे बहुत बड़ी आशाएँ थीं उनकी आशाएँ, जहाँतक बातोंका सम्बन्ध है पूर्ण होंगी।

भारतके पल्ले निराशा पड़ेगी। भारतके बारेमें तो उसमें केवल इतना ही जिक्र है कि सैनिक प्रशासन विषयक कागजात प्रकाशित कर दिये जायेंगे। बंग-भंगका बिलकुल उल्लेख नहीं है और यदि आये हुए समुद्री तारमें सब बातें संक्षेपमें पूरी दी गई हैं तो अकालका भी कोई जिक्र नहीं है। परन्तु यह विश्वास करनेका पूरा कारण है कि जब एक आमूल सुधारवादी प्रधानमन्त्रीके[1] हाथमें बागडोर है और जॉन मॉर्ले जैसे योग्य राजनीतिज्ञ भारत-मन्त्री हैं तब भारत पूर्ण रूपसे उपेक्षित नहीं रहेगा।

परन्तु हमारे लिए तात्कालिक महत्त्वका विषय यह है कि सम्राट्‌की सरकारने ट्रान्सवाल तथा ऑरेंज रिवर उपनिवेश — दोनोंको तुरन्त स्वायत्तशासन देनेका जिसका प्रस्ताव किया गया है दक्षिण आफ्रिकाके इन हिस्सोंके निवासी ब्रिटिश भारतीयोंपर निश्चित क्या प्रभाव पड़ेगा। यह मान लेना तो उचित ही होगा कि जो संविधान उदारदलीय मन्त्रिमण्डल द्वारा बनाया जायेगा वह यथासम्भव गोरे अधिवासियोंके अनुकूल होगा। यह अन्यथा हो भी नहीं सकता। उनको अपने आन्तरिक मामलोंका यथासम्भव पूर्ण नियन्त्रण दे दिया जायेगा। दुर्बल समाजके अधिकारोंकी पूर्ण सुरक्षाकी नीति भी इन्हीं उदार सिद्धान्तोंके आधारपर बनाई जानी चाहिए। इसलिए हमारे विचारसे भारतीयोंके प्रतिनिधित्वके प्रश्नपर सबसे पहले ध्यान दिया जाना चाहिए। एक पूर्ण प्रातिनिधिक सरकारमें भारतीयोंको सर्वथा प्रतिनिधित्व न देना उनको उन विधायकोंकी दयापूर्ण देखरेखमें छोड़ देना होगा जिनके हृदयोंमें उनके लिए कोई दया नहीं होगी क्योंकि उन्हें अपने अधिकारोंके सम्बन्धमें कोई दिलचस्पी न होगी। स्वर्गीय सर जॉन रॉबिन्सनने इस गुप्त तर्कके बावजूद कि ऐसी सभाओंमें प्रत्येक सदस्य आम जनताका सदस्य

1. सर हेनरी कैम्बेल-बैनरमैन, १८३६–१९०८; प्रधानमन्त्री १९०५–८।
2. देखिए खण्ड ३, पृष्ठ १८०।

मजाकोंने भारतीयोंकी समानताका पूरा सवाल ही उठा लिया। अगर कोई रंगदार आदमी न्याय पानेकी चेष्टा करता है, तो तुरन्त शोर मच जाता है कि वह ट्रान्सवालमें गोरोंकी बराबरीका दावा करना चाहता है। स्थिति बिलकुल उपहासास्पद है। जोहानिसबर्गमें एक शक्तिशाली समाज है। उसके पास साहस व्यवसाय-बुद्धि और साधन है पर जब रंगका सवाल आता है तो वह अपनी विवेक-बुद्धि खो बैठता है, और वहाँ खतरेका सन्देह करने लगता है, जहाँ कोई खतरा है ही नहीं। जोहानिसबर्गके लोग शंकित हैं कि अगर उनके साथ ट्रामोंमें रंगदार लोग भी यात्रा करने लगेंगे तो उनकी प्रधानता और श्रेष्ठता खतरेमें पड़ जायेगी। इससे हमें विद्रोहके उस निराधार भयकी याद आ जाती है जो भारतके गवर्नर जनरल लॉर्ड एलनबरोके[1] जमानेमें व्याप्त था। उस जमानेमें अगर कोई छोटी-सी बात भी हो जाती थी तो तुरन्त हाय-तोबा मच जाती और घबराहट फैल जाती थी। यहाँतक कि अपने खरीतेमें परमश्रेष्ठने बड़ी सजीव भाषामें लिखा था कि सैनिक पत्नियाँकी खड़खड़ाहट या झींगुरोंकी झनकार भी सुनते हैं तो डर जाते हैं। लॉर्ड एलनबरोने शताब्दीके पाँचवें दशकके प्रारम्भमें सैनिकोंके सम्बन्धमें जो लिखा है, उससे जोहानिसबर्गके कुछ लोगोंकी हालत ज्यादा भिन्न नहीं है। श्री मैकी निवेन और उनके पाँच समर्थकोंने थोड़ा न्याय करनेकी वकालत व्यर्थ ही की। सवालके आर्थिक पहलूके बारेमें उनका तर्क अमान्य कर दिया गया और छः के विरुद्ध सोलहके बहुमतसे नगर-परिषदने उस अन्यायको स्थायी रूप देनेका फैसला किया जो ट्राम-प्रणालीके मुख्य प्रबन्धकने अपनी सिफारिशोंके रूपमें रंगदार समाजके प्रति किया था। एक वक्ताने कहा कि रंगदार लोग कोई कर नहीं देते इसलिए उन्हें ट्रामोंका उपयोग करनेका कोई अधिकार नहीं है। ऐसी विद्वत्ताका लाभ मुर्खतापूर्वक जोहानिसबर्गको नगर-परिषदके सदस्योंसे मिलता है। उक्त सदस्य आसानीसे यह बात भूल गया कि भारतीय जोहानिसबर्गमें मकानोंमें ही रहते हैं और उनके लिए उनको किराया और कर दोनों ही देने पड़ते हैं। हम उनको सूचित करना चाहते हैं कि लगभग ४ रंगदार लोगोंको जो मलय बस्तीमें रहते हैं, अपने कच्चेपक्के बाड़ोंका मामूलीसे ज्यादा किराया और कर अदा करना पड़ता है। उनमें और जोहानिसबर्गके दूसरे अधिवासियोंमें फर्क यह है कि उनको ज्यादा कर देकर भी वे सेवाएँ प्राप्त नहीं हैं जो दूसरोंको हैं। मलय बस्तीकी सड़कोंसे जो भी गुजर चुका है, इसकी तसदीक कर सकता है। ट्रान्सवालमें स्थायी रूपसे आबाद भारतीयको जो अभी लौटा है, यहाँ पहुँचनेपर पता चलेगा कि वह न केवल ट्रामोंके उपयोगसे वंचित कर दिया गया है, बल्कि अपनी पसन्दकी किसी रेलगाड़ीसे यात्रा भी नहीं कर सकता क्योंकि रेल-प्रशासनने भी रंगदार लोगों द्वारा कुछ सार्वजनिक रेलगाड़ियोंका उपयोग वर्जित कर दिया है। एक अन्य स्तम्भमें हम वह पत्र-व्यवहार छाप रहे हैं जो कार्यवाहक मुख्य यातायात प्रबन्धक और ब्रिटिश भारतीय संघके अध्यक्षके बीच हुआ है। इससे यह मालूम होता है कि रेल-प्रशासनने स्टेशन मास्टरोंको सूचना दे दी है कि वे जोहानिसबर्ग और प्रिटोरियाके बीच चलनेवाली कुछ रेल-गाड़ियोंमें भारतीयों तथा दूसरे रंगदार लोगोंको बैठनेकी इजाजत न दें। श्री अब्दुल गनीने रेलवे-प्रशासनको इसके सम्बन्धमें कड़ा विरोधपत्र भेजा है और हम केवल आशा कर सकते हैं कि भारतीयोंको अपमानित करनेका यह बिलकुल नया तरीका खत्म कर दिया जायेगा। किन्तु इसमें सवाल सिर्फ व्यापारियोंकी बेइज्जतीका ही नहीं है उनकी असुविधा और हानिका भी है।

१. १८४२-४४।
२. देखिए "पत्र : दादाभाई नौरोजी" पृष्ठ १९८-९।
३. देखिए "पत्र : कार्यवाहक मुख्य यातायात प्रबन्धकको" पृष्ठ १९९।

इस तरह वर्ग-द्वेषने एक नया रूप ले लिया है अर्थात् अब भारतीयोंकी आर्थिक क्षति भी होने लगी है।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन २४–२–१९०६

२१७ प्रतिबन्धकी लहर

ऐसा जान पड़ता है कि दुनिया-भरमें विभिन्न राज्य प्रतिबन्धकी ... रहे हैं। तीस साल पहले अमेरिकी प्रजातन्त्रके तत्कालीन राष्ट्रपति[1] ने ... था कि हर आदमीका अमेरिकामें स्वागत है और वह उसकी बदौलत ... नागरिक हो जाता है। आज अमेरिका दूसरी ही नीतिपर चल रहा है। ... नयाके आगमनपर प्रतिबन्ध लगाना जरूरी समझता है और इसने चीनि[यों] ... समुद्री तारोंमें पढ़ा है कि कुछ दिन पहले रूसियोंके अत्याचारोंसे भाग ... कुछ यहूदियोंको इंग्लैंडमें प्रविष्ट नहीं होने दिया गया। इनमें से एक यहूदीने कहा ... लौटनेकी अपेक्षा आत्महत्या कर लेना अधिक पसन्द करता हूँ। इस स्थितिसे बचनेके लिए मैंने अपना सब धन खर्च कर दिया है।" तारीख ११ के नेटाल गवर्नमेंट गजटमें पश्चिम आफ्रिकी संरक्षित राज्यके एक आज्ञापत्रका अनुवाद छपा है। इसमें बताया है कि यदि प्रवेशार्थी [illegible] जातिका है तो जर्मन दक्षिण-पश्चिम आफ्रिकामें उसका प्रवेश उपयुक्त अधिकारियों द्वारा वर्जित किया जा सकता है। इसमें और भी निषेधात्मक धाराएँ हैं। इस प्रकार समस्त आफ्रिकामें किसी-न-किसी रूपमें गम्भीर रूप लेती जा रही है। इस सम्बन्धमें यहाँ एक बात स्मरण करना उचित है। कुछ समय पहले जर्मन सम्राट्ने ही यह विचार प्रचारित किया था कि जापानकी पीतवर्णकी प्रभुत्व-वृद्धिके प्रयत्न बीज रूपमें छिपे हैं। यद्यपि यूरोपके कुछ हिस्सोंमें इस विचारको मान्यता प्राप्त है फिर भी सामान्य धारणा यह है कि जर्मन सम्राट्का अविवेकपूर्ण था और इस प्रकारका कोई भय है ही नहीं। इसके साथ ही अगर यूरोपके बड़े राष्ट्रों द्वारा रंग-भेदका युद्ध चलाया जायेगा तो यह कहना असम्भव है कि जापान नागरिकोंका खुल्लमखुल्ला अपमान होता देख कर भी सदा मौन बैठा रहेगा। यह बात तर्क-विरुद्ध होगी कि वह एक ओर जापानको प्रथम कोटिकी शक्ति मानता रहे और दूसरी ओर उसके अधिवासियोंके साथ ऐसा व्यवहार करे, मानो वे असभ्य हों।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन २४–२–१९०६

१ यूलिसिस सिम्पसन ग्रांट (१८२२–८५), संयुक्त राज्य अमेरिकाके १८वें राष्ट्रपति (१८६९–७७) ... मार्च १, १८७० को संविधानका १५वाँ संशोधन हुआ। इसके द्वारा व्यवस्था की गई कि नागरिक ... पूर्व-दासताके कारण किसीको मताधिकारसे वंचित नहीं किया जा सकता।

२१८. अनुमतिपत्रका काठ[1]

ट्रान्सवालमें प्रवेशके अनुमतिपत्र प्राप्त करनेमें गरीब शरणार्थियोंके रास्तेमें जो कठिनाइयाँ उपस्थित की जाती हैं, उनके बारेमें हम इतना सुनते और पढ़ते हैं कि हमने अगले हफ्तेसे उपर्युक्त शीर्षकसे एक नया स्तम्भ आरम्भ करनेका निश्चय किया है। हम इसमें उन सब ब्रिटिश भारतीय शरणार्थियोंकी नामावली छापेंगे जिनको आवेदनपत्र भेजे दो माससे अधिक हो जानेपर भी अभी तक अनुमतिपत्र नहीं दिये गये हैं। यह बात नहीं है कि हम ऐसे आवेदनपत्रोंपर विचार करनेके लिए दो मासका समय उचित समझते हैं, लेकिन चूँकि हमारे सुननेमें आता है कि बहुतसे आवेदनपत्रोंको छः माससे ज्यादा समय हो गया है इसलिए हमने अपेक्षाकृत बड़ी बुराईको चुनने और प्रकाशित करनेका निश्चय किया है। तुलनात्मक दृष्टिसे दो मास पुराने आवेदनपत्र फिलहाल सामान्य समझे जा सकते हैं किन्तु उनसे पुराने आवेदनपत्रोंके विषयमें यह कहनेमें हमें हिचकिचाहट नहीं है कि उनकी मुद्दत ही शरणार्थियोंके हितोंके प्रति अधिकारियोंकी घोर उदासीनता प्रकट करती है। इसलिए जो लोग ट्रान्सवालके अनुमतिपत्र-अधिकारियोंकी सख्तीसे परेशान हैं उन सबसे हमारा निवेदन है कि वे हमें अपने नाम पते और आवेदनपत्रोंकी तिथियाँ भेजकर अपनी मदद स्वयं करें। हम यह नहीं कहते कि ये सब लोग प्रामाणिक शरणार्थी हैं पर हम यह अवश्य कहते हैं कि इन सबको एक निश्चित और स्पष्ट उत्तर पानेका हक है, जिससे उन्हें अनिश्चित दशाकी अवस्थामें न रहना पड़े। हमें मालूम हुआ है कि कुछ ऐसे लोग भी हैं जिनके पास पुरानी डच सरकार द्वारा जारी किये गये पंजीकरण प्रमाणपत्र हैं। उनका आज अपने अपमानजनक ढंगसे देश-निकाला मिला हुआ है। लॉर्ड सेल्बोर्नने दो वादे किये हैं। उन्होंने एक वादा गोरे समाजसे यह किया है कि कोई गैर-शरणार्थी भारतीय ट्रान्सवालमें न आने दिया जायेगा और इसका पालन धर्माचारकी भाँति किया जा रहा है। परमश्रेष्ठने दूसरा वादा भारतीय समाजसे किया है और वह है कि शरणार्थियोंके सब आवेदनपत्रोंपर अत्यन्त शीघ्रतासे विचार किया जायेगा और उनको देशमें प्रवेश करनेकी पूरी सुविधाएँ प्रदान की जायेंगी। हमें जो जानकारी प्राप्त है वह यदि सही है तो उनका पिछला वादा अभी पूरा होना शेष है। हमें आशा है कि हमारे पाठक एक ऐसी स्थितिको जो असह्य हो गई है सुलझानेमें हमारी मदद करेंगे।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन २४-२-१९०६

२१९. लन्दनकी मैट्रिक परीक्षामें तमिल

इस उपनिवेशके तमिल अधिवासियोंने लन्दन विश्वविद्यालयको इस आशयका प्रार्थनापत्र भेजा था कि विश्वविद्यालयकी मैट्रिक परीक्षाके वैकल्पिक विषयोंमें तमिलको भी एक विदेशी भाषाके रूपमें मान्य किया जाये। हमें उसका उत्तर लन्दन विश्वविद्यालयके वैदेशिक रजिस्ट्रार (रजिस्ट्रार) से अधिकृत प्राप्त हो गया है। यद्यपि इस विषयमें मद्रास सरकारने प्रमुख सभा

1. [illegible]

2. देखिए खण्ड [illegible], पृष्ठ ४८३ भी देखिए।

(सिनेट)से कोई सिफारिश नहीं कर पाई है तथापि हमारा यह विचार है कि मामलेको यहीं छोड़ देनेकी आवश्यकता नहीं है। लन्दन विश्वविद्यालयमें कोई परिवर्तन कराना बहुत कठिन है, किन्तु यदि संसार-भरका तमिल समुदाय दृढ़तापूर्वक जारी रखेगा तो हमें सन्देह नहीं कि तमिल भाषा जिसमें अन्य भारतकी प्रतिनिधि है लन्दनकी मैट्रिक परीक्षाके पाठ्यक्रममें शामिल कर विकल्पसे प्राप्त उत्तर दूसरे स्तम्भमें छाप रहे हैं।[1]

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन २४-२-१९०६

२२० पत्र : दादाभाई नौरोजीको

ब्रिटिश भारतीय संघ

२५ व १९
रिसि[illegible]

फरवरी

सेवामें
माननीय दादाभाई नौरोजी
२२ केनिंग्टन रोड
लन्दन

प्रिय महोदय

मैं ट्रान्सवाल और ऑरेंज रिवर कालोनीमें भारतीयोंकी स्थितिका संक्षिप्त विवरण साथ भेज रहा हूँ।[2]

मेरा खयाल है कि एक संयुक्त शिष्टमण्डलको इस स्थितिके बारेमें मिलना[3] चाहिए।

आपका
मो०

नत्थी–१

मूल अंग्रेजी प्रतिकी फोटो-नकल (जी० एन० २२७०) से।

१. यह यहाँ नहीं दिया जा रहा है।
२. देखिए "दक्षिण आफ्रिकावासी ब्रिटिश भारतीय" पृष्ठ १००-८।
३. जॉन मॉर्ले और लॉर्ड एलगिन।

२२१. जोहानिसबर्गकी चिट्ठी[1]

फरवरी २६, १९०६

ट्रामका मुकदमा

आजकल जोहानिसबर्गमें भारतीयोंके बीच ट्रामकी चर्चा चल रही है। फोर्डसबर्गमें बहुत-से भारतीय रहते हैं और फोर्डसबर्गसे मार्केट स्क्वेयर तक बिजलीकी ट्राम चलती है। इसलिए लोग सहज ही सवाल पूछते हैं कि भारतीय ट्राममें क्यों नहीं बैठ सकते। और काले लोगोंको ट्रामसे दूर रखना अधिकारियोंको भी मुश्किल जान पड़ रहा है। जोहानिसबर्गकी परिषदने जो विचार किये थे वे ठंडे पड़ गये हैं। और काले लोग इस ट्राममें बैठ सकते हैं इस आशयकी तख्तियाँ लगी हुई ट्रामें चलाई जा रही हैं। एक ओर गोरे यह जताते हैं कि उन्हें भारतीयोंके साथ बैठनेमें आपत्ति है और दूसरी ओर उक्त तख्तियोंवाली ट्रामोंमें काले लोगोंके साथ बहुतेरे गोरे भी बैठे दिखाई देते हैं। इस सम्बन्धमें श्री कुवाडियाके मामले एक परीक्षात्मक मुकदमा चलानेकी तजवीज हो रही है। श्री कुवाडिया परीक्षात्मक मुकदमा चलानेके विचारसे श्री मैकिन्टायरके साथ बिना तख्तीवाली ट्राममें बैठने गये थे। उन्हें एक ट्राममें बैठने दिया गया। दूसरी ट्राममें बैठते समय कंडक्टरने कहा कि अगर वे श्री मैकिन्टायरके नौकर हैं तो बैठ सकते हैं लेकिन यदि एक साधारण नागरिकके नाते बैठना हो तो बैठनेकी इजाजत नहीं मिलेगी। इस विषयपर अखबारोंमें भी चर्चा चल रही है। स्टार अखबारमें श्री वाक्साकाने जो लेख लिखा था उसके विरुद्ध एक गोरेने कड़ा लेख लिखा। श्री वाक्साकाने उसका माकूल जवाब दिया है। और दूसरे दो गोरोंने भी लिखा है। उनमें से एकने विरोधमें और दूसरेने पक्षमें लिखा है।

ट्रान्सवालके लिए उत्तरदायी शासन

ट्रान्सवालको जल्दी ही उत्तरदायी शासन प्राप्त हो जायेगा। इसके कारण अंग्रेज गोरोंमें खलबली मच रही है क्योंकि डर यह है कि उत्तरदायी शासनाधिकार मिलनेसे डच लोगोंका बल बढ़ेगा और इसके कारण खानवालोंको धक्का पहुँचेगा। इसके बावजूद सारे जोहानिसबर्गमें सब कहीं इमारतें बाँधनेके काम हो रहे हैं। इससे पता चलता है कि यहाँके लोगोंने अभी हार नहीं मानी है बल्कि आशा लगाये हैं कि सम्पन्नता आयेगी। व्यापार बिलकुल मन्द है यह और भी मन्द होगा। पहले धनी लोग और डच लोग हर शनिवारको रुपये पैसेका भारी लेनदेन करते थे। डच लोग तो कंगाल बन गये हैं और धनी भी पहले जितने खुले हाथों पैसा खर्च करते थे उतना अब नहीं करते।

लॉर्ड सेल्बोर्नकी विवेकशीलता

ब्रिटिश भारतीय संघने लॉर्ड सेल्बोर्नको अनुमतिपत्रों ट्रामों और रेलगाड़ियोंके विषयमें लिखा है। लॉर्ड सेल्बोर्नने उसका जवाब अपने हस्ताक्षरोंसे निजी तौरपर दिया है। उन्होंने लिखा है कि वे इन तीनों मामलोंकी पूरी जाँच करेंगे और फिर पत्र लिखेंगे। इसमें यह आशा की जा सकती है कि लॉर्ड सेल्बोर्न कुछ-न-कुछ सुनवाई जरूर करेंगे।

1. ये मूलतः "जोहानिसबर्ग संवाददाता द्वारा प्रेषित" रूपमें इंडियन ओपिनियनमें समय-समयपर प्रकाशित किये जाते थे।

है। और तमाम संकटोंमें हमने आपको सदा एक तत्पर नेता पाया है। आपने कांग्रेसकी बैठकोंकी अध्यक्षता सदैव कुशलता और दूरदर्शितासे की है। और जब-जब उनकी माँग हुई समाजके नेताकी हैसियतसे आपने सदा अपना योग दिया है।

अब आप अपने सु-अर्जित विश्रामका उपभोग करनेके लिए भारत जा रहे हैं। इसलिए हम कामना करते हैं कि हम सबकी जन्म-भूमिमें आपका और आपके आत्मीयोंका अस्थावास सुखमय तथा सफल हो। हम आशा करते हैं कि आप शीघ्र ही हमारे बीच लौटकर फिरसे अपने समाजके कल्याणके कार्य उठा लेंगे।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन ३-३-१९०९

२२३. भाषण: अब्दुल कादिरकी विदाईपर

श्री अब्दुल कादिरको मानपत्र भेंट करनेके बाद गांधीजीने जो भाषण दिया उसका विवरण नीचे दिया जा रहा है :

डर्बन
[फरवरी २८, १९०९]

श्री मो० क० गांधीने सभामें पहले अंग्रेजीमें और फिर गुजरातीमें भाषण दिया। उन्होंने कहा कि श्री अब्दुल कादिर एक ऐसे पुरुष हैं, जिन्होंने नेटालके भारतीय समाजकी बहुत सेवा की है। उन्होंने राजनीतिक मामलोंमें जो हिस्सा लिया है उसका ज्ञान कदाचित् आज शामकी इस सभामें उपस्थित अनेक सज्जनोंकी अपेक्षा मुझे अधिक है। उनसे पूर्व कांग्रेसकी अध्यक्षताका भार जिन्हें उठाना पड़ा वे योग्य और समर्थ व्यक्ति थे जिन्होंने समाजके लिए उत्तम काम किया था और उनका अनुसरण करना कोई सरल काम नहीं था। परन्तु मुझे यह कहते हुए बिलकुल संकोच नहीं कि यह उत्तरदायित्व योग्य व्यक्तिके कन्धोंपर पड़ा। कांग्रेसकी आर्थिक स्थिति दृढ़ करनेके लिए श्री अब्दुल कादिरने बहुत परिश्रम किया और यह अधिकतर उनकी कोशिशोंका ही फल है कि हमें इतनी सफलता प्राप्त हुई है।

श्री गांधीको इस सिलसिलेमें एक घटना याद आई। जब श्री अब्दुल कादिर और कांग्रेसके अन्य सदस्य चन्दा इकट्ठा कर रहे थे वे टोंगाट गये। वहाँ उनके एक देशवासीने चन्दा देनेमें आनाकानी की। परन्तु श्री अब्दुल कादिर हार माननेवाले नहीं थे। इसलिए सुबह तक वे और उनके साथी वहीं डटे रहे। रातको भूमिपर बिछे हुए टाटपर सोये। सबेरे जब "शत्रु" ने हार मान ली उन्हें अपने धैर्यका फल मिल गया[1]।

ऐसा है हमारे अतिथिका चरित्र। जब-जब भी कोई काम आ पड़ा श्री अब्दुल कादिर अपना समय और ध्यान देनेके लिए तत्पर मिले। श्री गांधीने कामना की कि श्री अब्दुल कादिर और उनके परिवारकी भारत-यात्रा आनन्दमयी हो और वे कुशलतापूर्वक लौटें।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन ३-३-१९०९

१. देखिए खण्ड ३, पृष्ठ १२।

२२४ राजवंशके सदस्योंका स्वागत

हम महाविभव ड्यूक ऑफ कनॉट, उनकी पत्नी और राजकुमारी पैट्रीशियाका स्वागत करते हैं। यह बात ध्यान देने योग्य है कि राज-कुटुम्बके तीन सदस्य दो तो महामहिम सम्राट्के उपनिवेशोंमें गये हैं और तीसरे एक ऐसे देशमें जो इंग्लैण्ड है। इंग्लैंडके भावी राजा और रानी भारतमें भ्रमण कर रहे हैं और अपने व्यवहार तथा स्वभावसे भारतीयोंके प्रेम-भाजन बन रहे हैं। राजकुमार ऑर्थर जापान और [illegible] मित्रभावका सम्बन्ध दृढ़ कर रहे हैं। और हमारे राजकीय मेहमान अपने सामान्य [illegible] आफ्रिकियोंके प्रिय बनते जा रहे हैं। राज-कुटुम्बके तीन सदस्योंको लगभग एक ही [illegible] बाहर जानेकी आज्ञा देकर महामहिम सम्राट् और साम्राज्ञीने यह प्रकट कर दिया [illegible] साम्राज्यपर वे इतनी योग्यतासे शासन करते हैं उसके कुशल-क्षेमका उनको कितना [illegible] साम्राज्यके उज्ज्वल भविष्यका एक सुखद लक्षण है कि स्वर्गीया महारानी [illegible] पुत्र उनके वचनोंमें आ गये हैं। हम सर्वशक्तिमान प्रभुसे जो हम सबका पिता [illegible] प्रार्थना करते हैं कि वह उनको दीर्घायु करे, ताकि वे साम्राज्यकी परम्पराओंका पालन करते रहें।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन ३-३-१९०६

२२५ भारतीय और उत्तरदायी शासन[1]

ट्रान्सवालको पूर्णतम और अत्यन्त व्यापक रूपमें उत्तरदायी शासन दिया जायेगा; इसलिए ट्रान्सवालकी खानों और खेतोंमें चीनी मजदूरोंको लगानेकी अनुमति देने या न देनेका निर्णय करने और उन्हींपर सामान्य तौरपर नियन्त्रण रखनेका अधिकार विधानसभाको रहेगा। लेकिन यह निहायत जरूरी है कि वर्तमान अध्यादेश उसको विरासतमें न मिले। नये विधानमें ऐसी निर्योग्यता रखना अनुपयुक्त और असम्मानजनक होगा जिससे यह ध्वनि निकलती जान पड़े कि हम मानते हैं ट्रान्सवाल हमारी अधिकार-सम्पदाके विरुद्ध कार्य करेगा। किन्तु हर एक स्वयंशासित उपनिवेशके संविधानमें रक्षित धाराके अनुसार गवर्नरको यह हिदायत करनेका प्रस्ताव किया गया है कि मजदूरोंके लाने ले जानेके बारेमें जो भी कानून बनाये जायें वे साम्राज्यीय संसद्में विचार तथा स्वीकृतिके लिए सुरक्षित रखे जाने चाहिए। वर्तमान अध्यादेशसे मिलते-जुलते कानूनका विरोध किया जा सकता है यद्यपि हम कल्पना नहीं करते कि ऐसी विरोध स्थिति उत्पन्न होगी।

ये बातें श्री एस्क्विथने चीनी विवादके अवसरपर कहीं। उनसे भारतीय प्रश्नसे मिलते-जुलते एक प्रश्नके बारेमें इंग्लैंडकी सरकारकी स्थिति संक्षेपमें स्पष्ट हो जाती है। चीनी श्रमिक अध्यादेश साम्राज्यकी परम्पराओंके प्रतिकूल है और ऐसे ही भारतीय-विरोधी कानून भी है। फर्क केवल यह है कि भारतीय-विरोधी कानून अधिक आपत्तिजनक है और उसका रद करना अनिवार्य

१ यह इंडिया के मार्च ८, १९०६ के अंकमें भी प्रकाशित हुआ था।

सरल भी है, क्योंकि यह उस सरकारकी देन है परन्तु चीनी श्रमिक अध्यादेश पिछली सरकार की रचना है। फिर भी उदारदलीय कोष-मन्त्रीको यह कहनेमें हिचकिचाहट नहीं हुई कि यह नेटालकी शीघ्र स्थापित होनेवाली उत्तरदायी सरकारको विरासतके रूपमें नहीं सौंपा जाना चाहिए। तब यदि ट्रान्सवालको "एक पूर्णतम और अत्यन्त व्यापकरूपका उत्तरदायी शासन" देना ही है तो जहाँतक एशियाई-विरोधी कानूनका सम्बन्ध है उसके सम्मुख बिलकुल कोरा क्षेत्र उपस्थित किया जाना चाहिए। जैसा कि दो साल पहले सर विलियम वेडरबर्नने श्री चेम्बरलेनसे अत्यन्त स्पष्ट रूपसे कहा था सम्राट्की सरकारका कर्त्तव्य उन सरकारके उन सब कानूनोंको खत्म कर देना है जिनसे युद्धकी उत्तेजना प्राप्त हुई थी। फिर यह ट्रान्सवालके लोगोंपर छोड़ देना चाहिए कि वे ब्रिटिश सरकारके विचारार्थ जैसा पसन्द करें, वैसा कानून पेश करें। अगर यह सुझाव मंजूर नहीं किया जाता तो फिर भारतीय स्थितिकी रक्षाका दूसरा एक यही उपाय रह जाता है कि निषेधाधिकारकी सामान्य धाराके साथ ही नये संविधानमें एक रक्षात्मक धारा जोड़ दी जाये। श्री एस्क्विथके शब्दोंमें ऐसा करना अनुपयुक्त और असम्मानजनक होगा क्योंकि इससे ट्रान्सवालके विरुद्ध इस आरोपका आभास मिलेगा कि वह साम्राज्यकी "अधिकार-कल्पना" के "विपरीत कार्य करना चाहता है। अगर इस सवालपर साम्राज्य-सरकार निर्हस्तक्षेपकी नीतिका अनुसरण करना चाहती है और उत्तरदायी शासनकी स्थापनासे पूर्व भारतीय-विरोधी कानून वापस नहीं लिया जाता है तो उत्तरदायी सरकार उस कानूनको मिटानेसे इनकार करनेकी पूर्ण अधिकारी होगी जिसको सम्राट्की सरकारने छूनेका भी साहस नहीं किया।

पुनरावृत्तिका खतरा होनेपर भी भारतीय स्थितिपर विचार कर लेना ज्यादा अच्छा होगा। १८८५ के कानून ३ और सिर्फ एशियाइयोंके लिए बनाये गये अन्य कानूनों और उपनियमोंको रद कर देनेकी माँग भारतीय हमेशा करते आये हैं। किन्तु उनकी इस माँगके साथ इस शर्तकी जोरदार घोषणा भी जुड़ी रहती है कि वे देशमें जैसा कि कहा जाता है भारतीयोंको भर देना नहीं चाहते और न गोरोंका व्यापार, विशेषतः काफिरोंके साथ चालू व्यापार ही हथियाना चाहते हैं। उन्होंने अपने लिए केवल उचित क्षेत्र माँगा है, कोई रियायत नहीं। अपनी सचाई प्रमाणित करनेके लिए उन्होंने सामान्य ढंगके प्रतिबन्धात्मक कानूनका सिद्धान्त भी स्वीकार कर लिया है। केप या नेटालमें जिस ढंगका प्रवासी-प्रतिबन्धक कानून है उस ढंगके कानूनसे नये लोगोंके प्रवेशका सवाल पूर्ण रूपसे हल हो जायेगा बशर्ते कि उसमें प्रमुख भारतीय भाषाओंको मान्यता दी गई हो और वर्तमान व्यवसायोंको चलानेके लिए जितने लोगोंकी आवश्यकता हो उतने लोग देशमें लानेकी छूट रहे। जहाँतक व्यापारकी बात है, भारतीयोंका सुझाव है कि व्यापारके नये अनुमतिपत्र देनेका नियन्त्रण स्थानीय निकायोंके हाथमें रहे और उनके निर्णयोंपर सर्वोच्च न्यायालयको पुनर्विचार करनेका अधिकार हो। अधिकसे-अधिक इस सीमा तक न्यायोचित रूपसे प्रतिबन्ध लगाये जा सकते हैं। एशियाई-विरोधी आन्दोलनके मूलमें व्यापारिक ईर्ष्या और भारतीय आक्रमणका हौआ ही है। यदि ये दो खतरे दूर कर दिये जायें तो भारतीयोंकी स्वतन्त्रताको और भी कम करने अथवा उनको अनावश्यक रूपसे अपमानित करनेका कोई औचित्य नहीं रह जाता। भारतीयोंको भू-सम्पत्ति खरीदने अथवा स्वतन्त्रतापूर्वक चलने-फिरनेसे वंचित रखना या उनके साथ प्राचीन गुलामोंकी तरहका सलूक जारी रखना निश्चय ही अत्याचारी, अनुचित और ब्रिटिश परम्पराके असंगत होगा।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन ३-३-१९०६

२२६. केपके भारतीय व्यापारी

हमारे केपके संवाददाताने केपके छोटे भारतीय दुकानदारोंकी कुछ उसपर हमने अपने विचार कुछ समय पूर्व इन स्तम्भोंमें प्रकाशित किये थे। हमारे उत्तरमें उक्त संवाददाताने हमें एक पत्र भेजा है। उसको हम यहाँ छाप रहे हैं। हमारा यह खयाल है कि यदि जेम्स डुलेटकी[1] गवाही केपपर भी उसी प्रकार लागू पराग नेटालपर। भारतीय वहाँ भी वैसे ही हैं जैसे नेटालमें। और यदि उनके गाम तौरपर लाभ हुआ है तो केपमें भी वहाँ आर्थिक स्थितियाँ उसी प्रकार हैं, उनसे बिना नहीं रह सकता। किन्तु खास मुद्दा जिसकी ओर हमने निरन्तर ध्यान दिलाया निन्दकों द्वारा भारतीय व्यापारियोंपर लगाये गये अनुचित आरोप गलत सिद्ध नहीं हमने दक्षिण आफ्रिका अथवा उसके किसी भी हिस्सेमें भारतीयों ग भर देनेकी नीतिका समर्थन कभी नहीं किया है किन्तु हमारा यह अवस्य रि यह मसला प्रतिबन्धात्मक कानूनोंके बिना भी तय किया जा सकता है। हमारे संवाददाता केप कालोनीके विभिन्न जिलोंके यूरोपीय और भारतीय व्यापारियोंका विवरण तैयार कर सकें तो इससे निश्चय ही सवालको हल करनेमें मदद मिलेगी। पास जो जानकारी है उससे तो हमारा खयाल यही होता है कि केपमें भारतीय व्यापारी अल्पमतमें हैं।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, १-३-१९०६

२२७. मध्य दक्षिण आफ्रिकी रेल-प्रणालीमें[2] भारतीय यात्री

एक संवाददाताने हमारे गुजराती स्तम्भोंमें लिखा है कि पिछली २६ फरवरीको जो गाड़ी जोहानिसबर्गसे डर्बनको रवाना हुई, उसके दूसरे दर्जेके एक डिब्बेमें उसने सात भारतीय यात्री बैठे देखे। उनमें एक भारतीय महिला भी थी। वह आगे कहता है कि उनमें आठवाँ यात्री जर्मिस्टनमें आ गया जिससे दूसरे यात्रियोंको बड़ी तकलीफ हुई। रातकी यात्रामें दूसरे दर्जेके एक सामान्य डिब्बेमें मुश्किलसे छः यात्री समा सकते हैं। हम समझते हैं, यात्रियोंको लम्बी यात्रामें रातकी गाड़ियोंमें सोनेकी जगह लेनेका हक होता है। हमारे संवाददाताने यह नहीं लिखा कि उसने जिसका उल्लेख किया है उस अवसरपर गाड़ीमें असाधारण भीड़ थी। किन्तु जो भी हो इतने यात्रियोंको जबकि उनमें से एक नारी भी पशुओंकी तरह भर देनेके औचित्य पर हम सन्देह किये बिना नहीं रह सकते। ऐसे मामलोंमें भारतीय महिलाओंका भी हक है कि उनका कुछ विशेष ध्यान रखा जाये। भारतीयलोगोंको यह खयाल पानेका अधिकार है जिसके

१. देखिए खण्ड ४, पृष्ठ २९८।
२. सी० एस० ए० आर० या सेंट्रल साउथ आफ्रिकन रेल्वे।

लिए वे पैसा देते हैं। उनको नाम भरके लिए दूसरे या पहले दर्जेकी सुविधाएँ देना और वस्तुतः उनसे वंचित रखना हास्यास्पद होगा। हम रेलवे अधिकारियोंका ध्यान अपने संवाददाता द्वारा की गई शिकायतकी ओर आकर्षित करते हैं और हमें इसमें कोई सन्देह नहीं है कि वे ऐसी शिकायतें भविष्यमें न हों इसके लिए जरूरी कदम उठायेंगे।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन ३–३–१९०६

२२८. मिडिल्बर्गसे गुजरनेवाले भारतीयोंको सूचना

सुननेमें आया है कि मिडिल्बर्ग स्टेशनसे गुजरनेवाले भारतीयोंका परवाना हमेशा देखा जाता है। साधारणतया ट्रान्सवालकी सरहदपर बसे हुए स्टेशनोंके सिवा और कहीं ऐसा नहीं होता सिर्फ मिडिल्बर्गमें ही इस तरहकी कार्यवाही होती पाई जाती है। इस विषयमें मिडिल्बर्गके हमारे पाठक अधिक जानकारी भेजेंगे तो हम उसे छापेंगे। इस बीच मिडिल्बर्ग जानेवाले मुसाफिरोंको ऊपर दी हुई हकीकत ध्यानमें रखनी चाहिए।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन ३–३–१९०६

२२९. जोहानिसबर्गकी चिट्ठी

मार्च ३, १९०६

ट्रामका मुकदमा

इस पत्रके छपनेसे पहले बहुत करके ट्रामके परीक्षात्मक मुकदमेका[1] फैसला हो चुका होगा। कई कठिनाइयोंके बाद बर्गके वकीलने श्री कुवाडियाका हलफनामा मंजूर करके जिस ट्रामवालेने उन्हें बैठनेसे रोका था उसके नाम सम्मन जारी किया है। यह मामला ७ मार्चको चलनेवाला है। इस बीच अखबारोंमें ट्रामपर विवाद चल रहा है। एक गोरेने श्री वाल्शालाको एक उद्धत पत्र लिखकर यह बताया है कि गोरे ट्राममें काले लोगोंको कभी अपने साथ नहीं बैठने देंगे। दूसरे कुछ लोगोंने लिखा है कि अगर काले लोगोंको ट्राममें बैठने दिया गया तो यह माना जायेगा कि उन्हें गोरोंकी बराबरीका दर्जा दिया गया है। इसलिए उन्हें कभी बैठने नहीं देना चाहिए। इस तरह दो-चार मुफ्तखोर अखबारोंमें लिखते रहते हैं। इस बीच खास काले लोगोंके लिए चलनेवाली ट्रामगाड़ीमें गोरे बिना किसी दुराव के बैठते हैं। ऐसे शहरकी बलिहारी!

चीनी मजदूर

इस समय सब लोगोंके मनमें यह सवाल चल रहा है कि चीनी लोगोंको निकाल देंगे या रखेंगे। विलायतके तारसे पता चलता है कि जिसे पसन्द न हो उस चीनीको सरकारने

[1] देखिए "जोहानिसबर्गकी चिट्ठी" पृष्ठ २१५–६।

काम लेना असम्भव हो तो काम शुरू करनेके पहले मुझे तार कर देना। एक बार वचन देनेपर उन्हें पूरा करना मैं बहुत ही जरूरी मानता हूँ।

मोहनदासके आशीर्वाद

श्री छगनलाल खुशालचन्द गांधी
मारफत 'इंडियन ओपिनियन'
फीनिक्स

मूल अंग्रेजी प्रतिकी फोटो-नकल (एस० एन० ४११५) से।

२३२. पत्र : छगनलाल गांधीको

जोहानिसबर्ग
मार्च ५, १९०६

[illegible] लिखते हैं कि वे केप टाउनके ग्राहकों और विज्ञापनदाताओंकी सूचीका इन्तजार कर रहे हैं। आशा करता हूँ कि यदि अबतक न भेजी गई हो तो तुम उसे तत्काल रवाना कर दोगे।

दादा उस्मान तुमसे इंग्लैंड, भारत और दक्षिण आफ्रिकाके प्रमुख समाचारपत्रोंके नाम माँगेंगे। तुम हेमचन्दसे कह सकते हो, हम जिन पत्रोंको 'इंडियन ओपिनियन' भेजते हैं उनकी सूची बना दे। श्री दादा उस्मानको वह सूची दे देना।

छपाईका फुटकर काम लेते वक्त इस बातका बहुत खयाल रखना है कि नकद पैसा मिले बिना अजनबियोंके ऑर्डर स्वीकार न किये जायें। इनकार करनेमें हिचकनेकी जरूरत नहीं है। उधारवाला काम सिर्फ ऐसे वसूली और नियमित ग्राहकोंका ही किया जाये जो पसके मददगार भी हों। इस मामलेमें सुविधाका काम नहीं है।

देखता हूँ श्री उमरका डेलागोआ-बेके बारेमें लिखा गया लेख प्रकाशित नहीं हुआ। वह इस हफ्ते प्रकाशित होगा ऐसा मानकर चलता हूँ। कल उनका लिखा हुआ दूसरा लेख भी मैंने भेजा था। वह अगले हफ्तेके लिए सुरक्षित रखा जाये यह तो साफ ही है।

अब्दुल कादिरवाली बैठकके[1] विवरणकी सूचना तुमने बोधित नहीं की और इस हफ्तेके अंकमें भाषणका[2] अनुवाद दिया जायेगा। भरोसा है कि तुम यह कर रहे हो।

मोहनदासके आशीर्वाद

श्री छगनलाल खुशालचन्द गांधी
मारफत 'इंडियन ओपिनियन'
फीनिक्स

मूल अंग्रेजी प्रतिकी फोटो-नकल (एस० एन० ४११६) से।

१ और २. देखिए क्रमशः "भाषण : अब्दुल कादिरकी बिदाईपर" और "अभिनन्दन-पत्र : अब्दुल कादिरको" पृष्ठ २११-७।

घरका नक्सा

२३३. पत्र: ए० जे० बीमको

जोहानिसबर्ग
मार्च ५, १९ ९

प्रिय श्री बीम,
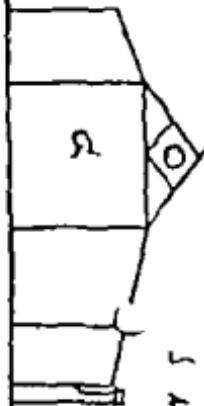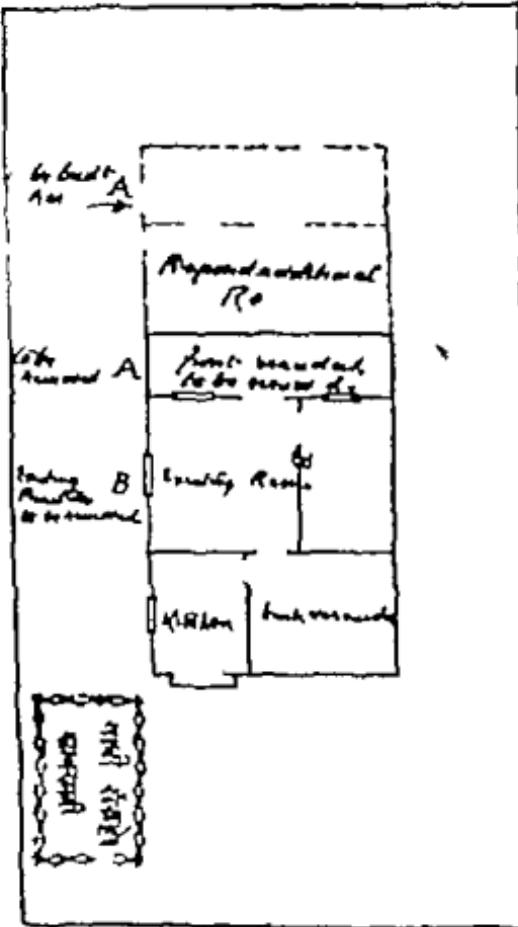
मेरा खयाल है श्री गैब्रियल महीनेके अन्त तक कामपर आ जायेंगे। उन्होंने सायका नक्शा[1] मेरे पास भेजा है। वे जिस घरमें आर्थर थे उसमें इसके मुताबिक परिवर्तन कराना चाहते हैं। कृपया आप इन्हें समझकर मुझे लिखिए कि इन परिवर्तनोंमें कितना खर्च आयेगा। मेहरबानी करके मुझे सूचित करें कि क्या उस घरमें स्नानघर, पाखाना और टंकी है। क्या मकानकी दीवारें पक्की हैं? मैं जानबूझकर यह काम आपके सुपुर्द इसलिए कर रहा हूँ कि जगनलालपर और बोझ न पड़े उसे कामके अधिक होनेकी शिकायत है। अगर मुमकिन हो तो वापसी डाकसे इसका जवाब दें। उम्मीद करता हूँ कि आप मेरे पत्रपर[2] विचार कर रहे हैं और उसका अनुकूल उत्तर मुझे देंगे।

कूनेकी किताब[3] शनिवारको चली जानी थी। उसे अब आज भेजा जा रहा है।

आपका शुभचिन्तक
मो० क० गांधी

श्री ए० जे० बीम
मारफत 'इंडियन ओपिनियन'
फीनिक्स

मूल अंग्रेजी प्रतिकी फोटो-नकल (एस० एन० ४९१७) से।

1. [illegible]
2. यह उपलब्ध नहीं है।
3. द न्यू साइन्स ऑफ हीलिंग ऑर द डॉक्ट्रिन ऑफ द वननेस ऑफ ऑल डिज़ीज़ेज़ (नवीन चिकित्सा शास्त्र अथवा समस्त रोगोंकी एकताका सिद्धान्त)।

२३४ पत्र ए० जे० बीनको

जोहानिसबर्ग
मार्च ७, १९१६

प्रिय श्री बीन

[illegible]श्री मैर्नरिंगके बारेमें आपका पत्र मिला। मुझे अफसोस है कि वे अपने साथ हुई बातचीतकी य[illegible]अपनी स्थिति अनिश्चित समझ रहे हैं। जब मैं वहाँ गया तब मेरा इरादा उनसे बातें कर[illegible] किन्तु समय नहीं मिला और मैं बातें नहीं कर सका। मैंने सभी लोगोंसे जो कुछ कहा [illegible]बता रहा हूँ। परिस्थिति ऐसी थी कि मैं उस समय पिल्ले या और किसीके बारेमें [illegible]था। निःसन्देह मैंने यह कहा था कि कोई सिखाता है या और कुछ करता है [illegible]ऐसा नहीं मानना चाहिए कि जैसे ही वह काम उसने पूरा किया कि उसे [illegible]लोगोंमें से हरएक जबतक छापाखाना सचमुच निठल्ला नहीं हो जाता अपनेको पूरा [illegible]समझ सकता है। मैं यह नहीं जानता कि तब श्री मैर्नरिंग वेतनके आधारपर वहाँ थे या [illegible]लग थे। जब श्री मैर्नरिंगने योजनाको छोड़ दिया और फिर बादमें लौटे तब उन्हें कोई आश्वासन नहीं दिया गया था। मैं सोचता हूँ जब वे लिखे गये मैंने छगनलालसे कहा — वह पत्र[1] उसके पास होगा — कि अब अगर श्री मैर्नरिंगका कामपर लें तो मासिक आधारपर। मेरा कहना ठीक न हो किन्तु ऐसा मुझे ध्यान है। किसी भी हालतमें मेरा इरादा लोगोंको ऐसा आश्वासन देनेका हरगिज नहीं था कि जो योजकोंमें नहीं हैं वे सारी परिस्थितियोंमें अपनेको सुरक्षित मान सकते हैं। मैं इतना ही कहना चाहता था कि किसीके स्थानपर दूसरेको रख लेनेका अर्थ उसे निकाल बाहर करना बिलकुल नहीं है। उस रायपर मैं अब भी कायम हूँ। मैं नहीं जानता श्री मैर्नरिंग क्या करनेकी बात सोच रहे हैं। मेरी हर तक मैं पूरी तरह रजामन्द हूँ कि वे १ पौंड मासिकपर बने रहें कमसे-कम इस वर्षके अन्त तक। मुझे मालूम है आप चाहते हैं कि उन्हें इससे अधिक मिले और अगर योजक सहमत हों तो मुझे तनिक भी आपत्ति नहीं है। और यदि योजक इस बातको मंजूर करें तो आप मान सकते हैं कि मैं इस पत्रसे बँधा हुआ हूँ और श्री मैर्नरिंग निश्चिन्त रहें कि मेरी व्यक्तिगत राय चाहे जिस तरह बदल जाये वे अपने आपको कमसे-कम इस वर्षके अन्त तक बहाल समझें। मैं श्री मैर्नरिंगको इस विषयमें अलगसे लिख रहा हूँ।[2]

आपका शुभचिन्तक
मो० क० गांधी

श्री ए० जे० बीन
मारफत इंडियन ओपिनियन
फीनिक्स

मूल अंग्रेजी प्रतिकी फोटो-नकल (एस० एन० ४३१८) से।

१. यह पत्र उपलब्ध नहीं है।
२. यह उपलब्ध नहीं है।

२३५ पत्र छगनलाल गांधीको

जोहानिसबर्ग
मार्च ९, १९११

चि० छगनलाल

तुमने मुझसे उन लोगोंके नामोंकी सूची माँगी है जिन्होंने श्री नाजरकी यादगारका पैसा जमा नहीं किया है। क्या तुमने सारे नामोंकी सूची नहीं बनाई थी? १५ पौंड ५ शिलिंगका मतलब मेरी समझमें नहीं आया। मुझे कुछ ऐसा ख्याल है कि तुमने मुझसे कहा था कि सारे बिल तुमने काट दिये हैं। यदि सूची तुम्हारे पास नहीं है तो मैं भेज दूँगा मगर यह नहीं कह सकूँगा कि पैसा किसने दिया है, किसने नहीं। बेशक बापू महाराजसे तुम्हें लेना है। भट्ट और सुभानको परेशान मत करना किन्तु कमसे-कम यह सुनाना तो उन्हें दिया ही जायेगा। मियाँजीसे तुम्हें न लेना है। कागज वापस कर रहा हूँ।

आज गुजरातीमें तुम्हारा जो पत्र मिला उसमें तुमने जिस पत्र-व्यवहारकी चर्चा की है वह नहीं मिला। अभी-अभी वह मिल गया।

मैं उस्मान आमदको लिखूँगा।

निःसन्देह हम इस्लाम धर्म से उद्धरण लेना नहीं चाहते।

नाटकवालोंका काम तुम कर सकोगे तुम्हारा ऐसा तार मिल गया। तुम न करते तो भी मुझे पूरा संतोष रहता। मैं चाहता यह हूँ कि तुम इस बातके प्रति सावधान रहो कि वचन देनेपर पूरा किया जाये। मैं यद्यपि बिना यह जाने कि तुम कर सकोगे या नहीं काम मान ले सकता हूँ मगर यदि तुम उसे न कर पाओ तो तुम्हें हमेशा उसे न करनेका अधिकार है।

मगर उस्मान आमदसे तुम्हें सन्तोष नहीं मिलता तो तुम्हें काम स्वीकार करनेसे इनकार कर देना चाहिए। यह परिस्थिति उन्हें बिलकुल साफ-साफ समझा देनी चाहिए कि हमें बाहरसे कराये गये कामका खरच चुकता करना पड़ता है। दर कर हम कुछ भी न करें। हम सिर्फ उचित ढंग अपनाये रह कर ही लोगोंको सन्तोष देना चाहते हैं और उस मर्यादामें रहकर यदि कोई सन्तुष्ट नहीं हो पाता तो दोष हमारा नहीं है। इसलिए हमको इतना ही करना है कि दूसरोंके स्वभावके अनुसार असुविधाएँ स्वीकार करें सदा विनम्र रहें और जहाँ आवश्यक हो कष्ट उठायें। इससे अधिक कुछ करणीय नहीं है।

मुझे अभीतक कुवाडिया और पटेलके पत्र नहीं मिले हैं। वे जब मिलेंगे तब उन्हें मार्सबुर्ग कर दूँगा किन्तु उनके जवाबमें एक टिप्पणी तुरन्त भेज दूँगा।

वापस या किसी भारतीय सज्जन उन्हें निःशुल्क भेजी जानेवाली प्रतियाँ वापस न हम ले सकते हैं न लेना चाहते हैं।

मगनलालका तार नहीं आया यह परेशानीकी बात है।

हम अभी तो श्री राउड ब्रुस्सलका विज्ञ नहीं देना चाहते। मगर अफ्रीकन क्रॉनिकल को देना चाहिए — क्योंकि वह अपने सन्मार्गमें है।

१ यह पत्र [illegible] है।

वहाँ प्रकाशित होगा या नहीं, इसमें भी शंका है। फिर भी यदि बने तो जाड़ेके दिनोंमें भेजूँगा वह भी थोड़ी मुद्दतके लिए।

ओपिनियन की फाइल भेजना। श्री आइजकका उपयोग खूब करना।

मोहनदासके आशीर्वाद

[पुनश्च]

चिट्ठियाँ मिल गई हैं। उनमें से कुछ छापने योग्य नहीं हैं। दोनों पटेलोंको नीचेके अनुसार लिख देना। आपका पत्र मिला। ऐसी सामग्री बहुत आती है। उसे ओपिनियन में छापनेकी जरूरत नहीं जान पड़ती। उससे एक दूसरेके विरोधमें लिखा-पढ़ी चलती है और क्लेश बढ़ता है। ओपिनियन मुख्यतः राजनीतिक और सामाजिक प्रश्नोंकी चर्चासे सम्बन्धित पत्र है। इसलिए ज्यादा धर्म सम्बन्धी विषय दाखिल करना अनुचित मालूम होता है। उन्हें ऐसा पत्र आलाबाला लिख देना। इस बाबत उन्हें अखबारमें जवाब देना जरूरी नहीं है। उस्मान आमदको लिखना कि मैंने सीधे उन्हें पत्र लिखा है।

साथमें नया नाम है। उसका पैसा नहीं आया।

मोहनदास

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल गुजराती प्रतिकी फोटो-नकल (एस० एन० ४१२) से।

२३७. पत्र : उपनिवेश-सचिवको

[डर्बन
मार्च १, १९ ६ से पहले]

सेवामें
उपनिवेश-सचिव
पीटरमैरित्सबर्ग

महोदय,

नेटाल भारतीय कांग्रेसकी समितिको गत मासकी २७ तारीखके 'नेटाल गवर्नमेंट गजट'में प्रकाशित उस सरकारी सूचना संख्या १५ को पढ़कर बहुत व्यथा और चिन्ता हुई है जिसके अनुसार १९ ६ के कानून ३ द्वारा संशोधित १९ ३ के प्रवासी प्रतिबन्धक अधिनियम संख्या ३ के अन्तर्गत जारी पासों और प्रमाणपत्रोंके सम्बन्धमें विभिन्न शुल्क लगाये गये हैं।

हमारी समिति सूचनामें दी गई शुल्क सूचीके विरुद्ध सादर, किन्तु तीव्र विरोध प्रकट करती है।

निवेदन है कि यह शुल्क उन ब्रिटिश भारतीयोंपर करके समान है जिनको इस उपनिवेशमें रहने या इसमें होकर गुजरनेका अधिकार है।

सुविदित है कि यह कानून पूरी तरहसे नहीं तो बहुत-कुछ ब्रिटिश भारतीयोंके विरुद्ध लागू किया गया है। उसके अन्तर्गत विभिन्न पास और प्रमाणपत्र देनेमें उन लोगोंके हितका उतना खयाल नहीं रखा जाता जो उसकी धाराओंसे प्रभावित होते हैं बल्कि उन्हींका ज्यादा खयाल रखा जाता है जिनको उनका अमलमें लाया जाना अभीष्ट है।

हमारी समिति अत्यन्त आदरपूर्वक यह विचार व्यक्त करती है कि जो शुल्क लागू करने हैं, वे बहुत ज्यादा हैं।

हमारी समिति सरकारको इस तथ्यका स्मरण दिलाती है कि परम माननीय स्वर्गीय हैरी एस्कम्बके जीवन-कालमें अभ्यागत पासोंपर एक पौंड शुल्क लगानेका प्रयत्न किया गया था। इसपर उस शुल्कको लागू करनेके विरुद्ध आपत्ति करते हुए एक आदरपूर्ण आवेदनपत्र भेजा गया और उन महानुभावने शुल्क लगानेके सम्बन्धमें निकाली गई सूचना तुरन्त वापस ले ली।

उस समय अधिवास प्रमाणपत्र एक पौंडी शुल्कसे मुक्त था।

इसके अतिरिक्त हमारी समिति आपका ध्यान इस तथ्यकी ओर भी आकर्षित करती है कि जो ब्रिटिश भारतीय समुद्र-तटसे दूरस्थ उपनिवेशोंमें रहते हैं उनको नेटालमें से गुजरनेके विशिष्ट अधिकारके लिए १ पौंड शुल्क दिये बिना कमसे-कम इस उपनिवेशमें से गुजरनेका हक है।

दर असल स्वार्थकी दृष्टिसे भी इस तथ्यको ध्यानमें रखते हुए, कि ऐसे भारतीयोंसे नेटालकी सरकारी रेलवेको कुछ निश्चित आमदनी होती है सरकारको कोई निषेधक शुल्क न लगाना चाहिए।

सन् १ ६ के कानून ३ में १ पौंडका शुल्क उचित समझा गया है। मेरी समिति निवेदन करती है कि अभ्यागत पास नौकारोहण पास या अधिवास प्रमाणपत्रका १ पौंड शुल्क कभी उचित नहीं माना जा सकता। और, यदि किसी अधिवासी ब्रिटिश भारतीयकी पत्नीको उपनिवेशमें रहने या प्रवेश करनेका अधिकार है, और यदि शिक्षा-सम्बन्धी परीक्षामें उत्तीर्ण भारतीय भी उपनिवेशमें अधिकारसे प्रवेश कर सकता है तो मेरी समितिकी विनीत सम्मतिमें यह कठोर ही नहीं बल्कि अपमानजनक भी प्रतीत होता है कि अधिवासी भारतीयकी पत्नीको या शिक्षित भारतीयको इसलिए ५ शिलिंग देना पड़े — जो आमिरकार वह ही है — कि उसे कानूनके अर्थके अन्तर्गत निषिद्ध प्रवासी न माना जाये।

हमारी समिति निकासी-पास (ट्रान्सिट पास) का अर्थ नहीं समझती।

हमारी समितिका विश्वास है कि सरकार सूचनाका वापस लेनेकी और अबतक लागू शुल्कका नाम रहने देनेकी कृपा करेगी।

हमारी समिति आशा करती है कि चूँकि यह मामला आवश्यक है आप इसपर जल्दी ध्यान देंगे।

आपके आज्ञाकारी सेवक
मो० एच ए० जौहरी
एम० सी० आंगलिया
संयुक्त अवैतनिक मन्त्री ने० भा० कां०

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन १०–३–१ ६

२३८ "एशियाइयोंकी बाढ़"

दक्षिण आफ्रिकाके सहयोगी व्यापार-मण्डलोंकी कांग्रेस पिछले हफ्ते डर्बनमें हुई थी। उसने फिर भारतीयोंके बारेमें एक प्रस्ताव पास किया है। प्रिटोरियाके श्री ई० एफ० बोर्कने यह प्रस्ताव किया था

> दक्षिण आफ्रिकी व्यापार-मण्डलोंकी यह कांग्रेस सम्पूर्ण दक्षिण आफ्रिकाके व्यापारपर एशियाइयोंकी निरन्तर बाढ़के प्रभावको जो अधिकाधिक हानिकर होता जा रहा है, भयके साथ देखती है और विश्वास प्रकट करना चाहती है कि दक्षिण आफ्रिकाकी गोरी आबादीके हितोंकि रक्षार्थ इस सम्बन्धमें यथासम्भव न्यूनतम समयके भीतर विविध सरकारोंकी संगठित कार्रवाई अत्यन्त आवश्यक है।

श्री जी० मिचलने प्रस्ताव किया कि "निरन्तर" शब्द निकाल दिया जाये और प्रस्ताव इस संशोधनके साथ पास हो गया। सहयोगी-व्यापार-मंडलोंकी कांग्रेस-जैसी महत्वपूर्ण संस्था द्वारा पास किये हुए इस प्रकारके प्रस्तावका वजन होना ही चाहिए, और आशंका है कि तथ्योंकी दृष्टिसे बिलकुल निराधार होते हुए भी प्रस्तावका उपयोग दक्षिण आफ्रिकाके व्यापार-मण्डलोंकी ओरसे प्रकट की गई प्रामाणिक सम्मतिके रूपमें किया जायेगा।

अगर प्रस्तावपर शांतिके साथ विचार किया जाये तो जान पड़ेगा कि एशियाइयोंकी बाढ़से सम्पूर्ण दक्षिण आफ्रिकाके व्यापारपर हानिकारक प्रभाव नहीं पड़ सकता क्योंकि भारतीय प्रवासी चाहे कितने ही गरीब हों आखिर उपभोक्ता तो होंगे ही। किन्तु हमारे अनुमानसे प्रस्ताव निर्माता यह कहना चाहते होंगे कि भारतीयोंकी बाढ़के कारण भारतीय व्यापारियोंकी संख्या बढ़ी है और उसका ऐसा प्रभाव पड़ा है। यद्यपि भारतीयोंकी बाढ़ और भारतीय व्यापार, दोनों सवालोंपर इन स्तम्भोंमें कई बार पूरी तरह विचार किया जा चुका है फिर भी हम यह दिखानेके लिए इनपर पुनः विचार करना चाहते हैं कि वास्तविक स्थितिके सम्बन्धमें वक्ताओंकी जानकारी कितनी कम थी। जहाँतक केप कालोनी और नेटालका सम्बन्ध है और जैसा प्रवास-कार्यालयके रोजाना कामकाजसे मालूम पड़ता है भारतीय प्रवासियोंपर बड़ी प्रभावपूर्ण रोक है और प्रतिबन्धोंको लागू करनेका तरीका दिन-ब-दिन अधिकाधिक कष्टप्रद बनाया जा रहा है। प्रोफेसर परमानन्दके पत्रसे जिसे हम दूसरे स्तम्भमें छाप रहे हैं पता चलेगा कि प्रवासी-अधिकारी व्यक्तिका कोई लिहाज नहीं करते। विद्वान प्रोफेसरको जिनका नाम और यश उनसे पहले ही यहाँ पहुँच चुका था एलिजाबेथ बन्दरगाहमें धरतीपर पग रखनेकी इजाजत देनेसे पहले शिक्षा-सम्बन्धी कसौटीसे गुजरनेके लिए मजबूर किया गया। क्या इससे भी ज्यादा सख्ती सम्भव है?

ऑरेंज रिवर कालोनी तो इस नाप-जोखमें कहीं आती ही नहीं क्योंकि किसीने कभी यह नहीं कहा कि वहाँ कोई उल्लेखनीय भारतीय आबादी या भारतीय व्यापार है। फिर भी हम देखते हैं कि प्रस्ताव सारे दक्षिण आफ्रिकापर लागू किया गया है।

ट्रान्सवालके सम्बन्धमें तो लॉर्ड सेल्बोर्न तथा दूसरे सरकारी अधिकारियोंने कई बार स्पष्ट शब्दोंमें कहा है कि किसी भी गैर-शरणार्थी ब्रिटिश भारतीयको ट्रान्सवालमें प्रवेश करनेकी अनुमति नहीं दी जा रही है। हमारा "अनुमतिपत्रका काण्ड"[1] स्तम्भ यह प्रमाणित करेगा।

१. देखिए "अनुमतिपत्रका काण्ड" पृष्ठ २११।

एक वक्ताने कहा कि परामर्शदाता-मण्डलोंकी नियुक्ति प्रवासियोंकी बाढ़ जारी होनेका प्रमाण है। क्या हम उन्हें बतायें कि ये मण्डल इसलिए नहीं स्थापित किये गये हैं कि प्रवासियोंकी बाढ़ जारी है बल्कि उस आन्दोलनके उत्तरमें स्थापित किये गये हैं जो ट्रान्सवालके कुछ स्वार्थी दलोंने खड़ा किया था। और इसमें भारतीय शरणार्थियोंकी भावनाओं और सुविधाओंकी पूर्णतः उपेक्षा की गई। ये मण्डल उससे अधिक प्रभावकारी ढंगसे काम नहीं कर सके जितने प्रभावकारी ढंगसे अबतक अनुमतिपत्र-अधिकारियोंने किया है। उसी वक्ताने यह भी कहा कि "वह इस बातका प्रमाण दे सकता है कि कुछ एशियाई गैर-कानूनी रूपसे आ रहे हैं यह बात सरकार पहलेसे ही जानती थी। यह वक्तव्य या तो सत्य है या असत्य। अगर यह सत्य है तो सरकारके प्रति और भारतीय जनताके प्रति भी वक्ताका कर्तव्य है कि वह नामोंके साथ विस्तृत जानकारी दे। अगर यह असत्य है तो उसे एक सम्मानित व्यक्तिकी तरह इसको वापस ले लेना चाहिए। इस प्रकारके गम्भीर वक्तव्योंका जिनका समर्थन करनेके लिए कोई तथ्य न हों और जो संयुक्त व्यापार संघकी कांग्रेस-जैसी सार्वजनिक संस्थाके सामने रखे गये हों खण्डन करना आवश्यक है और हम जोरोंके साथ कहना चाहते हैं कि ट्रान्सवालमें भारतीयोंकी कोई ऐसी गैर-कानूनी बाढ़ नहीं आई है, जिसका उल्लेख वक्ताने किया है। हम यहाँ जनताका ध्यान इस तथ्यकी ओर खींचना चाहते हैं कि जोहानिसबर्गके ब्रिटिश भारतीय संघने इस विषयमें सार्वजनिक जाँचकी माँग की थी। किन्तु वह सरकारने इस कारण मंजूर नहीं की कि सरकारको पूर्ण विश्वास था कि भारतीयोंकी ऐसी कोई बाढ़ नहीं आई। जहाँतक नेटालमें भारतीय व्यापारमें कथित वृद्धिकी बात है, भारतीय परवानोंपर अत्यन्त प्रभावकारी एवं अत्याचारमूलक रोक लगी हुई है। जैसा कि कांग्रेसके सदस्योंको अवश्य ज्ञात होगा नेटाल विक्रेता-परवाना अधिनियमके अन्तर्गत प्रत्येक भारतीय परवाना-अधिकारीकी दयापर निर्भर है। उन्हें यह भी मालूम होगा कि दो सम्मानित भारतीयोंके[1] जो बहुत पुराने व्यापारी हैं परवाने मनमाने तौरपर छीन लिए गए हैं यद्यपि वस्तुस्थिति यह है कि व्यवसायमें यूरोपीयोंसे उनकी कोई प्रतिद्वन्द्विता नहीं थी।

ट्रान्सवालमें भी स्थिति इससे अच्छी नहीं है फिर इसका कारण यही क्यों न हो कि ट्रान्सवालमें भारतीयोंकी आबादी इतनी ज्यादा नहीं है जितनी नेटालमें है और उस उपनिवेशमें शरणार्थियोंको भी प्रवेश करनेमें कठिनाईका अनुभव होता है। साथ ही हमें यह स्वीकार करनेमें कोई बाधा नहीं कि परीक्षात्मक मुकदमेमें सर्वोच्च न्यायालयने जो निर्णय दिया है उससे भी एक हद तक — यद्यपि किसी उल्लेखनीय संख्यामें नहीं — भारतीय परवानोंमें वृद्धि हुई है। किन्तु भारतीयोंने कहा है कि १८८५ के कानून ३ तथा सम्पूर्ण वर्गीय कानूनोंको रद कर दिया जाये तो वे नये व्यापारिक परवानोंका नियन्त्रण नगरपालिकाओंको दे देनेका सिद्धान्त मान लेंगे। इसमें उन्होंने बहुत बड़े संयमका परिचय दिया है। यह बात ध्यान देने योग्य है कि उक्त प्रस्तावकी बहसमें जिन आठ वक्ताओंके भाग लेनेकी खबर है, उनमें केवल दो केप टाउनके थे और भारतीय व्यापार यूरोपीय व्यापारपर कोई प्रभाव डाल रहा है यह सिद्ध करनेके लिए उन्होंने कोई तथ्य या आँकड़े प्रस्तुत नहीं किये प्रतीत होते। इस तरह हर दृष्टिसे जाँच करनेपर प्रस्ताव बिलकुल अनावश्यक है, और निश्चय ही वह तथ्योंपर आधारित नहीं है। इसका एक ही उपाय है और वह ट्रान्सवालके लोगोंके पास है किन्तु उन्होंने अभीतक तो उसको माननेसे इनकार ही किया है। यह भी ध्यान देने योग्य है कि आठ वक्ताओंमें से पाँच ट्रान्सवालके थे और

१. दादा अब्दुल्ला और इस्माइल; देखिए खण्ड ३ पृष्ठ १८ और खण्ड ४ पृष्ठ १८७–८८।

यह बात स्पष्ट है कि यह प्रस्ताव — जैसा कि उसमें कहा गया है — सामान्यतः दक्षिण आफ्रिकाके हितमें नहीं बरन् केवल ट्रान्सवालके हितमें पास किया गया है।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन १ –१–१९ ६

२३९. एक अन्तर

हम सहयोगी व्यापार-सम्पर्कोंकी कांग्रेसकी कार्रवाईपर अपने विचार प्रकट करते हुए प्रोफेसर परमानन्दकी उन कठिनाइयोंकी ओर ध्यान आकर्षित कर चुके हैं जो केप कालोनीमें से गुजरते हुए, उनके सामने आई थीं। जैसा कि विदित होगा उनको ईस्ट लन्दनमें उतरनेकी अनुमति देनेके पूर्व परीक्षा लेकर नाहक ही अपमानित किया गया।

हम एक दूसरे स्तम्भमें श्री उमर हाजी आमद झौहरीका एक पत्र छाप रहे हैं। उससे पता चलता है कि अत्यन्त प्रतिष्ठित भारतीयोंको भी दक्षिण आफ्रिकामें कितना अपमान सहना पड़ता है। श्री झौहरी दक्षिण आफ्रिकी भारतीयोंके एक नेता हैं। वे नेटालकी प्रसिद्ध पेढ़ी ई॰ अबूबकर आमद ऐंड ब्रदर्सका प्रतिनिधित्व करते हैं। वे एक सुसंस्कृत भारतीय हैं और यूरोप तथा अमेरिकाकी यात्रा कर चुके हैं। किन्तु फोक्सरस्टके अनुमतिपत्र-अधिकारीके लिए इन बातोंका कोई महत्त्व न था। उसने श्री झौहरीके अनुमतिपत्रकी जाँच-मात्रसे सन्तुष्ट न होकर गुस्ताखीसे उनको अपने रजिस्टरमें अँगूठेकी निशानी लगानेके लिए कहा। हम स्वीकार करते हैं कि हमें इस प्रकारकी कार्रवाईका कोई कारण दिखाई नहीं देता। श्री झौहरी उचित रूपसे यह पूछ सकते हैं कि किसी धर्मका सिवा इसके कि उनकी चमड़ीका रंग भूरा है दोषी न होते हुए भी क्या उनके साथ अपराधीके समान व्यवहार किया जायेगा।

और अभी कुछ पहले जब एक जापानी प्रजाजनके साथ अभद्र व्यवहार किया गया था तब दक्षिण आफ्रिकाके कोनोंमें बहुत रोष फैला था। हमारे सहयोगी ट्रान्सवाल लीडर[१] ने एक रोषपूर्ण सम्पादकीयमें श्री नोमूराको अनुमतिपत्र देनेमें विलम्ब करने और उनको अँगूठेकी निशानी देनेकी अपमानजनक प्रक्रियामें से गुजारनेपर अधिकारियोंकी कड़ी लानत-मलामत की थी और ट्रान्सवालके लोगोंकी ओरसे उक्त सज्जनसे सार्वजनिक रूपसे क्षमा माँगी थी।

हमारा विश्वास है कि श्री नोमूरा इस क्षमा-याचनाके अधिकारी थे। परन्तु हम जिन घटनाओंकी ओर अब ध्यान आकर्षित कर रहे हैं उनके प्रति और इस घटनाके प्रति जनताके रुखमें जो फर्क है उसको स्पष्ट किये बिना नहीं रह सकते। हमें भय है कि प्रोफेसर परमानन्द या श्री झौहरीके पक्षमें एक हल्की-सी आवाज भी न उठाई जायेगी। निष्कर्ष स्पष्ट है। श्री नोमूरा जिस राष्ट्रके हैं वह स्वतन्त्र है और ब्रिटेनका मित्र है। परन्तु प्रोफेसर परमानन्द और श्री झौहरी आखिर ब्रिटिश भारतीय ही हैं। किन्तु थोड़ासा विचार करनेसे प्रकट हो जायेगा कि ब्रिटिश प्रजाजन भी जनताकी कमसे-कम उतनी ही परवाहके अधिकारी हैं। और, यदि जैसी नीतिकी ओर हमने ध्यान खींचा है वैसी ही पर अमल होता गया तो अन्तमें साम्राज्य छिन्न-भिन्न हुए बिना न रहेगा।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन १०–१–१९ ६

१ देखिए परिशिष्ट।
२. यहाँ नहीं दिया जा रहा है।

२४० लज्जाजनक

पिछली २७ फरवरीके नेटाल गवर्नमेंट गजट में प्रवासी प्रतिबन्धक अधिनियमके अन्तर्गत एक विज्ञप्ति प्रकाशित हुई है। कानूनसे प्रभावित लोगोंको इसके सम्बन्धमें कई कागज-पत्र लेने पड़ते हैं। विज्ञप्तिके द्वारा इन कागज-पत्रोंको लेनेकी कई तरहकी फीसें लगा दी गई हैं। हम नाममात्रकी फीसकी कोई परवाह नहीं करते यद्यपि ऐसी तुच्छ-सी फीस भी वसूल करनेकी औचित्यपर हमें सन्देह है। परन्तु उपर्युक्त विज्ञप्ति तो नेटालके खाली खजानेको भरनेकी लज्जा-जनक चेष्टा मात्र है, और कुछ नहीं है। अधिवास (डोमीसाइल) प्रमाणपत्र अस्थायी (विजि टिंग) पास या नौकारोहण (एम्बार्केशन) पास — हरएकका एक पौंड देना होगा। शिक्षा-सम्बन्धी परीक्षा पास करनेकी योग्यताका प्रमाणपत्र पत्नीकी छूटका प्रमाणपत्र और निकासीका पास (इसका अर्थ जो भी हो) — इनमें से हरएककी फीस पाँच शिलिंग होगी। इस प्रकार यद्यपि कानूनकी रूसे कोई भारतीय नेटालमें प्रवेश करने या इस उपनिवेशमें रहनेका अधिकारी भले ही हो किन्तु वह अबसे उसका मूल्य दिये बिना ऐसा कर नहीं सकता।

१८९७ में इस तरहका कर लगानेकी कोशिश की गई थी परन्तु स्वर्गीय परममाननीय एच एस्कम्बने[1] इसके विरुद्ध नेटाल भारतीय कांग्रेसका विरोध उचित समझकर उस करको तुरन्त वापस ले लिया था।

इस विज्ञप्तिके बनानेवालोंको यह नहीं सूझा प्रतीत होता कि उनकी भारतीयोंसे इतनी भारी फीसें ऐंठनेकी कोशिशसे उपनिवेशका घाटा कम होना आवश्यक नहीं है। एक ट्रान्सवाल-वासी भारतीय भारतको लौटना चाहता है। इसके लिए उसे केप डर्बन या डेलागोआ-बे से गुजरना ही पड़ेगा। सबसे ज्यादा लोग डर्बनके रास्तेसे जाते हैं। भारतीय मुसाफिरोंका यातायात अच्छा खासा होता है। नेटाल सरकारको इस बातकी सावधानी बरतनी चाहिए कि वह कहीं भारतीयोंसे एक पौंड ज्यादा ऐंठनेके प्रयत्नमें उस मुर्गीको न मार डाले जो नेटालसे गुजरनेवाले भारतीय यात्रियोंके यातायातके रूपमें सोनेका अंडा देती है। उसकी स्वार्थ वृत्तिसे हमारा इतना अनुरोध काफी है।

इन्साफकी दृष्टिसे तो मामला सोलहो आने भारतीयोंके पक्षमें है। प्रवासी-अधिनियम सभी लोगोंपर एक-सा लागू माना जाता है फिर चाहे वे किसी देशके हों। परन्तु वस्तुतः यह, एकमात्र नहीं तो मुख्यतः भारतीयोंके विरुद्ध लागू किया जाता है। इसलिए विज्ञप्तिमें जिन फीसोंको लगानेकी तजवीज है वे भारतीय समाजपर विशेष करके रूपमें हैं। हम इस आर्थिक परेशानीमें सरकारके साथ सहानुभूति प्रकट करते हैं। किन्तु उसने खजानेका बचाना भरनेका जो तरीका अपनाया है उसका समर्थन नहीं कर सकते।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन १०-३-१९०६

[1] सर हैरी एस्कम्ब (१८३८–९९) नेटालके उच्च न्यायालयके एक प्रमुख वकील, और बादमें महान्यायवादी। १८९७ में नेटालके प्रधानमंत्री थे।

२४१ व्यक्तिकर सम्बन्धी शिकायत

हमारे गुजराती स्तम्भोंसे प्रकट होगा कि व्यक्तिकर देनेवाले भारतीयोंको यूरोपीय एवं भारतीय करदाताओंके बीच अनुचित व्यवहार-भेदके कारण बहुत खीझ होती है। एक पीड़ित व्यक्ति कहता है:

> जब कोई यूरोपीय व्यक्तिकर देने जाता है उसे पाँच मिनट भी रुकना नहीं पड़ता। इसके विपरीत भारतीयको प्रायः सारा दिन लगा देना पड़ता है तब कहीं उससे करकी रकम ली जाती है और उसका काम निबटाया जाता है।

अगर यह सच है कि जो भारतीय कर-दाता कर देना चाहते हैं उनका कर अदा करने तथा उसकी रसीद पानेमें करीब-करीब पूरा दिन बिताना पड़ता है तो सरकार द्वारा की गई व्यवस्थामें कोई जबरदस्त खराबी है और हम अधिकारियोंका ध्यान इस शिकायतकी ओर आकर्षित करते हैं।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन १०–३–१९ ६

२४२ जर्मन पूर्वी आफ्रिका जहाज प्रणालीके भारतीय यात्री

हमारे गुजराती स्तम्भों द्वारा एकाधिक संवाददाताओंने उस असुविधाकी ओर ध्यान दिलाया है जो जर्मनकी पिछली यात्रामें 'सोमाली' जहाजके मुसाफिरोंको हुई थी। उनमें से एक लिखता है:

> सोमाली जहाजके जो २ जनवरीको रवाना हुआ मुसाफिरोंको भोजन बनाने वगैरहकी अनेक कठिनाइयोंका सामना करना पड़ा। जहाजके खलासी मुसाफिरोंके आरामके बारेमें बिलकुल लापरवाह थे और कप्तानसे शिकायतें की जातीं तो वह सुनता ही नहीं था।

हम जर्मन पूर्वी आफ्रिका जहाज प्रणालीके एजेंटोंका ध्यान उपर्युक्त शिकायतोंकी ओर आकर्षित करते हैं। अगर वे कोई खुलासा देना चाहें तो उसे छापनेमें हमें खुशी होगी। कुछ भी हो हमें विश्वास है कि इसकी पूरी जाँच की जायेगी और इस तथ्यको देखते हुए कि भारतीयोंसे इस जहाज-प्रणालीको काफी मदद मिलती है स्वार्थकी दृष्टिसे भी भारतीय यात्रियोंका लिहाज करना जरूरी होगा।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन १ –३–१९ ६

२४३. नेटाल भारतीय कांग्रेस

नेटाल भारतीय कांग्रेसमें बहुत फेरफार हुए हैं। श्री अब्दुल कादिर आठ साल तक कांग्रेसका सभापति-पद सँभालनेके बाद देशको विदा हो गये हैं। उनकी मुरादें पूरी हों और वे सही-सलामत वापस आयें यही हमारी कामना है। भारतीयोंने श्री अब्दुल कादिरका अच्छा सम्मान किया। वह उनके योग्य ही था। उनका सम्मान करके कौमने अपना मान बढ़ाया है। कई वक्ताओंने श्री अब्दुल कादिरकी उदारतापर जोर दिया था और वह बिलकुल उचित था। श्री अब्दुल कादिरने गम्भीरता और नम्रताके साथ कुर्सीकी प्रतिष्ठाका निर्वाह किया है। कांग्रेसको अच्छी बुनियादपर खड़ा करनेमें उनका पर्याप्त हाथ रहा है। इस सबके लिए उन सज्जनको जितना भी मान दिया जाये थोड़ा ही होगा।

श्री अब्दुल कादिरके जानेके साथ ही श्री आदमजी मियाँखाँने भी अपना अवैतनिक संयुक्त मन्त्रीका पद छोड़ दिया। श्री आदमजी भारतीय व्यापारी-समाजमें जो बहुत थोड़े पढ़े-लिखे लोग हैं, उनमें से एक हैं। वे कांग्रेसकी स्थापनाके समयसे ही उसकी सेवामें हाथ बँटाते रहे हैं। सन् १८९६ में जब हमारे लोगोंकी हालत बहुत गम्भीर थी श्री आदमजीने बड़े चातुर्य उत्साह और सौम्यताके साथ काम किया था। उनके जमानेमें कांग्रेसके सदस्योंमें बड़ा उत्साह था। श्री आदमजीने थोड़ेसे समयके अन्दर १ पौंड इकट्ठा करनेमें मुख्य भाग लिया था। इतना ही नहीं बल्कि राजनीतिक मामलोंमें भी उन्होंने उतनी ही लगनका परिचय दिया था। जब कूरलैंड और नादरी जहाजोंके खिलाफ डर्बनके लोगोंने प्रदर्शन किया था तब श्री आदमजीने धैर्य और दृढ़तासे काम किया। बादमें जब स्वर्गीय श्री नाजरने और श्री खानने कांग्रेसके मन्त्रीका पद छोड़ा तब श्री उमर हाजी आमद झवेरीके साथ श्री आदमजी मियाँखाँ संयुक्त मन्त्री बनाये गये और उस समयसे पिछले हफ्ते तक उन्होंने श्री झवेरीके साथ रहकर कांग्रेसकी सेवा की है। श्री आदमजीके पदत्यागका एक कारण उनकी अस्वस्थता है और दूसरा दूसरे भाइयोंको मौका देनेकी इच्छा है। श्री आदमजी मियाँखाँकी अस्वस्थताके लिए हमें खेद है और हम ईश्वरसे यह प्रार्थना करते हैं कि वह उन्हें तन्दुरुस्ती दे। श्री आदमजीके पदत्यागका दूसरा कारण उनके लिए अधिक गौरवास्पद है। उनकी एक ही इच्छा रही है कि देशका कल्याण हो।

श्री अब्दुल कादिरकी जगह श्री दाउद मुहम्मद सभापति नियुक्त हुए हैं और श्री आदमजीकी जगह श्री मुहम्मद कासिम आंगलियाकी नियुक्ति की गई है। कांग्रेस-भवनमें हुई विराट सभाने जोरके हर्षनादके साथ उनका स्वागत किया है। व्यापारी-समाजमें विशेष भाग सूरतियोंका है। इसलिए इस बार दो सूरती सज्जनोंका एक साथ बड़े पदोंपर आना ठीक ही हुआ है। श्री अब्दुल कादिर और श्री आदमजी जैसे जागरूक लोगोंकी जगह सम्भालना मुश्किल काम है लेकिन हमें उम्मीद है कि दोनों नये सज्जन अपना काम भली-भाँति सँभालेंगे।

श्री दाउद मुहम्मद शुरूसे ही कांग्रेसके मुख्य सदस्योंमें रहे हैं। उन्होंने कांग्रेसकी बहुत अच्छी सेवा की है। वे सबसे पहले कांग्रेस-भवनके अधिकारी बने थे। उनकी होशियारी किसीसे छिपी नहीं है। उनमें कई गुण हैं। यदि अपने इन सब गुणोंका उपयोग वे कांग्रेसकी सेवामें करेंगे तो हमें विश्वास है कि उनके कारण कांग्रेसका तेज बढ़ेगा।

१ देखिए "अभिनन्दन-पत्र : अब्दुल कादिरको" पृष्ठ ११६-७।

२ ११ जनवरी १८९७को देखिए खण्ड २, पृष्ठ १६६-७८।

निकलता है कि उनके कार्यकालमें नये कानून बनाते समय भारतीय प्रजाकी भावनाका ध्यान रखा जायेगा। किन्तु श्री मॉर्लेने बताया है कि हम शासनके काम-काजमें हाथ बँटाने योग्य नहीं हैं। उनकी इस बातका यह अर्थ निकल सकता है कि हम स्वराज्यके लायक अभी नहीं बने हैं। ऐसी बातोंपर से यह अनुमान लगाना उचित न होगा कि श्री मॉर्लेसे भारतको कोई लाभ नहीं पहुँचेगा। श्री मॉर्लेके विचार साधारण आंग्ल-भारतीयोंके विचारोंसे मिलते-जुलते हैं। उनके इन विचारोंको बदलनेके लिए हम पूरा प्रयत्न करेंगे तभी कुछ फर्क हो सकता है। यह आशा रखना कि चूँकि उन्होंने आयरलैंडके लिए बहुत मेहनत की है इसलिए हमारे लिए भी जरूर करेंगे व्यर्थ प्रतीत होता है।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, १०-२-१९०६

२४६. नेटालमें अधिवासी-पास आदिके नये नियम

२७ फरवरीके नेटाल गवर्नमेंट गज़ट में निम्नलिखित नियमावली प्रकाशित हुई है।

प्रवासी कानूनके अनुसार जिन लोगोंको प्रमाणपत्र इत्यादिकी जरूरत होगी उनसे नीचे लिखे अनुसार शुल्क लिया जायेगा :

	पौं	शि	पें
शुल्क-मुक्ति पत्र (एक्ज़ेम्पशन सर्टिफिकेट) का धारी किसी व्यक्तिको उपनिवेशमें प्रविष्ट होनेकी विशेष अनुमतिका शुल्क		५	
आना-जाना प्रमाणपत्र शुल्क		५	
अधिवासी प्रमाणपत्र (डोमिसाइल सर्टिफिकेट) का	१		
अस्थायी पास (विज़िटिंग पास) का	१		
नौकापोतसे या जहाजपर चढ़नेकी अनुमति (एम्बार्केशन पास) का	१		
स्त्रीके लिए अलग पासका		५	
नेटालमें होकर जानेके प्रमाणपत्रका		५	

अगर ये कर जारी रहे, तो बहुत बुरा होगा। हमें आशा है कि नेटाल भारतीय कांग्रेस इस मामलेको तुरन्त हाथमें लेगी।

इस तरहका कर लगानेका विचार स्वर्गीय श्री हैरी एस्कम्बने किया था पर कांग्रेसने सख्त लिखा-पढ़ी की जिससे वह वापस ले लिया गया था।

नेटाल भिखारी बन गया है। इसलिए अब सरकार जहाँ-तहाँसे पैसा बटोरनेके लिए हाथ पैर पटक रही है। सरकारने इन करोंको लगानेका नया रास्ता खोज निकाला है। यह अपने हाथसे अपने पैरों कुल्हाड़ी मारने जैसी बात हुई है। ट्रान्सवालमें रहनेवाले भारतीयोंको देश जानेके लिए नेटालका रास्ता आसान पड़ता है। उनके नेटाल होकर जानेसे सरकारी रेलवेकी आमदनीमें वृद्धि होती है। अगर वे लोग डेलागोआ-बेके रास्ते जायें तो नेटाल सरकारको उतना घाटा होनेकी सम्भावना है। हमें आशा है कि अगर इस तरहका दण्ड जारी रहा तो भारतीय मुसाफिर नेटाल रेलवेका बहिष्कार करने और डेलागोआ-बेके रास्ते जाया करेंगे।

नेटाल सरकारको इस तरहका कर लगानेका कोई अधिकार नहीं है। नेटालवालोंके स्वार्थके लिए इस कानूनको अमली रूप दिया गया है। इसलिए अगर इसका बोझ किसीपर डालना है, तो गोरोंपर डालना चाहिए। अगर कोई भारतीय थोड़े समयके लिए नेटाल जाता है, तो नेटाल सरकारका फर्ज है कि उसकी मदद करे, न कि उसे दण्ड दे।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन १०-३-१९०६

२४७. जोहानिसबर्गकी चिट्ठी

मार्च १, १९०६

ट्रामका परीक्षात्मक मुकदमा

ट्रामके परीक्षात्मक मुकदमेकी सुनवाई पिछले बुधवारको मजिस्ट्रेट श्री कारकी अदालतमें हुई। वादी श्री कुवाडियाकी ओरसे श्री गांधी वकील थे और प्रतिवादीकी ओरसे नगर परिषदके वकील श्री हाइल हाजिर थे। मुकदमा धर्मके वकील [सरकारी वकील] श्री क्लेमके हाथमें था। उन्होंने काले-गोरेका भेद न रखते हुए मुकदमेकी पैरवी अच्छी तरह की। श्री कुवाडियाने अपने बयानमें बताया कि प्रतिवादीने उन्हें ट्राममें बैठनेसे रोका और कहा कि काले लोगोंको ट्राममें बैठना। इस कारण यह मुकदमा चलाना पड़ा है। नगर-परिषदके वकीलने इस तथ्यको कबूल कर लिया इसलिए श्री मैकिन्टायरके बयान लेनेकी जरूरत नहीं रही। प्रतिवादीने बयान देते हुए कहा कि उसे नगर-परिषदका हुक्म है कि भारतीय अथवा दूसरे काले आदमीको अगर वह किसी गोरेका नौकर न हो अथवा नौकर होनेपर भी अपने मालिकके साथ न हो तो उसे ट्राममें न बैठने दिया जाये। इसलिए उसने मना किया था। इसके बाद श्री क्लेमने अदालतसे निवेदन किया कि जोहानिसबर्गके ट्राम प्रणालीके उपनियमोंके अनुसार भारतीयोंको किसी भी ट्राममें बैठनेका हक है, इसलिए प्रतिवादीने अपराध किया है।

श्री हाइलने अपने निवेदनमें स्वीकार किया कि ट्राम प्रणालीके उपनियमोंमें भारतीयोंको बैठनेकी मनाही नहीं है। पर बोअरोंके समयकी सफाई-समितिका कानून है, जिसके अनुसार किसी भी काले आदमीके लिए ट्राम या मोटर या बग्घी या जो भी सवारी खास कर गोरोंके लिए हो उसमें बैठना गुनाह है। यह कानून अभीतक रद नहीं हुआ है। इसलिए उसके आधारपर भारतीयोंको ट्राममें बैठनेसे रोका जा सकता है। जवाबमें श्री क्लेमने कहा कि वह कानून अब लागू नहीं हो सकता और परिषदने जो उपनियम स्वीकार किये हैं, उनके अनुसार भारतीयोंको हक है। श्री कारने इस मामलेका फैसला सोमवार तक मुल्तवी रखा है। अगर सोमवारको परिणामका पता चला तो मैं सूचना दूँगा।

बादमें खबर मिली है कि हम ट्रामवाले मामलेमें जीत गये हैं और नगरपालिकाने अपील की है।

ट्रान्सवालके लिए उत्तरदायी शासन

जोहानिसबर्गमें उत्तरदायी शासन सम्बन्धी हलचल अभी चल रही है। बाअर लोगोंकी समिति और उत्तरदायी दल (रिस्पॉन्सिबल पार्टी) तथा प्रगतिशील दल (प्रोग्रेसिव पार्टी) के मुखिया सर जॉर्ज फेरारके बराबर मिले थे। इनमें उनका इरादा यह था कि तीनों पक्षोंके

बीच एकता स्थापित हो जाये तो ठीक हो। इस बैठकमें क्या हुआ सो अभी मालूम नहीं हो सका है। लेकिन ऐसा माना जाता है कि उनमें एकमत नहीं हो पाया इसलिए वे बिना किसी फैसलेके उठ गये।

इस बीच यहाँ एक दूसरी बड़ी हलचल हो रही है। गोरे लोगोंका एक शिष्टमण्डल विलायत भेजने और सम्राट् एडवर्डको एक बहुत बड़ी अर्जी देनेका फैसला किया गया है। उसपर हजारों दस्तखत कराये जा रहे हैं। प्रार्थियोंकी माँगके अनुसार, जो भी विधान बने उसमें यह शर्त होनी चाहिए कि हर मतदाताको समान हक रहे और सदस्योंका चुनाव मतदाताओंकी संख्याके अनुसार हो।

इस अर्जीका हेतु यह है कि इससे अंग्रेज जनताका बल बढ़े। अंग्रेजोंकी तुलनामें संख्याकी दृष्टिसे बोअर लोग कम हैं। बोअर लोगोंकी माँग है कि सदस्य गाँवके हिसाबसे चुनने चाहिए। यदि ऐसा हो तो बहुत-से गाँवोंमें बोअरोंकी आबादी अधिक होनेसे उनकी सत्ता बढ़ सकती है। इस तरह उन्होंने लड़ाईमें जो कुछ खोया है, वह उत्तरदायी व्यवस्थामें उन्हें वापस मिल जायेगा। यह कशमकश बड़ी तगड़ी है। मेहनत और लगनमें कोई किसीसे कम बैठनेवाला नहीं है। बोअरोंको उदार मन्त्रिमण्डलका बहुत जोर है। साँड साँड लड़ें बिरवाई की पूरा होय वाली कहावतके अनुसार इसमें बेचारे काले लोग कुचल न जायें तो अच्छा। मगर नगारोंकी आवाजमें तूतीकी आवाज कौन सुनेगा?

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन १७-३-१९०६

२४८ "कानून-समर्थित डाका"[1]

हम एक दूसरे स्तम्भमें एक ऐसे मुकदमेका विशेष विवरण प्रकाशित कर रहे हैं जिसमें नेटालके सर्वोच्च न्यायालयके सामने पिछले सोमवारको बहस हुई थी। हमारे संवाददाताने उसे "कानून-समर्थित डाका" कहा है और इस टिप्पणीके लिए यह शीर्षक ग्रहण करनेमें कोई हिचकिचाहट नहीं है। १८८५ के कानून ३ के सम्बन्धमें ब्रिटिश भारतीय संघ द्वारा अनेक शिकायतें प्रस्तुत की गई हैं। किन्तु हमारे संवाददाताने जिस मुकदमेका विवरण[2] भेजा है उसके समान निर्दय या कठोर एवं अन्यायपूर्ण कोई अन्य मामला हमारे ध्यानमें नहीं आया। जिस कानूनके अन्तर्गत ऐसा स्पष्ट अन्याय किया जा सकता है, नरम भाषामें कहें तो भी वह कानून नितान्त अमानवीय है। जब श्री ल्यूनार्डने अपने जोरदार भाषणमें जजोंसे कानूनका दयापूर्ण अर्थ लगाने और यदि सम्भव हो तो अभागे अभियुक्तोंको न्याय प्रदान करनेकी प्रार्थना की तब सम्भवतः उनके ध्यानमें कानूनकी निर्दयताकी बात थी। स्वर्गीय श्री अबूबकर आमद उन भारतीयोंमें से थे जो दक्षिण आफ्रिकामें सर्वप्रथम आकर बसे थे। वे एक अग्रगण्य भारतीय व्यापारी थे और नेटाल तथा दक्षिण आफ्रिकाके दूसरे हिस्सोंमें उनकी बहुत बड़ी भू-सम्पत्ति थी। अपने समयमें यूरोपीयों और भारतीयों दोनोंमें उनका आदर था — और वह आदर बहुत

१. यह ११-४-१९०६ के इंडियामें भी प्रकाशित हुआ था।
२. यहाँ नहीं दिया जा रहा है।

२४९. व्यक्ति-कर

मैरित्सबर्गका एक संवाददाता हमारे गुजराती स्तम्भोंमें लिखता है :

फरवरी १८के गवर्नमेंट गज़ट में व्यक्तिकरके बारेमें एक सूचना छपी है। उसके अनुसार स्त्रियोंके सिवा बाकी लोगोंको जो उस तिथि तक कर न चुकायेंगे जुर्माना देना होगा। इससे भारतीयोंमें आतंक फैल गया है। मैरित्सबर्गवासी भारतीयोंने तो कर चुका दिया है, परन्तु वे गरीब भारतीय जो अभी-अभी गिरमिटसे मुक्त हुए हैं, और खेतों तथा दूर-दराज जगहोंमें रह रहे हैं इसका आशय नहीं समझ सकते और व्यक्ति-कर अदा नहीं कर पाये हैं। इन लोगोंको सूचित करना लाजिमी है। पुलिस अफसर (सार्जेंट-इन-चार्ज) व्यक्तिकर ले लेता है और उन्हें रसीद दे देता है। तब वह उनको मजिस्ट्रेटके सामने ले जाता है और वहाँ उनपर जुर्माने किये जाते हैं। अगर वे जुर्माना नहीं अदा करते तो उन्हें जेल जाना पड़ता है। एक घटना मेरी उपस्थितिमें ही हुई। मोती नामक एक भारतीय मैरित्सबर्गसे पाँच-सात मील दूर रहता था। एक मित्रने उसे सूचित किया कि उसे कर चुका देना चाहिए। इसलिए उसने अपने कानकी बालियाँ ढाई शिलिंग मासिक ब्याजपर एक पौंडमें गिरवी रख दीं और कर अदा कर दिया। उसको रसीद दे दी गई और तब वह मजिस्ट्रेटके पास ले जाया गया। उसपर दस *शिलिंग जुर्माना किया गया। अब वह रकम कहाँसे लाये? उसके पास एक पाल था।* वह उसको अदालतमें छोड़ गया है और जुर्मानेकी रकम लानेका वादा कर गया है। अबतक लगभग बारहसे लेकर पन्द्रह लोगोंपर जुर्माना किया जा चुका है।

हम इस ओर सरकारका ध्यान आकर्षित करते हैं। यदि हमारे संवाददाता द्वारा दी गई सूचना ठीक है तो यह व्यक्तिकरकी वसूलीसे सम्बन्धित अधिकारियोंके लिए अत्यन्त बदनामीकी बात है। इन गरीब लोगोंको न केवल कर चुकानेके लिए बाध्य करना बल्कि जब वे कर देने आयें तब उनपर जुर्माना ठोंक देना हमें अन्यायकी पराकाष्ठा मालूम होती है। हमारी रायमें दण्डात्मक धारा उनपर लागू नहीं होती जो अपनी इच्छासे कर दे देते हैं बल्कि उनपर लागू *होती है जो उसकी अदायगीसे बचना चाहते हैं।* दैनिक पत्रोंमें इस आशयके समाचार छपे हैं कि भारतीय अत्यन्त शीघ्रतासे कर चुका रहे हैं। जैसा कि हमारे संवाददाताने लिखा है, दूर दराज जगहोंमें रहनेवाले लोगोंसे यह आशा करना निरर्थक है कि वे विज्ञापित समयसे पूर्व *अदायगीकी जगहोंमें पहुँचकर कर चुका देंगे।* हमें इस सम्बन्धमें सन्देह नहीं है कि बहुतोंको अपनी इस जिम्मेदारीका पता भी नहीं है और जैसा कि हमारे संवाददाताने लिखा है यदि यह सच है कि उन्हें सूचित किया जाना लाजिमी है तो सरकारसे अधिकारियोंको यह आदेश देनेकी उम्मीद करना उचित ही होगा कि जो लोग कर दें उनसे वे रकम ले लें और उनको व्यक्ति-कर कानून भंग करनेके कथित अपराधमें गिरफ्तार करके उनपर जुर्माने न करायें। हमें सरकारकी दया भावनामें काफी विश्वास है और हम अनुभव करते हैं कि वह इस अन्यायको बन्द कर देगी जो कानूनके नामपर किया जा रहा है।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, १७-३-१९११

२५० भारतीय स्वयंसेवकोंकी आवश्यकता

नेटालका वतनी आन्दोलन[1] मन्द गतिसे जारी है। इसमें सन्देह नहीं कि इसके भड़कनेका तात्कालिक कारण व्यक्ति-कर लगाना है, यद्यपि इसकी आग सम्भवतः अरसेसे सुलग रही थी। गलती चाहे जिसकी हो, खबर है कि इसपर उपनिवेशको दो हजार पौंड प्रतिदिन खर्च करना पड़ रहा है। गोरे उपनिवेशी उसको काबूमें लानेकी चेष्टा कर रहे हैं और अनेक नागरिक सैनिकोंने शस्त्र धारण कर लिये हैं। शायद आज और किसी सहायताकी जरूरत न पड़े परन्तु इस उपद्रवपर सरकारको और प्रत्येक विचारवान उपनिवेशीको भी विचार करना चाहिए। नेटालमें भारतीयोंकी आबादी एक लाखसे ज्यादा है। यह भी साबित किया जा चुका है कि वे युद्धकालमें अत्यन्त कुशलतापूर्वक काम कर सकते हैं।[2] आकस्मिक संकटोंमें वे बेकार हैं, इस भ्रमका निवारण हो चुका है। इन मकाट्य तथ्योंके बावजूद क्या सरकारके लिए शक्तिके इस स्रोतको जिसे वह चाहे जिस काममें ले सकती है, बेकार जाने देना बुद्धिमत्ताकी बात है? हमारे सहयोगी 'नेटाल विटनेस' ने भारतीय समस्यापर हालमें ही एक बहुत ही विचारपूर्ण अग्रलेख लिखा है और यह प्रमाणित किया है कि उपनिवेशियोंको भारतीय प्रतिनिधित्वके सवालपर किसी-न-किसी दिन गम्भीरतासे विचार करना ही होगा। यद्यपि भारतीय उपनिवेशमें किसी राजनीतिक सत्ताकी आकांक्षा नहीं रखते फिर भी हम उक्त मतसे सहमत हैं। वे इतना ही चाहते हैं कि उनको उपनिवेशके साधारण कानूनोंके अन्तर्गत पूर्ण नागरिक अधिकारोंका आश्वासन दिया जाये। यह ब्रिटिश प्रदेशवासी प्रत्येक ब्रिटिश प्रजाजनका जन्मसिद्ध अधिकार होना चाहिए। किन्हीं परिस्थितियोंमें किसीको भी मताधिकार मानने से इनकार करना उचित हो सकता है किन्तु शिष्ट और शारीरिक दृष्टिसे सक्षम शरणार्थियोंपर निर्योग्यताएँ थोपना आर्थिक या राजनीतिक किसी भी दृष्टिसे उचित नहीं ठहराया जा सकता। इसलिए, जब कि भारतीय प्रतिनिधित्वका सवाल निस्सन्देह बहुत ही महत्वपूर्ण है, हमारे खयालसे भारतीयोंको स्वयंसेवक बनानेका सवाल और भी ज्यादा महत्त्वका है क्योंकि वह अधिक व्यावहारिक है। आजकल यह बात पूरी तरह मानी जाती है कि ऐसे बहुत-से काम हैं जिनके लिए शस्त्र धारण करना जरूरी नहीं है किन्तु फिर भी जो उतने ही उपयोगी और सम्मानप्रद हैं जितना राइफल उठानेका काम है। अगर सरकार, भारतीयोंको उपेक्षित रखनेके बजाय स्वयंसेवकोंके काममें नियुक्त करेगी तो वह नागरिक सेनाकी उपयोगिता बहुत कुछ बढ़ा सकेगी और उपद्रवके समय भारतीयोंपर विश्वास रख सकेगी कि वे अच्छा काम करेंगे। हमें इसमें कोई सन्देह नहीं कि भारतीयोंको देशसे बाहर खदेड़ देना असम्भव है सरकार यह बात समझती है। तब जो सामग्री उपलब्ध है, वह उसका सर्वोत्तम उपयोग क्यों नहीं करती और इस प्रकार एक उपेक्षित समाजको राज्यकी स्थायी एवं परम मूल्यवान पूँजी क्यों नहीं बना लेती?

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, १७-३-१९०६

१. सम्भवतः नेटालमें जुलू विद्रोह; देखिए, "भारतीय स्वयंसेवकोंकी सभामें", पृष्ठ ११।

२. इसमें बोअर युद्धमें भारतीय आहत-सहायक दल द्वारा किये गये कार्योंकी ओर संकेत है। देखिए खण्ड ३, पृष्ठ ११८-१९।

२५१. अन्तर्राज्य बतनी महाविद्यालय

वर्तमान लवडेल संस्थाको केन्द्र बिन्दु बनाकर एक अन्तर्राज्य बतनी कॉलेजके निर्माणके लिए इम्बो के सम्पादक श्री टेंगो जबावुने कुछ मास पहले जो आन्दोलन चलाया था उससे काफी उत्साह पैदा हुआ है। श्री जबावु और आन्दोलनके संघटनमन्त्री श्री के० ए० हॉर्ट हॉटन दोनों दक्षिण आफ्रिकाका दौरा कर रहे हैं। उनके तीन उद्देश्य हैं — विभिन्न दक्षिण आफ्रिकी सरकारोंका सहानुभूतिपूर्ण सहयोग प्राप्त करना विवेकपूर्ण व्याख्या और उदाहरण द्वारा इस विषयपर वतनियोंमें स्वस्थ जनमत उत्पन्न करना और, इनमें सबसे महत्वपूर्ण है, निकट भविष्यमें इस गम्भीर कार्यको आरम्भ करनेके लिए धन एकत्र करना। अमेरिकाकी टस्केजी संस्थामें श्री बुकर टी० वाशिंगटनने जो उत्तम और शिक्षाप्रद कार्य किया है उसकी ओर इन स्तम्भों द्वारा हम पहले भी ध्यान आकर्षित कर चुके हैं।[1] यह प्रस्ताव है कि इस नये महाविद्यालयको जो कार्य सौंपा जायेगा उसे अमेरिकी संस्थाके समान ही औद्योगिक प्रशिक्षणकी दिशामें विकसित किया जाये। इस सबसे अच्छा ही परिणाम निकल सकता है और इसमें आश्चर्यकी कोई बात नहीं कि दक्षिण आफ्रिकी महान बतनी प्रजातियोंके जैसे जागृत होते हुए राष्ट्रोंमें एक ऐसा उत्साह व्याप्त हो रहा है जो धार्मिक जोशसे कुछ कम नहीं। उनके लिए यह कार्य निश्चय ही पुनीत और पुण्यमय है क्योंकि इससे विचारोंमें प्रगतिके द्वार खुलते हैं और आध्यात्मिक विकासको बहुत बल मिलता है। इस कार्यमें दिलचस्पी लेनेवाली विभिन्न धार्मिक संस्थाओं और राज्योंसे मिलनेवाली सहायताके अलावा केवल बतनियोंसे ही ५० पौंडकी भारी रकम एकत्र करनेका विचार है। आत्मत्यागके इस उदाहरणसे दक्षिण आफ्रिकाके ब्रिटिश भारतीयोंको बहुत कुछ सीखना है। मगर अपनी सम्पूर्ण आर्थिक असमर्थताओं और सामाजिक असुविधाओंके बावजूद दक्षिण आफ्रिकाके बतनी इस स्थानीय कार्यको पूर्ण कर सकते हैं तो क्या ब्रिटिश भारतीय समाजके लिए यह लाजिमी नहीं कि वह इससे हृदयमें शिक्षा ग्रहण करे और शैक्षणिक सुविधाओंको आगे बढ़ानेके लिए जिस शक्ति और उत्साहसे अबतक काम होता रहा है उससे कहीं अधिक शक्ति और उत्साहसे काम करे? शैक्षणिक मामलोंमें सुधार स्वयं हमें ही करना होगा और हम अपने पाठकोंपर जोर देंगे कि वे प्रश्नके इस पहलूपर गौर करें।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन १७–३–१९०६

1. देखिए खण्ड ३, पृष्ठ ४६८–७१।

२५२. सर विलियम गैटेकर

हमें यह लिखते हुए दुःख होता है कि सिलमें लू लगनेके कारण मेजर-जनरल सर विलियम गैटेकरकी मृत्यु हो गई है। सर विलियमका भारतीयोंकी कृतज्ञतापर एक खास हक था। वे बम्बईमें बनाई गई प्रथम प्लेग-समितिके अध्यक्ष थे। उन्होंने कठिनसे-कठिन मामलोंमें कौशल और सावधानीसे काम किया जिससे सारा संघर्ष और घबराहट टल गई। आंग्ल-भारतीय चरित्रमें जो-कुछ उत्तम है और जिसका प्रतिनिधित्व माउंटस्टुअर्ट एल्फिन्स्टन, मनरो, टॉड, स्लीमन, फ्रीयर, कॉटन तथा ब्रिटिश शासनके अन्य अनेक उत्साही और शिष्ट व्याख्याता करते हैं उसके वे अनुपम उदाहरण थे। जबतक ब्रिटेन स्वर्गीय सर विलियमके मार्केके उदात्त महापुरुषोंको जन्म दे सकता है तबतक यह आशा शेष है कि भारत अपने शासकोंसे वह सहानुभूतिपूर्ण व्यवहार, जिसकी उसे आवश्यकता है, प्राप्त करेगा।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, १०-३-१९०६

२५३. आस्ट्रेलियामें बस्तीकी कमी

आस्ट्रेलियाके गोरे उस टापूपर उतरनेवाले किसी भी व्यक्तिसे ईर्ष्या करते हैं। वे अपने जाति-भाइयोंको भी यहाँ आने दें तब न। काले लोगोंके तो वे शत्रु हैं। इसका परिणाम यह हुआ है कि उत्तरी हिस्सेमें केवल ८२ गोरे आबाद हैं। अर्थात् प्रति ७ मीलपर एक गोरेकी बस्ती हुई। आदमी जमीनका बटाईदार तो नहीं रह सकता। अगर लोग पर्याप्त संख्यामें न हों, तो जमीन उजाड़ पड़ी रहती है यानी उसे निकम्मी जमीन कहना होगा। इस कारण आस्ट्रेलियाके लोग अब जागने लगे हैं। राज्यपाल न्यूकैसलने आस्ट्रेलियाके लोगोंको लिखा है कि उनके देशको खाली रखनेमें नुकसान होगा। संसद-सदस्य श्री रिचर्ड आर्थरने कहा है कि आस्ट्रेलिया और एशिया एक दूसरेके पड़ोसी हैं इसलिए आस्ट्रेलियामें एशियाके लोगोंको जगह दी जानी चाहिए। ये विचार फैलने लगे हैं। इस बातसे यह अनुमान किया जा सकता है कि धीरे-धीरे ऐसे देशोंमें भारतीय जाकर बस सकेंगे।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, १७-३-१९०६

१ विलियम गैटेकर (१८५८-१९०६) [illegible]

२५४ ट्रान्सवालके भारतीयोंपर निर्योग्यताएँ[1]

उपनिवेश-सचिवसे शिष्टमण्डलकी भेंट

पिछले शनिवार १ तारीखको एक भारतीय शिष्टमण्डल सहायक उपनिवेश-सचिवसे मिलनेके लिए गया था। उसके सदस्य श्री अब्दुल गनी, श्री हाजी हबीब और श्री गांधी थे। श्री चैमने और श्री बर्जेस मौजूद थे। शिष्टमण्डलकी बातचीत सवा ग्यारहसे एक बजे तक चली। उसमें उसने नीचे लिखी माँगें की थीं :

१ अनुमतिपत्र प्राप्त करनेमें बहुत समय जाता है। यह नहीं लगना चाहिए। अनुमतिपत्र जल्द जारी होने चाहिए।

२ जाँचके लिए अर्जियाँ मजिस्ट्रेटके पास भेजी जाती हैं। इससे बहुत तकलीफ होती है। जाँच होती नहीं और अर्जियाँ पड़ी रहती हैं।

३ वास्तवमें अलग-अलग गाँवोंमें पहुँचकर एक ही अधिकारीको जाँच करनी चाहिए, जिससे एक-सी जाँच हो और जल्दी निर्णय हो। गाँवके लोगोंको तंग करना हो तो वे खुशीसे करें। लेकिन फैसला तुरन्त होना चाहिए।

४ जिनके पास पुराने प्रमाणपत्र हों उनके लिए गवाहोंकी जरूरत नहीं रहनी चाहिए प्रमाणपत्रकी जानकारी देते ही उन्हें फौरन अनुमतिपत्र मिलना चाहिए।

५ औरतोंके लिए अनुमतिपत्रकी कोई जरूरत नहीं होनी चाहिए। औरतें तो गोरोंके साथ कोई होड़ नहीं करतीं। और उनकी जाँच करना तो उनका घोर अपमान करने-जैसा है। भारतीय औरतें ट्रान्सवालमें बहुत कम हैं और वे सब अपने मर्दोंके साथ हैं इसलिए इस सम्बन्धमें शक नहीं करना चाहिए।

६ सरहदपर अनुमतिपत्र और प्रमाणपत्र दोनों माँगे जाते हैं। यह जुल्म कहा जायेगा। जिसके पास अनुमतिपत्र हो उसे तुरन्त निकल जाने देना चाहिए। इसी तरह जो प्रमाणपत्र दिखाये उसे भी जाने देना चाहिए।

७ सरहदपर अनुमतिपत्रवालोंसे अँगूठेके निशान लिये जाते हैं। यह व्यर्थका अपमान कहा जायेगा।

८ कानून बना है कि बारह सालसे कम उम्रके लड़के भी उसी हालतमें आ सकेंगे जब उनके माँ-बाप ट्रान्सवालमें हों। यह कानून अत्याचारपूर्ण माना जायेगा। शुरूसे ही १६ सालसे कम उम्रके लड़के आते रहे हैं इसलिए उन्हें आने देना चाहिए। अगर इसमें कोई परिवर्तन करना हो तो भी जो लड़के इस कानूनके अनुसार आ ही पहुँचे हैं उन्हें तो किसी अड़चनके बिना अनुमतिपत्र मिलना ही चाहिए। नये कानूनकी सूचना काफी समय पहले देनेकी जरूरत है। जिसके माँ-बाप मर गये हों उसके रिश्तेदारोंको ही अभिभावक मानना चाहिए।

९ जिसने अनुमतिपत्र लो दिया हो उसके लिए प्रमाणपत्र अथवा दूसरा दाखिला देना जरूरी है। ऐसे आदमीको यदि भारत जाना हो तब तो उन्हें खास तौरपर यह हथियार मिलना ही चाहिए, नहीं तो उन्हें वापस लौटनेमें बहुत परेशानी होती है। यदि सरकारको

१ यह लेख "इंडियन ओपिनियन"में छपा था।

पास हो तो लोगोंको बन्दरगाहपर प्रमाणपत्र भेजनेकी व्यवस्था करें। ट्रान्सवालमें अनुमतिपत्रके लौट जानेपर परवाने वगैरह प्राप्त करनेमें बड़ी परेशानी होती है।

१ मुद्दती अनुमतिपत्र तो माँगते ही मिल जाने चाहिए। लोगोंको काम-काजके सिलसिलेमें जाने-आनेकी पूरी छूट चाहिए है।

११ जोहानिसबर्गमें अनुमतिपत्र देनेके लिए हर हफ्ते एक बार किसी अधिकारीको आना चाहिए। लोगोंको जहाँतक हो सके उतनी कम तकलीफ होनी चाहिए। बहुतेरे लोगोंको अनुमतिपत्रोंके लिए ही प्रिटोरिया जानेकी आवश्यकता पड़ती है।

१२ रेलवेमें जोहानिसबर्ग या प्रिटोरियासे [भारतीयोंको] सुबह ८॥ बजेकी गाड़ीके टिकट देना बन्द हो गया है। यह बहुत अनुचित बात है। विश्वास है कि इसकी सुनवाई तुरन्त होगी।

१३ रेलगाड़ीके एक ही डिब्बेमें औरत-मर्द दोनोंको बैठाया जाता है और बहुत लोगोंको भर दिया जाता है, इसे तो सरासर बुरा माना जायगा।

१४ प्रिटोरियाकी ट्रामके बारेमें भी हुजूरने कहा था कि खुलासा किया जायेगा। अब उसमें फरफार करनेकी जरूरत है। अभीतकी एक या दो बेंचोंपर भारतीय बैठें तो गोरोंको उसपर कोई एतराज नहीं करना चाहिए।

१५ जोहानिसबर्गमें परीक्षात्मक मुकदमा चलाया गया है। उसमें सफलता न मिले तब भी ट्राममें बैठनेका अधिकार तो मिलना ही चाहिए।[1]

१६ प्रिटोरियाके बाजारसे काफिरोंको निकाला जा रहा है। यह गलत चीज है। कानून कुछ भी क्यों न हो पर कई सालसे भारतीयोंको उनकी किरायेदारीसे आमदनी होती रही है। इसमें नुकसान न हो इसका खयाल रखना सरकारके लिए लाजिमी है।

इन बातोंका जवाब देते हुए श्री कर्टिसने[2] कहा कि सारी बातें मैं श्री डंकनके सामने रखूँगा। मैं अभीसे कोई फैसला नहीं दे सकता। सरकार भारतीयोंको तकलीफ देना नहीं चाहती। जैसे भी बनेगा राहत पहुँचाई जायेगी। बहुत करके मजिस्ट्रेटोंसे कहा जायेगा कि वे १५ दिनमें शरणार्थियोंकी अर्जियाँ जाँच लिया करें। इस बीच न जाँच तो संरक्षक (प्रोटेक्टर) फैसला दे देगा। हम मानते हैं कि औरतोंको भी तीन पौंड देने चाहिए।

इसके जवाबमें शिष्टमण्डलने कहा कि अगर औरतोंके बारेमें सरकारका यह खयाल है, तो हम मुकदमा लड़नेको तैयार हैं।

श्री कर्टिसने कहा कि अगर दसों अँगुलियोंकी निशानी अनुमतिपत्रपर दी जाये तो बहुत सुविधा होगी।

शिष्टमण्डलने इस माननेसे साफ इनकार किया। आखिर श्री कर्टिसने कहा कि सारी बातोंका खुलासा यथासम्भव शीघ्र ही किया जायेगा। इसके बाद शिष्टमण्डल आभार मानकर विदा हुआ।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, १७-३-१९०४

१ देखिए "ट्राम-गाड़ी विधेयक" पृष्ठ २१५-६।

२ लायनेल कर्टिस, सहायक उपनिवेश-सचिव।

२५५ जोहानिसबर्गकी चिट्ठी

मार्च १७ १९१

जोहानिसबर्गमें आग

इस हफ्ते जोहानिसबर्गकी रिसिक स्ट्रीटमें बहुत बड़ी आग लग गई थी। उसमें मोटरकार वगैरह बनानेका बहुत-सा कीमती सामान जल गया है। लगभग १ पौंडका नुकसान हुआ है। पूरा बीमा नहीं कराया गया था इसलिए मालिककी भारी हानि हुई है।

अनुमतिपत्र

अनुमतिपत्र-सम्बन्धी तकलीफ ज्यादा बढ़ गई है। अब संरक्षक सिपाही अनुमतिपत्र देनेसे भी इनकार करता है। हालमें ऐसे दो उदाहरण सामने आये हैं। हॉविकके एक व्यापारीने थोड़ी मुद्दतका अनुमतिपत्र माँगा। संरक्षकने देनेसे साफ इनकार किया है। इसी तरह डेलागोआ-बेके सुपरिचित व्यक्ति श्री मंयाके भतीजेको[1] भी अनुमतिपत्र देनेसे इनकार किया गया है। इस मामलेमें कार्रवाई चल रही है। लेकिन अनुभव यह हो रहा है कि अनुमतिपत्रकी लड़ाई पूरी तरह लड़नी पड़ेगी।

इस बीच जोहानिसबर्गमें भारतीयोंकी आबादी दिनपर-दिन घटती जा रही है। कमाईके जरिये कम हो जानेसे लोगोंको भीगना पड़ रहा है।

चीनी मजदूर

चीनियोंके जानेपर प्रतिबन्ध लगानेके समाचारसे यहाँके खान-मालिकोंको बहुत चिन्ता हो गई है। उनका मन उचट गया है इसलिए जनतामें निराशा छा गई है। इस नगरका भविष्य क्या होगा कहा नहीं जा सकता।

इस स्थितिके कारण भुखमरी बढ़ी है। बहुतेरे लोग बेरोजगार होकर बैठ गये हैं और उन्हें सूझ नहीं पड़ रहा है कि पेट कैसे पालें।

किसीका अपराध किसीको दण्ड

यहाँकी अदालतमें एक जानने योग्य मुकदमा चला है। डॉक्टर किन्केड स्मिथकी मोटर उनका नौकर चला रहा था। श्री क्लार्क डार्टी नामक इंजीनियर अपनी बाइसिकलपर थे। इतनेमें डॉक्टर स्मिथके चालकने गाड़ी जरा अपनी तरफको घुमाई, जिससे गाड़ी श्री डार्टीकी बाइसिकलसे टकरा गई और श्री डार्टी गिर पड़े। उन्हें ऐसी चोट आई कि अस्पतालमें जाना पड़ा। मोटरकी टक्करके समय डॉक्टर खुद गाड़ीमें नहीं थे। श्री डार्टीने डॉक्टर स्मिथपर यहाँके उच्च न्यायालयमें २ पौंडके हर्जानेका दावा किया। न्यायमूर्ति ब्रिस्टोने *फैसला दिया है* और श्री डार्टीको ७५ पौंड दिलाये हैं। फैसला सुनाते हुए माननीय न्यायाधीशने कहा है कि कसूर डॉक्टर स्मिथका नहीं है पर उनके आदमीने गलती की है इसलिए उन्हें उसकी सजा भुगतनी होगी। लोगोंको चाहिए कि वे बहुत सावधानीसे नौकर रखें। नौकरसे कोई गफलत हो और उसके कारण किसी तीसरे आदमीको नुकसान पहुँचे तो उसकी भरपाई मालिकको

१. श्री सुलेमान मंया, एक अग्रगण्य भारतीय नेता।

करनी पड़ती है। अगर डॉक्टर स्मिथका नौकर उनके ही काममें न आ रहा होता और तब उसने गफलत की होती तो डॉक्टर स्मिथको रकम न चुकानी पड़ती।

जो नौकर रखते हैं उन्हें इस मामलेसे नसीहत लेनी चाहिए। खास तौरपर मोटरके मामलेमें देखा यह गया है कि चालक अक्सर अपनी उद्दंडता अथवा अप्रवीणताके कारण गलती करते हैं। इससे नुकसान मालिकको भोगना पड़ता है। यह हमेशा याद रखने योग्य है।

डॉ० अब्दुर्रहमान

केप टाउनके सुपरिचित डॉक्टर अब्दुर्रहमान आगामी मंगलवारको यहाँ आनेवाले हैं। वे यहाँ तथा प्रिटोरियामें काले लोगोंकी सभामें भाषण देंगे और तुरन्त ही केप टाउन लौट जायेंगे।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन २४-३-१९०६

२५९. पत्र : दादाभाई नौरोजीको[1]

ब्रिटिश भारतीय संघ

२५ व २६ कोर्ट चेम्बर्स
रिसिक स्ट्रीट
जोहानिसबर्ग
मार्च १, १९०६

सेवामें
माननीय श्री दादाभाई नौरोजी
२२ केनिंगटन रोड
लन्दन
इंग्लैंड

[महोदय]

मैं आपका ध्यान 'इंडियन ओपिनियन' के ? मार्चके अंकमें नेटाल सरकारके नाम प्रकाशित एक विरोधपत्रकी ओर खींचना चाहता हूँ। यह विरोधपत्र प्रवासी-प्रतिबन्धक कानूनके अन्तर्गत दिये जा रहे प्रमाणपत्रों और पासोंपर अँगूठेके निशान लगाये जानेके सम्बन्धमें नेटाल भारतीय कांग्रेसने नेटाल-सरकारको भेजा है।

यह कदम सरासर अन्यायपूर्ण है और उसका लेशमात्र औचित्य नहीं है। यह तो बदलेकी आवश्यकता भी नहीं है।

दक्षिण आफ्रिकाके भारतीय समाजको दूसरा गम्भीर आघात ट्रान्सवालमें पहुँचाया गया है। आप [illegible] 'इंडियन ओपिनियन' के अंकमें १८८५ के कानून ३ के अनुसार ट्रान्सवालके

१. इस पत्रका मसविदा गांधीजीने तैयार किया था और इसपर अब्दुल गनीके हस्ताक्षर थे।
२. देखिए "पत्र : उपनिवेश-सचिवको" पृष्ठ २१९-२०।
३. देखिए "कानून नं० ३ का संशोधन" पृष्ठ २२०-१।

सर्वोच्च न्यायालयके समक्ष सुने गये मुकदमेका ब्यौरा देख सकेंगे। ओपिनियन में मुकदमेका पूरा विवरण और उसपर टिप्पणियाँ दी गई हैं।

इस दोनोंपर तत्काल ध्यान देना आवश्यक है।

आपका विश्वस्त
मो० क० गांधी

टाइप की हुई मूल अंग्रेजी प्रति (सी० एन० २२७१) से।

२५७ नेटालका शीघ्र दूकानबन्दी अधिनियम

शीघ्र दूकानबन्दी अधिनियमका असर अब महसूस होने लगा है। हमारा कभी यह मत नहीं रहा कि शीघ्र दूकानबन्दी अधिनियम किसी भी परिस्थितिमें उपयुक्त नहीं होगा। इसके प्रतिकूल हमारी धारणा है कि एक सुविचारित कानून समाजके लिए सदैव बड़ा लाभप्रद होगा किन्तु वर्तमान अधिनियम उपभोक्ताओं अथवा छोटे फुटकर विक्रेताओंकी सुविधाका पर्याप्त विचार किये बिना बनाया गया है। नतीजा यह हुआ है कि गरीब गृहस्थोंको बड़ी असुविधा हो गई है और छोटे व्यापारियोंको बहुत बड़ी क्षति पहुँची है। सम्भवतः इससे केवल उन लोगोंको लाभ पहुँच सकता है जो बड़े फुटकर विक्रेता हैं। हम नेटाल मर्क्युरी के प्रतिनिधिके इस कथनसे पूरे सहमत हैं

> बड़े व्यापारी धीरे-धीरे छोटे व्यापारियोंको निगलते जा रहे हैं और इन बड़े व्यापारियोंको तादाद अँगुलियोंपर गिनी जा सकती है। वास्तवमें यदि इस प्रकारके कानूनसे नये उपनिवेशियोंको एक ओर धकेल कर उन्हें ईमानदारीके साथ जीविकोपार्जनसे वंचित कर दिया गया तो यह एक दुर्भाग्यकी बात होगी।

इसके लिए जो प्रतिकार सुझाया गया है वह है अधिनियमको स्थगित करना। अनुभवसे यह ज्ञात हुआ है कि दूकानोंको शामके पाँचके बजाय छः बजे तक खुला रहने देना चाहिए और शनिवारको दूकान बन्द करना एक भयानक भूल है। इस मामलेमें नेटाल विटनेस ने जो रुख ग्रहण किया है उसे एक तरहसे विरोधपूर्ण ही कहा जा सकता है। वह यह कहकर इस विषयपर अपना मन्तव्य समाप्त करता है

> यह एक सुविदित तथ्य है कि नगरके अरब और भारतीय दूकानदारोंको बहुत हानि पहुँची है। यूरोपीय इसे भली-भाँति याद रखें।

हमारा सहयोगी यूरोपीयोंसे अनुरोध करता है कि वे सिर्फ इस बिनापर इस अधिनियमके खिलाफ आन्दोलन न करें कि इसका भारतीय व्यापारपर प्रतिकूल प्रभाव पड़ा है। भारतीयोंसे अतिग्रस्त देशमेंकी जल्दीमें विटनेस यह बात पूर्णतः भूल गया है कि भारतीयोंको क्षति पहुँचानेमें उन छोटे-छोटे गोरे व्यापारियोंको अकेले गिरें ही भारतीय प्रतियोगिता महसूस हो सकती है न केवल हानि पहुँचेगी बल्कि वे पूर्णतः मिट जायेंगे क्योंकि भारतीयोंका मितव्ययी स्वभाव उन्हें तो मुसीबतमें किसी प्रकार बचा सकता है पर छोटे गोरे व्यापारी जो बचत करनेकी असमर्थताके लिए पूरी तरह प्रसिद्ध हैं, सर्वथा असहाय हो जायेंगे।

असली इलाज भारतीयोंको चोट पहुँचानेके लिए छोटे मोटे फुटकर व्यापारियोंको नष्टकर देना नहीं है, बल्कि भारतीयों और यूरोपीयों — दोनोंके लिए दूकान बन्द करनेके उचित समयका निर्धारण करना है जिससे बड़ी फुटकर दूकानोंके बन्द हो जानेके बाद वे जीविकोपार्जनका अवसर पा सकें। बड़ी फुटकर दूकानोंको सदा ही छोटी फुटकर दूकानोंके मुकाबले बहुत पहले बन्द करना पड़ेगा। विटनेस ने स्थितिको पूर्वग्रहपूर्ण दृष्टिसे देखा है, इसलिए वह यह कल्पना करनेकी भूल भी कर बैठा है कि बिजलीका खर्च बचनेसे दूकानदारोंको कोई लाभ होगा। हम विटनेस को यह बात समझा देनेका श्रेय प्राप्त करते हैं कि कोई दूकानदार बिजली जलानेका खर्च तबतक बर्दाश्त नहीं करेगा जबतक कि वह उतने घंटोंमें होनेवाले व्यापारके लाभसे खर्च निकालनेके अलावा कुछ बचा भी न सकता हो।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, २४-३-१९११

२५८. रंगदार लोगोंका प्रार्थनापत्र

केप ऑफ गुड होप, ट्रान्सवाल और ऑरेंज रिवर कालोनीके निवासी रंगदार ब्रिटिश प्रजाजनोंने जो प्रार्थनापत्र सम्राट्की सेवामें भेजा है उसकी एक प्रति हमको भी भेजनेकी कृपा की गई है।

जान पड़ता है कि प्रार्थनापत्र दूर-दूरतक प्रचारित किया जा रहा है और उसपर उक्त तीनों उपनिवेशोंके सब रंगदार लोगोंके हस्ताक्षर कराये जा रहे हैं। प्रार्थनापत्रका स्वरूप अभारतीय है यद्यपि रंगदार लोग होनेके कारण ब्रिटिश भारतीयोंपर उसका बहुत गहरा असर पड़ता है। हम समझते हैं कि समस्त दक्षिण आफ्रिकामें ब्रिटिश भारतीय इस देशकी अन्य रंगदार जातियोंसे पृथक और भिन्न रहे हैं यह एक बुद्धिमत्तापूर्ण नीति थी। यह ठीक है कि ब्रिटिश भारतीयों और अन्य रंगदार जातियोंकी बहुत-सी शिकायतें लगभग एक समान हैं, किन्तु जिन दृष्टिकोणोंसे दोनों वर्ग अपनी-अपनी माँगें पेश कर सकते हैं उनमें कोई समानता नहीं है। जहाँ ब्रिटिश भारतीय अपनी माँगोंके समर्थनमें १८५८ की राजकीय घोषणाका उपयोग कर सकते हैं और प्रभावकारी रूपमें करते भी हैं वहाँ अन्य रंगदार लोग ऐसा करनेकी स्थितिमें नहीं हैं। जहाँ ऑरेंज रिवर कालोनीमें कुछ वर्गोंके रंगदार लोग सम्पत्ति और व्यापारके मामलेमें पूरे अधिकारोंकी माँग कर सकते हैं वहाँ ब्रिटिश भारतीयोंको किसी प्रकारका आधार उपलब्ध नहीं है। इसी प्रकार ट्रान्सवालमें दूसरी रंगदार जातियोंके लोग वहाँ भू-सम्पत्ति रखनेके अधिकारी हैं परन्तु १८८५ के कानून ३ के अनुसार ब्रिटिश भारतीयोंको ऐसा करना वर्जित है। इसलिए यद्यपि भारतीय और अ-भारतीय रंगदार समाजोंको अलग-अलग रहना चाहिए और वे अलग-अलग रहते भी हैं तथा उनके अलग अलग संगठन भी हैं तथापि दोनों अपने सामान्य अधिकारोंपर जोर देनेमें एक दूसरेको निस्सन्देह शक्ति प्रदान कर सकते हैं। इसलिए जो कागज हमारे सामने है हमें उसका स्वागत करनेमें कोई संकोच नहीं है। जिन्होंने प्रार्थनापत्र तैयार किया है उन्होंने इसमें केवल ठोस तथ्योंका ही समावेश किया है। हमें इसके लिए उनको बधाई अवश्य देनी चाहिए। हमें सदैव ही यह लगता है कि दक्षिण आफ्रिकाके रंगदार समाजोंका मामला इतना अधिक शुद्ध और न्यायसंगत है कि उसके सम्बन्धमें केवल तथ्य ही देना अन्य किसी भी तरीकेसे कहीं ज्यादा प्रभावकारी है। प्रार्थनापत्रमें बहुत-सी बातें नहीं दी गई हैं, किन्तु उसमें वक्तव्योंका

निकाले जानेवाले निष्कर्ष काफी स्पष्ट है। प्रार्थियोंने स्पष्ट रूपसे सिद्ध कर दिया है कि दक्षिण आफ्रिकाके एक हिस्से अर्थात् केप ऑफ गुड होप उपनिवेशमें उनको प्रातिनिधिक संस्थाओंके आरम्भसे ही मताधिकार प्राप्त है। उन्होंने यह भी सिद्ध किया है कि १८९२ में मताधिकार कानूनपर पुनर्विचारके समय भी उसमें रंगके कारण निर्योग्यता लगानेके उद्देश्यसे कोई परिवर्तन नहीं किया गया। परिणामस्वरूप इस समय केपमें १४ कानून-सम्मत रंगदार मतदाताओंके नाम सूचीमें दर्ज हैं। प्रार्थियोंने आगे कहा कि

> उन्होंने इस अधिकारका उपभोग आवश्यक लायवाद और शिक्षा प्राप्त करनेमें प्रलोभन माना है और उनका नम्रतापूर्वक निवेदन है कि, उन्होंने उस अधिकारका उपयोग वर्ग एवं रंगके भेद बिना सम्पूर्ण समाजके हितके लिए गौरवास्पद रूपसे और औचित्यकी भावनाके साथ किया है।

परन्तु उनका कहना है कि ज्योंही वे ऑरेंज रिवर कालोनी या ट्रान्सवाल उपनिवेशमें प्रवास करते हैं त्योंही उनपर और उनकी सन्तानोंपर रंगभेदके कारण निर्योग्यताका प्रतिबन्ध लगा दिया जाता है। प्रार्थियोंने मताधिकारको अपने कार्यक्रममें सर्वोच्च स्थान दिया है। यह उचित ही किया है क्योंकि उन्हींकी भाषामें

> इस अधिकारसे वंचित होनेपर महामहिम सम्राट्के रंगदार प्रजाजन एक बड़ी हद तक अपनी उन शिकायतोंको जिनसे वे पीड़ित हों सार्वजनिक रूपसे प्रकट करने और वैधानिक तरीकोंसे दूर करानेके अधिकारसे भी वंचित हो जाते हैं। और ये शिकायतें ऐसी नहीं हैं जो कानूनी मताधिकारकी सरहदमें आकर दूर कराई जा सकती हों।

इस बयानकी सचाई बहुत-से उदाहरण देकर सिद्ध की जा सकती है। जिस देशमें लोक-संस्थाएँ हैं उसमें वे लोग अभागे हैं जिनको लोक-प्रतिनिधियोंके चुनावमें मत देनेका अधिकार प्राप्त नहीं है। मताधिकार वंचित लोग अपना या अपने प्रतिनिधियोंका कोई बोल न होते हुए भी धीरे-धीरे दब जाते हैं क्योंकि शासनमें स्वार्थ उभर आते हैं। ब्रिटिश भारतीयोंने अपने बारेमें भ्रम दूर करनेके उद्देश्यसे यह स्पष्ट कर दिया है कि उनको राजनीतिक सत्ताकी आकांक्षा नहीं है परन्तु उनको इससे हानि हुई है और अब उन्होंने यह जाना है कि चूंकि नेटाल और दूसरे उपनिवेशोंमें लोक-प्रतिनिधियोंके चुनावमें उनकी कोई आवाज नहीं है इसलिए उनकी नागरिक स्वतन्त्रतामें भी बहुत कमी हो गई है। रंगदार लोगोंका प्रार्थनापत्र महत्वपूर्ण दस्तावेज है। उसपर बहुत लोग हस्ताक्षर कर रहे हैं, और आशा की जाती है कि उसमें निहित प्रार्थनापर ध्यान दिया जायेगा और विचार किया जायेगा जिसके वह निःसन्देह योग्य है। उदारदलीय मन्त्रियोंने अनेक बार साम्राज्यके दुर्बल सदस्योंको सहायता देनेकी इच्छा प्रकट की है। नये उपनिवेशोंको नविधान देनेमें उनका विवेक मुक्त है और उनको अपने सिद्धान्तोंको आचरणमें उतारनेका एक अलभ्य अवसर प्राप्त है।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन २४-३-१९०६

२५९. 'कलर्ड पीपुल'का प्रार्थनापत्र

प्रिटोरियामें "कलर्ड पीपुल" [रंगदार लोगों] की बैठक हुई थी। इस अंकमें हम उसका विवरण दे रहे हैं। उनके द्वारा दी गई अर्जीका अनुवाद भी छाप रहे हैं। हम "कलर्ड पीपुल" शब्दका प्रयोग कर रहे हैं, क्योंकि उसका अनुवाद "काले लोग" करनेसे उसमें वतनियोंका समावेश हो जाता है। इस बैठकमें वतनी नहीं थे। उसमें खास तौरपर "केप बॉय" कहलानेवाले लोग थे और वे लोग थे जिनके माँ-बापमें से कोई-न-कोई गोरा है। उसमें कुछ मलायी भी शरीक हुए हैं।

"कलर्ड पीपुल" के इस संघमें भारतीयोंका समावेश नहीं है। भारतीय हमेशा इस बैठकसे दूर रहे हैं। हम मानते हैं कि भारतीयोंने इसमें समझदारीसे काम लिया है। यद्यपि उनकी और भारतीयोंकी मुसीबतें लगभग एक ही प्रकारकी हैं, फिर भी दोनोंके इलाज एक नहीं हैं। इसलिए मुनासिब यह है कि दोनों अपने-अपने ढंगसे लड़ाई करें। हम १८५७[1] की घोषणाका उपयोग अपने पक्षमें कर सकते हैं। "कलर्ड पीपुल" नहीं कर सकते। वे अपने पक्षमें यह जबरदस्त दलील दे सकते हैं कि वे इसी देशकी सन्तान हैं। उनकी रहन-सहन बिलकुल यूरोपीय है। वे इस तथ्यका उपयोग भी अपने पक्षमें कर सकते हैं। हम भारत-मन्त्रीके नाम अर्जी भेज सकते हैं। वे यह नहीं कर सकते। चूँकि वे अधिकतर ईसाई हैं, इसलिए अपने पादरियोंकी मदद ले सकते हैं। हमें उनकी मदद नहीं मिल सकती। स्पष्ट ही "कलर्ड पीपुल" ने एक बड़ी लड़ाई छेड़ी है। अतएव हमारे लिए इतनी टिप्पणी लिखना जरूरी हो गया है।

प्रिटोरियामें उनकी जो बैठक हुई थी उसमें उन्होंने कुछ अतिरेकपूर्ण बातें की थीं और लॉर्ड मिलनरके बारेमें अपमानजनक शब्दोंका उपयोग किया था। "ट्रान्सवाल लीडर" ने इसकी कड़ी आलोचना की है। उसके सभापतिने कहा कि काले लोगोंपर जुल्म करनेसे बोअरोंने राज्य खोया और अगर काले लोगोंपर जुल्म जारी रहा तो अंग्रेज राज्य खोयेंगे। यह अमकी बेकार है। इसमें बोलनेवालेका मंशा यह था कि "कलर्ड पीपुल" मुकाबला करेंगे। उनमें मुकाबला करनेकी ताकत भी नहीं है। मनुष्यको हमेशा अपनी ताकतका ध्यान रखकर ही काम करना चाहिए।

"कलर्ड पीपुल" का प्रार्थनापत्र बहुत अच्छा है। उसमें उन्होंने पर्याप्त जानकारी दी है और उसके सिवा और कुछ नहीं दिया। जो जानकारी दी है, वह इतनी ठोस है कि उसके विषयमें दलील देनेकी जरूरत नहीं। उन्होंने यह सिद्ध करके दिखाया है कि आजतक वे केप कालोनीमें पर्याप्त अधिकारोंका उपभोग करते आये हैं। तो फिर ट्रान्सवालमें और ऑरेंज रिवर कालोनीमें उन्हें वे अधिकार क्यों न मिलें?

इस प्रार्थनापत्रपर समर्थन प्राप्त करनेके लिए वे डॉक्टर अब्दुर्रहमानको[2] विलायत भेजना चाहते हैं। यह कदम बहुत अच्छा और जरूरी है। इस समय हर समाजको अपनी बात सुनानेके लिए जितना हो सके उतना प्रयत्न करना चाहिए। इस प्रयत्नके लिए यहाँसे एक-दो व्यक्तियोंको जाना चाहिए।

हमें यह देखना चाहिए कि "कलर्ड पीपुल" के इस आन्दोलनका परिणाम क्या होगा। हो सकता है कि जब वे लोग इतनी मेहनत कर रहे हैं, तो एक हद तक उसका कुछ अच्छा फल

१. स्पष्टतः १८५८के बजाय भूलसे १८५७ लिखा गया है।

२. आफ्रिकी एथेनियन संघके अध्यक्ष और केप टाउनकी नगरपालिकाके एक सदस्य।

मिलके। और अगर उनकी सुनवाई हुई, तो सम्भव है कि उसमें बहुत हद तक भारतीयोंका भी समावेश होगा।

वे जैसा कर रहे हैं हमें भी वैसा करनेकी बहुत आवश्यकता है।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन २४-२-१९१२

२६० हीडेलबर्गकी जमातको दो शब्द

हीडेलबर्गकी जमातके बीच जो अनबन चली आ रही है उसके विषयमें हम कई पत्र छाप चुके हैं। दोनों पक्षोंको जो कहना था सो हमने कहने दिया है। अब इस विषयमें और भी चिट्ठी-पत्री छापते रहना मानो केवल कलह जारी रखना है। इसलिए इस सप्ताहके बाद हम इस प्रसंगकी चर्चा करनेवाले पत्र छापना बन्द कर देंगे।

हम जो पत्र छाप चुके हैं उनसे पता चलता है कि दोनों पक्षोंमें थोड़ा-बहुत दोष हो सकता है। हम उसका विवेचन नहीं करना चाहते। दोष किसीका भी हो पर हम यह देख सकते हैं कि कलह एक न-कुछ बातपर है और चलता रहता है। इसका मुख्य कारण जिद है। हम दोनों पक्षोंसे विनती करते हैं कि मुखियाओंको ऐसा प्रयत्न करना चाहिए जिससे कलहके कारण समाप्त हो जायें और कौम परस्पर मिलजुल कर रहने लगे। बाहरके संकटोंके अलावा इस देशमें हमपर इतने अधिक संकट हैं कि हमें उन संकटोंमें घरके झगड़े शामिल करके और वृद्धि नहीं करनी चाहिए। दोनों पक्ष आपसमें समझौता करके सबसे काम लें तो कलह शीघ्र समाप्त हो जायेगा। हम उम्मीद करते हैं कि दोनों पक्षोंके नेता आपसमें मिलकर हीडेलबर्गकी जमातमें पैठे हुए इस कलहको मिटायेंगे और दोनों पक्षोंको फिरसे मिला देंगे।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन २४-२-१९१२

२६१ केपमें चेचक

केपका समाचार है कि वहाँ काले लोगोंमें चेचक फैल गई है। इस सम्बन्धमें केपके मुखियोंको जाँच करके तत्काल परिणाम देनेवाले उपाय करने चाहिए। चेचककी बीमारीकी रोक-थाम कुछ नियमोंका ध्यान रखनेसे सहज ही हो सकती है। दूसरोंको छूत न लगे इसके लिए अलग कोठरीमें रखकर सावधानीके साथ बीमारकी शुश्रूषा करनेसे खतरा बहुत-कुछ दूर किया जा सकता है। ऐसी बीमारीको छिपानेसे कोई फायदा नहीं होता बल्कि आखिर जिस समाजमें यह बीमारी फैलती है उसे नुकसान सहना पड़ता है।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन २४-२-१९१२

२६२. सिडनीमें प्लेग

तारसे समाचार मिला है कि सिडनीमें प्लेगके पाँच केस हो चुके हैं। जहाजपर दो केस होनेकी खबरका तार भी हमें इसी हफ्ते मिला है और उसमें कहा गया है कि ये केस ईस्ट लन्दनमें हुए हैं। फिर भी अनुभव यह रहा है कि जब भारतके बाहर कहीं दूर प्लेगके केस हुए हैं, तब कई जगहोंमें एक साथ केस होने लगे हैं। और, जहाँ हम लोगोंको तंग करनेके लिए ऐसे केसका बहाना ही खोजा जाता हो वहाँ हमें बहुत सोच-समझकर चलना चाहिए। हम कई दफा कह चुके हैं कि अधिकतर प्लेगके मुख्य कारण गन्दगी और खराब हवा हुआ करते हैं। अतएव घर साफ रखना, पाखानोंमें गन्दगी न होने देना, पाखानेपर हर बार राख अथवा रेत डालना, सारी जमीनको कृमिनाशक पानीसे धोना, घरमें हवा प्रकाश खूब आने देना और नियमित रूपसे सादा भोजन करना — इन सूचनाओंको ध्यानमें रखते हुए इनके अनुसार व्यवहार करनेवालेको डरनेकी जरूरत नहीं है।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, २४-३-१९०६

२६३. साबुनके लिए प्रमाणपत्र

२१-२४ कोर्ट चेम्बर्स
नुक्कड़ रिसिक व ऐंडर्सन स्ट्रीट्स
पो० ऑ० बॉक्स ६५२२
जोहानिसबर्ग
मार्च २६, १९०६

यह प्रमाणित किया जाता है कि मैं कुछ समयसे न्यू आब मैन्युफैक्चरिंग कम्पनी बम्बई द्वारा निर्मित साबुनका इस्तेमाल कर रहा हूँ और मैंने इसे गुणमें पूरा-पूरा सन्तोषजनक पाया है। मुझे मालूम हुआ है इस साबुनको तैयार करनेमें पशुओंकी चर्बी इस्तेमाल नहीं की जाती। मेरी रायमें इस कारणसे इस साबुनकी उपयोगिता बहुत ज्यादा बढ़ जाती है।

मो० क० गांधी

गांधीजीके हस्ताक्षरयुक्त टाइप की हुई मूल अंग्रेजी प्रति (सी० डब्ल्यू० ४५) से।
सौजन्य : छगनलाल गांधी।

२६४ प्रार्थनापत्र लार्ड एलगिनको

डर्बन
मार्च १ १९ ६

सेवामें
परममाननीय अर्ल ऑफ एलगिन
महामहिम सम्राटके प्रधान उपनिवेश-मन्त्री
लन्दन

नेटाल उपनिवेशके फ्राइहीड-निवासी दाबा उस्मानका प्रार्थनापत्र

नम्र निवेदन है कि

१ आपका प्रार्थी एक ब्रिटिश भारतीय प्रजा है।

२ आपका प्रार्थी पिछले २४ वर्षोंसे दक्षिण आफ्रिकाका अधिवासी है।

३ आपके प्रार्थीने १८९९ में फ्राइहीडके उस भागमें सामान्य दूकानदारके रूपमें अपना व्यापार शुरू किया था जो उस समय भारतीय बस्तीके नामसे प्रसिद्ध था।

४ आपके प्रार्थीने वहाँ मकान बनवाया जिसके मूल्यका अनुमान १ पौंड है।

५ भूतपूर्व बोअर सरकारने उक्त स्थानसे आपके प्रार्थीको हटाकर एक नई बस्तीके लिए निश्चित स्थानमें भेजनेकी कई बार चेष्टा की किन्तु ब्रिटिश सरकारके हस्तक्षेपके कारण आपके प्रार्थीके लिए उसी स्थानपर अपना व्यापार जारी रखना सम्भव हुआ।

६ आपके प्रार्थीने नियमित परवाना लेकर उसके अनुसार सदा फ्राइहीडमें व्यापार किया है।

७ आपके प्रार्थीके पास लगभग १ पौंड कीमतका कपड़ा तथा किरानेका भण्डार था।

८. *ऐसी स्थिति थी आपके प्रार्थीकी जब फ्राइहीड नेटालमें सम्मिलित किया गया।*

९ फ्राइहीडको नेटालमें मिलानेकी शर्तोंमें व्यवस्था है कि १८८६ में संशोधित १८८५ का कानून ३ जो ट्रान्सवालके एशियाई-विरोधी कानूनके नामसे प्रसिद्ध है लागू रहेगा।

१ ट्रान्सवालके सर्वोच्च न्यायालयने इस कानूनकी जो व्याख्या की है, उसके अनुसार तो व्यापारके सम्बन्धमें ब्रिटिश भारतीयोंके लिए कोई क्षेत्र सीमित नहीं है और वे अन्य ब्रिटिश प्रजाजनोंकी तरह ही व्यापार-सम्बन्धी परवाने लेनेके लिए स्वतन्त्र हैं।

११ परन्तु फ्राइहीड स्थानिक निकायने उक्त स्थानपर आपके प्रार्थीका परवाना नया करनेसे इनकार कर दिया। उसने आपके प्रार्थीको इस शर्तपर फ्राइहीडमें व्यापार करने देनेकी इच्छा प्रकट की कि प्रार्थी एक पृथक बस्तीमें निकाय द्वारा निश्चित स्थानमें जाकर व्यापार करे।

१२ उक्त स्थान फ्राइहीडसे बहुत दूर है और व्यापारके लिए बिलकुल उपयुक्त नहीं है।

१३ आपके प्रार्थीके लिए ऐसे स्थानपर व्यापार करना असम्भव है जो कस्बेके व्यापारिक भागसे दूर है।

१४ आपके प्रार्थीने अपने उक्त स्थानपर अच्छी साख पैदा कर ली है।

१५ आपके प्रार्थीने अपने परवानेको नया करानेकी कई कोशिशें कीं परन्तु उसे नया करनेसे इनकार कर दिया गया।

१ देखिए खण्ड ४ पृष्ठ १९६।

१६ आपके प्रार्थीको उक्त स्थानपर व्यापार करनेसे रोकनेके लिए स्थानिक निकायने नेटालका १८९७ का कानून १८ जारी किया जिसे विक्रेता-परवाना अधिनियम कहा जाता है।

१७. इसलिए आपके प्रार्थीको दोहरे प्रतिबन्धोंका सामना करना पड़ रहा है — अर्थात् ट्रान्सवाल कानूनका भी और नेटाल कानूनका भी। इससे क्लाइडीमें ब्रिटिश भारतीयोंकी स्थिति उससे भी ज्यादा खराब हो गई है, जितनी ट्रान्सवाल तथा नेटालके दूसरे भागोंमें है।

१८ १८९७ के कानून १८ के अनुसार आपके प्रार्थीको अपने परवानेके लिए परवाना-अधिकारीको आवेदनपत्र देना पड़ा। यही अधिकारी टाउन क्लार्क भी है इसलिए स्वभावतः यह स्थानिक निकायसे आदेश ग्रहण करता है।

१९. परवाना-अधिकारीने परवाना नया करनेसे इनकार कर दिया।

२ इसलिए, आपके प्रार्थीने कानूनके अनुसार स्थानिक निकायसे अपील की।

२१ स्थानिक-निकायके ज्यादातर सदस्य हमारे प्रतियोगी व्यापारी तथा आपके प्रार्थीसे द्वेष माननेवाले व्यक्ति हैं। उसने परवाना-अधिकारीके निर्णयको पक्का करार दे दिया है।

२२ परवाना-अधिकारीने अपनी अस्वीकृतिके निम्नलिखित कारण बताये हैं

१ कस्बेकी भूमिपर बने मकानोंके लिए परवाना देनेका अधिकार परवाना-अधिकारीको नहीं है — और ऐसी भूमिपर बने मकानोंके लिए परवाने देनेका अधिकार तो और भी नहीं है जो स्थानीय निकाय द्वारा पहले कभी पट्टेपर नहीं दी गई।

२ मेरी अस्वीकृतिका दूसरा कारण यह है कि ऐसा करनेसे मुझे १४ मार्च १९ ५ के गवर्नमेंट गज़ट में प्रकाशित सरकारी विज्ञप्ति संख्या १९१ तथा उसके अनुसार बने और उत्तरी जिलोंमें जारी कानूनोंके एकदम विरुद्ध कार्य करना पड़ता। उनमें भारतीयोंकी पृथक बस्तियोंके अतिरिक्त अन्यत्र परवाने देनेकी स्पष्ट मनाही की गई है।

३ मैंने परवाना देनेसे इसलिए भी इनकार किया कि ऐसा करनेमें मैंने समस्त समाजके सर्वोत्तम हितों और उसकी अभिव्यक्त भावनाओंके अनुकूल कार्य किया है — जसे इसमें प्रार्थीके वकील अपवाद रूप हों।

साथ नत्थी किये गये कागजातसे¹ यह बात अधिक पूर्ण रूपमें प्रकट होगी।

२३ परवाना-अधिकारीने जो पहला कारण बताया है वह पूर्णत भ्रामक है क्योंकि आपके प्रार्थीको पृथक बस्तीके अतिरिक्त और सर्वत्र व्यापार करनेका परवाना अस्वीकार किया गया है।

२४ दूसरा कारण भी ट्रान्सवालके सर्वोच्च-न्यायालयके उपर्युक्त निर्णयके अनुसार निकम्मा है।

२५ तीसरा कारण ही असली कारण है — अर्थात् यह कि आपका प्रार्थी एक ब्रिटिश भारतीय है।

२६ १८९७ के उक्त कानून १८ के अन्तर्गत उपनिवेशके सर्वोच्च न्यायालयमें अपील भी नहीं हो सकती और स्थानिक निकायका निर्णय ही अन्तिम समझा जाता है।

२७ आपके प्रार्थीने स्थानिक निकायसे उसके ऐसे निर्णयका कारण जानना चाहा पर निकायने कोई कारण बतानेसे इनकार कर दिया — जैसा कि प्रार्थीके वकील और टाउन क्लार्कके बीच हुए पत्र-व्यवहारसे प्रकट होता है। पत्र-व्यवहारकी एक प्रति इसके साथ नत्थी है।

२८. इसपर आपके प्रार्थीने तबतक व्यापारके लिए एक अस्थायी परवाना जारी करनेकी अर्जी दी जबतक कि प्रार्थी राहतके लिए अन्य कार्रवाइयाँ नहीं कर लेता। स्थानिक निकायने यह भी अस्वीकार कर दिया।

१ और २. वहाँ नहीं दिये गये हैं।

२९. आपके प्रार्थीको बताया गया कि उसे स्थानिक निकायकी कार्रवाईके विरुद्ध कानूनन कोई राहत नहीं मिल सकती।

१०. इसलिए आपके प्रार्थीको अपनी दुकान बन्द कर देनेको विवश होना पड़ा है और इससे उसपर सारे माल स्टॉक और उसके नौकरोंका बोझ आ पड़ा है।

११. यहाँतक निकायका सम्बन्ध है आपका प्रार्थी सम्मानपूर्वक निवेदन करता है कि स्थानिक निकायका कार्य स्वायत्तीभारा अन्यायपूर्ण तथा निरंकुश है क्योंकि आपके प्रार्थीके परवानेको नया करनेसे इनकार करके उसको बिना किसी अपराधके और बिना किसी क्षति-पूर्तिके जीविकाके साधनोंसे वंचित कर दिया गया है।

१२. आपके प्रार्थीका यह भी निवेदन है कि उसे जो स्पष्ट क्षति पहुँची है वह ब्रिटिश विधानके अन्तर्गत कायम नहीं रहनी चाहिए।

१३. इसलिए आपका प्रार्थी प्रार्थना करता है कि सम्राटकी सरकार प्रार्थीकी ओरसे हस्तक्षेप करे और जिस रूपमें उसे उचित प्रतीत हो प्रार्थीका कष्ट दूर कराये।

और न्याय तथा दयाके इस कार्यके लिए प्रार्थी सदैव दुआ करेगा आदि।

दादा उस्मान

डर्बन तारीख १
मार्च १९०६

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन १४-४-१९०६

२६५. शीघ्र दुकानबन्दी अधिनियम

कुछ दिनसे शीघ्र दुकानबन्दी अधिनियमको लेकर नेटालके अखबारोंमें लिखा पढ़ी चल पड़े हैं। उनमेंसे अनेक सुधीसे कुल नहीं समाते कि अन्ततः उनकी स्थिति ऐसी हो गई है कि व भारतीय व्यापारियोंको क्षति पहुँचा सकते हैं। हमारा सहयोगी नेटाल ऐडवर्टाइज़र हमसे सहमत होकर, कहता है कि अगर शीघ्र दुकानबन्दी अधिनियम भारतीय समाजको अहितकर ढंगसे प्रभावित करनेको है तो छोटे-छोटे गोरे व्यापारियोंपर वह और भी अधिक गम्भीर असर डालने वाला है। अगर यह इतनेपर ही एक जाता तो हमें कुछ न कहना होता। परन्तु, वह आगे सुझाता है:

> इस विषयपर विचार-विमर्श करने और एशियाई आक्रमण तथा स्पर्धापर कोई कारगर प्रतिबन्ध लगानेका उपाय सोचनेके लिए व्यापारियों और कामकाजी लोगोंकी एक आम सभा नगर-भवनमें बुलाई जानी चाहिए। अगर ऐसा किया गया तो हमें कोई सन्देह नहीं कि परिस्थितिके वास्तविक तथ्य इस तरह प्रकट होंगे कि कुछ लोग आश्चर्यमें पड़ जायेंगे और उनसे कोई सचमुच कारगर तथा उपयोगी कार्रवाई भी आ सकेगी। हमारा विचार है यह बात हँसी-खेलमें उड़ा देनेकी नहीं है। यह आत्म-रक्षाका — नेटालके सभी वर्गोंके गोरे लोगोंके लिए जीवन-मरणका सवाल है।

इस इस सुझावपर गम्भीरतापूर्वक विचार करेंगे।

नगर-भवनमें आम सभा हो इसमें हमें कोई आपत्ति नहीं है। लेकिन क्या इससे हमारे सहयोगीका अभिलषित लक्ष्य सिद्ध हो जायेगा? क्या जन-समुदायने कभी भी किसी विषयपर ठंडे दिलसे विचार किया है? आम सभा तो किसी ऐसे आन्दोलनको ही जन्म दे सकती है जो तथ्योंपर आधारित हो परन्तु वह कभी छान-बीन करके सच्चे तथ्योंको प्राप्त करनेकी चेष्टा नहीं करती। अक्सर वह गाली-गलौज और मनोवेगोंको उभाड़नेवाली बातोंसे परिचालित होती है। अतएव जब सार्वजनिक सभाओंका आयोजन किसी ऐसी परिस्थितिपर विचार करनेके लिए किया जाता है जिसे पहले ही निश्चित रूपसे जान नहीं लिया गया है, तब वे खतरनाक साबित होती हैं। हम इस कथनको स्वीकार कर लेंगे कि प्रश्न गोरे लोगोंके लिए आत्मरक्षा और सच्चे जीवन-मरणका है।" तो फिर, तथ्योंकी खोज और उनपर कारगर कार्रवाई करनी होगी। अभी जो एक बात बिलकुल स्पष्ट है वह यह है कि भारतीय व्यापारी पूरी तरह परवाना अधिकारी और स्थानिक निकायोंकी दयापर निर्भर हैं। दूसरा तथ्य भी सर्वथा स्पष्ट है अर्थात् अनेक मामलोंमें परवाना-अधिकारी और स्थानिक निकायोंने अत्यन्त मनमाने और अन्यायपूर्ण ढंगसे काम किया है। तीसरा तथ्य यह है कि श्री हैरी स्मिथ उत्तरोत्तर बढ़ती सतर्कतासे भारतीय आगन्तुकोंके प्रवेशकी निगरानी कर रहे हैं और कोई भी भारतीय अपना पूर्व अधिवास सिद्ध किये बिना न जल-मार्गसे और न थल-मार्गसे उपनिवेशमें प्रवेश कर सकता है। इससे अधिक और क्या चाहिए? अगर यह इन दो कानूनोंके अमलका सवाल है तो निश्चय ही किसी आम सभासे बात बननेकी नहीं है। इसका एकमात्र उपचार है कोई जाँच-आयोग और हम खुले दिलसे इसका स्वागत करेंगे। अगर नेटालकी यूरोपीय आबादी दरअसल यह महसूस करती है कि भारतीय व्यापारी फूल-फल रहे हैं, वे अनुचित स्पर्धा कर रहे हैं और सख्त कानून पर्याप्त सख्तीसे लागू नहीं किये जा रहे हैं तो कुछ निष्पक्ष व्यक्तियोंकी एक छोटी-सी समिति तथ्योंका शीघ्र ही स्पष्ट कर देगी। और अगर वह सिद्ध कर दे कि हमारे सहयोगी द्वारा आशंकित परिस्थिति जैसी कोई चीज मौजूद है तो वह उपयुक्त अवसर होगा कि ऐसे आयोगके निष्कर्षोंपर विचार विमर्श करनेके लिए आम सभाका आयोजन किया जाये।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन ११-३-१९११

२६६ न्यायका दुर्ग

पॉचेफस्ट्रूमकी दौरा-अदालतके सामने अभी हालमें एक बहुत महत्त्वपूर्ण मुकदमेकी सुनवाई हुई है। पॉचेफस्ट्रूममें दो यूरोपीयोंने एक भारतीय व्यापारीसे रुपया ऐंठनेकी कोशिश की। तरीका यह अपनाया गया था कि भारतीय उन दोनोंमें से एककी पत्नीके पास ले जाया गया और वहाँ उसपर बलात्कारकी चेष्टा करनेका इल्जाम लगाया गया। यह षड्यंत्र करीब-करीब सफल हो गया। आततायियोंने अभागे भारतीयसे ३ पौंड नकद वसूल कर लिए, परन्तु सौभाग्यसे भारतीयने तत्काल अपने वकीलसे कानूनी सहायता ली। वकीलने उसको चेककी अदायगी रोक देने और मामलेकी सूचना पुलिसको देनेकी सलाह दी। उसने इसपर तुरन्त अमल किया। दोनों यूरोपीय गिरफ्तार कर लिये गये और साथ ही वह स्त्री भी। परिणाम हुआ न्यायमूर्ति वेसेल्सके सामने एक सनसनीखेज मामलेकी पेशी और भारतीयकी प्रतिष्ठाकी पुनःस्थापना। रकम ऐंठनेका आरोप साबित हो गया और दोनों मुलजिमोंको तीन-तीन वर्षके कठोर कारावासकी

सजा हो गई। रुपया ऐंठनेके सम्बन्धमें भारतीयके वक्तव्यके समर्थनमें कोई गवाही नहीं थी किन्तु उसके विरुद्ध दो उन कैदी थे जिन्होंने जोर देकर कहा था कि उक्त भारतीय उस नारीपर बलात्कारकी चेष्टा कर रहा था। भारतीयने दृढ़तासे यह बात झूठ बताई और कहा कि उसे पहले मकानमें जोरोंसे ले जाया गया और तब उसपर झूठा इल्जाम लगाया गया।

ऐसी विषम परिस्थितियोंमें एक भारतीयका न्याय मिल सका यह सार्वजनिक बधाईका विषय है। क्योंकि इससे ब्रिटिश भारतीयोंको बहुत सन्तोष प्राप्त हुआ है। अत्यन्त प्रभावपूर्ण ढंगसे एक बार फिर साबित हो गया है कि जहाँतक उच्च न्यायालयका सम्बन्ध है, ब्रिटिश न्यायका स्रोत यथा संभव शुद्धतम है। निर्भय और निष्पक्ष न्यायाधीशोंकी एक दीर्घ शृंखलाके फलस्वरूप परम्पराएँ बन गई हैं और ब्रिटिश विधानका आन्तरिक भाग हो गई हैं। हमें यह कहनेमें कोई संकोच नहीं है कि साम्राज्यकी सफलताके बहुत बड़े रहस्योंमें से एक रहस्य है उसकी निष्पक्ष न्याय देनेकी क्षमता। जैसे मामलेका उल्लेख हमने ऊपर किया है, वैसे मामलोंसे विविध ब्रिटिश उपनिवेशोंमें प्रचलित न्याय-व्यवस्थाकी अनेक त्रुटियोंकी पूर्ति होती है। ऐसी बातें प्रकाश-स्तम्भकी भाँति भारतीयों और उन लोगोंको जो अस्थायी निर्योग्यताओंसे पीड़ित और उनके परिणामस्वरूप संतप्त हों संकेत देती हैं कि उनको तबतक आशा न छोड़नी चाहिए, जबतक तोड़े हुए वादोंकी ठंडी सतहपर शुद्ध न्यायकी तेज धूप पड़ रही है।

न्यायमूर्ति वेसेल्सने मुकदमेका खुलासा करते हुए न केवल इस मामलेपर विचार किया है बल्कि उनको क्षुद्रसे-क्षुद्र ब्रिटिश प्रजाजनोंके पूर्ण एवं निष्पक्ष सुनवाई पानेके अधिकारका भी साधारण जिक्र करना आवश्यक जान पड़ा। उन्होंने कहा (हम यह विवरण 'पॉचेफ्स्ट्रूम बजट' पत्रमें से उद्धृत कर रहे हैं)

> जब मैंने इस केसमें यह सुना — उन्होंने यह उसी अदालतमें उसी दिन सुना था — कि गोरे और कालेकी साक्षीमें जब भेद पाया जाये तब हमें गोरेकी साक्षी सत्य माननी चाहिए, तो मुझे दुःख हुआ। यह एक भ्रान्ति है, एक असत्य है। मैं समझता हूँ कि यदि अदालती पंच मात्र कालेके विरुद्ध गोरेके बयानको सत्य मानेंगे तो वे बहुत अनुचित काम करेंगे। हमें काले लोगोंकी स्वतन्त्रता और सम्पत्तिकी रक्षा अपनी पूर्ण शक्तिसे करनी चाहिए। जब हम गोरे और काले लोगोंके हितोंपर विचार करें तो हमारे लिए एक क्षणके लिए भी न्याय-भावनासे विचलित होनेसे बढ़कर घातक बात और कोई न होगी। इस देशमें बड़ेसे-बड़े गोरेको जो न्याय सुलभ है वही सच्चा न्याय कालेको भी प्राप्त होना चाहिए। हमें इस सिद्धान्तको सदा अपने सामने रखना चाहिए और अगर बाकी उसका मानती है तो हमें इसीको छोड़ न देना चाहिए।

प्रत्येक सच्चे साम्राज्य प्रेमीको ब्रिटिश न्यायकी गौरव रक्षा इतने श्रेष्ठ ढंगसे करनेके लिए न्यायाधीश वेसेल्सका हृदयसे कृतज्ञ होना चाहिए।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन ११-९-१९०९

२६७ भारतीय स्वयंसेवक

हाल ही में नागरिक सेनाके बारेमें जो सभा हुई थी उसमें भाषण करते हुए प्रतिरक्षा-मन्त्री श्री बॉथ ने "अपना मौन तोड़ दिया" है। उनसे यह प्रश्न किया गया था:

> उपनिवेशके विविध भागोंमें जिन अरबोंकी दूकानें हैं क्या सरकार उनको नागरिक सेनाकी सुरक्षित टुकड़ियोंमें भरती करनेका विचार कर रही है और यदि ऐसा कर रही है तो क्या वह उन्हें बन्दूकें भी देगी?

हमें बताया गया है कि श्री बॉथने इसका जो उत्तर दिया उसपर हर्ष-ध्वनि की गई। बताया जाता है कि उन्होंने कहा:

> मुझे यह कहते हुए प्रसन्नता होती है कि नागरिक सेनामें केवल यूरोपीय ही हैं। अगर मुझे अपनी एवं अपने कुटुम्बकी रक्षाके लिए अरबोंपर निर्भर रहना पड़े तो निश्चय ही दुःख होगा। किन्तु मुझे यह कहते हुए प्रसन्नता है कि सरकारके हाथमें यह अधिकार है कि वह युद्धकालमें समस्त रंगदार आबादी — भारतीयों, वतनियों और अरबोंको किसी भी आवश्यक काममें लगा दे।

इसके बाद उनसे एक और प्रश्न पूछा गया:

> क्या सरकार यह मानती है कि जब यूरोपीय व्यापारी सेवाके लिए बुला लिए जायेंगे तो सभी जिलोंका व्यापार अरबोंके हाथोंमें चला जायेगा? इसके सम्बन्धमें वह क्या करना चाहती है?

श्री बॉथका उत्तर पहलेके उत्तरसे मेल खाता हुआ ही था:

> मेरी समझसे यह मामला ऐसा है जिसमें नेताओंकी राय ली जानी चाहिए। अगर मैं नेता होता तो सरकारको सलाह देता कि वह दूकानोंके खुलने और बन्द होनेका समय नियमित कर दे। मैं यह ध्यान रखता कि यूरोपीयोंके साथ अरबोंकी अपेक्षा बुरा बरताव न किया जाये। मैं यह व्यवस्था भी करता कि अरबोंसे उनके हिस्सेका काम लिया जाये — बन्दूकें उठानेका नहीं तो खाइयाँ खोदनेका ही सही।

हमें सन्देह नहीं है कि श्री बॉथ प्रतिरक्षा-मन्त्रीकी हैसियतसे यह जानते हैं कि युद्धमें खाइयाँ खोदना भी उतना ही जरूरी है जितना बन्दूक उठाना। फिर यदि वे अपने और अपने कुटुम्बकी सुरक्षाके लिए अरबोंपर निर्भर रहना नहीं चाहते तो वे उनसे खाइयाँ खुदवाना क्यों चाहते हैं? स्वर्गीय श्री हैरी एस्कम्बके अनुसार, जो प्रतिरक्षामंत्री ही थे दोनों काम एक जैसे सम्मानपूर्ण हैं। चाहे श्री बॉथ पुनर्विचारके पश्चात्, अरबों अथवा भारतीयोंसे अपनी अथवा उपनिवेशकी रक्षाका काम नागरी सुरक्षासेनाके रूपमें या किसी अन्य रूपमें करवाना पसन्द करें या न करें उनसे वे तबतक युद्ध-सम्बन्धी काम लेनेकी आशा कैसे कर सकते हैं जबतक उनको पहलेसे उसका प्रशिक्षण न दें? सेनाके असैनिक शिविर अनुचरोंमें भी उचित अनुशासनकी आवश्यकता होती है अन्यथा वे मददगार होनेके बजाय एक निश्चित मुसीबत बन जाते हैं। लेकिन एक ऐसे मन्त्रीसे हमें सामान्य विवेक अथवा न्यायसे काम लेनेकी आशा नहीं हो सकती जो आने-जानेको इतना भूल जाता है कि निर्दोष लोगोंके पूरे समाजको व्यर्थ ही अपमानित कर बैठता है।

एक मंत्रीके रूपमें उनका काम यह है कि वे अपनी व्यक्तिगत द्वेष भावनाको अपने मनमें ही रखें। उनके विविध अवसरोंपर दिखाये गये रुखके मुकाबले हम हालमें प्रकाशित *नेटाल ऐडवर्टाइज़र* के सम्पादकीय लेखका स्वागत करते हैं। हम इस लेखको अन्यत्र छाप रहे हैं। हमारा सहयोगी भारतीयों तथा अन्य रंगदार लोगोंको यह श्रेय देकर उचित ही करता है जिसके वे अधिकारी हैं। उसने नागरिक सेना कानूनकी धारा ८१ की ओर संकेत करते हुए कहा है कि रंगदार टुकड़ीका कोई साधारण सदस्य तबतक आग्नेय हथियारसे सज्जित न किया जायेगा जबतक ऐसी टुकड़ियोंको यूरोपीयोंके अलावा दूसरोंके विरुद्ध लड़नेकी आज्ञा न दी जाये। इससे अब स्पष्ट हो जाता है कि यदि दुर्भाग्यवश किसी भारतीय दलको सशस्त्र करनेकी आवश्यकता आ ही गई तो अनुभवहीन लोगोंके हाथोंमें वे हथियार व्यर्थ साबित होंगे। अधिकारी कुछ समय पूर्व दिये गये हमारे सुझावोंको[1] क्यों नहीं मान लेते और भारतीयोंका एक स्वयंसेवक दल क्यों नहीं संगठित करते? हमें विश्वास है कि विशेषकर उपनिवेशमें उत्पन्न भारतीय — जो नेटालके उतने ही अपने बच्चे हैं जितने कि गोरे लोग — अपना फर्ज भली-भाँति अदा करेंगे। उपनिवेशी लोग यह आग्रह क्यों नहीं करते कि उनको अपना जौहर दिखानेका मौका अवश्य दिया जाये।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, ११-३-१९०६

२६८. ट्रान्सवालका संविधान

ट्रान्सवालके मामलोंके सम्बन्धमें जिस जाँच-समितिकी बहुत चर्चा थी उसको नियुक्त करनेमें ब्रिटेनकी सरकारने जरा भी विलम्ब नहीं किया है। इसके सदस्योंमें से दो — सर वेस्ट रिजवे[2] और लॉर्ड ऐम्टहिलको[3] भारतीय मामलोंका अनुभव है। जाँचका दायरा यह पता लगाने तक सीमित है कि नये संविधानका आधार क्या हो। सरकारके लिए बिना जानकारीके संविधान बना देना सम्भव नहीं है और यह जानकारी वह आपसे पानेकी आशा करती है। अन्य बातोंके साथ सदस्योंको इस बातपर भी विचार करना पड़ेगा कि किन हितोंमें सामंजस्य और किनमें विभेद है एवं राजनीतिक तथा सामाजिक स्थितियाँ कैसी हैं। यद्यपि यह कहना कठिन है कि जाँचकी सीमामें रंगदारोंके मताधिकारका प्रश्न आता है या नहीं फिर भी आशा की जानी चाहिए कि आयुक्तोंको इस कठिन और नाजुक सवालपर सलाह देनेका पूरा अधिकार होगा। ट्रान्सवालमें तथा अन्यत्र जो घटनाएँ घट रही हैं उनसे इन स्तम्भोंमें व्यक्त किये गये इन विचारोंकी गुरुता प्रकट होती है कि भारतीय अधिकारोंकी रक्षाके किसी अन्य उपायके अभावमें भारतीयोंको प्रतिनिधित्व देना आवश्यक जान पड़ता है।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, ११-३-१९०६

१. देखिए "भारतीय स्वयंसेवकोंकी आवश्यकता", पृष्ठ २४१।
२. श्रीलंका (सीलोन) के भूतपूर्व गवर्नर।
३. मद्रासके भूतपूर्व गवर्नर।

२६९ ट्रान्सवालकी खानोंके लिए भारतीय मजदूर

प्रस्ताव है कि भारतसे मजदूर मँगानेके लिए भारत-सरकारसे बातचीत की जाये। इस सम्बन्धमें समुद्री तारोंसे ट्रान्सवालके अखबार भरे पड़े हैं। हमें खुशी है कि जो आंग्ल-भारतीय इंग्लैंडमें हैं वे इस प्रस्तावके विरुद्ध हैं। और इसके दो कारण हैं पहला कारण यह है कि भारतीय खान मजदूरोंमें मृत्यु-संख्या बहुत ज्यादा होगी और दूसरे भारतको स्वयं अपने खान-उद्योगके लिए सभी भारतीय खान-मजदूरोंकी आवश्यकता है। यह स्मरणीय है कि जब लॉर्ड मिलनरने लॉर्ड कर्जनसे रेल-निर्माणके लिए दस हजार भारतीय माँगे थे तब लॉर्ड कर्जनने कहा था कि वे तबतक कोई सहायता नहीं देंगे जबतक ट्रान्सवालवासी ब्रिटिश भारतीयोंकी शिकायतें दूर नहीं कर दी जातीं। यह दो साल पहलेकी बात है। लॉर्ड कर्जनकी इनकारीके बाद ट्रान्सवालके ब्रिटिश भारतीयोंकी स्थिति जैसी थी आज उससे बेहतर नहीं है। इसलिए तीन पर्याप्त कारण हैं जिनके आधारपर ट्रान्सवालकी खानोंके लिए भारतीय मजदूर नहीं दिये जाने चाहिए। हम समझते हैं कि किसी भी हालतमें ट्रान्सवालके प्रवासी ब्रिटिश भारतीयोंकी निर्योग्यताओंके निवारणके बदले भारतीय श्रमिकोंकी स्वतंत्रताको बेच देना कोई श्रेयस्कर कार्य न होगा और उससे बहुत बुरी मिसाल कायम होगी। हमारी सम्मतिमें हर सवालपर उसके गुणावगुणके आधारपर ही विचार किया जाना चाहिए। हमें इसमें कोई सन्देह नहीं कि ट्रान्सवालके ब्रिटिश भारतीय अपनी स्वतंत्रतामें वृद्धि करवानेसे इनकार कर देंगे यदि उसके कारण उनके ज्यादा गरीब देशवासियोंकी स्वतन्त्रतापर अन्यायपूर्ण और अस्वाभाविक प्रतिबन्ध लगते हों। हम यह भी अनुभव करते हैं कि हजारों भारतीय खान-मजदूरोंको ट्रान्सवालमें लानेसे स्थिति जो आज भी अनेक कठिनाइयोंसे भरी हुई है और भी जटिल हो जायेगी इसलिए हम आशा और विश्वास करते हैं कि श्री मॉर्ले और लॉर्ड मिंटो अपने संरक्षितोंके हितोंकी हानि करके ट्रान्सवालकी सहायता करनेके प्रत्येक प्रस्तावका दृढ़तापूर्वक विरोध करेंगे।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन ११-१-१९ ६

२७० केपके भारतीय

मार्च १६ के केप गवर्नमेंट गज़ट में १९ २ के केप प्रवासी-प्रतिबन्धक अधिनियम संशोधनका विधेयक छपा है। जहाँतक ब्रिटिश भारतीयोंका सम्बन्ध है यह विधेयक निश्चय ही एक प्रतिगामी कदम है।

१९ २ के कानूनकी संकल्पना गुप्त रूपसे की गई थी और जनताके सामने उसे अशोभनीय जल्दबाजीके साथ लाया गया था — यहाँतक कि केप विधानसभाके अनेक सदस्योंने सदनमें उसको पास करानेमें इतनी उतावलीपर आपत्ति की थी। फिर भी कानून पास कर दिया गया। अब इस विधेयक द्वारा उसे संशोधित करनेका प्रस्ताव किया गया है। ब्रिटिश भारतीयोंने सरकारसे इसके सम्बन्धमें निवेदन किया तो उनको करीब-करीब विश्वास करा दिया गया कि सरकार शीघ्र ही कानूनको उसकी बुराई दिशामें बदलेगी और भारतमें प्रचलित महान भारतीय भाषाओंको

१ देखिए खण्ड ४ पृष्ठ १९-१ ।

शैक्षणिक परीक्षाके लिए मान्यता देने और जो लोग उपनिवेशमें बस चुके हैं उनके हितके लिए घरेलू नौकरों तथा दूसरोंके प्रवेशकी उचित व्यवस्था करनेके लिए कहेगी। लेकिन कानूनमें ऐसा कोई सुधार करनेके बजाय इस विधेयकसे ब्रिटिश भारतीयोंकी स्वतंत्रतापर और भी अधिक प्रतिबन्ध लगेगा ऐसा लगता है। यह कहनेसे कि यह सभीपर एक-सा लागू है, भारतीयोंपरसे इसका घातक प्रभाव कम नहीं होता। यह मुख्यतः उन्हींके लिए बनाया गया है। वर्तमान कानूनमें प्रवासीकी कोई परिभाषा नहीं है। इसलिए उसमें यह सामान्य कानूनी परिभाषा लागू होती है कि प्रवासी वह है जो यहाँ बसनेकी नीयतसे प्रवेश करता है। इससे निष्कर्ष यह निकलता है कि कानूनमें मन्त्रीको पूरा अधिकार है कि वह यात्रियोंको अस्थायी पास दे दे और जो भारतीय या दूसरे लोग अस्थायी रूपसे उपनिवेशमें आना चाहें उनको परेशान किये बिना प्रवेश करने दे। विधेयकमें यह सब बदल दिया गया है, और प्रवासीकी परिभाषा इस प्रकार की गई है — "कोई भी व्यक्ति जो इस उपनिवेशमें खुश्की या समुद्रकी राह बाहरसे आकर प्रवेश करता है अथवा प्रवेश करनेकी माँग करता है।" हमारी समझसे ऐसी परिभाषामें जो बिलकुल अस्वाभाविक है उन यात्रियोंके लिए, जो उपनिवेशसे गुजरना या इसमें अस्थायी रूपसे रहना चाहते हों व्यवस्थाकी कोई गुंजाइश न रह जायेगी। इससे एक दूसरा भी बहुत बड़ा अन्तर होता है। जब कि १९०२ का कानून दक्षिण आफ्रिकामें स्थायी रूपसे आबाद लोगोंपर लागू नहीं होता इस विधेयकमें सिर्फ उन लोगोंको छूट है जो मन्त्रीको सन्तोष दिला दें कि वे उपनिवेशमें स्थायी रूपसे बस गये हैं और पूर्ववर्ती धाराकी क ड और च उपधाराओंके अन्तर्गत नहीं आते। इसलिए प्रतिबन्ध और कठोर हो गये हैं और उनसे इस उपनिवेशमें ब्रिटिश भारतीयोंके प्रवेशके मार्गमें अनन्त बाधाएँ आती हैं। अधिवास का प्रश्न सर्वोच्च न्यायालयकी व्याख्यापर छोड़नेके बजाय अब मन्त्रीके हाथमें छोड़ दिया जायेगा। अभी कुछ ही दिन पहले हमने एक ऐसे मामलेपर टीका की थी कि जो केपमें हुआ था और जिसके सर्वोच्च न्यायालयमें ले जा पानेके कारण एक भारतीय दक्षिण आफ्रिकामें अपना अधिवासका दावा सिद्ध कर सका था। अगर यह बेचारा मन्त्रीकी दयापर छोड़ दिया गया होता तो उसको बहुत मुसीबतें झेलनी पड़तीं। फिर इसमें अधिवास सिर्फ केप उपनिवेश तक सीमित है। इसलिए जो भारतीय अब भी ट्रान्सवाल या नेटालमें हैं वे इस उपनिवेशमें प्रवेश नहीं कर सकेंगे। हम विश्वास करते हैं कि केप टाउनकी ब्रिटिश भारतीय समिति इस मामलेको अपने हाथमें लेगी और लोगोंको उचित राहत दिलानेका प्रयत्न करेगी।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन ११-१-१९०६

२७१ कुमारी विसिक्सकी[1] मृत्यु

हम कर्तव्यवश यह दुःखद समाचार दे रहे हैं कि एक ऑपरेशनके बाद जोहानिसबर्गकी कुमारी ऐ० एम० विसिक्सकी मृत्यु हो गई। कुमारी विसिक्स एक सुयोग्य अंग्रेज महिला थीं। उन्होंने जोहानिसबर्ग शाकाहार आन्दोलनमें प्रमुख भाग लिया था और वे थियोसॉफिकल सोसाइटीकी एक प्रधान सदस्या थीं। भारतीयोंके प्रति वे अनेक प्रकारसे गहरी सहानुभूति रखती थीं। उनकी मृत्युपर बहुत शोक प्रकट किया जायेगा।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, ११-१-१९०९

२७२ ट्रान्सवालमें अनुमतिपत्र सम्बन्धी जुल्म

हमें पता चला है कि ट्रान्सवालमें अनुमतिपत्र सम्बन्धी जुल्म दिन-दिन बढ़ता जा रहा है। मालूम होता है कि अब अस्थायी अनुमतिपत्र देना बिलकुल बन्द कर दिया गया है। श्री इस्माइल मियाँके भतीजे श्री सुलेमान मंगा ने, जो हाल ही विलायतसे डर्बन आए थे, डेलागोआ-बे जानेके लिए अस्थायी अनुमतिपत्र माँगा था। लेकिन उपनिवेश-सचिवने उनकी अर्जी मंजूर नहीं की और श्री सुलेमान मंगाको समुद्री मार्गसे जाना पड़ा। यह जुल्म कुछ कम नहीं कहा जायेगा।

जापानके श्री नोमूराको अस्थायी अनुमतिपत्र मिलनेमें दिक्कत हुई थी और उन्होंने इसके लिए समूचे ट्रान्सवालको बरी दिया। श्री नोमूराकी तुलनामें श्री सुलेमान मंगाका अधिकार ज्यादा था क्योंकि वे ब्रिटिश प्रजा हैं। शिक्षाके लिहाजसे भी श्री नोमूराकी तुलनामें श्री सुलेमान मंगाका हक अधिक था फिर भी उन्हें ट्रान्सवालसे गुजरनेकी इजाजत नहीं मिली।

यह तो मौजूदा तकलीफोंका केवल एक नमूना है। जो खबरें हमारे पास आ रही हैं, वे सब सच हों तो कहना होगा कि लॉर्ड सेल्बोर्नने जो वचन दिया है, उसका पालन होनेके बजाय भंग हो रहा है।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, ११-१-१९०९

१. देखिए पादटिप्पणी, पृष्ठ १६।

२७३ लड़ाईके दावे

जिन लोगोंको लड़ाईके कारण क्षति पहुँची थी उन्होंने सरकारके सामने अपने दावे पेश किये थे। इन दावोंकी जाँचके लिए जो आयोग नियुक्त किया गया था उसने अपनी जाँच पूरी कर ली है। उसकी रिपोर्टसे पता चलता है कि लगभग ९   दावे दायर हुए थे और दावेदारोंने २   [1] पौंडका दावा किया था। उन्हें १५,   ०[1] पौंड दिये गये हैं। इनमें से ५   पौंड ऑरेंज रिवर कालोनीके डच नागरिकों (बर्गर्स) और २   पौंड ब्रिटिश प्रजाजनोंको तथा दूसरोंको दिये गये हैं। शेष रकम ट्रान्सवालके और फ्रायहीडके डच नागरिकोंको मिली है।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन ११–१–१९०६

२७४ भारतीय मामलोंके लिए ब्रिटिश संसद-सदस्योंकी नई समिति

सर विलियम वेडरबर्न भारतका हित करनेका एक भी अवसर चूकते नहीं हैं। 'इंडिया' समाचारपत्रके पिछले अंकसे पता चलता है कि उन्होंने सभा करके भारत सम्बन्धी एक संसद-समिति (इंडियन पार्लमेंटरी कमिटी) को फिर खड़ा किया है। ऐसी एक समिति कुछ साल पहले थी जो पिछली संसदके समय लगभग टूट गई थी। इस समितिमें भारतका हित चाहनेवाले सदस्य सम्मिलित होते हैं। इस बार जो समिति बनी है वह बहुत जबरदस्त है। उसमें कई प्रबल सदस्य सम्मिलित हुए हैं। सर हेनरी कॉटन श्री हर्बर्ट रॉबर्ट्स श्री पिकर्सगिल श्री ओ'डोनेल आदि सुप्रसिद्ध सदस्य इस समितिमें दाखिल हुए हैं और उनका यह खयाल है कि नई संसदमें भारतके साथ न्याय होगा। इस सबके लिए हमें सर विलियम वेडरबर्नका आभार मानना चाहिए।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन ११–१–१९०६

२७५ सर जॉर्ज बर्डवुडकी बहादुरी और एक क्लबका हलकापन

लन्दनमें सेंट स्टीवन्स क्लब एक बहुत पुराना और मशहूर क्लब है। सर जॉर्ज बर्डवुड उसके एक प्रसिद्ध सदस्य थे। उन्होंने भारतमें कई वर्षों तक नौकरी की है और भारतीयोंके प्रति सदा प्रेमभाव रखा है। उन्होंने एक बहुत ही प्रसिद्ध भारतीयका नाम स्टीवन्स क्लबकी सदस्यताके लिए पेश किया पर दूसरे सदस्योंने इसपर आपत्ति की। इस कारण उन्होंने सेंट स्टीवन्स क्लबकी सदस्यतासे त्याग-पत्र दे दिया है। सर जॉर्ज बर्डवुड धन्य हैं। ऐसे [illegible] भारतीयोंके कारण ही भारतवासी अंग्रेजी राज्यको सहन कर रहे हैं।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन ११–१–१९०६

१. इनमें कुछ भूल है क्योंकि जो रकम चुकाई गई वह दावेसे अधिक नहीं हो सकती।

२७६. कैडबरी बन्धुओंकी उदारता

नौकरोंको कैसे रखना चाहिए

कैडबरी कोकोवाले कैडबरी बन्धुओंकी पेढ़ी सारी दुनियामें मशहूर है। उन्होंने एक छोटेसे ग्राममें जबर्दस्त धन्धा खड़ा कर लिया है। वे आजकल लन्दनके डेली न्यूज पत्रके मालिक हैं और क्वेकर सम्प्रदायके हैं। वे जो मुनाफा कमाते हैं उसमें से अपने नौकरोंकी स्थिति बराबर सुधारते भी आ रहे हैं। उन्होंने ६   पौंडकी एक रकम निकालकर अपने नौकरोंको पेंशन देनेके लिए एक बड़ी निधि कायम की है। उनके यहाँ बहुत नौकर हैं और उन नौकरोंमें कई बहुत पुराने और वफादार हैं। जब इस प्रकार नौकरोंकी चिन्ता की जाती है, तो इसमें आश्चर्य ही क्या कि नौकर बड़ी लगनके साथ अपना ही काम समझ कर, अपने मालिकका काम करें?

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन ११-३-१९०६

२७७. जोहानिसबर्गकी चिट्ठी

डॉ० अब्दुर्रहमानका भाषण

गत २१ मार्चको रंगदार लोगोंकी एक बड़ी सभा मिलनर हॉलमें हुई थी। डॉक्टर अब्दुर्रहमान इस सभाके लिए खास तौरपर पधारे थे। डॉक्टर अब्दुर्रहमान आफ्रिकी राजनीतिक संघ (आफ्रिकन पॉलिटिकल ऑर्गनाइजेशन) के सभापति हैं। वे केप टाउन नगरपालिकाके सदस्य भी हैं। श्री डैनियल इस सभाके सभापति थे। हॉल खचाखच भर गया था। लगभग ५   व्यक्ति हाजिर थे। उनमें कुछ भारतीय भी थे। श्री अब्दुल गनी, श्री उमर हाजी आमद झवेरी, श्री हाजी वजीर अली, श्री नायडू वगैरह भी हाजिर थे।

उनके भाषणकी खास-खास बातें नीचे देता हूँ।

सभाका उद्देश्य

आज हम इसलिए इकट्ठे हुए हैं कि हमें सम्राट्के नाम अपने अधिकारोंके विषयमें अर्जी भेजनी है। इसके लिए एक अर्जी तैयार की गई है जिसपर सब रंगदार लोगोंकी सहियाँ ली जा रही हैं। जब ट्रान्सवालमें और ऑरेंज रिवर कालोनीमें होनेवाली सख्तीयोंका हमें केपमें पता चला तब हमने सोचा कि हमें आपके लिए जितनी बने उतनी मेहनत करनी चाहिए। इसमें हमारा भी स्वार्थ है क्योंकि अगर आपके अधिकार छीन जायेंगे तो आखिर केपमें भी वैसा ही हो सकता है।

दुःखोंकी कथा

ट्रान्सवाल और ऑरेंज रिवर कालोनीमें रंगदार लोगोंको बहुत दुःख उठाने पड़ते हैं। लेकिन उनमें मुख्य दुःख यह है कि रंगदार लोगोंको जो मताधिकार हक नहीं है और दीवानी हक भी बहुतेरे छीन लिए गये हैं। हम ऐसा गुलामीकी हालतमें रहेंगे तो हमारी परिस्थिति

दिन-ब-दिन खराब होती जायेगी। आदमीपर उसकी मर्जीके खिलाफ कर लगानेमें और उसकी जेबमें हाथ डालकर पैसोंकी चोरी करनेमें कोई फर्क नहीं है। इसलिए अगर रंगदार लोगोंको मताधिकारका हक न हो तो उनसे कर बिलकुल न लिए जाने चाहिए।

दुःखका इलाज

"अब इस तरहकी तकलीफोंको मिटानेका सबसे अच्छा रास्ता सम्राट्के नाम अर्जी भेजनेका है। यहाँ हम बहुत-कुछ कर चुके हैं। इंग्लैंडमें इस समय नया मन्त्रिमण्डल है। उसको अपनी तकलीफोंके दूर होनेकी आशा बँध रही है। हम आज ही से महान प्रयत्न करेंगे तो इसमें शक नहीं कि धीरे-धीरे हमें अपने अधिकार मिल जायेंगे।

अधिकार मिलनेके कारण

हम ऐसे अधिकारोंके योग्य हैं। दक्षिण आफ्रिकाकी लड़ाईमें ऐसा बहुत बड़ा आदमी हुआ है। उसने ब्रिटिश सरकारकी वफादारीके लिए अपनी जान गँवा दी। जब बहुतेरे बोअरोंने ब्रिटिश सरकारका विरोध किया तब काले लोग वफादार बने रहे। केपमें काले लोग गोरोंकी भाँति ही मतदानका उपयोग कर रहे हैं, पर उन्होंने कभी उसका दुरुपयोग नहीं किया। ब्रिटिश अधिकारी कह गये हैं कि जो लड़ाई हुई वह भी हमारी खातिर ही हुई। ऐसी हालतमें हमपर जुल्म नहीं होना चाहिए।

एक दिक्कत

"हमारी स्थिति इतनी मजबूत है कि सम्भवतः हमें ये अधिकार मिलने ही चाहिए। लेकिन इसमें एक दिक्कत मालूम होती है। जब इन लोगोंके साथ सन्धि हुई, तब उसमें यह शर्त रखी गई कि उत्तरदायी शासन मिलनेसे पहले वतनी लोगोंको मताधिकार नहीं देना चाहिए। सारा दारोमदार इसपर है कि वे "वतनी" का अर्थ क्या करते हैं। जितने लोग दक्षिण आफ्रिकामें पैदा होते हैं वे सब "वतनी" कहे जाते हों तो जो गोरे यहाँ पैदा होते हैं वे भी "वतनी" कहलायेंगे। लेकिन ऐसा अर्थ तो कोई नहीं करेगा। "वतनी" शब्दका अर्थ सब जगह एक ही होता है। और वह यह है कि जिसके माता-पिता वतनी हों वह "वतनी" है। अगर यह अर्थ सही है तो इन लोगोंके साथ हुई सन्धिमें हमारा समावेश बिलकुल नहीं है। बोअरोंके साथ जो सन्धि हुई उसमें इतनी गुंजाइश भी जो रह गई सो लॉर्ड मिलनरकी बदौलत ही। फिर भी जब ब्लूमफौंटीनमें सभा हुई थी तब लॉर्ड मिलनरने कहा था — यदि आपका भला हो तो भी रंगदार लोगोंका क्या होगा? यही सवाल हमें अभी पूछना शेष है।"

सभाके प्रस्ताव

इस प्रकार भाषण हो जानेके बाद दो प्रस्ताव पास हुए। एक रंगदार लोगोंकी अर्जी मंजूर करनेका और दूसरा डॉक्टर अब्दुर्रहमानको प्रतिनिधिकी तरह लॉर्ड सेल्बोर्नके पास भेजनेका।

इन दोनों प्रस्तावोंके मंजूर हो जानेपर "गॉड सेव द किंग" का गीत गाकर सभा समाप्त हुई।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, ११-३-१९०६

२७८ जोहानिसबर्गकी चिट्ठी

मार्च ११ १९ ६

डॉ० अब्दुर्रहमान

डॉक्टर अब्दुर्रहमान ग्यारह दिन रहकर केपको रवाना हो गये हैं। प्रिटोरियामें वे सर रिचर्ड सॉलोमन और जनरल स्मट्ससे मिले थे। और १ मार्चको वे जोहानिसबर्गमें लॉर्ड सेल्बोर्नसे मिले। डॉक्टरने उनके सामने ट्रान्सवाल तथा ऑरेंज रिवर उपनिवेशमें रहनेवाले केपके रंगदार लोगोंकी शिकायतें पेश कीं। लॉर्ड सेल्बोर्नके उत्तरका सार यह था कि वे अभी तत्काल तो कुछ भी कर सकनेमें असमर्थ हैं, जब नया विधान बनेगा तब यथासम्भव सहायता करेंगे। वे बड़े विनयशील हैं और सद्भावना रखते हैं। लेकिन सवाल यह है कि जब नया विधान बनेगा तब वे यहाँ होंगे भी या नहीं।

डॉक्टर अब्दुर्रहमानसे मिलनेके लिए ब्रामफौंटीन स्टेशनपर केपके बहुतसे रंगदार लोग हाजिर थे।

ट्रामका मुकदमा

ट्राम प्रणालीका जो मुकदमा मजिस्ट्रेटकी अदालतमें जीता था उसपर नगर-परिषदने अपील करनेकी सूचना दी थी। अब उसके वकीलने सूचित किया है कि नगर-परिषद अपील नहीं करना चाहती। लेकिन ऐसा मालूम होता है कि अभी एक और मुकदमा चलनेके बाद भारतीयोंको ट्राममें चढ़नेकी छूट मिलेगी। क्योंकि नगर-परिषदका खयाल है कि पिछले मुकदमेमें उसने अच्छी तरह मोर्चा नहीं लिया। इसलिए मुझे डर है कि हमारे लोगोंको अभी और राह देखनी होगी।

बस्तीकी जाँच

डॉक्टर पोर्टरने बस्तीकी कड़ी जाँच शुरू की है। डोरनफौंटीन जैसे मुहल्लेमें एक गोरेका पूरा मकान बन्द करवा दिया है और उसे अपना मकान गिरा देनेके लिए मजबूर किया है। इसलिए जहाँ-जहाँ भारतीयोंके घर खराब हों वहाँ मकान-मालिकोंको चेतकर चलना है।

चीनी मजदूर

चीनियों सम्बन्धी बहसबाजी अभीतक जारी है। खानवालोंके मन अस्थिर हैं। इस कारण व्यापार दिनपर-दिन कमजोर होता जा रहा है और सम्भव है कि अभी कमसे-कम एक साल तक व्यापारकी हालत ऐसी ही रहेगी।

सैकड़ों गोरे मजदूर, राज शिल्पकार आदि कामके अभावमें बैठे हुए हैं। ब्लूमफौंटीनके रेलवे विभागमें ५ मजदूर थे। अब उनमें से १ बचे हैं। उनमें से १५ को सरकारने चले जानेकी सूचना दी है।

झूठे अनुमतिपत्रसे अथवा बिना अनुमतिपत्रके दाखिल होनेके बाबत दो भारतीय गिरफ्तार हुए हैं। उनके मुकदमे ९ अप्रैलको शुरू होनेवाले हैं। दोनों जमानतपर छूटे हैं।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन ७-४-१९ ६

१ देखिए "जोहानिसबर्गकी चिट्ठी" पृष्ठ ५१९-४ ।

२७९. पत्र : छगनलाल गांधीको

जोहानिसबर्ग
अप्रैल ६, १९११

प्रिय छगनलाल,

तुम्हारी चिट्ठी मिली। क्या तुम्हारी चिट्ठीका यह अर्थ निकालूँ कि मेरी भेजी हुई गुजराती सामग्री तुम्हें बुधवारको जाकर मिली? अगर ऐसा हो तब तो कहीं कोई बहुत बड़ी गड़बड़ी है, क्योंकि मैंने इसका बहुत खास प्रबन्ध किया था कि इतवारको लिखी हुई सामग्री चार बजेसे पहले डाकमें छोड़ दी जाये। शनिवारको लिखी गई सामग्री समयपर रवाना की गई थी। मैंने तुमसे तारीखकी मोहरवाले लिफाफे भेजनेको कहा था, ताकि बातकी यहाँ जाँच-पड़ताल कराई जा सके।

पूरे पृष्ठ आधे पृष्ठ और चौथाई पृष्ठके विज्ञापनोंकी दरें देनेमें दिक्कत क्यों होनी चाहिए? मेरी समझमें ये दरें कितना टाइप लगता है इसपर तो निर्भर नहीं करतीं। कोई व्यक्ति निश्चित स्थानका पैसा देता है तो फिर हमें चाहिए कि हम जहाँतक बने उतनी ही जगहमें उसकी जरूरतकी सब बातें दे दें। ऐसी स्थितिमें जगहकी दरें देना कठिन नहीं होना चाहिए। तुमने दरें लिखने ही छोटे टाइपसे खासा विज्ञापन मिलनेकी संभावना है। इसलिए इसमें देर मत करना।

श्रीमती मैकडोनल्डके बारेमें तुम्हारे निर्णयकी राह उत्सुकतासे देख रहा हूँ।

मगनलाल अच्छा हो रहा है जानकर खुशी हुई। उसे अपनी शक्तिसे अधिक काम न करना चाहिए। इसलिए अगर उसे बहुत कमजोरी लगे तो अभी और एक-दो दिन काम न करे, क्योंकि अगर फिर पटकनी खा गया तो उसकी तबीयत पहलेसे भी ज्यादा खराब होगी और उसको कमजोरीका अनुभव होगा।

मैंने तुम्हें बता ही दिया है कि श्री मायालनका पत्र प्रकाशित मत करना। जिसमें इन्हें मैंने वह पत्र यह लिखकर वापस कर दिया था कि इसे छापना नहीं है। श्री मायालनका जो पत्र तुमने मुझे भेजा है मैं उसे अब नष्ट कर रहा हूँ।

कुछ ध्यानमें नहीं आता आए, वे शायद कौन हैं। मॉरिसकी मारफत यह पैसा पानेका प्रयत्न करो। मैंने यह तो तुमसे कह ही दिया है कि जो लोग पैसा दुकानमें लगातार कारवाही कर रहे हैं तुम उन्हें अपनी मर्जीसे तगादेके पत्र भेज सकते हो।

तुम्हारा शुभचिन्तक
मो० क० गांधी

संलग्न १

श्री छगनलाल खुशालचन्द गांधी
मारफत इंडियन ओपिनियन
फीनिक्स

मूल अंग्रेजी प्रतिकी फोटो-नकल (एस० एन० ४९४५) से।

२८० पत्र उपनिवेश-सचिवको

डर्बन
[अप्रैल ७, १९०६ के पूर्व]

[से]वामें
[मा]ननीय उपनिवेश-सचिव
[पी]टरमैरित्सबर्ग

महोदय

हमें आपके गत मासकी २४ तारीखके पत्रकी प्राप्ति-सूचना देनेका मान प्राप्त हुआ है। पत्रमें आपने उस विषयपर, जिसकी हमने अपने पिछले मासकी १ तारीखके पत्रमें[1] चर्चा की थी विस्तारसे लिखा है। इसके लिए हमारी कांग्रेसकी समिति आपकी आभारी है।

हमारी समिति पूरे तौरपर स्वीकार करती है कि उन पासों और प्रमाणपत्रोंका जिनकी चर्चा हमारे पत्रमें की गई है उद्देश्य इस तरहके पास रखनेवाले लोगोंके गमनागमनको सुविधा जनक बनाना है।

हमारी समितिका निवेदन है कि ऐसे पास उन लोगोंके सुभीतेके लिए दिये जाते हैं, जो अधिनियम लागू करनेके पक्षमें हैं।

हमारी समितिका दावा है कि यद्यपि अधिनियमसे प्रभावित कुछ लोगोंका आवागमन वर्जित है तथापि उनका उपनिवेशसे होकर गुजरना निकलना या वहाँ अस्थायी रूपमें रहना वर्जित नहीं है। यद्यपि वे लोग जो उपनिवेशमें रहनेके अधिकारी हैं, अधिवासी प्रमाणपत्र आदि लेनेके लिए बाध्य नहीं हैं फिर भी जिस सख्तीसे अधिनियम लागू किया जा रहा है उससे भारतीयोंके लिए प्रमाणपत्र रखना नितान्त आवश्यक हो गया है।

हमारी समिति यह मानती है कि ज्यादातर ट्रान्सवालके भारतीय ही अभ्यागत पास लेते हैं। यह स्वाभाविक है क्योंकि दोनों उपनिवेशोंमें परस्पर काफी व्यापार होता है।

हमारी समितिकी नम्र राय है कि अभ्यागत-पास देकर ट्रान्सवालके भारतीयोंको हर तरहकी सुविधा देनी चाहिए। अभ्यागत और नौकारोहण — दोनों किस्मके पास जिनपर इतना शुल्क लगा दिया गया है कि वह दिया ही न जा सके देनेके लिए अधिक राजस्व प्राप्त करनेके साधन हैं। स्वर्गीय मी० एस्कम्बके प्रशासन-कालमें जब इसी प्रकारके शुल्क लगाये गये थे यह सारा सवाल उठाया गया था और हमारी समितिके निवेदन करनेपर उन्हें तत्काल वापस ले लिया गया था।

हमारी समिति महसूस करती है कि परिषदके पासों तथा नौकारोहण एवं अभ्यागत पासोंके लिए शुल्क लगाना एक अत्यन्त गम्भीर बात है। इसलिए वह इसपर पुनर्विचार करनेकी प्रार्थना करती है।

आपके आभारी सेवक
ओ० एच० आमद जौहरी
एम० सी० आंगलिया
अवैतनिक संयुक्त मन्त्री नेटाल भारतीय कांग्रेस

[अंग्रेजीसे]
इंडियन ओपिनियन ७-४-१९०६

1. देखिए "पत्र: उपनिवेश-सचिवको" पृष्ठ १११।

२८१ पत्र 'लीडरको'[1]

भारतीय कब भारतीय नहीं होता?

[जोहानिसबर्ग
अप्रैल ७, १९ ९ के पूर्व]

सेवामें
सम्पादक
'लीडर'
जोहानिसबर्ग

महोदय]

कुछ दिन पहले जापानी प्रजाजन श्री नोमूराने आपसे सार्वजनिक रूपसे माफी माँगी थी क्योंकि मुख्य अनुमतिपत्र-सचिवने उक्त सज्जनको अस्थायी अनुमतिपत्र देनेसे इनकार कर दिया था। क्या मैं एक ब्रिटिश प्रजाके लिए आपकी सहानुभूति प्राप्त कर सकता हूँ? मुझे मालूम हुआ था कि श्री मुहम्मद मंगा एक ब्रिटिश भारतीय हैं। वे बैरिस्टरीका अध्ययन कर रहे हैं। डेलागोआ-बेमें बसनेवाले अपने रिश्तेदारोंसे मिलनेके लिए इंग्लैंडसे आये थे। मुझसे उनके लिए अनुमतिपत्रकी अर्जी देनेके लिए कहा गया था जिससे वे इंग्लैंडसे डेलागोआ-बे जाते हुए ट्रान्सवालसे गुजर सकें। सरकारने अनुमतिपत्र देनेसे इनकार कर दिया और अपने निर्णयका कोई कारण बतानेसे भी वह अबतक इनकार ही करती गई है। श्री नोमूराका प्रतिनिधित्व करनेका श्रेय भी मुझे मिला था। उनका दर्जा निश्चय ऊँचा था परन्तु सम्भवतः श्री मंगाका दर्जा ज्यादा ऊँचा है। वे डेलागोआ-बेके एक बहुत ही प्रसिद्ध भारतीय व्यापारीके पुत्र हैं और स्वयं मिडिल टेम्पलके एक सदस्य हैं। फिर भी ब्रिटिश भारतीयके रूपमें वे ट्रान्सवालसे गुजर नहीं सके।

अब मुझे मालूम हुआ है कि श्री मंगाको ब्रिटिश भारतीय समझनेमें मैंने भूल की थी। समुद्रकी राह डेलागोआ-बे पहुँचकर उन्होंने सरकार द्वारा अनुमतिपत्र पानेके लिए दूसरा निष्फल प्रयत्न किया। सरकार अपना निर्णय बदलनेको तैयार न हुई। वे पुर्तगाली भारतमें पैदा हुए थे इसलिए उन्होंने पुर्तगाली नागरिकके अधिकारोंका दावा किया। इस हैसियतसे उन्होंने डेलागोआ-बेकी सरकारके सचिवको लिखा और उक्त सचिवके हस्तक्षेपसे ट्रान्सवालमें प्रवेश करनेका अस्थायी अनुमतिपत्र उन्हें मिल गया है। पोर्तुगाली प्रजा श्री मंगाकी विजय हो गई है, ब्रिटिश प्रजा श्री मंगा अपमानित किये गये हैं। ऐसा है वह पुरस्कार जो अपने असाधारण धैर्य और सहनशीलताके लिए ब्रिटिश भारतीय समाजको सरकारकी ओरसे मिला करता है।

[आपका आदि
मो० क० गांधी]

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, १४-४-१९ ९

१. यह टिप्पणी का रूप "ब्रिटिश सद्-भाव" (ब्रिटिश गुडविल) शीर्षकसे लीडरके ७ अप्रैलके अंकमें प्रकाशित हुआ था।

२. देखिए "रुस्तमजी अनुमतिपत्र मामला" पृष्ठ २८८-९ और "एक ब्रिटिश भारतीयको" पृष्ठ २८३-९।

२८२. पत्र : छगनलाल गांधीको

जोहानिसबर्ग
अप्रैल ७, १९०९

चि० छगनलाल,

श्री बीमकी मारफत मुझे पार्सल मिल गया है। मैं चाहता हूँ तुम हेमचन्दसे काम लो और उसे कहो कि दफ्तरी बातोंके बारेमें वह मुझे लिखा करे। मुझे सब बातोंकी ठीक खबर मिलती रहना बहुत जरूरी है। तुमपर कितना बोझ है, इसका मुझे पूरा भान है मगर जो सहयोग तुम्हें प्राप्त है उसका लाभ उठाकर बोझ हल्का करना-न-करना तुम्हारे हाथमें है। बेशक गोकुलदाससे भी तुम कह सकते हो कि वह मुझे थोड़ा-सा लिख दिया करे। मेरी भेजी हुई सारी सामग्रीकी पहुँच मुझे मिलनी चाहिए, ताकि अगर कुछ गड़बड़ हो जाये और समय हो तो मैं और सामग्री भेज सकूँ। श्रीमती मैक्डोनल्डके बारेमें तुम्हारी सम्मति जाननेको बहुत ही उत्सुक हूँ। सो हेमचन्द या गोकुलदास या आनन्दलालके जरिये भी सूचित की जा सकती है। कितनी तफसीलें हैं, जिनपर मुझे ध्यान देना चाहिए मगर तुम्हारी तरफसे जानकारी पाये बिना मैं वैसा नहीं कर सकता। मोतीलालने लिखा है कि बम्बईसे कोई नया आदमी आया है। नाम जोरीभाई है। उसका कहना है कि उसे छापाखानेका काम अच्छी तरह आता है। वह रहनेकी जगह और ४ पौंड माहवारपर काम करनेको तैयार है। अगर तुम्हें लगे कि काम बहुत है तो इस आदमीको देखना चाहिए। कुछ भी हो तीन बातें निहायत जरूरी हैं

(१) हिसाब बा-कायदा रखा जाये।
(२) अखबारमें सामग्रीकी कमी न रहे।
(३) तुमपर अत्यधिक बोझ न पड़े।

इन तीनमें से एककी भी उपेक्षासे सब उलट-पुलट हो जायेगा। तुम्हारे जरूरतसे ज्यादा काम करनेका एक परिणाम दफ्तरी लिखा-पढ़ीकी उपेक्षा है। जैसे दरें तुम्हें एकदम भेजनी चाहिए थीं। तो मैं चाहता हूँ कि इसपर सावधानीसे सोचो और परिस्थिति ठीक करो। इसी विचारसे मैंने श्रीमती मैक्डोनल्डका नाम सुझाया है। वे बहुत उत्तम काम करनेवाली हैं। व्यवस्थित हैं और परिश्रममें तुम्हारा या श्री वेस्टका मुकाबिला करती हैं। मुझे इसमें कोई शक नहीं कि वे हिसाब-किताब सँभाल सकेंगी। शायद मैं अगले हफ्ते वहाँ आऊँगा। ईस्टरकी छुट्टियाँ खत्म होनेके पहले मैं टिकट खरीद लेना चाहता हूँ मगर आनेके पहले श्रीमती मैक्डोनल्डके बारेमें तय कर लेना चाहता हूँ ताकि अगर जरूरत हो तो उन्हें साथ ला सकूँ। आज कुछ गुजराती सामग्री भेज रहा हूँ। आशा करता हूँ कि सोमवार तक तुम्हें मिल जायेगी। अगर तुम और श्री वेस्ट दोनों और दूसरे भी किसी निर्णय तक पहुँचकर इस मामलेमें तार कर दो तो बहुत अच्छा हो। आनन्दलाल मगनलाल और दैमसे भी पूछ लेना। मगर अकेलेमें श्रीकी

स्टार या साप्ताहिक लीडर या साप्ताहिक रैंड डेली मेल आयें तो भी आपके पास भिजवाना।

मोहनदासके आशीर्वाद

श्री छगनलाल खुशालचन्द गांधी
मारफत इंडियन ओपिनियन
फीनिक्स

मूल अंग्रेजी प्रतिकी फोटो-नकल (एस॰ एन॰ ४१४७) से।

२८३. शरण-स्थल

दक्षिण आफ्रिका जिस उथल-पुथलमें से गुजर रहा है उसमें विभिन्न उपनिवेशोंके न्यायालय प्रमुख सुरक्षा स्थलोंका काम कर रहे हैं। हम एक भारतीयके मुकदमेमें न्यायमूर्ति वेसेल्सका फैसला छाप चुके हैं।[1] इस अंकमें हम एक चीनीके मुकदमेमें न्यायमूर्ति मेसनका फैसला *ट्रान्सवाल लीडर* से उद्धृत करते हैं। चूँकि ट्रान्सवाल इस समय बहुत ही अत्याचारपूर्ण कानूनोंसे पीड़ित है, इसलिए इस उपनिवेशमें न्यायाधीशोंको अपनी परम्परागत स्वतन्त्रताका प्रयोग करने और प्रजाकी स्वाधीनताकी रक्षा करनेकी आवश्यकता है।

विदेशी श्रम-विभागमें पुलिसका एक चीनी सिपाही तकलीफदेह साबित हुआ है। इसलिए ऐसा जान पड़ता है, वह विदेशी श्रम-विभागके अधीक्षककी आज्ञासे वारंटके बिना गिरफ्तार कर लिया गया। उसको हथकड़ियाँ पहनाई गईं और एक काल-कोठरीमें बन्द कर दिया गया। फिर चीनी श्रम-अध्यादेशकी एक धाराके अन्तर्गत उसको उसके देश वापस भेजनेका हुक्म जारी कर दिया गया। डर्बन भेजे जानेसे पूर्व उस अभागे सिपाहीको कानूनी सहायता लेने अथवा अपने मित्रोंसे भेंट करनेकी अनुमति नहीं दी गई। अगर वह छुपे तौरपर और अधीक्षककी पीठ पीछे वकालत-नामेपर हस्ताक्षर न कर देता तो उसको शायद राहत न मिलती और वह अपने मामलेकी सुनवाईके बिना ही चीन भेजा गया होता। सिपाही खतरनाक आदमी था या नहीं यह अप्रासंगिक है। हम मामलेकी सत्यता और असत्यतापर भी विचार नहीं करते। हमने जो तथ्य ऊपर दिये हैं, वे स्वीकार किये जा चुके हैं।

विदेशी श्रम-विभागके अधीक्षकको सूचित कर दिया गया था कि अभियुक्त द्वारा नियुक्त वकील सर्वोच्च न्यायालयमें बन्दी प्रत्यक्षीकरणकी आज्ञा निकालनेकी दरख्वास्त देंगे। तिसपर भी न्यायालयका आदेश निकलनेके पूर्व ही वह आदमी डर्बनको रवाना कर दिया गया। तथापि अधीक्षकको सर्वोच्च न्यायालयमें स्वयं हाजिर होने तथा सिपाहीको भी हाजिर करनेका आदेश दिया गया। मुकदमेकी सुनवाई प्रिटोरियामें १ मार्चको न्यायमूर्ति मेसनके समक्ष हुई। उस अवसरपर अधीक्षकने यह कहकर आवेदनपत्रको विफल करनेकी पुन: चेष्टा की कि चीनी श्रम-अध्यादेशके अनुसार परवानेके बिना इस देशमें किसी भी चीनीका प्रवेश निषिद्ध है और चूँकि अब ऐसे परवाने बन्द कर दिये गये हैं, इसलिए उसके लिए सिपाहीको पेश कर सकना बिलकुल असम्भव है।

१. देखिए "न्यायका दुर्ग" पृष्ठ २५९-६०।

उस चीनीकी तरफसे श्री स्मट्सने बहस की और न्यायमूर्ति मेसनने फैसला देते हुए अधीक्षककी कार्रवाईकी तीव्र भर्त्सना की। उन्होंने कहा

तत्वतः और वस्तुतः इस मुकदमेकी एक अत्यन्त गम्भीर बात यह है कि विदेशी जन-विभागके अधीक्षकने चीनी सिपाहीसे किसीको नहीं मिलने दिया और इस प्रकार अपनी सत्ताका अत्याचारपूर्ण प्रयोग किया। मैं इसे निस्सन्देह एक बहुत ही गम्भीर बात मानता हूँ। मेरे खयालसे इस प्रकार किसी भी व्यक्तिके गैरकानूनी ढंगसे हटाये जाने और उसके साथ गैरकानूनी व्यवहारको रोकनेका एकमात्र उपाय प्रत्येक व्यक्तिके इस अधिकारको मान्य करना है कि उसका जो भी मित्र उससे मिलना चाहे वह उससे मिल सके। अधीक्षकके कार्यका परिणाम इस प्रकारकी किसी भी कार्रवाईको विफल करनेवाला था और उसने कुलीको उस सूचनाके बावजूद जो कुलीके वकीलोंने उसको दी थी, उपनिवेशके बाहर भेज कर अनुचित काम किया।

विद्वान न्यायाधीशने अधीक्षकको आदेश दिया है कि वह उस चीनीको हाजिर करे और यह बताये कि जब चीनीकी रक्षाके लिए अदालतके सामने आवेदनपत्र दिये जानेकी बात उसको मालूम थी तब वह उक्त चीनीको उपनिवेशसे निर्वासित करके अदालतकी मान-हानि करनेके अपराधमें दण्डित क्यों न किया जाये? न्यायाधीशने यह भी आदेश दिया है कि मुवक्किलने वकीलके सम्बन्धमें अदालतपर जो खर्च किया है वह सब श्री चैमनिस देंगे। उन्होंने यह भी कहा कि *यह आदेश जैसा कि मैं पहले भी कह चुका हूँ मैंने इसलिए दिया है कि* अधीक्षकने किसी भी आदमीको आवेदक तक न पहुँचने देनेमें अपनी शक्तिका अन्यायपूर्ण प्रयोग किया है।

यहाँ एक तरफ एक अधिकारी है — बहुत प्रभावशाली पदपर आसीन दूसरी तरफ पुलिसका एक गरीब सिपाही है। फिर भी सिपाही ट्रान्सवालमें सर्वोच्च न्यायाधिकरणके सामने अपनी फरियादकी सुनवाई करनेके अपने अधिकारका उपयोग कर सका है। गुड अधीक्षकको ऐसी संस्थापर गर्व होना चाहिए जो सम्राट्के छोटेसे-छोटे प्रजाजनके स्वातन्त्र्यकी इस प्रकार रक्षा करती है क्योंकि यह बात सहज ही कल्पनामें आ सकती है कि उसने उस चीनीके साथ जो कुछ किया वही उसके साथ उससे बड़े अधिकारियों द्वारा किया जा सकता है। सम्भव है यह श्री चैमिसनकी समझकी भूल हो परन्तु प्रजाके स्वातन्त्र्याधिकारकी रक्षा न हो इसके बजाय यह ज्यादा अच्छा है कि उन्हें स्वयं हानि उठानी पड़े।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन ७–४–१९०६

१ अभिप्राय, सिपाही का विचार।

२८४ गिरमिटिया कर

पिछले सप्ताह हमने 'टाइम्स ऑफ नेटाल' से एक ऐसे अभियोगकी रिपोर्ट उद्धृत की थी जो तीन पौंडी वार्षिक कर वसूल करनेके लिए उपनिवेशके प्रवासी कानूनके अन्तर्गत चलाया गया था। हमें 'नेटाल विटनेस' को पढ़नेसे पता चलता है कि अभियोग खुद उसपर ही नहीं था बल्कि उसकी पत्नीपर भी था। कानूनमें कर वसूल करनेके लिए केवल एक विधि दी गई है: परवानेकी रकम प्राप्त करनेके लिए नियुक्त किसी भी अफसर या मजिस्ट्रेट ऑफ पीस द्वारा सरसरी कार्रवाई। मालूम होता है कि इस कार्रवाईके दरमियान अदालतकी आज्ञासे मुकदमा चलानेवाले सार्जेंटने भारतीय स्त्रीके निजी गहने जमानतके तौरपर ले लिए हैं। उसको करकी अदायगीके लिए तीन महीनेकी मुहलत दी गई है। अगर इस मियादके अन्दर कर न चुकाया गया तो उसके जेवर बेच डाले जायेंगे। न्यायाधीश और मुकदमा चलानेवाला सार्जेंट दोनों लिहाज करनेवाले व्यक्ति थे फिर भी इस अभियोगसे यह बात स्पष्ट प्रकट हो गई है कि गिरमिटिया मजदूर जब मुक्त हो जाते हैं तो उनको इस करके कम जानेमें कितनी गम्भीर कठिनाईका सामना करना पड़ता है। जबतक गरीब स्त्रीके पास कुछ भी गहना या निजी सामान है, तबतक उसे कर देना ही पड़ेगा — फिर चाहे वह कुछ कमा रही हो या न कमा रही हो या अन्यथा दे सकती हो या न दे सकती हो। नेटालमें पाँच वर्ष सेवा करनेके बाद गिरमिटिया मजदूरोंको यह इनाम दिया जाता है!

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन ७-४-१९०६

२८५ नेटालमें राजनीतिक उपद्रव

पिछले सप्ताह नेटालमें जबरदस्त घटनाएँ घटी हैं। उनका प्रभाव बरसों तक मिटनेवाला नहीं है। परिणामस्वरूप नेटालका दिमाग चढ़ गया है। स्वराज्यकी जीत हुई है। लेकिन अंग्रेजी राज्यको धक्का लगा है।

नेटालमें व्यक्ति-करके कारण काफिरोंने विद्रोह किया। सार्जेंट हंट और आर्मस्ट्रांग[1] इस विद्रोहमें मारे गये। नेटालमें फौजी कानूनकी घोषणा हुई और वतनियोंके साथ सख्ती होने लगी। फौजी कानूनके अनुसार कुछ वतनियोंकी जाँच-पड़ताल हुई और उनमें से १२ को तोपसे उड़ा देनेकी सजा दी गई। आसपासके वतनियों और उनके राजाको अपने लोगोंको तोपसे उड़ते हुए देखनेके लिए बुलाया गया। यह काम २९ मार्चको होनेवाला था।

इस बीच विलायतमें लॉर्ड एलगिनने नेटालके गवर्नरको तार किया कि फिलहाल वतनियोंको तोपसे उड़ाना मुल्तवी रखा जाये। नेटालके राज्यकर्ताओंको यह बात अच्छी नहीं लगी। उन्होंने गवर्नरको अपने त्यागपत्र सौंप दिये। गवर्नरने उनसे कहा कि जबतक लॉर्ड एलगिनका दूसरा जवाब न आये तबतक वे ठहरें। उन्होंने यह बात मान ली।

१. सार्जेन्ट [illegible] सब-इन्स्पेक्टर हंट और ट्रूपर आर्मस्ट्रांग।

इस सारी बातके प्रकट होते ही समूचे दक्षिण आफ्रिकामें एक शोर मच गया। समाचारपत्रोंने कड़े लेख लिखे कि लॉर्ड एलगिनके हस्तक्षेपके कारण स्वराज्यके संविधानको आघात पहुँचा है। अगर नेटालको स्वतन्त्र सत्ता प्राप्त है, तो फिर नेटालके राजकाजमें बड़ी सरकार दखल नहीं दे सकती। नेटालके राज्यकर्ताओंके त्यागपत्रपर उन्हें सब ओरसे शाबाशी दी गई। चारों तरफ सभाएँ हुईं, और बड़ी सरकारके विरुद्ध भाषण हुए।

साम्राज्य-सरकारकी मान्यता यह थी कि विद्रोहको समाप्त करनेमें उसने नेटालकी मदद की थी। इसलिए वतनियोंको न्याय मिलता है या नहीं इसे देखनेका काम उसीका था। अत सजा मुल्तवी करनेके लिए लिखनेमें कोई गलती नहीं हुई। लेकिन दक्षिण आफ्रिकाको उत्तेजित देखकर बड़ी सरकारकी सारी दलीलें खो गईं और लॉर्ड एलगिन दब गये।

उन्होंने गवर्नरको लिखा है कि जाँच करनेसे पता चला है कि वतनियोंको उचित न्याय मिला है। अब सरकार नेटालके राज्यकर्ताओंके काममें दखल देना नहीं चाहती। वे जो ठीक समझें सो करें। लॉर्ड एलगिनने गवर्नरको दोषी ठहराया है। उन्होंने कहा है कि अगर गवर्नरने शुरूमें ही पूरी हकीकत भेज दी होती तो इस प्रकार हस्तक्षेप करनेकी नौबत न आती। दो आदमियोंके लिए बारह प्राण गये हैं। बारह वतनियोंको सोमवारके दिन तोपसे उड़ा दिया गया है।

इस प्रकरणमें केवल एक ही व्यक्तिने अपना दिमाग ठंडा रखा है और वे हैं श्री मोरकम। श्री मोरकमने मैरित्सबर्गकी सभामें कहा था कि लॉर्ड एलगिनने सही कदम उठाया था। न्याय बचानेकी बात थी। इसपर राज्यकर्ताओंको त्यागपत्र देनेकी कोई जरूरत न थी। फौजी कानूनके जारी होनेसे पहले हंट और आर्मस्ट्रांग मारे जा चुके थे। अतएव वतनियोंकी जाँच सर्वोच्च न्यायालयके सम्मुख होनी चाहिए थी। सारी सभा श्री मोरकमके विरुद्ध थी। लोग चिल्ल-पों मचा रहे थे पर बहादुर श्री मोरकमको जो कुछ कहना था वह उन्होंने कहा ही।

इस सबका परिणाम क्या होगा? काफिर मारे गये यह बात भुला दी जायेगी। उन्हें न्याय मिला है या नहीं यह नहीं कहा जा सकता। लेकिन जहाँ-जहाँ स्वराज्य दिया गया है वहाँ-वहाँ गोरोंके दिमाग और अधिक चढ़ जायेंगे। वे अधिक मनमानी करेंगे और अब साम्राज्य सरकार दखल देते हुए डरेगी। कहावत है कि साँपका डसा रस्सीसे डरता है, इसलिए साम्राज्य सरकार अब शायद ही कभी हस्तक्षेप करे। इसमें नुकसान काले लोगोंका ही है। उन्हें मताधिकार नहीं है। जहाँ मताधिकार है वहाँ वे उसका पूरा उपयोग नहीं कर पाते। इस कारण उपनिवेशी उनपर अधिक प्रतिबन्ध लगायेंगे और जो उपनिवेशियोंको खुश रखकर न्याय पाना चाहेंगे वे ही पा सकेंगे। आनेवाले वर्षोंमें दक्षिण आफ्रिकामें बहुत उथल-पुथल होने की है। भारतीयों और दूसरे काले लोगोंको बहुत सावधान और सोच-समझकर चलना है।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन ७-४-१९०६

२८६. ट्रान्सवालमें जमीनका कानून

एक महत्त्वपूर्ण मुकदमा

ट्रान्सवालमें पृथक बस्तीके बाहर, एक ही जमीन एक भारतीयके नामपर पंजीकृत थी। यह थी प्रसिद्ध सेठ स्वर्गीय अबूबकर आमदके नामपर, प्रिटोरियाकी चर्च स्ट्रीटमें। स्वर्गीय श्री अबूबकरने यह जमीन १८८५ के जून महीनेमें खरीदी थी। उसके दस्तावेज पंजीयक कार्यालयमें १८८५ के जून महीनेकी १२ तारीखको दाखिल हुए थे। भारतीयोंके विरुद्ध जो कानून बना वह १७ जूनसे अमलमें आया। उपर्युक्त दस्तावेजके पंजीकृत होनेमें कुछ अड़चन पैदा हुई। जिसपर ब्रिटिश एजेंटने हस्तक्षेप किया और उस समयके स्टेट अटर्नीने एक पत्र लिखा तब पंजीयकने २६ जून को दस्तावेज पंजीकृत किये। सन् १८८८ में श्री अबूबकर गुजर गये। तबसे अबतक उस जमीन पर श्री अबूबकरके वारिसोंका अथवा उनके न्यासियोंका कब्जा था और वे ही उसका उपभोग करते थे। कानूनके अनुसार व्यक्तिके मर जानेपर उसकी मिल्कियतका प्रबन्ध सरकारके द्वारा होना चाहिए। लेकिन इस मिल्कियतके मामलेमें ऐसा नहीं हुआ और जमीन वारिसोंके नाम-पर दर्ज हुए बिना ज्यों-की-त्यों पड़ी रही। जमीन बेकार पड़ी थी इसलिए सन् १९०५ में यह तय हुआ कि उसपर घर बनानेके लिए उसे लम्बी मुद्दतके पट्टेपर दे दिया जाये। ट्रान्सवालके कानूनके अनुसार हर लम्बी मुद्दतके पट्टेका पंजीयकके दफ्तरमें पंजीयन होना चाहिए। अतएव जमीन वारिसोंके नामपर दर्ज करानेकी कार्रवाई शुरू करनी पड़ी क्योंकि कानूनके अनुसार जमीन मृत मनुष्योंके नामपर दर्ज नहीं रह सकती। चूँकि वारिस भारतीय थे इसलिए पंजीयकने जमीन उनके नामपर दर्ज करनेसे इनकार कर दिया। इसपर पंजीयकके खिलाफ न्यायालयमें अपील की गई। पंजीयकने वारिसोंके नामपर जमीन दर्ज न करनेके दो कारण बताये। पहला यह कि जमीन १८८५ का कानून ३ पास होनेके बाद पंजीकृत हुई और चूँकि उस कानूनके अनुसार भारतीय अपने नामपर जमीन नहीं रख सकता इसलिए स्वर्गीय श्री अबूबकरके नामपर जो दस्तावेज पंजीकृत हुआ वह गैर-कानूनी था। अतः वह रद होना चाहिए। दूसरा कारण यह कि स्वर्गीय श्री अबूबकरके नामका दस्तावेज कानून-सम्मत माना जाये तो भी चूँकि वारिस भारतीय हैं इसलिए १८८५ के कानून ३ के मुताबिक वे जमीन अपने नामपर नहीं करा सकते। पंजीयककी दूसरी दलील मान्य करके न्यायमूर्ति फॉसने जिनके सामने यह अपील पेश हुई थी अपील रद कर दी। इसपर वारिसोंकी ओरसे सर्वोच्च न्यायालयमें अपील की गई। वारिसोंकी तरफसे श्री लेनर्ड और श्री ग्रेगोरस्की बैरिस्टर किये गये थे। वारिसोंकी ओरसे यह माँग की गई थी कि सर्वोच्च न्यायालय यदि वारिसोंके नामपर जमीन दर्ज करनेकी आज्ञा न दे तो भी २१ वर्षकी मुद्दतका पट्टा पंजीकृत करने और इस बीच दस्तावेज स्वर्गीय श्री अबूबकरके नाम रहने देनेका आदेश दे। श्री लेनर्डने बहुत जोरदार दलीलें दीं और न्यायाधीशोंने भी बहुत सहानुभूति दिखाई लेकिन लाचारी प्रकट करते हुए कहा कि वे वारिसोंको न्याय नहीं दे सकते। न्यायाधीशोंने बताया कि १८८५ का कानून ही बहुत बुरा है। और उस कानूनके विरुद्ध अगर न्याय प्राप्त करना हो तो केवल संसदसे ही प्राप्त किया जा सकता है। इस तरहका फैसला हो जानेसे वारिसोंके पास जमीनको बचानेका तत्काल एक ही उपाय रह गया था और वह था जमीन किसी भी गोरेके नामपर दर्ज कराकर कब्जा अपने हाथमें रखना। यह कार्रवाई उन्होंने की है। इससे उनके उपभोगमें कोई बाधा नहीं आयेगी। फिर भी सर्वोच्च न्यायालयके फैसलेकी दृष्टिसे यह उनके नामपर नहीं लिखी जा सकती इससे उन्हें अत्याचारकी अनुभूति हुए बिना नहीं

रहेगी। अब केवल संसदके द्वारा राजनीतिक लड़ाई लड़नी रह गई है। हम जानते हैं कि वे यह लड़ाई लड़ेंगे। उपर्युक्त फैसलेसे यह तो स्पष्ट हो गया है कि सन् १८८५ का कानून बड़ा जुल्मी कानून है। न्यायाधीशोंने भी इसे कबूल किया है। सर हेनरी कॉटनने इस सम्बन्धमें एक सवाल संसदमें पूछा है। देखें उसका नतीजा क्या निकलता है।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन ७–४–१९०६

२८७. जोहानिसबर्गकी चिट्ठी

अप्रैल ७, १९०६

अनुमतिपत्र

अनुमतिपत्रकी तकलीफ अभी बढ़ती ही जा रही है। लोगोंकी कहीं सुनवाई नहीं होती। शरणार्थियोंकी अर्जियाँ जहाँ-की-तहाँ पड़ी धूल खा रही हैं। फेरफार होते ही रहते हैं। इस तरह जल्दी मामलेमें भी हमला हुआ है। श्री सुलेमान मंगा डेलागोआ-बेके प्रसिद्ध व्यापारी श्री इस्माइल मंगाके रिश्तेदार हैं। वे इंग्लैंडमें बैरिस्टरीकी परीक्षाके लिए पढ़ रहे हैं। वे अपने रिश्तेदारोंसे मिलनेके लिए, कुछ दिन हुए, विलायतसे यहाँ आये हैं। उनका डर्बनमें उतरकर ट्रान्सवालके रास्ते डेलागोआ-बे जानेका इरादा था। उनकी तरफसे श्री गांधीने मुद्दती अनुमतिपत्रके लिए अर्जी दी लेकिन उपनिवेश-सचिवने अनुमतिपत्र देनेसे इनकार कर दिया। कुछ दिन डर्बनमें राह देखनेके बाद श्री मंगा समुद्रके रास्ते डेलागोआ-बे गये। यद्यपि उन्होंने फिर शुरू ही अर्जी दी पर इनकारीका जवाब मिला। अबतक इस खयालसे काम होता रहा कि श्री मंगा ब्रिटिश प्रजाजन हैं। श्री मंगा विलायतका पोशाक लेकर आये थे। वे चुपचाप बैठे रहनेवाले नहीं थे। दमनमें जन्म होनेके कारण पुर्तगाली प्रजा होनेका लाभ उठाकर, वे डेलागोआ-बे में सरकारी सचिवके पास पहुँचे और उससे उन्होंने आनेके लिए अनुमतिपत्रकी माँग की। इसपर सचिवने तत्काल ब्रिटिश वाणिज्य-दूतके नाम पत्र लिखा और उन्होंने फौरन ही अनुमतिपत्र लिखवा दिया। मतलब यह कि अगर श्री मंगा ब्रिटिश प्रजाजन होते तो वे ट्रान्सवालकी स्वर्णभूमिपर पैर नहीं रख सकते थे लेकिन पुर्तगाली प्रजा होनेके कारण तुरन्त आ सके।

श्री मंगा एक दिन जोहानिसबर्गमें रहकर वापस डेलागोआ-बे चले गये हैं। शासनके ऐसे बेहूदे व्यवहारके बारेमें संघने सरकारको और लॉर्ड सेल्बोर्नको भी लिखा है। लॉर्ड सेल्बोर्नने पत्रकी पहुँच भेजते हुए उत्तर दिया है कि वे इस मामलेकी जाँच कर रहे हैं। श्री गांधीने श्री ट्रान्सवाल लीडर में पत्र लिखा है। श्री सुलेमान मंगाके मामलेमें ऐसा अन्याय हुआ है कि उसमें सम्भव है लोगी हुई अंग्रेज सरकारकी आँखें कुछ तो खुलेंगी ही। पारसी प्रजाजन श्री सोराबजीको अनुमतिपत्र देनेसे इनकार किया गया था तो समूचा ट्रान्सवाल गर्म उठा था। लेकिन क्या हिन्दुस्तानी ब्रिटिश प्रजाजनका क्या कोई हाल पूछनेवाला ही नहीं है?

१. अधरम पुस्तकमें अंकित ... ।
२. ब्रिटिश भारतीय संघ।
३. देखिए ... लीडर को" पृष्ठ ३०२।
४. देखिए "... अनुमतिपत्र सम्बन्धी जुल्म" पृष्ठ २९५।

रेलवेकी अड़चन

डर्बनवाले सौदागर प्रसिद्ध व्यापारी श्री मुहम्मद सुरती दो दिन जोहानिसबर्गमें रह गये हैं। उन्हें क्लार्क्सडॉर्पसे आनेवाली रेलगाड़ीमें तकलीफ हुई। वे पहले दर्जेके एक डिब्बेमें बैठे थे। वहाँ उनका अपमान करके उन्हें दूसरे डिब्बेमें बैठाया गया। श्री मुहम्मद सुरतीको पता नहीं था कि ट्रान्सवालमें कालेलोगोंके लिए अलग डिब्बे होते हैं। फिर वे खुद जिस डिब्बेमें बैठे थे उसमें कोई गोरा नहीं था फिर भी गार्डने उन्हें तंग किया। इसपर उन्होंने रेलवेसे क्षमाकी माँग की है।

प्रिटोरियासे ८ १ बजे जोहानिसबर्ग जानेवाली और जोहानिसबर्गसे प्रिटोरिया जानेवाली गाड़ीमें भी भारतीय यात्रियोंको नहीं चढ़ने दिया जाता। इसके सम्बन्धमें ब्रिटिश भारतीय संघका शिष्टमण्डल रेलवेके महाप्रबन्धकसे मिलने गया था। उसने माँग की कि यह गाड़ी सिर्फ गोरोंके लिए सुरक्षित रखी गई है इसलिए भारतीय इसमें बैठनेका आग्रह न रखें तो अच्छा हो। महाप्रबन्धकके पास इसका न्यूनतम कोई जवाब नहीं था। शिष्टमण्डलने जवाब दिया कि इस मामलेमें भारतीय जनता पीछे नहीं हट सकती। जिस तरह गोरोंको सुविधा चाहिए उसी तरह भारतीयोंको भी चाहिए। इसका अगले आठ-दस दिनोंमें निबटारा होना सम्भव है।

ट्रामका मुकदमा

जोहानिसबर्गके ट्रामवाले मामलेका अभी अन्त नहीं हुआ है। हमारे लोगोंको ट्राममें नहीं बैठने दिया जाता इसलिए उन्होंने फिर मुकदमा दायर किया है। श्री कुवाडिया जब ट्राममें बैठ रहे थे उन्हें बैठनेसे रोका गया। इसलिए उन्होंने फिरसे हुक्मनामा पेश किया है। मुकदमेकी तारीख एक-दो दिनमें निश्चित होगी।

पृथक् बस्तीमें गन्दगी

मलायी बस्तीमें बसे हुए भारतीयोंपर श्री पोर्टरने इस हफ्ते छापा मारा था। चूँकि लोग बहुत पिचपिच रहते हैं इसलिए उनमें से बहुत-से लोगोंको पकड़ कर ले जाया गया। इस सम्बन्धमें तथा अपना घर-आँगन और पाखाना साफ रखनेके विषयमें हमारे लोग बहुत ही लापरवाह होते हैं। इसका फल सभीको भोगना पड़ता है। जबतक हम इसमें पक्का सुधार नहीं करेंगे तबतक हमारी मुसीबतें दूर नहीं होंगी। और अगर इस बीच प्लेग या दूसरी फैलनेवाले कोई और रोग आ गेरे, तो बहुत अधिक मुसीबतें भोगनी होंगी। ऐसा लगता है कि हमारे लोग १९०४ के प्लेगके अनुभव भूल गये हैं।[१]

गोरोंका उत्साह

नये संविधानके बारेमें गोरोंने लाभादुने नाम जो अर्जी तैयार की है, उसपर बहुत थोड़े समयमें १५, हस्ताक्षर हो चुके हैं और अब भी हो रहे हैं। ऐसे ही उत्साहकी धुन हमें भी लगनेकी जरूरत मालूम होती है। फूटकी धुनकी अपेक्षा यदि हमें यह धुन लगे तो हमारी हालत कुछ और ही हो सकती है।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन १४-४-१९०६

१. श्री व ब्यौरे उपलब्ध किन्तु स्पष्ट नहीं ।
२. देखिए खण्ड ४ पृष्ठ १५८-९, १८७-८ और १९०-९१ ।

२८८. उद्धरण : दादाभाई नौरोजीके नाम पत्रसे[1]

[जोहानिसबर्ग
अप्रैल १, १९११]

[प्रवासी प्रतिबन्धक अधिनियमके अन्तर्गत दिये जानेवाले पासों और प्रमाणपत्रोंकी प्राप्तिके लिए लगाया गया निषेधात्मक शुल्क] एक सर्वथा अन्यायपूर्ण शुल्क जिसे लगानेका किंचित्मात्र भी औचित्य नहीं है। ... दक्षिण आफ्रिकाके भारतीय समाजपर एक दूसरी गहरी चोट ट्रान्सवालमें की गई है।

[अंग्रेजीसे]

कलोनियल ऑफिस रेकर्ड्स् : सी० ओ० ४१७, जिल्द ४१४ : व्यक्तिगत।

२८९. पत्र : छगनलाल गांधीको

जोहानिसबर्ग
अप्रैल १, १९११

चि० छगनलाल,

इसीम बोथाका पत्र वापस कर रहा हूँ। इसपर अंग्रेजीके स्तम्भमें लिखा जायेगा। गुजराती स्तम्भमें कह दो कि इस मामलेपर अंग्रेजी स्तम्भमें विचार किया जा रहा है।

कलतक तुम्हारा पत्र आयेगा ऐसा कुछ अन्दाज लगाये हूँ। मैं शायद शुक्रवारको सवेरेकी गाड़ीसे रवाना हूँगा।

श्री रिचिसम अमीतक स्थितिके सम्बन्धमें बात कर रहा हूँ। वे शायद फिरसे काम करने लगें।

आशा है मगनलाल पहलेसे बहुत अच्छा होगा।

मोहनदासके आशीर्वाद

संलग्न १

श्री छगनलाल खुशालचन्द गांधी
मारफत इंडियन ओपिनियन
फीनिक्स

मूल अंग्रेजी प्रतिकी फोटो-नकल (एस० एन० ५३४९) से।

१. दादाभाईको लिखा गांधीजीका पत्र उपलब्ध नहीं है। इसके बारेमें यह उद्धरण दादाभाई नौरोजीने भारत-मंत्रीके नाम अपने १ [illegible] के पत्रमें उद्धृत किया है। साथ ही उन्होंने १०-३-१९११ का इंडियन ओपिनियनका अंक भेजा था और उसमें १०-३-१९११ के इंडियन ओपिनियनका लेख भी लिया था।

२९० पत्र: छगनलाल गांधीको

२१-२४ कोर्ट चेम्बर्स
नुक्कड़ रिसिक व ऐंडर्सन स्ट्रीट्स
पो० ऑ० बॉक्स ६५२२
जोहानिसबर्ग
अप्रैल ११, १९ १

चि० छगनलाल,

तुम्हारी चिट्ठी मिली। जवाबमें बहुत नहीं लिख रहा हूँ। मैं बुधवारको सवेरेकी गाड़ीसे रवाना हो रहा हूँ। शनिवारकी दुपहरको वह मुझे वहाँ पहुँचा देगी। फीनिक्सके लिए जोहानिसबर्गकी गाड़ीके आनेके बाद जो गाड़ी छूटती है उसीको पकड़ लूँगा।

लगता है विज्ञापनकी दरोंके बारेमें तुमसे जो पूछा था वह तुम अभीतक ठीकसे नहीं समझे हो। जब मैं वहाँ पहुँचूँ तो याद दिलाना, मैं तुम्हें परिस्थिति समझा दूँगा। इसी बीच तुम अपने विचार लिखकर रख छोड़ो — जो तुम्हें कहना है और जो तुम सुझाना चाहो वह सब। अल्पज्ञताका कोई डर न रखो, क्योंकि तुम जो कुछ लिख रखोगे मैं उन सबके विषयमें प्रश्न कर सकूँगा और तुम सब समझाकर कह सकोगे। मैं यह भी चाहता हूँ कि स्वतन्त्र रूपसे बिना दूसरेसे सलाह-मशविरा किये तुम अपने विचार लिख डालो और मेरा मंशा है कि सबसे ऐसा ही करनेको कहूँ। यह पत्र मगनलालको दे देना, ताकि अगर वह इस लायक तन्दुरुस्त हो गया हो तो जो-जो उसे सूझे वह भी विस्तारसे लिख डाले और, किसी भी हालतमें तुम जो प्रश्न मुझसे पूछना चाहो उन्हें भी लिख रखना।

कार्यक्रम नहीं बदला तो तार करनेका विचार नहीं है।

मोहनदासके आशीर्वाद

श्री छगनलाल खुशालचन्द गांधी
फीनिक्स

मूल अंग्रेजी प्रतिकी फोटो-नकल (एस० एन० ४३४८) से।

१. डर्बन।

२९१ पत्र विलियम वेडरबर्नको¹

ब्रिटिश भारतीय संघ

२५ व २६ कोर्ट चेम्बर्स
रिसिक स्ट्रीट
जोहानिसबर्ग
अप्रैल १२, १९०३

सर विलियम वेडरबर्न
पैलेस चेम्बर्स
लन्दन

महोदय

ट्रान्सवालमें ब्रिटिश भारतीयोंकी स्थिति दिन प्रति-दिन अधिक असुरक्षित एवं दुःखद होती जा रही है। यह आवश्यक है कि जो-कुछ यहाँ हो रहा है उसे संक्षेपमें दोहरा दूँ और ठोस काम करनेकी अपील करूँ।

यह तो सत्य है कि ब्रिटेनकी सरकार सम्राट्के स्वशासित उपनिवेशोंमें हस्तक्षेप करनेमें सोच विचारसे काम लेगी किन्तु मेरा विचार है कि हस्तक्षेप न करनेवाली इस नीतिकी अवश्यमेव कोई सीमा होनी चाहिए। ट्रान्सवालमें एक शान्ति-रक्षा अध्यादेश जारी है जिसके अन्तर्गत ब्रिटिश भारतीयोंके आगमनको अत्यन्त स्वेच्छाचारिताके साथ नियन्त्रित किया गया है।

(क) अध्यादेशका उद्देश्य शान्ति-रक्षा करना और, इसीलिए, बागियों तथा ऐसे लोगोंको जो ब्रिटिश सरकारसे द्वेष रखते हों दूर रखना था। किन्तु आज वस्तुतः उसका उपयोग केवल ब्रिटिश भारतीयोंके आगमनपर रोक लगानेके लिए किया जाता है।

(ख) ब्रिटिश भारतीय संघने इस स्थितिको स्वीकार कर लिया है कि उन भारतीयोंको जो शरणार्थी नहीं हैं और जिनमें शैक्षणिक योग्यता नहीं है बाहर ही रखा जाये।

(ग) वास्तवमें उन शरणार्थियोंका भी जो युद्धके पहले उपनिवेशमें थे और जिन्होंने उपनिवेशमें रहनेकी अनुमति प्राप्त करनेके लिए ३ पौंड शुल्क चुकाया था प्रवेश रोका जा रहा है केवल अत्यन्त कठिन परिस्थितियोंमें ही उन्हें आने दिया जाता है।

(घ) ऐसे लोगोंको अनुमतिपत्र-अधिकारी द्वारा अनुमतिपत्र जारी किये जानेसे पहले महीनों तटवर्ती नगरोंमें इन्तजार करना पड़ता है।

(ङ) देशमें प्रवेश करनेके लिए अनुमतिपत्र प्राप्त करनेसे पहले उन्हें अत्यन्त कष्टकर जाँच पड़तालसे गुजरना पड़ता है। फिर वे अँगूठेका निशान लगानेके लिए बुलाये जाते हैं और उनके साथ अन्य सख्तियाँ बरती जाती हैं।

(च) ट्रान्सवालमें प्रवेशकी अनुमति देनेसे पहले उनकी पत्नियोंसे भी माँग की जाती है कि वे लिखित प्रमाणपत्र पेश करें।

¹ यह पत्र [illegible] है [illegible] भेजी गई थी। [illegible]
[illegible] निपटारेके [illegible] ८ मई १९०३ को [illegible] पेश था।

(छ) उनके ११ वर्षसे अधिक आयुके बच्चोंको साथ आनेसे सर्वथा रोक दिया जाता है।

(ज) ऐसे शरणार्थियोंके बारह वर्षसे कम उम्रके बच्चोंको आनेकी अनुमति देनेसे पहले अनुमतिपत्र लेनेके लिए बाध्य किया जाता है। अभी हालमें एक छः वर्षके बच्चेको — बावजूद इसके कि उसके पिताके पंजीयन-प्रमाणपत्रमें यह लिखा था कि उसके दो पुत्र हैं — उसके पितासे जबरन अलग कर फोक्सरस्टमें रोक दिया गया क्योंकि उसके पास अलग अनुमतिपत्र नहीं था।

(झ) केवल तीन मास पूर्व १६ वर्षसे कम आयुके बच्चोंको ट्रान्सवालमें प्रवेशकी स्वतन्त्रता थी बशर्ते कि उनके माता-पिता या यदि उनके माता-पिता मर गये हों तो वे अपने जिन संरक्षकोंके साथ हों वे ट्रान्सवालके अधिवासी हों। अब जैसा कि ऊपर कहा गया है, सहसा भारतीयोंपर नया विनियम लागू कर दिया गया है और केवल उन बच्चोंको जो बारह वर्षसे कम आयुके हैं प्रवेशकी अनुमति दी जाती है। इसका परिणाम है कि १६ वर्षसे कम आयुके वे बहुत-से लड़के जो काफी खर्च करके दक्षिण आफ्रिकामें आये हैं अपने ट्रान्सवालके अधिवासी माता-पिताके पास रहनेके बजाय भारत वापस जानेके लिए बाध्य हैं।

(ञ) करीब तीन मास पूर्व उन भारतीयोंको जो दक्षिण आफ्रिकाके अन्य भागोंमें जानेके लिए ट्रान्सवालसे गुजरना चाहते थे या जो कोई काम करना चाहते थे अनुमतिपत्र खुले आम और बड़ी संख्यामें दिये जाते थे। अब इस तरहके अनुमतिपत्र अत्यधिक जाँच-पड़तालके बाद ही दिये जाते हैं। डेलागोआ-बेके एक प्रसिद्ध भारतीय व्यापारीके पुत्र श्री मुहेमान मंगा[1] जो इस समय इंग्लैंडमें बैरिस्टरी पढ़ रहे हैं, हालमें ही डेलागोआ-बेमें अपने सम्बन्धियोंसे मिलनेके लिए वहाँसे वापस आये थे। वे डर्बनमें उतरे और उन्होंने अनुमतिपत्र प्राप्त करनेके लिए प्रार्थनापत्र दिया ताकि वे ट्रान्सवाल होते हुए डेलागोआ-बे जा सकें। उन्हें अनुमतिपत्र देनेसे इनकार कर दिया गया। उनके मामलेपर इस दृष्टिसे विचार किया गया जैसे कि वे एक ब्रिटिश भारतीय हों। इसलिए वे जल-मार्गसे डेलागोआ-बे गये। वहाँ उन्होंने फिर ट्रान्सवाल सरकारकी मारफत एक अस्थायी अनुमतिपत्र प्राप्त करनेका प्रयत्न किया क्योंकि वे जोहानिसबर्ग और प्रिटोरिया देखना चाहते थे। किन्तु उनका प्रार्थनापत्र अस्वीकार कर दिया गया। इसलिए उन्होंने विचार किया कि उनका जन्म पुर्तगाली भारतमें हुआ है, इसलिए उन्हें पुर्तगाली सरकारसे प्रार्थना करनी चाहिए। उन्होंने ऐसा ही किया और उन्हें तुरन्त अनुमतिपत्र दे दिया गया। इसलिए इसका अर्थ यह हुआ कि एक ब्रिटिश भारतीय चाहे वह किसी भी स्थितिका क्यों न हो ट्रान्सवालसे सही-सलामत नहीं गुजर सकता किन्तु यदि कोई भारतीय विदेशी सत्तासे सम्बन्ध रखता है तो उसे माँगते ही अनुमतिपत्र मिल जाता है।

(ट) ऊपरके कथनसे यह निष्कर्ष निकलता है कि अच्छी स्थितिके भारतीय ट्रान्सवालमें बसनेके लिए अनुमतिपत्र प्राप्त करनेमें असमर्थ हैं, अर्थात् शान्ति-रक्षा अध्यादेशको इस तरह अमलमें लाया जाता है कि जहाँ युद्धके पूर्व कोई भी भारतीय ट्रान्सवालमें प्रवेश करनेको स्वतन्त्र था वहाँ अब सम्राट्के उपनिवेश ट्रान्सवालमें उस भारतीयका भी प्रवेश वर्जित है जो स्वशासित उपनिवेश केप या नेटालकी शैक्षिक परीक्षा उत्तीर्ण करनेमें समर्थ होनेके कारण वहाँ प्रवेश कर सकता है। यहाँ सवाल ब्रिटिश सरकार द्वारा युद्ध-पूर्वका कानून विरासतमें प्राप्त करनेका नहीं है बल्कि एक ऐसे अधिनियमको जानबूझकर अमलमें लानेका है जो फौजी कानूनके ठीक बाद पास किया गया था और जिसका भारतीयोंसे कोई सम्बन्ध नहीं था।

स्वर्गीय श्री मयूबकर आमदने जो दक्षिण आफ्रिकामें सर्वप्रथम बसनेवाले भारतीयोंमें से थे अपने ब्रिटिश भारतीय उत्तराधिकारियोंके लिए जो सम्पत्ति छोड़ी थी उसे १८८५ के कानून ३ के

[1] "शान्ति-रक्षा अनुमतिपत्र अध्यादेश" पृष्ठ २८८-९ भी देखिए।

अन्तर्गत उनके उत्तराधिकारियोंको अपने नाम पंजीयन करानेसे रोक दिया गया है।[1] भारतीयोंके स्वामित्वके सम्बन्धमें कानून इस तरह अमलमें लाया जाता है। यह ध्यान रखना चाहिए कि ट्रान्सवालके वतनी जैसा कि सर्वथा उचित है, जहाँ चाहें, कहीं भी जमीन-जायदादका स्वामित्व प्राप्त करनेका स्वत्व है। केपके रंगदार लोग भी ट्रान्सवालमें अचल सम्पत्ति रखनेका स्वत्व है। पाबन्दी केवल एशियाइयोंपर लगाई गई है।

युद्धके पहले भारतीय ट्रान्सवालकी किसी भी रेल-सेवाके उपयोगसे वंचित नहीं थे। अब रेल-मार्ग निकाय (रेलवे बोर्ड) ने स्टेशन मास्टरोंको सूचनाएँ भेजी हैं कि वे प्रिटोरिया और जोहानिसबर्गके बीच चलनेवाली एक्सप्रेस गाड़ीके लिए भारतीयों तथा रंगदार लोगोंको टिकट न दें। इस प्रकार भारतीय व्यापारियोंके लिए भारी असुविधा खड़ी कर दी गई है। बहुत अधिक सम्भव है कि अन्ततः राहत मिलनी ही किन्तु यह सूचना बताती है कि सरकारका झुकाव किस ओर है।

प्रिटोरियाके समान ही जोहानिसबर्गमें ब्रिटिश भारतीय तथा रंगदार लोग नगरपालिकाकी ट्रामगाड़ियोंका उपयोग करनेमें असमर्थ हैं।

नेटालमें स्थिति संक्षेपमें इस प्रकार है : विक्रेता-परवाना अधिनियम सबसे अधिक रगड़की जड़ है। मुद्दत बसे हुए भी दादा उस्मान नामक एक ब्रिटिश भारतीय व्यापारीकी युद्धके पहले फ्राइहीडमें जब वह ट्रान्सवालका एक भाग था एक दूकान थी [और] वे वहाँ बिना किसी रुकावटके व्यापार करते थे। जब फ्राइहीड नेटालमें मिलाया गया तब वहाँके एशियाई-विरोधी कानूनोंकी विरासत भी नेटालने पाई। इस प्रकार फ्राइहीडमें १८८५ का कानून ३ तथा नेटाल विक्रेता परवाना अधिनियम दोनों ही लागू हैं। इनके अन्तर्गत कार्रवाई करके भी दादा उस्मानका परवाना छीन लिया गया है और उनका फ्राइहीडका व्यापार बिलकुल ठप हो गया है। इस प्रकारकी भीषण कठोरताका एक मामला लेडीस्मिथ जिलेमें भी हुआ। वहाँ कासिम मुहम्मद नामक एक व्यक्ति एक कोठी (फर्म) में कुछ समयसे व्यापार कर रहा है। गत वर्ष उसके नौकरने रविवासरीय व्यापार कानूनका उल्लंघन किया था। उसने पड़ोसके एक दूकानदार द्वारा भेजे गये काली ग्राहकोंको एक साबुनकी टिकिया और चीनी बेची थी। यह साबित हो गया था कि दूकानदार खुद मैरहाजिर था। इस अपराधके कारण इस वर्षका उसका परवाना नया नहीं किया गया। अपील निकायने परवाना-अधिकारीके निर्णयको बहाल रखा। निकायका कहना था कि उसने एक गोरेके मामलेमें भिन्न सिद्धान्तका अवलम्बन किया था उन्हींके अनुसार परवाना-अधिकारीने फैसला दिया है। किन्तु यह सत्य नहीं है। उस गोरेके बारेमें यह पाया गया था कि उसने अपने उपकिरायेदारोंको शराबका व्यापार करनेकी अनुमति दी थी और यह शराब वतनियोंको बेची जाती थी। उसपर यह इल्जाम भी लगाया गया था कि उसने अपने अहातेमें अफीम बेची थी। गोरे व्यक्तिने जानबूझकर उपर्युक्त कानूनका जो उल्लंघन किया था उसके मुकाबले रविवासरीय व्यापार कानूनका प्राविधिक उल्लंघन वास्तवमें कानून-भंग ही नहीं था।

तीसरा मामला भी डुंडीमलका है। उन्हें गतवर्ष एक स्थानका परवाना दूसरे स्थानके लिए बदलनेसे इनकार कर दिया गया था।[6] विक्रेता-परवाना अधिनियमके अन्तर्गत बीसियों मामलोंमें

1. देखिए [illegible] पृष्ठ २४०-१।
2. देखिए "[illegible]" पृष्ठ १९९।
3. देखिए "एक अजीब मामला।" पृष्ठ १९४-५।
4. देखिए "[illegible]" पृष्ठ २५६-८।
5. देखिए "[illegible]" पृष्ठ ५४०-८
6. देखिए खण्ड ४, पृष्ठ ३०५-०६।

जो-कुछ किया गया उसके ये तीन उदाहरण भर हैं। श्री चेम्बरलेनने उक्त कानूनके अन्तर्गत होनेवाली क्रूरताओंके बारेमें नेटाल सरकारसे निवेदन किया था। उसका परिणाम यह हुआ कि नेटाल सरकारने हिदायतें निकालीं कि कानून कड़ाईके साथ लागू न किया जाये नहीं तो इसमें परिवर्तन कर दिया जायेगा। ऊपर जो उदाहरण दिये गये हैं उनसे बढ़कर क्रूरताके उदाहरण देना सम्भव नहीं है। ब्रिटिश भारतीय तो केवल इतना ही चाहते हैं कि परवाना-अधिकारियों तथा परवाना-निकायोंके जिनमें मुख्यतया व्यापारी ही हैं, निर्णयोंपर सर्वोच्च न्यायालयको विचार करनेका फिरसे अधिकार दे दिया जाये।

प्रवासी-प्रतिबन्धक अधिनियमके अन्तर्गत अब जो नियम बनाये गये हैं उनके द्वारा प्रत्येक अधिवासीको जो अधिवासी-प्रमाणपत्रका हकदार है, प्रमाणपत्र प्राप्त करनेके लिए १ पौंडका शुल्क देना पड़ेगा। जो भारतीय नेटालकी यात्रा करना चाहते हैं उनके अस्थायी पासोंपर[1] तथा जो भारतीय भारतको जानेवाला जहाज पकड़नेके लिए नेटालसे गुजरते हैं उन्हें वहाँसे गुजरनेका अधिकार देनेके लिए नौकारोहण पासोंपर इसी तरहका शुल्क लागू किया गया है। यह कर लगानेकी एक अप्रत्यक्ष प्रणाली है और इससे गरीब भारतीयोंको अत्यधिक असुविधा और हानियाँ उठानी पड़ती हैं।

मेरा खयाल है कि भारतीय संसदीय समितिको ये मामले बार-बार कांग्रेस तथा भारतीय मन्त्रियोंके सामने रखने चाहिए।

आपका विश्वस्त
मो० क० गांधी

मूल अंग्रेजी प्रतिकी फोटो-नकलसे।
सौजन्य : भारत सेवक समिति।

२९२ पत्र : छगनलाल गांधीको

[जोहानिसबर्ग
अप्रैल ११, १९०६][2]

चि० छगनलाल

तुमको थोड़ी गुजराती सामग्री और विज्ञापन आदि भेज रहा हूँ। यहाँतक बने सारे विज्ञापन इसी बार आ जायें। श्री वेस्टसे ऐसा करनेको कहना।

पिछली बार जितना बड़ा कारमगका था उतना ही मालिक हैंदका छापना। मैंने उनके विज्ञापनके ऊपर जो निशान दिया है, उसका ध्यान रखना। जीवनजी को १ इंच देना। दूसरोंके बारेमें कहने लायक कुछ नहीं है।

श्री हरिलाल ठाकुरको अपने साथ लाऊँगा। सामग्री आखिरी गाड़ीसे भेजूँगा।

मोहनदासके आशीर्वाद

१. देखिए "पत्र : [illegible]" पृष्ठ २२९-३।

२. मूल प्रतिमें तारीख अप्रैल २५, १९०६ है। यह स्पष्ट भ्रान्ति लगती है, क्योंकि इसमें मालिक हैंदके लिए विज्ञापनका उल्लेख हुआ है, वह २१-४-१९०६ के इंडियन ओपिनियनमें प्रकाशित हुआ था। यह निश्चय ही प्रायः एक सप्ताह पूर्व सम्भवतः ११ अप्रैलको, जिस दिन गांधीजी फीनिक्स जिले रवाना होनेवाले थे, लिखा गया होगा। देखिए "पत्र : छगनलाल गांधीको" पृष्ठ २४१।

[पुनश्च]

भाई सुलेमानका ठीक प्रबन्ध करना। शेष गुजराती सामग्री मुझे नहीं देनी पड़ेगी। दूसरा उपाय नहीं है।

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल गुजराती प्रतिकी फोटो-नकल (एस० एन० ४९५१) से।

२९३. एक मुश्किल मामला

पिछले १ मार्चको लेडीस्मिथमें परवाना सम्बन्धी जिस मुकदमेकी अपीलकी सुनवाई हुई थी उसका सार हमने पिछले सप्ताह छापा था। क्लिप रिवर डिवीजनमें विटेक्सेफोंटीन नामक फार्मपर पिछले तीन सालसे एक भारतीय व्यापारी व्यापार करता था। बादमें बर्जेट ऐंड कम्पनी नामसे एक यूरोपीय पेढ़ीने उसके निकट ही अपनी दुकान खोल ली। 'नेटाल विटनेस' में छपी खबरसे मालूम पड़ता है कि पेढ़ीके साझेदारोंमें सार्जेन्ट वैटरबर्न भी हैं, जो उस डिवीजनका सरकारी अभियोक्ता है। पुलिसने भारतीय व्यापारीकी अनुपस्थितिमें उसके एक कर्मचारीको फाँस लिया और रविवारको व्यापार करनेके अपराधमें सजा दे दी। उसने साबुनकी एक टिकिया और कुछ चीनी बेची थी। भारतीय दुकानदारको जब लौटनेपर यह मालूम हुआ कि उसके कर्मचारीने रविवारको व्यापार करनेका अपराध किया है तो उसने उसको बर्खास्त कर दिया। जब उस दुकानके परवानेके नवीनीकरणका समय आया तो परवाना-अधिकारीके सामने बर्जेट ऐंड कम्पनीने उसको परवाने देनेके विरुद्ध इस बिनापर उजरदारी की कि उसने रविवासरीय कानूनका उल्लंघन किया है। परवाना-अधिकारीने इस ऐतराजको मान लिया और परवाना देनेसे इनकार कर दिया। बेचारे भारतीय दुकानदारने उसके निर्णयके विरुद्ध परवाना निकायके सामने अपील की परन्तु उसकी अपील उसके वकीलकी जोरदार पैरवीके बावजूद खारिज कर दी गई और निकायने फैसला देते हुए कहा कि परवाना-अधिकारीने ऐसा इसलिए किया कि दुकानदारके कर्मचारीने रविवासरीय नियमोंका उल्लंघन किया था और निकायने इसी तरहके एक दूसरे मामलेका हवाला दिया जिसमें परवाने के लिए दिया गया एक यूरोपीयका प्रार्थनापत्र अस्वीकार किया जा चुका था। परन्तु हमारा खयाल तो यह है कि निकायने जिस यूरोपीयके मामलेकी चर्चा की है उसका इस मामलेसे कोई सम्बन्ध नहीं है, क्योंकि इसमें कुछ बुनियादी बातें नहीं मिलतीं। इस मामलेमें भारतीय दुकानदारने खुद अपराध नहीं किया। उसने गलतीको दुरुस्त करनेका एकमात्र सम्भव उपाय भी किया और आखिर यह बात तो एक मामूली आदमीको भी साफ दिखाई देती है कि सारा ऐतराज एक ऐसी प्रतिद्वंद्वी व्यापारी पेढ़ीने उठाया जिसका भारतीय दुकानको हटानेमें स्वार्थ है। फिर यह तथ्य भी कुछ कम महत्त्वपूर्ण नहीं है कि उक्त पेढ़ीके साझेदारोंमें लेडीस्मिथका सरकारी अभियोक्ता भी है और उसीने भारतीय दुकानदारके कर्मचारीपर अभियोगका संचालन भी किया था। अपीलकर्ता भारतीय दुकानदारके वकीलने निकायके सामने यह ऐतराज उठाया था कि बर्जेट ऐंड कम्पनी निकायके सामने इस मामलेमें हस्तक्षेप नहीं कर सकती। दरअसल यह दुःखकी बात है कि निकायने अपीलको मंजूर नहीं किया। हमें यह खयाल अवश्य ही आता है कि अपने फैसलेसे निकायने इस तरहके विरोधको जैसा कि इस मामलेमें किया गया है, उत्तेजन ही दिया है। भारतीय दुकानदारका नौकर कानूनकी धाराको भंग करनेपर पहले ही दण्डित किया जा चुका है। अब उसी अपराधमें वह स्वयं परवानेसे वंचित कर दिया गया है। यह सजा कतई अपराधके अनुरूप नहीं है। परन्तु इस मामलेसे तो यही सिद्ध होता है कि नेटालका विक्रेता-

परवाना अधिनियम कितना स्वेच्छापूर्ण और अन्यायपूर्ण है। भारतीय उच्चायोगको दरख्वास्तमें जो तर्क उठाये गये थे उनकी इस लेवीस्मिथके मामलेसे पुष्टि हो गई है।[1] जबतक सर्वोच्च न्यायालयमें अपीलका अधिकार फिर नहीं दिया जाता तबतक विक्रेता-परवाना अधिनियमके अन्तर्गत किसीको भी न्याय मिलनेकी संभावना नहीं है।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन १४-४-१९१

२१४ ट्रान्सवाल अनुमतिपत्र अध्यादेश

शान्ति-रक्षा अध्यादेश जैसा कि उसके नामसे ही प्रकट होता है, ऐसे समय पास किया गया जब ट्रान्सवालकी सीमाके अन्दर शान्तिको खतरा था। परन्तु वह अभीसे ब्रिटिश भारतीयोंके सिरपर सदा नंगी तलवारकी तरह झूल रहा है, जो किसी भी समय गिर सकती है। हमारे ट्रान्सवालके संवाददाताने हमारे पाठकोंका ध्यान एक ताजी घटनाकी ओर आकर्षित किया है।[2] ऐसा जान पड़ता है कि डेलागोआ-बेके एक बहुत प्रसिद्ध भारतीयके पुत्र श्री सुलेमान मंगा कुछ वर्षोंसे इंग्लैंडमें बैरिस्टरीकी शिक्षा पा रहे थे। वे अब बैरिस्टर हो गये हैं और अभी इंग्लैंडसे डेलागोआ-बेमें अपने रिश्तेदारोंसे मिलनेके लिए आये हैं। वे डर्बनमें उतरनेके बाद डेलागोआ-बे जाते हुए ट्रान्सवालसे गुजरना चाहते थे। इसलिए उन्होंने जोहानिसबर्गके एक वकीलको अपने लिए अनुमतिपत्रकी दरख्वास्त देनेकी हिदायत की। प्रतीत होता है कि उनके वकील श्री गाँधीने यह मान लिया कि वे ब्रिटिश भारतीय हैं, और दरख्वास्त दे दी। कुछ दिनोंके विलम्बके पश्चात् उनके पास उत्तर आया कि उनके मुवक्किलको अस्थायी अनुमतिपत्र नहीं दिया जा सकता। तब उन्होंने उपनिवेश-सचिवको दरख्वास्त दी और वहाँसे भी उनको यही उत्तर मिला। उसमें दरख्वास्तकी अस्वीकृतिका कोई कारण नहीं बताया गया था। तब श्री मंगा डेलागोआ-बेके एक जहाजपर सवार हो गये। वे युवा और उत्साही थे एवं इंग्लैंडसे ताजे लौटे थे इसलिए इस प्रकार अपनी दरख्वास्तकी अस्वीकृति बर्दाश्त न कर सकते थे। अपने थोड़े दिनोंके प्रवासमें वे ट्रान्सवालकी राजधानी और स्वर्ण खान-केन्द्रको देखना चाहते थे। इसलिए उन्होंने पुनः अन्यत्रसे इमहरर एक्तिगत् संरक्षको दरख्वास्त दी परन्तु उनको वहाँसे भी वही जवाब दिया गया जो उनके वकीलको दिया गया था। तब वस्तुतः पुर्तगाली प्रजा होनेके कारण उन्होंने पुन अपनी सरकारसे अपील की और उसने अपने प्रभावशाली शीघ्र सहायता की और श्री मंगा महामहिम सम्राटके ब्रिटिश वाणिज्य-दूतका अनुमतिपत्र लेकर ट्रान्सवालमें प्रविष्ट हो गये।

यह सरकारको प्राप्त निरंकुश सत्ताके बहुत ही स्पष्ट दुरुपयोगका एक नमूना है। यहाँ हम एक जापानी सज्जन श्री नोमूराके एक ऐसे ही मामलेको याद कर सकते हैं। उक्त सज्जनने ट्रान्सवालमें अपना व्यापारिक माल बेचनेकी दृष्टिसे एक अस्थायी अनुमतिपत्रके लिए दरख्वास्त दी। मुख्य अनुमतिपत्र-सचिवने उसे अस्वीकार कर दिया। प्रत्यक्ष है, उन्होंने अपने मनमें सोचा कि जब एक ब्रिटिश प्रजाजनको ऐसी सहूलियतें प्राप्त नहीं हैं, तब वे श्री नोमूराको ही कैसे दे सकते हैं? मामलेपर सार्वजनिक रूपसे चर्चा की गई और गान्सवाल लीडर ने श्री नोमूराके बारे

१. देखिए “[illegible]” पृष्ठ २५८-९।

२. देखिए “[illegible]” पृष्ठ २७७।

व्यापारियोंके लिए न्यायपूर्ण नहीं है और परवाना-अधिकारियोंके लिए तो वह और भी कम न्यायपूर्ण है। हम मनमाने व्यापारिक अधिकार नहीं माँगते पर हम यह जरूर चाहते हैं कि प्रत्येक व्यापारिक प्रार्थनापत्रपर उसके गुणावगुणके अनुसार विचार किया जाये और जहाँ ऐसे प्रार्थनापत्रके विरुद्ध पूर्वग्रहके सिवा और कोई कारण न दिया जा सके वहाँ उसे स्वीकार किया जाये। हमारे सामने जो मामला है वह और भी कठिन हो गया है क्योंकि प्रार्थीको दुधारी निर्योग्यतासे संघर्ष करना पड़ रहा है। ब्रिटिश भारतीय होनेके कारण उनको ट्रान्सवालमें नेटाल कानूनी सम्पूर्ण निर्योग्यताओंको झेलना पड़ता है और एक भी सुविधा नहीं मिलती क्योंकि ट्रान्सवालके नेटालमें मिला दिये जानेपर भी वहाँ ट्रान्सवालका १८८५ का कानून ३ जारी है। यह स्थिति बहुत ही असंगत है, और आशा है कि लॉर्ड एलगिन प्रार्थीका पर्याप्त न्याय दिलायेंगे।

उपनिवेशके घरेलू मामलोंमें हस्तक्षेपका प्रश्न स्वभावतः ही खड़ा किया जायेगा। पर जो लोग प्रातिनिधिक संस्थाओं द्वारा शासित उपनिवेशमें सर्वथा प्रतिनिधित्वहीन हैं उनके मामलेमें हस्तक्षेप न करनेका सिद्धान्त ठहर नहीं सकता। नेटालको स्वशासनका अधिकार इस अनुचित मान्यताके आधारपर प्राप्त है कि वह अपना शासन करनेमें समर्थ है। पर जब उपनिवेशमें बसनेवाली प्रजाके एक वर्गको जरा भी न्याय नहीं मिलता तब वहाँ स्वशासन नहींके बराबर ही समझना चाहिए। स्वशासनका अर्थ है आत्म-नियन्त्रण यदि विशेषाधिकार प्राप्त होते हैं तो उनके साथ जिम्मेवारियाँ भी अवश्य उठानी चाहिए और अगर बिना जिम्मेवारियोंका पालन किये इन विशेषाधिकारोंका पूरी सीमा तक उपभोग किया जाता है तो जिस सत्ताने उन्हें प्रदान किया है उसे निश्चय ही यह प्रबन्ध करनेका अधिकार है कि उन जिम्मेवारियोंका समुचित रूपसे पालन किया जाये।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन १४-४-१९०६

२९६ परवाना सम्बन्धी विज्ञप्ति

कहा जाता है कि सरकारने व्यापारी-परवाना अधिकारियोंके मार्ग-दर्शनके लिए कुछ नियम बनाये हैं। इन नियमोंकी ओर एक गुजराती संवाददाताने हमारा ध्यान आकर्षित किया है। हमारे संवाददाताके कथनानुसार अधिकारियोंको आदेश दिये गये हैं कि वे आवेदक भारतीयोंसे परवाने जारी करते समय परवानोंके दूसरे प्रतिपर्णोंपर उनकी अँगुलियों व अँगूठेकी निशानी और हस्ताक्षर ले लिया करें। हम समझते हैं कि ऐसा शिनाख्तकी गरजसे किया गया है। अगर हमारी जानकारी ठीक है तो हमारे मनमें पहला सवाल यह उठता है कि यह नई निर्योग्यता सिर्फ भारतीयोंपर ही क्यों लगाई गई है? इस मामलेमें शिनाख्तकी क्या जरूरत है? क्या इसका अर्थ यह है कि नेटाल-सरकार वर्तमान भारतीय व्यापारियोंके हटनेके बाद भारतीयोंका व्यापार जारी रहने देना नहीं चाहती? दूसरे शब्दोंमें क्या वह परवाना-अधिकारियोंको यह बताना चाहती है कि भारतीय व्यवसाय उनके वर्तमान मालिकोंके साथ ही खत्म हो जायेंगे? यदि यह बात है तो इसका अभिप्राय यह है कि अभी जो दिखते हुए भारतीय व्यापारियोंको अपना अपना व्यवसाय बचानेके बजाय लाचार होकर अपना माल ही बेच डालना होगा। फिर सरकारको इस प्रकार रास्ता पार लेकर कानूनके अमलमें हस्तक्षेप क्यों करना चाहिए? यदि परवाना-अधिकारियोंको दूसरे सवाल छोड़कर केवल न्यायकी दृष्टिसे अपने विवेकका उपयोग

अखबारोंमें चर्चा चली थी कि अगर नियमित लड़ाई छिड़ जाये तो क्या भारतीय उसमें हाथ बँटायेंगे? हम अपने अंग्रेजी लेखमें लिख चुके हैं कि भारतके लोग हाथ बँटानेको तैयार हैं। और हम मानते हैं कि जो काम हमने बोअर-युद्धमें किया था वैसा ही इस समय भी करना जरूरी है। यानी अगर सरकार चाहे तो हमें आहत-सहायकोंकी टुकड़ी खड़ी करनी चाहिए। यदि सरकार हमेशाके लिए स्वयंसेवा का प्रशिक्षण देना चाहे, तो वह भी हमें स्वीकार करना चाहिए।

स्वार्थकी दृष्टिसे देखनेपर भी यह कदम मुनासिब माना जायेगा। बारह बस्तियोंके किस्सोंसे पता चलता है कि हमें जो-कुछ भी न्याय प्राप्त करना है सो स्थानीय सरकारसे ही। उसे प्राप्त करनेके लिए, पहला काम यह है कि हम अपने कर्तव्यका पालन करें। इस देशकी साधारण प्रजा अपनेको लड़ाईके लिए तैयार रखती है तो हमें भी उसमें हाथ बँटाना चाहिए।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, १४-४-१९०६

२९८. फेरीवालोंपर खतरा

डर्बनकी नगर-परिषदने यह प्रस्ताव पास किया है कि परवाने देनेवाले अधिकारी फेरीवालोंको नया परवाना न दें और जिनके पास परवाने हैं जहाँतक बने उनकी संख्या भी कम की जाये क्योंकि फेरीवालोंके व्यापारसे दूकानदारोंको नुकसान पहुँचता है। अबतक नगर-परिषद गुप्त सिफारिश किया करती थी। अब यह खुला हुक्म देती है कि अधिकारीको क्या करना चाहिए। मतलब यह हुआ कि अब नगर-परिषद ही जूरी और निचली अदालतोंके फैसले देनेवाली बन गई है।

फिर ऐसा हुक्म जारी करनेका मतलब यह होता है कि लोगोंकी मुसीबत भले ही बढ़ानी पड़े दूकानदारोंको लाभ होना ही चाहिए। ऐसे कानूनके खिलाफ बहुत ही कड़ी लड़ाई लड़ी जायेगी तभी कुछ राहत मिलेगी।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, १४-४-१९०६

१ देखिए "भारतीय स्वयंसेवक" पृष्ठ २९१-२।

२९९. लेडीस्मिथ परवाना निकाय

हम उस मामलेके बारेमें लिख ही चुके हैं जिसमें हमें ऐसा लगा कि एक निर्दोष भारतीय व्यापारीके साथ घोर अन्याय किया गया है।[1] वकील महाशयने अपने फैसलेके समर्थनमें जिस मैकिलिफनके मामलेका उल्लेख किया था उसकी बहुत कुछ जानकारी अब हमें प्राप्त हो गई है। हमारे सामने उस मुकदमेके मूल कागजातकी सही नकल मौजूद है। हमें उससे पता लगता है कि मैकिलिफनके परवानेको नया करनेसे इनकार करनेके कारण बहुत मजबूत थे और वे इस प्रकार हैं:

१. क्योंकि प्रार्थीकी जमीनपर बने हुए एक घरमें परवानेके बिना शराब बेचते हुए एक वतनी मर्द और औरत पकड़े गये थे और १९ अक्टूबर १९०३को दण्डित किये गए थे — जब कि उसका परवाना सिर्फ फुटकर चीजोंकी दूकानका ही था। उसमें बियरके कमसे-कम तीन बड़े-बड़े पीपे पाये गये थे। इस गैर-कानूनी व्यापारकी जानकारी प्रार्थीको अवश्य रही होगी।

२. क्योंकि इसी जगह प्रार्थीको ७ नवम्बर १९०३को शराब बेचनेके अपराधमें १५ जनवरी १९०४को सजा दी गई थी। यह व्यापार कुछ समयसे चल रहा था जिससे इलेंड्सलागटेकी छावनीके भारतीयोंकी मानसिक शक्तिका भयानक ह्रास हुआ था और उन्हें दूसरे नुकसान भी पहुँचे थे। इसके अलावा कैम्प मैनेजरको तबतक लगातार चिन्ता बनी रही जबतक उसको अपने नौकरोंकी [illegible] गई बुराईका स्रोत न मिल गया।

इस प्रकार परवानेका उक्त प्रार्थी अवैध ढंगसे बेची जानेवाली शराबसे वतनियोंको प्रत्यक्ष लाभ दिला देनेका और भारतीय गिरमिटियोंको कानूनके विरुद्ध शराब बेचकर बदनाम बनानेका दोषी था। इनमें से हर मामलेमें दोष स्वयं उक्त प्रार्थीका था। इस मामलेसे भारतीय मामलेकी तुलना करना और भारतीयको परवानेसे वंचित करनेके लिए इसको नजीरके रूपमें पेश करना न्याय-व्यभिचार मात्र है। निकायके लिए यह ज्यादा सम्मान और ईमानदारीकी बात होती कि वह असली कारण — रंगभेदको — अपनी अस्वीकृतिका आधार बनाता।

भारतीय व्यापारीने अपने प्रार्थनापत्रके पक्षमें जो प्रमाणपत्र पेश किये थे उनमें से कुछ हमारे पास भी भेजे गए हैं। डर्बनके एक प्रमुख व्यापारीने परवाना अधिकारीको लिखा है "हम उनको एक अत्यन्त सम्माननीय व्यापारी और सच्चा भारतीय और जिलेमें परवाना देने योग्य व्यक्ति समझते हैं।" इसलिए यदि मैकिलिफन अपने चरित्रके कारण निश्चित रूपसे व्यापारी परवानेके अयोग्य था तो यहाँ भारतीयका चरित्र निर्दोष है। लेडीस्मिथके इस गरीब भारतीयपर जो कुछ बीती है वह स्वाभाविक नेटालमें भारतीयोंके लिए कोई असाधारण अनुभव नहीं है। इसलिए हमें विश्वास है कि नेटाल भारतीय कांग्रेस जो भारतीय समाजकी हित-रक्षाके निमित्त सदैव सजग रहती है, इस मामलेको सरकारके ध्यानमें लाने और न्याय प्राप्त करानेसे न चूकेगी।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, १-४-१९०५

१. देखिए "दर्द-भरा मामला", पृष्ठ ३२७-८।

३०० ट्रान्सवालके अनुमतिपत्र

हम श्री मयाके मामलेकी ओर इन स्तम्भोंमें ध्यान आकर्षित कर चुके हैं।[1] आज हम उसीपर अपने सहयोगी 'रैंड डेली मेल' का अभिमत अन्यत्र प्रकाशित कर रहे हैं। इस सम्बन्धमें हमारे सहयोगीने जो बातें कही हैं वे कठोर तो हैं पर बिलकुल उचित हैं। हम लेखकको अपना विश्वास साहसके साथ प्रकट करनेपर बधाई देते हैं।

हमारे जोहानिसबर्गके संवाददाताने अपनी "टिप्पणियों" में एक दूसरे मामलेका जिक्र किया है। उससे ऐसी स्थितिपर प्रकाश पड़ता है जो बिगड़ती ही गई तो ब्रिटिश भारतीय शरणार्थियोंको भी अपनी शिकायत दूर कराना असम्भव-सा हो जायेगा। हमारे संवाददाताने एक प्रतिष्ठित ब्रिटिश भारतीय शरणार्थीके मामलेका जिक्र किया है जिसको अनुमतिपत्र नहीं दिया गया — यद्यपि प्रार्थीने अपना पूर्व निवास साबित करनेके लिए इफरात यूरोपीयोंकी गवाही पेश की थी। जहाँतक हम जानते हैं एक शरणार्थीको पुनः प्रवेशकी अनुमति देनेसे साफ इनकार करनेका यह पहला ही मामला है। इससे भी अधिक गम्भीर बात तो यह है कि जहाँतक भारतीयोंका सवाल है, अनुमतिपत्र अध्यादेशके मामलेमें पिछले कुछ दिनोंसे गोपनीयताका ऐसा तरीका अपनाया जा रहा है। हमारे संवाददाताका कहना है कि श्री मयाके मामलेकी तरह इस मामलेमें भी अनुमतिपत्र-अधिकारीने अपनी अस्वीकृतिके कारण बतानेसे इनकार किया है। फलतः भविष्यमें ब्रिटिश भारतीयोंको कारण सूचित किये बिना ही ट्रान्सवालसे बाहर रखा जायेगा।

और यह सब यहीं खत्म नहीं होता। गुजराती स्तम्भोंमें एक संवाददाताने हमारा ध्यान एक ऐसे मामलेकी ओर आकर्षित किया है जिसमें फोक्सरस्टमें एक ८ सालका बच्चा अपनी मातासे अलग कर दिया गया क्योंकि बच्चेका कोई अनुमतिपत्र नहीं था। हमें ज्ञात हुआ कि अभागे पिताके पंजीकरण पत्रकमें उसके दो पुत्र होनेका उल्लेख था।

हम लॉर्ड सेल्बोर्नका ध्यान भारतीयोंकी गम्भीर स्थितिकी ओर आकर्षित करते हैं। परमश्रेष्ठके वादोंको कार्यरूपमें परिणत करनेका समय आ पहुँचा है। सुनिश्चित पूर्वग्रहोंका आदर किया जाये यह हमारी इच्छा है और इसमें हम किसीसे पीछे नहीं हैं। इसलिए हमने उन एशियाइयोंका आगमन नियमित करना वांछनीय माना है जो पहले ट्रान्सवालमें नहीं रहे हैं। लेकिन प्रिटोरियाके अधिकारी एशियाई-विरोधी दलको खुश करनेके लिए जिस तरह भटक रहे हैं उसका अर्थ है एक बिलकुल ही भिन्न योजना। और यदि वे समझते हैं कि भारतीय अपनी शिकायत दूर करानेका गम्भीर प्रयत्न किये बिना ही अपने निहित अधिकार पैरों तले कुचल जाने देंगे तो वे बड़ी भूल करते हैं।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन २१-४-१९०६

१. देखिए "ट्रान्सवाल अनुमतिपत्र अध्यादेश" पृष्ठ २८८-९।

३०१. डर्बन नगर-परिषद और भारतीय

नेटाल मर्क्युरी लिखता है, डर्बन नगर-परिषदकी परवाना-समितिने “इच्छा प्रकट की है कि परवाना-अधिकारी फेरीके नये परवाने न दें और फेरीके वर्तमान परवानोंमें भी जितनी कमी करना सम्भव हो करें क्योंकि इस वर्गके व्यापारी दूकानदारोंके वैध व्यापारमें हस्तक्षेप करते हैं।” परवाना-समितिकी यह सिफारिश विक्रेता-परवाना अधिनियमके अनुसार किये गये निर्णयोंका परिणाम है। दादा उस्मानके मामलेके फैसले[1] तथा उक्त कानूनके अन्तर्गत दूसरे मामलोंमें जो फैसले हुए हैं उनके कारण नगर-परिषदें अपनी दमन-नीतिमें साहसी बन गई हैं। पहले वे परवाना-अधिकारियोंको गोलमोल सुझाव दिया करती थीं अब खुल्लम-खुल्ला हिदायतें देने लगी हैं। इसलिए यह परवानोंके प्रार्थनापत्रोंपर नगर-परिषदों द्वारा अपने अधिकारियोंको आदेश देने और फिर उन अधिकारियोंके उस निर्णयपर, जो असलमें उन्हींका निर्णय है स्वयं अपील सुननेका प्रश्न है। इस तरह वे परवाना अधिनियमको एक कोरा मजाक बना देंगी। फिर, जिन हिदायतोंका हमने ऊपर जिक्र किया है उनसे साफ जाहिर होता है कि विक्रेता परवाना अधिनियमपर अमल करते समय सामान्य समाजका ध्यान न रखकर केवल दूकानदारोंका ध्यान रखा जाता है। चूँकि उनके व्यापारमें बाधा पड़नेकी सम्भावना है, इसलिए फेरीके नये परवानोंको जारी नहीं करना है और जो वर्तमान फेरीके परवाने हैं उनमें कमी करना है। फेरीवाले एक आवश्यकताकी पूर्ति करते हैं और उन गृहस्थोंके लिए, जिन्हें अपनी सभी वांछित वस्तुएँ अपने दरवाजेपर मिल जाती हैं एक वरदान हैं — यह सब-कुछ नगर-परिषदोंके लिए तबतक अर्थहीन है जबतक कि एक विशेषाधिकार सम्पन्न वर्गका संवर्धन किया जा सकता है। हमारे तर्कपर एतराज किया जा सकता है कि परवाना-समितिके निर्देश सर्व-सामान्य हैं पर यही बात हमारे तर्कके विषयमें भी कही जा सकती है। वह भारतीय और यूरोपीय — दोनों तरहके फेरीवालोंपर लागू होता है। परन्तु वास्तवमें ऐसी नीतिका असर मुख्यतया भारतीयोंको ही सहना होगा क्योंकि फेरी लगाना उनकी अपनी विशेषता है और डर्बनमें ज्यादातर फेरीवाले भारतीय हैं। फिर भी कानूनको लागू करनेमें हम इन ज्यादतियोंका स्वागत करते हैं क्योंकि वे खुद ही अपने पीछे अपना सर्वनाश लायेंगी।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन २१-४-१९०६

1. देखिए “[illegible] और [illegible] बैठकमें” पृष्ठ १५-८।

२०२ म० द० आ० रेल-प्रणालीमें[1] यात्राकी कठिनाइयाँ

क्लार्क्सडॉर्पके एक संवाददाताने हमारे गुजराती स्तम्भोंमें उन कठिनाइयोंका जिक्र किया है जो क्लार्क्सडॉर्प और जोहानिसबर्गके बीच चलनेवाली रेलगाड़ियोंमें यात्रा करते समय भारतीय यात्रियोंको होती हैं। हमारे संवाददाताकी शिकायत है कि भारतीय मुसाफिरोंको फिर चाहे वे किसी भी श्रेणीके क्यों न हों *रेलगाड़ियोंमें तबतक जगह नहीं दी जाती जबतक उनमें* "रंगदार" या "सुरक्षित" तख्तियाँ लगे डिब्बे जुड़े न हों। हमारा संवाददाता आगे कहता है कि अधिकारियोंकी कार्रवाईके परिणामस्वरूप बहुत कम भारतीय मुसाफिर सुख आरामके साथ यात्रा करते हैं। सब गाड़ियोंमें तख्तियाँ नहीं लगी होतीं इसलिए अगर किसी भारतीय मुसाफिरकी कोई खास गाड़ी निकल जाती है और वह दूसरी गाड़ीसे जिसमें सुरक्षित स्थान नहीं है यात्रा करना चाहता है तो वह प्रायः ऐसा करनेमें असमर्थ रहता है। हमारे संवाददाताका कथन है कि ऐसी गाड़ीमें यात्रा एक इसी शर्तपर की जा सकती है कि मुसाफिर पूरे समय बराबर गलियारेमें खड़ा रहे। यह मामूली बात नहीं है। क्योंकि यात्रामें आठ घंटेसे ऊपर लगते हैं। अगर हमारे संवाददाताकी शिकायत सच्ची है तो यह स्पष्ट है कि रंगदार मुसाफिरोंके आरामकी तरफ काफी ध्यान नहीं दिया जाता।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन २१-४-१९०६

२०३ वीसुवियसका ज्वालामुखी

इटलीमें वीसुवियसका जो ज्वालामुखी फूट रहा है वह हमें कुदरतकी ताकतका भान कराता है, और यह सूचित करता है कि हमें पलभर भी अपनी जिन्दगीका भरोसा नहीं करना चाहिए। फ्रान्सकी कूरियर खानकी हालकी दुर्घटना भी जिसमें अनेक व्यक्ति जिन्दा दफन हो गये हमें इसी सत्यका साक्षात्कार कराती है। लेकिन खानकी दुर्घटनाके बारेमें लोग इंजीनियरोंका दोष निकाल सकते हैं। और यह सोचकर अपनेको बहला सकते हैं कि अमुक सावधानी रखी जाती तो जो लोग दबकर मरे, वे न मर पाते। ज्वालामुखीके विषयमें कोई ऐसी बात नहीं कह सकते। किन्तु इस समय इस विषयमें हम अधिक कहना नहीं चाहते। भारतसे दूर आये हुए लोगोंको ऐसे विचारोंका पूरा भान हो सकेगा यह मानना तो बेकार है। लेकिन इस ज्वालामुखीके सुलगते समय एक वैज्ञानिकने जिस बहादुरीका परिचय दिया उसकी ओर हम पाठकोंका ध्यान खींचना चाहते हैं। ज्वालामुखीके पास ही हवाकी गतिविधि मापनेका एक केन्द्र है। प्रोफेसर मेटमूसी वहाँ रहते हैं। यह जगह बड़े खतरेकी है। पर्वतसे निकलनेवाला लावा उस जगहको किसी भी समय जमींदोज कर सकता है। फिर भी प्रोफेसर मेट्यूसीने अपनी जगह नहीं छोड़ी और अपने स्थानपर बैठे-बैठे वे ज्वालामुखीके समाचार नेपल्स भेजते रहते हैं। इस प्रकार खतरेकी स्थितिमें बैठे रहना कोई मामूली बहादुरी नहीं है। यहाँ

१ सेंट्रल साउथ आफ्रिकन रेलवे।

रहनेके लिए कोई उन्हें विवश नहीं कर रहा है। अगर अपने जीवनकी रक्षाके लिए हजारों लोगोंकी तरह वे भी अपनी जगह छोड़कर भाग खड़े हों तो कोई उन्हें कुछ कहनेवाला नहीं है। फिर भी उन्होंने वहाँसे हटनेसे इनकार कर दिया है। जब दक्षिण आफ्रिकामें अथवा भारतमें ऐसा करनेवाले भारतीय बड़ी संख्यामें पैदा होंगे तब हमारे कष्टोंकी अवधि बहुत लम्बी नहीं रहेगी।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन २१-४-१९०६

३०४ विलायत जानेवाला भारतीय शिष्टमण्डल

नेटाल भारतीय कांग्रेस द्वारा स्वीकृत प्रस्ताव हम पिछले हफ्ते छाप चुके हैं। कांग्रेस भवन खचाखच भरा था और लोग बड़ा उत्साह दिखा रहे थे। कांग्रेसके कार्यकर्ताओंके लिए यह गौरवकी बात है। आजकल नया उदारदलीय (लिबरल) मन्त्रिमण्डल शासन कर रहा है। अपने दुःखकी कहानी सुनानेके लिए उसके पास जाना बहुत अच्छी बात है। लेकिन हमें लगता है कि यह शिष्टमण्डल जो आयोग यहाँ आनेवाला है उसके आ जानेके बाद जा सकता है। दूसरे, अगर शिष्टमण्डल जाता है तो हम जानते हैं कि कमसे-कम तीन व्यक्तियोंका जाना जरूरी है। इससे वजन पड़ेगा और मन्त्रिमण्डल ठीकसे बात सुनेगा। ऐसे काम बिना पैसेके नहीं हो सकते। इसमें कुछ लोगोंकी मदद और काफी पैसा खर्च करनेकी जरूरत है। इस सारे कामके लिए समूचे दक्षिण आफ्रिकाके भारतीय मदद करें तभी कुछ हो सकता है।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन २१-४-१९०६

३०५ जहाजसे नेटालमें उतरनेवाले भारतीयोंको सूचना

हम प्रायः देखते हैं कि हजारों भारतीयोंको जहाजसे डर्बन बन्दरगाहपर उतरनेमें बड़ी कठिनाईका सामना करना पड़ता है। इस सम्बन्धकी कुछ कठिनाइयाँ लोग आसानीसे दूर कर सकें इस विचारसे हम नीचे लिखी सिफारिशें करते हैं :

कानूनन जो मनुष्य नेटालका निवासी है, उसकी स्त्रीको आनेमें जरा भी अड़चन नहीं होनी चाहिए। लेकिन प्रवासी अधिकारी किसी स्त्रीको तभी उतरने देता है, जब वह उस निवासीके साथ अपना विवाहका कानूनी सबूत पेश कर दे। इसलिए जिसकी स्त्री आनेवाली हो उसे पहलेसे हलफनामा लिखकर उसपर प्रवासी-अधिकारीके हस्ताक्षर प्राप्त करके तैयार रखना चाहिए। ऐसा करनेसे स्त्रीको जहाजके आते ही उतारा जा सकेगा।

यही कार्रवाई बच्चोंके लिए भी करनी चाहिए। हलफनामा दाखिल करनेवाले पिताको याद रखना चाहिए कि लड़के या लड़कीकी उमर सोलह सालसे कम होनी चाहिए। लड़केकी अथवा लड़कीकी उमर इतनी है इस आशयका हलफनामा दाखिल करा लेना ही काफी नहीं माना जाता। बल्कि उस उमरको मानना या न मानना प्रवासी-अधिकारीपर निर्भर करता है। अतएव अगर दिखनेमें ही लड़के या लड़कीकी उम्र १६ सालसे ज्यादा लगती हो, तो हलफ-

मामा करानेके बाद भी अड़चन उपस्थित हो सकती है। और अगर दोनोंमें से एक भी विवाहित हो तो १६ सालसे कम उमर होनेपर भी माता-पिताके हकके आधारपर वह बालक हकदार नहीं बनता।

नेटालका निवासी खुद आना चाहे और उसके पास अधिवासी प्रमाणपत्र न हो तो उसे भी तकलीफ उठानी पड़ती है। इसके लिए अधिकारीके सामने पहलेसे ही पक्के सबूत पेश करने पड़ते हैं। तिसपर भी ऐसा मनुष्य तुरन्त उतर सके इसका तो एक यही उपाय है कि वह अमानतके १ पौंड जमा करके उतरे, और बादमें सबूत पेश करे अथवा १ पौंडका अभ्यागत पास लेकर उतरे और बादमें सबूत दे। १ पौंड जमा करानेपर सरकारको एक पौंड शुल्क नहीं देना पड़ता। लेकिन १ पौंडका पास लेनेके लिए नये नियमके अनुसार एक पौंडका शुल्क देना जरूरी है।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन २१-४-१९११

३०६. जोहानिसबर्गकी चिट्ठी

जोहानिसबर्ग
अप्रैल २१, १९११

मलायी बस्ती सम्बन्धी शिष्टमण्डल

मैं पिछले हफ्ते कह चुका हूँ कि मलायी बस्तीके बारेमें सर रिचर्ड सॉलोमनके[1] पास जो शिष्टमण्डल गया था उसकी जानकारी दूँगा सो अब दे रहा हूँ।

श्री हाजी वजीरअली सर रिचर्डसे मिले और उन्होंने नीचे लिखी हकीकत पेश की

बोअर सरकारने मलायी लोगोंको जमीन दी तब उन्होंने उसे सुधार कर तैयार किया और जब उन्होंने घर बनानेके लिए अर्जी दी तब बोअर सरकारने उन्हें बिना किसी शर्तके घर बनाने दिये। नतीजा यह हुआ कि मलायी बस्तीमें कई अच्छे और पक्के घर बन गये हैं। साथ ही वहाँके निवासियोंने जमीन सुधारी है और आसपास बस्ती बढ़ी है। जब मलायी बस्तीका स्थान निश्चित हुआ था उस समय उसके आस-पास गोरे बढ़ रहे थे। किन्तु उस समय उन्होंने कोई आपत्ति नहीं की। यद्यपि बस्तीके निवासियोंने अपनी जमीनोंको कई बरस पहले दुरुस्त कर लिया था फिर भी उनको कोई पट्टा नहीं दिया गया है। पिछले सितम्बर महीनेमें इस आशयका एक कानून पास हुआ है कि बस्तीका स्वामित्व जोहानिसबर्गकी नगरपालिकाको सौंप दिया जाये। दूसरी तरफ, सरकार फीडडॉर्पमें रहनेवाले इन लोगोंको निश्चित अधिकार देना चाहती है। सम्भव है कि नगरपालिकाको मलायी बस्ती सौंपनेका परिणाम बस्तीके निवासियोंके हकमें बहुत बुरा उतरे।

जब इन लोगोंको हक दिये जाते हैं तब मलायी बस्तीके निवासियोंको, जो हमेशा वफादार रहे हैं ये हक मिलने ही चाहिए।

अगर मलायी बस्तीके लोगोंको स्थायी पट्टा दिया जाये तो अनुमान किया जा सकता है कि वे जमीनको और भी सुधारेंगे और उसपर अधिक सुन्दर मकान बनायेंगे।

[1] ट्रान्सवालके स्थानापन्न लेफ्टिनेंट गवर्नर।

इस हकीकतको सुनकर सर रिचर्डने वचन दिया कि वे इस मामलेकी ठीक-ठीक जाँच करायेंगे और बादमें जवाब भेजेंगे। उन्होंने सद्भावना प्रकट की है, पर मालूम होता है कि आजकल सरकारके पास सद्भावनाकी विपुलता हो गई है, क्योंकि श्री विन्स्टन चर्चिलने भी भावना तो अच्छी ही प्रकट की है। किन्तु वे महानुभाव क्या करेंगे सो तो वे ही जानें।

अनुमतिपत्रों सम्बन्धी हालत जैसी थी वैसी ही है। यहाँके अखबार 'रैंड डेली मेल' में भी नगाके मुकदमेके बारेमें बहुत अच्छी टीका छपी है। उसने दो अग्रलेख लिखे हैं। माना जा सकता है कि अनुमतिपत्र-कार्यालयपर उसका असर धीरे-धीरे होगा।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन २८-४-१९०६

३०७ 'इंडियन ओपिनियन' के बारेमें

इंडियन ओपिनियनके भविष्यके बारेमें विचार करनेके लिए भारतीयोंकी बैठक सोमवार २३ अप्रैल १९०६ को डर्बनमें श्री अमद हाजी आमद झवेरीके घर हुई थी। श्री अब्दुल्ला हाजी आमद झवेरी सभापति थे। इंडियन ओपिनियनकी तत्कालीन स्थिति सम्बन्धी जानकारी देनेकी विनती की जानेपर गांधीजीने यह बताया था

डर्बन

अप्रैल २१, १९०६

ओपिनियन कुछ वर्षोंसे चल रहा है। इसके सम्पादक श्री मदनजीत हैं। उन्होंने इस पत्रके लिए मेहनत की और अपना सब-कुछ इसमें लगा दिया। पत्र शुरू करते समय यह खयाल नहीं हो पाया था कि इसमें पैसेकी जिम्मेदारी कितनी होगी। आगे चलनेपर यह मालूम हुआ कि इसे चलानेके लिए बहुत पैसेकी जरूरत है। आहारनिरामिष-निगम (कॉरपोरेशन) के खिलाफ लड़े गये मुकदमेके मेरे पास १,६०० पौंड आये थे। यह रकम लगा देनेपर भी कमी पूरी नहीं हुई। हर महीने ७५ पौंडका नुकसान होने लगा। उसे पूरा करनेकी मेरी ताकत नहीं थी। इसलिए पत्रको दूसरी तरहसे चलानेके बारेमें सोचना पड़ा। यह तय हुआ कि छापाखाना बाहर ले जाया जाये और कार्यकर्ता बहुत ही गरीबीसे रहें। इस निर्णयके समय श्री मदनजीतको जवाबदेहीसे मुक्त कर दिया गया। उन्हें यह डर था कि ऐसा करनेसे पत्र नहीं चल सकेगा इसलिए उन्होंने उससे हाथ हटा लिया। अब जिम्मेदारी सिर्फ मेरी रही। श्री मदनजीतका नाम जैसा-का-तैसा चला आ रहा है क्योंकि वे स्वयं स्वदेशाभिमानी हैं और उन्होंने निःस्वार्थ भावसे पत्र शुरू किया है। वे भारतमें अब भी देश-सेवाका कार्य करते रहते हैं।

ऊपर जैसा कहा गया है उस प्रकार यह अखबार कुछ समयसे चल रहा है। लेकिन वैसा करनेमें भी मैं देखता हूँ ऐसी स्थिति आ गई है कि यदि पैसा न मिला तो उसमें नुकसान होगा और जो लोग ३ पौंडमें अपना गुजर चला रहे हैं उन्हें उतनी रकम देनेकी भी व्यवस्था न रहेगी। मैं आया तब ग्राहक संख्या ८८० थी और विज्ञापन घट गये थे। मैं सोचता हूँ कि चाहे जिस तरह भी हो जबतक छापाखानेके आदमी टिके रहेंगे तबतक मैं अपेक्षा करता

१ देखिए "आत्मकथा", भाग ४, अध्याय १३।

२ दिसम्बर १९०४ में फीनिक्स ले जाया गया।

तो निकालता ही रहूँगा। लेकिन यह मैंने कभी नहीं माना कि भारतीय समाजकी ओरसे कुछ भी प्रोत्साहन नहीं मिलेगा। इसलिए मैं अब भी आशा किए हूँ कि पत्रमें आवश्यक सहायता मिलेगी।

पत्रके मुख्य तीन हेतु हैं। एक तो हमारे दुःख शासनकर्त्ताओंके सामने गोरोंके सामने इंग्लैंडमें दक्षिण आफ्रिकामें और भारतमें जाहिर करना। दूसरा यह कि हममें जो भी दोष हों उन्हें बताना और उन्हें दूर करनेके लिए लोगोंसे कहना। तीसरा और कहें तो सबसे बड़ा उद्देश्य हिन्दू-मुसलमानोंके बीचका भेद तोड़ना और साथ ही गुजराती तमिल कलकत्तेवाले वगैरा जातियोंको पाटना। भारतमें राज्यकर्त्ताओंकी विचारधारा दूसरे प्रकारकी मालूम होती है। वहाँ यह नहीं दीखता कि वे हममें एकता पैदा होने देना चाहते हैं। दक्षिण आफ्रिकामें हम सब थोड़े-थोड़े हैं, हमपर एक-सी मुसीबतें हैं, कोई-कोई बन्धन भी यहाँ ढीले हो गये हैं, इसलिए हम एक-दिल होनेका प्रयोग यहाँ बहुत ही आसानीसे कर सकते हैं। इन विचारोंको प्रजामें दृढ़ करना भी इस पत्रका हेतु है। इस उद्देश्यको सफल करनेके लिए सभी समझदार भारतीयोंकी मददकी आवश्यकता है। मतलब यह कि यदि इस पत्रको आवश्यक प्रोत्साहन मिले तो मैं देखता हूँ कि इससे बहुत-से काम हो सकते हैं। मुझे लगता है कि सभी पढ़े-लिखे और सामर्थ्यवाले लोगोंको ग्राहक बनना चाहिए। दक्षिण आफ्रिकामें कमसे-कम १ गुजराती हैं। उनमें से यदि २५ प्रतिशत ग्राहक बन जायें तो कोई अनोखी बात न होगी। पढ़े-लिखे लोग स्वयं ग्राहक बन जायें इतना ही काफी नहीं है। उन्हें पत्रके उद्देश्योंको सफल बनानेके लिए पूरी कमर कसनी चाहिए। वे दूसरोंको समझा सकते हैं। पत्र शिक्षाका बड़ा साधन है। यह समझना बहुत जरूरी है कि यह अखबार मेरा नहीं बल्कि हरएक भारतीय भाईका है।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन २८-४-१९०६

३०८ मुस्लिम युवक मण्डलसे

अप्रैल २४को श्री सीरन हुसैनकी अध्यक्षतामें डर्बनके मुस्लिम युवक मण्डल (यंग मैन्स मोहम्मडन एसोसिएशन) की बैठक हुई थी। उसमें श्री एम० सी० आंगलियाने मण्डलके सम्बन्धमें कुछ सवाल किये थे और उनपर गांधीजीकी राय माँगी थी। साथ ही यह कहा था कि मण्डलके लिए नियम बनानेका काम गांधीजीको सौंपा जाये। इस प्रस्तावपर बोलते हुए गांधीजीने कहा

अप्रैल २४, १९०६

इस मण्डलका उद्देश्य यदि शिक्षा-प्रचार, नीति-प्रचार और आन्तरिक सुधार करना हो तब तो इसका मुस्लिम युवक मण्डल नाम ठीक है। ईसाई युवक मण्डल (यंग मैन्स क्रिश्चियन असोसिएशन) जगत-प्रसिद्ध है। उसे बहुतेरे समझदार लोगोंकी ओरसे प्रोत्साहन मिलता है। यह मण्डल भी वैसा ही काम कर सकता है।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन २८-४-१९०६

३०९. भाषण: कांग्रेसकी सभामें

नेटाल भारतीय कांग्रेसकी एक सभा कांग्रेस-भवनमें यह विचार करनेके लिए की गई कि वतनी लोगोंने हालमें नेटालमें जो विद्रोह किया है उसके सम्बन्धमें एक भारतीय-सहायक दलकी सेवाएँ देनेका प्रस्ताव सरकारके सम्मुख रखना उचित है या नहीं। कांग्रेस अध्यक्ष श्री दाऊद मुहम्मद सभापति थे। गांधीजीका यह भाषण सभाकी रिपोर्टसे लिया गया है। इस सभामें अन्य लोगोंने भी भाषण दिये थे।

डर्बन
अप्रैल २४, १९०६

श्री गांधीने बोअर युद्धमें भारतीयोंके योगदानका उल्लेख किया। उन्होंने कहा कि यह सभा भारतीयोंके स्वयंसेवक भर्ती होनेके आम सवालके सम्बन्धमें नहीं की गई है। उनका खयाल है कि भारतीय समाजके रूपमें जो रक्षात्मक शक्ति उपलब्ध है उसका उपयोग न करके सरकार उपनिवेशके प्रति अपने स्पष्ट कर्तव्यकी उपेक्षा कर रही है। श्री स्माइथने कहा है कि वे भारतीयोंसे लड़ना बचाव कराना नहीं चाहते। उन्होंने साथ ही यह भी कहा है कि वे भारतीयोंका उपयोग घायलोंके लिए करेंगे। इस सम्बन्धमें स्वर्गीय श्री एस्कम्बने हमें आश्वासन दिया था कि घायलोंकी सेवा और रोगियोंकी शुश्रूषा करना वैसा ही सम्मानप्रद और आवश्यक कार्य है जैसा बन्दूक उठाना। किन्तु आज हमें श्री स्माइथके विचारोंके सम्बन्धमें कुछ नहीं कहना है। हमें तो यही विचार करना है कि हमको वर्तमान संकटमें सरकारके सम्मुख अपनी सहायता करनेका प्रस्ताव रखना है या नहीं, भले ही वह सहायता कितनी ही तुच्छ क्यों न हो। यह सच है कि हमारे ऊपर निर्योग्यताएँ लदी हुई हैं और हम परेशान हैं। वतनी लोगोंके विद्रोहके सम्बन्धमें भी दो रायें हो सकती हैं। किन्तु हमारा कर्तव्य है कि हम ऐसे किसी खयालसे प्रभावित न हों। यदि हम नागरिकताके अधिकारोंका दावा करते हैं तो हम उन अधिकारोंके साथ जुड़ी हुई जिम्मेदारियोंमें हिस्सा बँटानेके लिए बाध्य हैं। इसलिए उपनिवेशके सामने मौजूद खतरेको दूर करनेमें मदद देना हमारा कर्तव्य है। भारतीयोंने बोअर युद्धमें अच्छा काम किया था। जनरल बुलरने उनकी सराहना की थी। वक्ताने सलाह दी कि भारतीयोंको इस बार भी सरकारके सम्मुख वैसा ही प्रस्ताव रखना चाहिए।

एडवोकेट श्री गैब्रियलने तब निम्न प्रस्ताव पेश किया:

> नेटाल भारतीय कांग्रेसके तत्वावधानमें की गई ब्रिटिश भारतीयोंकी यह सभा इसके द्वारा सभापतिको अधिकार देती है कि वे वतनियोंके विद्रोहके सम्बन्धमें सरकारको सहायताका वैसा ही प्रस्ताव भेज दें जैसा बोअर युद्धमें भेजा गया था।

श्री लॉरेंस गैब्रियलने पूछा कि जो लोग प्रस्तावके पक्षमें मत देंगे क्या वे अपनी सेवाएँ देनेके लिए बाध्य हैं।

श्री गांधीने कहा कि प्रस्तावका अर्थ यह नहीं है। किन्तु उसके पक्षमें मत देनेवाला प्रत्येक व्यक्ति उस प्रस्तावको सफल बनानेमें सहायता देनेके लिए बँधा है। इसका बताना भविष्यका काम है कि सरकार इस प्रस्तावको स्वीकार करनेकी कृपा करे।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, २८-४-१९०६

३१० पत्र उपनिवेश-सचिवको

डर्बन
अप्रैल २५, १९०६

सेवामें
माननीय उपनिवेश-सचिव
पीटरमैरित्सबर्ग

महोदय

इस महीनेकी २४ तारीखको नेटाल भारतीय कांग्रेसके तत्त्वावधानमें ग्रे स्ट्रीटके कांग्रेस भवनमें ब्रिटिश भारतीय संघकी एक सभा हुई थी। उसमें चार सौसे अधिक भारतीय उपस्थित थे। उस सभामें बैरिस्टर श्री बर्नार्ड गैब्रियल द्वारा प्रस्तुत और श्री इब्राहीम इस्माइल कम्पनीके श्री इस्माइल गोरा द्वारा अनुमोदित संलग्न प्रस्ताव सर्वसम्मतिसे पास किया गया।

मैं सरकारका ध्यान इस ओर आदरपूर्वक आकर्षित करता हूँ कि प्रस्तावमें उल्लिखित अवसरपर बहुत-से ब्रिटिश भारतीयोंने अपनी सेवाएँ देनेका प्रस्ताव किया था और आहत-सहायक दलके नायकोंके रूपमें उनकी सेवाएँ स्वीकार भी की गई थी। नेटाल भारतीय कांग्रेसके विचारसे अगर आवश्यक हो तो वर्तमान संकटके लिए भी इसी तरहका सहायक दल संगठित करना सम्भव है। कांग्रेसका विश्वास है कि सरकार यह प्रस्ताव स्वीकार करनेकी कृपा करेगी। यह निवेदन भी कर दूँ कि सभाके अन्तमें कोई चालीस ब्रिटिश भारतीयोंने आहत-सहायता अथवा जिनके लिए उन्हें उपयुक्त समझा जाये ऐसे अन्य कार्योंके लिए अपने नाम दिये हैं।

आपका आज्ञाकारी सेवक
दाऊद मुहम्मद

[अंग्रेजीसे]
इंडियन ओपिनियन २८-४-१९०६

३११ 'नेटाल मर्क्युरी'को भेंट

नेटाल भारतीय कांग्रेस द्वारा नियुक्त एक समितिने यह निश्चय किया था कि सम्राट् सरकारके समक्ष भारतीयोंकी सेवायें पेश करनेके लिए एक शिष्टमण्डल भेजा जाये। इस शिष्टमण्डलमें गांधीजी, इस्माइल गोरा और दस्तगीर एवं केवल प्रतिनिधि शामिल किये जानेवाले थे। नेटाल मर्क्युरीके एक प्रतिनिधिने गांधीजीसे भेंट की थी। निम्नलिखित ब्यौरा उसकी रिपोर्टसे लिया गया है:

[अप्रैल २६, १९०६ के पूर्व]

इस विषयमें भेंटकर्ताको श्री गांधीने कहा कि शिष्टमण्डल सम्भवतः अगले दो महीनेके भीतर रवाना हो जायेगा। ट्रान्सवाल और केपने अभी उत्तर नहीं दिया है। उनका इरादा यह है कि वे समस्त दक्षिण आफ्रिकाके ब्रिटिश भारतीयोंकी स्थिति ब्रिटिश सरकारके सम्मुख रखें और उनका उचित निराकरण करायें। वे उन नियोजकोंसे भी भेंट करेंगे जो ब्रिटिश

भारतीयोंपर कमी हुई है। कोई औपचारिक कार्यक्रम नहीं बनाया गया है किन्तु वे यहाँ तबतक रहेंगे जबतक वे आयोगकी मतिविधियोंको देख नहीं लेंगे। यह आयोग इसी ७ तारीखको रवाना हुआ है। यदि आवश्यक होगा तो वे स्वयं आयोगके सम्मुख पेश होंगे।

[अंग्रेजीसे]

नेटाल मर्क्युरी २६-४-१९०६

३१२ एक भारतीय प्रस्ताव

हाल ही में नेटाल भारतीय कांग्रेसके तत्त्वावधानमें जो सभा हुई थी उसको वतनियोंके विद्रोहके सिलसिलेमें भारतीयोंकी सेवाएँ समर्पित करनेका प्रस्ताव पास करनेपर बधाई दी जानी चाहिए। स्थानीय अखबारोंमें अनेक संवाददाताओंने यह चिन्ता व्यक्त की थी कि यदि विद्रोह फैला तो उनका स्वयं अपनी और भारतीयों दोनोंकी रक्षाका भार वहन करना होगा। यह प्रस्ताव उसका पूरा जवाब है। पिछले मंगलवारको कांग्रेस हॉलमें जो भारतीय इकट्ठे हुए थे उन्होंने प्रकट कर दिया है कि उनमें विवेक प्रचुर मात्रामें मौजूद है और जहाँ समस्त समाजकी जिसके वे भी एक अंग हैं, सामूहिक भलाईका सवाल उपस्थित हो वहाँ वे अपनी निजी शिकायतोंको भुला सकते हैं। हमें विश्वास है कि सरकार उनकी सेवाएँ स्वीकार करनेमें आनाकानी न करेगी और भारतीय समाजको एक बार फिर अपनी योग्यता सिद्ध करनेका मौका देगी।

परन्तु यह प्रस्ताव स्वीकार हो या न हो इससे इस बातका महत्व बहुत स्पष्ट हो जाता है कि भारतीयोंको पहलेसे उचित प्रशिक्षण देकर उनकी उपनिवेशके बचावमें उचित भाग लेनेकी इच्छाका सदुपयोग किया जाना चाहिए। हम कई बार कह चुके हैं कि अतिरिक्त रक्षा कार्योंके लिए भारतीय समाज जो मूल्यवान सहायता दे सकता है उसका उपयोग न करना अत्यन्त मूर्खताकी बात है। अगर वर्तमान भारतीय आबादीको उपनिवेशसे निकालना सम्भव नहीं है तो उसको उपयुक्त सैनिक शिक्षण देना निस्सन्देह सामान्य समझदारीकी बात है। एक भावपूर्ण भारतीय कहावत है: आग लगे जावे कुआँ कैसे निकसे तोय। फिर भारतीय भी चाहे वे कितने ही इच्छुक और सामर्थ्यवान क्यों न हों, आप उनको एकदम खाई खोदनेवाले कुशल दलके रूपमें भी तैयार नहीं कर सकते। क्या श्री बॉम और उनके साथी मन्त्री इस मामलेमें अपने कर्तव्यके प्रति सजग होंगे?

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन २८-४-१९०६

१. [illegible] सरकार द्वारा [illegible] नियुक्त [illegible] । [illegible] १९ [illegible] देखिए [illegible] पृष्ठ १९०–४४।

२. देखिए “भाषण: कांग्रेसकी सभामें” पृष्ठ ३।

३. देखिए “भारतीय स्वयंसेवक” पृष्ठ २६१।

३१३. नेटाल दूकान-कानून

नेटाल दूकान-कर्मचारी संघके मन्त्रियोंने जो लम्बा लेख दूकान-कानूनपर लिखा है उसको हमारे सहयोगी *नेटाल ऐडवर्टाइज़र* ने बहुत महत्त्व दिया है। इसमें मन्त्रियोंने यह दिखानेका यत्न करते हुए कि इससे एशियाई व्यापारको क्षति पहुँची है इस कानूनका औचित्य सिद्ध करनेका प्रयत्न किया है। इससे उस व्यापारको क्षति पहुँची है या नहीं इसपर हम विवाद नहीं करना चाहते। हमने कानूनके आधारभूत *सिद्धान्तको स्वीकार कर लिया है। हमारे खयालसे यह ठीक* ही है कि दूकानोंके खुलने तथा बन्द होनेके समयपर सरकारका नियन्त्रण हो। किन्तु हम यह खयाल किये बिना नहीं रह सकते कि विधान द्वारा वस्तुतः जो घंटे निश्चित किये गये हैं, वे कई तरहसे असुविधाजनक हैं। उनको निश्चित करनेमें उस जनताका जो इन व्यापारियोंको आश्रय देती है कुछ खयाल नहीं किया गया है। शनिवारको दोपहरके बाद दूकान बन्द करा देना नितान्त मूर्खता है। और, यह सब तो हमने यों ही कह दिया। हम समझते हैं कि कानूनको व्यवहार योग्य बनानेके लिए उसमें शीघ्र ही संशोधन करना पड़ेगा।

लेकिन सबसे जिम्मेदार अधिकारियोंने जिस गैर-जिम्मेदाराना ढंगसे भारतीय व्यापारियोंके सम्बन्धमें चर्चा की है उसपर, हमें लगता है कुछ विचार प्रकट करना जरूरी है। मन्त्रियोंने कहा है कि इस कानूनके पहले भारतीय व्यापारी अपनी दूकानें प्रति सप्ताह ११९ घंटे खुली रखते थे जब कि कानून बननेके बादसे वे सिर्फ ५१ घंटे प्रति सप्ताह ही खुली रखते हैं। इस प्रकारके निराधार वक्तव्यके समर्थनमें कोई प्रमाण नहीं दिया गया है। यह वक्तव्य स्वतः ही गलत है। ११९ *घंटे प्रति सप्ताहका मतलब है १७ घंटे १ मिनिट प्रति दिन। अगर अब हम यह मान लें* कि भारतीय दूकानदार (खाने-पीने और कपड़े पहनने आदिकी जरूरत न होनेपर भी) ६ बजे सुबह अपनी दूकान खोलता है तो प्रतिदिन १७ घंटेसे ज्यादा दूकान खुली रखनेके लिए उसको रातके ११ १ बजेके बाद ही दूकान बन्द करनी पड़ेगी। हमें ऐसे भारतीय व्यापारियोंके नामोंकी सूची पाकर प्रसन्नता होगी जो कानून बननेके पूर्व ६ बजे सुबहसे ११ १ बजे रात तक अपनी दूकानें खुली रखते थे। हमने ब्रिटिश लोकसभाके आयरिश सदस्योंके बारेमें जरूर सुना है कि वे सारी रात सदनमें अथक रूपसे बैठे रहते थे और कोका 'की'[1] पुस्तीके एक टुकड़ेसे भूख मिटा लेते थे। किन्तु हमने यह नहीं सुना कि कोई भारतीय व्यापारी अपने कर्मचारियोंके साथ बिस्तरसे उठते ही (अगर उन्हें बिस्तर रखनेका भेद दिया जा सके) ६ बजे सुबह अपनी दूकानकी ओर दौड़ पड़ता हो और ११ १ बजे रात तक काउंटरपर खड़ा रहता हो। हमने भारतीयोंके बारेमें बहुत-से अत्युक्तिपूर्ण विवरण पढ़े हैं परन्तु नेटाल दूकान कर्मचारी संघका यह विवरण सबसे *बढ़ गया है। फिर भी हम यह माननेको तैयार हैं कि कुछ भारतीय दूकानदार* यूरोपीयोंकी अपेक्षा ज्यादा समय तक दूकान खुली रखते थे। परन्तु अगर प्रमाणकी आवश्यकता हो तो हम यह भी सिद्ध करनेके लिए तैयार हैं कि उस श्रेणीके यूरोपीय व्यापारी उनसे ज्यादा नहीं तो उनके बराबर ही उसी ढंगका गुनाह किया करते थे।

करीब-करीब उपर्युक्त अत्युक्तिके समान ही मन्त्रियोंके अन्य वक्तव्य भी हैं। हम उनसे निवेदन करते हैं कि वे उनको छपानेके लिए दौड़नेसे पहले उनके तथ्योंका अध्ययन कर लिया करें।

१. [illegible]

हम उन्हें विश्वास दिलाते हैं कि भारतीय व्यापारी आखिर इतना अधम तो नहीं है जितना वे उसे चित्रित करते हैं।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन २८-४-१९१२

३१४. इस पत्रकी आर्थिक स्थिति

हमारे पाठकोंको यह जानकर सन्तोष होता होगा कि यह अखबार ज्यों-ज्यों दिन बीतते जाते हैं त्यों-त्यों बढ़ता जाता है। शुरू-शुरूमें हम गुजरातीके चार ही पृष्ठ देते थे। उसके बाद पाँच पृष्ठ देने लगे। तमिल और हिन्दी विभागोंको बन्द करनेके बाद आठ पृष्ठ देने शुरू किये। और इस हफ्ते हम बारह पृष्ठ दे रहे हैं। यह बात आसानीसे समझी जा सकेगी कि पत्रको इस तरह बढ़ाते जानेसे खर्च भी बढ़ता है। परन्तु हम प्रोत्साहनके बिना बहुत आगे नहीं बढ़ सकते। *श्री उमर हाजी आमद झवेरीके घर जो बैठक हुई उससे इस पत्रकी स्थितिका कुछ अन्दाज हो सकेगा।*[1] हमारा खयाल है कि इसकी मदद करना हरएक भारतीयका फर्ज है। पत्रके प्रकाशनसे सम्बन्धित सभी लोगोंकी स्थिति ऐसी है कि वे अपना निर्वाह दूसरे साधनोंसे कर सकते हैं। फिर भी हम मानते हैं कि वे पत्रके साथ इसीलिए बँधे हुए हैं कि वे अपने हृदयमें स्वदेशाभिमानकी चिनगारी जगाये रखते हैं। लेकिन अगर समाजकी ओरसे पर्याप्त सहारा मिले तो पत्र और भी अधिक काम कर सकेगा। हम अपने ग्राहकोंसे यही निवेदन करना चाहते हैं कि अगर हरएक ग्राहक एक-एक ग्राहक बढ़ा दे तो ग्राहक-सूची दुगुनी होते देर न लगेगी। अपने पाठकोंको हम यह विश्वास दिलाना चाहते हैं कि आमदनीमें जो भी वृद्धि होगी उसका सारा लाभ पत्रको सुधारनेमें खर्च किया जायेगा।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, २८-४-१९१२

३१५. दक्षिण आफ्रिकाके नौजवान भारतीयोंसे विनय

आजकल दक्षिण आफ्रिकामें भारतीय नौजवानोंकी मण्डलियाँ बन रही हैं। इसे हम अपनी सुधरती हुई हालतका लक्षण मान सकते हैं। एक ओर डर्बनमें मुस्लिम युवक संघ (यंगमेन्स मोहम्मडन सोसाइटी) बना है दूसरी ओर जोहानिसबर्ग आदि स्थानोंमें सनातन धर्म-सभाकी स्थापना हुई है। यह एक सन्तोषजनक बात है। लेकिन हमें दोनों समाजोंको चेतावनी देनेकी जरूरत मालूम होती है।

यह सदाका एक नैसर्गिक नियम है कि जो सभा स्थापित होती है उसके लोगोंके मन निर्मल हों और सब सभाकी भलाईमें अपनी भलाई मानें तभी सभा पनप और टिक सकती है।

किसी भी देशका आधार उसके नौजवानोंपर होता है। पके हुए विचारोंके बड़े-बूढ़े अपने विचारोंमें फेर-फार नहीं करते। वे पुराने विचारोंपर डटे रहते हैं। हर कौमको ऐसे लोगोंकी

१. देखिए "इंडियन ओपिनियनकी बैठक", पृष्ठ २९९-३।

जरूरत होती है। क्योंकि ऐसे लोग नौजवानोंके जोशको खूनको ठंडा कर सकते हैं। लेकिन अगर उनसे यह लाभ होता है, तो कभी-कभी उनके कारण हानि भी होती है, अर्थात्, जरूरत पड़नेपर वे कुछ कामोंको करनेमें आनाकानी कर जाते हैं। उन्हें यही करना ठीक मालूम होता है। लेकिन ऐसे समय अच्छे नौजवान मददगार साबित होते हैं और आगे आते हैं। प्रयोग तो उन्हींसे हो सकते हैं। अतएव जहाँ एक ओर नौजवानोंके मण्डलोंको बढ़ावा देना जरूरी है, वहाँ उन्हें चेतावनी देना भी जरूरी है।

अगर इन नौजवान मण्डलोंके सदस्य सच्चे दिलसे देशका भला करनेके इरादेसे ही काम करेंगे तो वे बहुत बड़े-बड़े काम कर सकेंगे। हममें गन्दगी ज्यादा है। श्री पीरन मोहम्मदने कांग्रेसकी बैठकमें इसका विवेचन भी किया है। इस गन्दगीको दूर करनेमें नौजवान घर-घर जाकर, लोगोंको नम्रतापूर्वक समझाकर बहुत मदद कर सकते हैं। कुछ गरीब भारतीय शराब पीते हैं। उनकी स्त्रियोंको भी इसकी लत पड़ जाती है। अगर हमारे नौजवान उनको इससे मुक्त करनेका बहुत जरूरी काम अपने ऊपर ले लें तो वे बहुत कुछ कर सकते हैं। इसी सिलसिलेमें हमें यह भी कहना चाहिए कि हमारे जो पाठक गुजराती हैं उन्हें यह नहीं सोचना चाहिए कि उनमें मद्रासी समाजके पीनेवालोंके बीच काम नहीं हो सकेगा। हमें तो यह भी कहना चाहिए कि कुछ गुजराती हिन्दुओंको भी शराबकी लत लग गई है। उन्हें समझानेमें हिन्दू और मुसलमान सब मदद कर सकते हैं।

साथ ही ऐसे युवक-मण्डलोंको शिक्षाकी ओर अधिक ध्यान देना चाहिए। हमारे नौजवानोंमें भी शिक्षा बहुत कम है। हम अक्षरज्ञानको शिक्षा नहीं मानते। हमें दुनियाके इतिहासका भिन्न भिन्न सविधानोंका और इसी तरहका दूसरा ज्ञान होना चाहिए। इतिहासके उपयोगसे हम यह जान सकते हैं कि दूसरी जातियोंकी उन्नति क्या हुई। हम दूसरी जातियोंकी स्वदेशाभिमानकी उमंगका अनुकरण कर सकते हैं। युवकोंके मण्डल ऐसे अनेक काम कर सकते हैं। हम मानते हैं कि ऐसा करना उनका कर्तव्य है और हमें आशा है कि ये मण्डल अच्छे काम करके अपने कर्तव्यका पालन करेंगे लोगोंको उत्साहित करेंगे और हमपर आनेवाले संकटोंमें पूरा-पूरा हाथ बँटायेंगे।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन २८-८-१९ ९

३१६ मोम्बासाकी सभा

भारतीयोंके कष्टका अन्त नहीं है। भारतीय जहाँ जाता है, गोरे भी वहाँ उसके साथ पहुँचते ही हैं। अगर गोरोंसे कष्ट न हो तो हम आपसमें लड़ने लगते हैं। इनसे बचें तो महामारीमें फँस जाते हैं और अगर यहीं हम तीनों मुसीबतोंसे बरी रहें तो अकाल हमारे पीछे पड़ा ही है।

अपने मोम्बासावासी भाइयोंकी बैठकके जो समाचार हम इस अंकमें दे रहे हैं उनके कारण मनमें ये विचार उठते हैं। मोम्बासामें आये नैरोबीका जो उपजाऊ प्रदेश है उसपर गोरोंकी दृष्टि पड़ी। इसलिए उन्होंने वहाँसे भारतीयोंको खदेड़नेका अथवा वहाँ उनके पैर न जमने देनेका प्रयत्न किया। मालूम होता है कि इसमें उन्हें सफलता मिली है। इसपर वे भारतीयोंने वहाँ एक बड़ी सभा की है और ऐसे इरादेके विरुद्ध कदम उठानेके लिए तैयार हो गये हैं। वहाँ लोगोंमें इतना अधिक जोश था कि उन्होंने आधे घंटेमें २ रुपये इकट्ठे कर लिए और वकीलोंका खर्च उठानेके लिए हर महीने ८ रुपयेकी गारंटी दी।

एक ओरसे हम कष्ट देखते हैं तो दूसरी ओर हम एक हो जाते हैं। यदि अपने कष्टोंके परिणाम-स्वरूप हम इस तरह एक हों तो क्षणभरके लिए हम यह कह सकते हैं कि कष्टका आना अच्छा। हम हिम्मतके साथ एक होकर दुनियाके हर हिस्सेमें लड़ेंगे तो हमारे कष्ट दूर होंगे, हम उन्हें भूल जायेंगे और एक राष्ट्र बनेंगे।

इस सभाके सभापतिने अपने भाषणमें यह कहा है कि हमें दक्षिण आफ्रिकामें गोरोंके बराबर अधिकार हैं। यदि श्री जीवनजी इस पत्रको पढ़ते हैं तो उन्हें हमारे दुःखोंका पता होना चाहिए। हमें दुःखके साथ उन्हें यह बताना पड़ रहा है कि हमारी राजनीतिक स्थिति हमारे मोम्बासाके भाइयोंकी तुलनामें खराब है। नेटालमें भारतीयोंको जमीन मिल सकती है किन्तु वहाँ उन्हें दूसरी तकलीफें हैं। और भारतीयोंसे जमीनका हक छीन लेनेकी तैयारी भी चल रही है। ट्रान्सवालमें अथवा ऑरेंज रिवर कालोनीमें आज भी जमीन नहीं मिलती।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, २८-४-१९०६

३१७. नेटालका विद्रोह और नेटालको मदद

बम्बाटा अभी आजाद है। कहा जाता है कि उसके साथ १ आदमी हैं। उसके साथकी लड़ाईके बारेमें कई भाषण हो चुके हैं। नेटालके मन्त्रियोंने कहा है कि वे विलायतसे मदद नहीं मँगवायेंगे। तारकी खबर है कि जोहानिसबर्गमें एक बहुत बड़ी सभा हुई है। उससे जान पड़ता है कि वहाँके लोग नेटालको पर्याप्त मदद देनेके लिए तैयार हैं। इन सबका मतलब यह होता है कि नेटालकी ताकत और स्वतंत्रता बढ़ेगी। ऐसे अवसरपर भारतीयोंने सरकारको जो मदद भेजी है वह मुनासिब है और अगर मददका प्रस्ताव न किया जाता तो बदनामी होती। जिन्होंने मोर्चेपर जानेके लिए नाम लिखाये हैं उन्होंने बहुत उत्साह दिखाया है। उनमेंसे कई तो उपनिवेशमें जन्मे हैं। हमारे लिए यह सन्तोषकी बात है कि वे दूसरे भारतीयोंके साथ सम्मिलित हुए हैं। नेताओंका कर्तव्य है कि वे उन्हें आगे बढ़नेके लिए प्रोत्साहित करें।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, २८-४-१९०६

३१८. चीनमें हलचल

टाइम्स का संवाददाता लिखता है कि चीनी दिन-दिन ज्यादा निरंकुश होते जा रहे हैं। वे गोरोंका सामना करते हैं। चीनी अखबार बहुत तीखे लेख लिखते हैं और जापानी लेखक उनमें मदद करते हैं। उधर इंग्लैंडमें ट्रान्सवालकी खानोंके चीनियोंके बारेमें जो भाषण किये हैं उनसे तो चीनियोंका जोश और भी बढ़ा हुआ है और वे गोरोंके विरुद्ध अधिक भड़क गये हैं।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, २८-४-१९०६

३१९. तम्बाकूसे हानियाँ

'इंडियन रिव्यू' के पिछले अंकमें पेरिसके प्रसिद्ध डॉक्टर कार्टेकका तम्बाकूपर एक लेख छपा है। वे लिखते हैं कि तम्बाकूसे कई नुकसान होते हैं, खासकर पाचन-शक्ति घट जाती है और आँखपर बड़ा असर होता है। उससे स्मरणशक्ति नष्ट हो जाती है और कई विशिष्ट गुण नहीं आ सकते। इसके अलावा अभी-अभी यह पता चला है कि तम्बाकूके कारण श्रवण-शक्ति भी कम हो जाती है। डॉक्टर कार्टेकने सप्रमाण बतला दिया है कि अबसीनियाके तम्बुओंमें जो गड़बड़ी दिखाई दी है उसका कारण तम्बाकू है।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, २८-४-१९०६

३२०. सान्फ्रान्सिस्कोकी हालत

भूकम्पके कारण इस शहरका ज्यादातर हिस्सा बरबाद हो गया है। जो एक दिन राजा थे वे रंक बन गये हैं। अच्छे-अच्छे साहूकार बे-घरबार हो गये हैं और उनके पास कपड़े-लत्ते भी नहीं बचे। इस प्राकृतिक कोपके कारण लखपती और गरीब दोनों साथ-साथ रह रहे हैं। काले-गोरेका भेद भी नहीं रहा। शहरमें भोजन-सामग्री बहुत ही कम है। रोटी जैसी चीज भी मुश्किलसे मिलती है। सारंगी बजानेवाला अब अपने महलमें रहनेके बजाय गलियोंमें मारा-मारा फिर रहा है। उसके शरीरपर कपड़े नहीं हैं। फिर भी वह अपनी सारंगी थामे हुए गलीमें भटका करता है।

इसके तारसे पता चलता है कि ऐसी हालतमें होते हुए भी नगरवासी अपने नगरको पहलेकी तरह सुहावना बनानेमें जुट पड़े हैं और परिणामस्वरूप कौशलकी साख बहुत बढ़ गई है।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, २८-४-१९०६

३२१. जवाब : मुस्लिम युवक संघको

जब यह विवरण[1] मुझे मिला तब मैं फीनिक्समें था। मंत्रीकी माँग थी कि इसे अक्षरशः छापा जाये इसलिए मैंने इसे समूचा छापनेकी अनुमति दी है। लेकिन मुझे अपने नौजवान भाइयोंसे दो बातें कहनेकी जरूरत मालूम होती है। विवरण हमेशा ऐसा होना चाहिए, जिससे दूसरोंको सीखनेको मिले। मैं उक्त विवरणमें ऐसा कुछ नहीं देखता।

मेरे बारेमें जो टीका की गई है उसे मैं स्वीकार करता हूँ और उसे छापनेमें मुझे कतई भी हिचकिचाहट नहीं है। मैंने ऐसा कहीं नहीं कहा कि सभी आदिमें के लोग मुसलमान बने हैं और न ऐसा मुझसे कहा जा सकता है। मैंने गोरोंकी भावनाका विरोध करनेके बदले उनका पक्ष लिया था। फिर भी मैंने जो कुछ कहा उसमें गलती हुई हो तो उसे क्षमा करनेके लिए मैं अपने भाइयोंसे कह चुका हूँ।[2]

मेरे मत इस पत्रके विरुद्ध जो भी पत्र आये हैं सो सब छापनेकी इजाजत मैंने दी है। जो पत्र मेरे पक्षमें हैं मैंने उन्हें छापनेकी मनाही कर दी थी। फिर भी मुझे कहना चाहिए कि यदि आगे भी कौमके अन्दर फूट फैलानेवाले लेख आये तो वे नहीं छापे जायेंगे। अगर दूसरा गुजराती पत्र या दूसरे छापेखाने शुरू हों तो इससे मुझे हमेशा खुशी होगी। इस छापेखानेका एकमात्र हेतु लोक-सेवा करना है। वैसी सेवा करनेवाले दूसरे प्रतिस्पर्धी खड़े हों तो इस छापेखानेके लोगोंके लिए यह गर्वकी बात होगी।

हिन्दू इमदाद-कोषके पैसोंकी जो पहुँच छपी है, उसकी छपाई की गई है। यही चीज हामीद मदरसेकी सूचीके बारेमें हुई है। यह पत्र ऐसी मुसीबतोंसे बीच निकल रहा है कि सब भारतीयोंको इसकी पूरी मदद करनी चाहिए। इसकी जगह इतनी अनमोल है कि इसमें जो हिस्सा मुफ्त छापा जाता है, वह लोगोंको शिक्षा और ज्ञान देनेवाला होना चाहिए।

संक्षेपमें अपने नौजवान भाइयोंसे मुझे यही विनती करनी है कि उन्हें सार्वजनिक काममें उत्साह दिखाना चाहिए। यह पत्र समूची कौमकी सेवा करता है। यदि वे इसकी मदद करेंगे तो ऐसा माना जायेगा कि उन्होंने अपना फर्ज अदा किया और उससे पत्रको ताकत मिलेगी और वह ताकत फिरसे कौमके ही काम आयेगी।

आशा है, मेरे भाई मेरे इस लेखका बुरा न मानेंगे बल्कि इसका सच्चा अर्थ करेंगे। इसे लिखनेमें भी मेरा हेतु सेवा करना ही है।

मो० क० गांधी

२९-४-१९०९[3]

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, २८-४-१९०९

१. यह डर्बनके मुस्लिम युवक संघकी अप्रैल ११ और १४ को हुई दो सभाओंकी रिपोर्ट। इन सभाओंमें कुछ वक्ताओंने शिकायत की थी कि इंडियन ओपिनियनमें मुसलमानोंके मामले लेख आदि उनकी कार्रवाइयों ... अखबारोंको ... उचित स्थान नहीं दिया गया। ... था कि ... लगता ... दौरा ... न हो। इस आलोचनात्मक रुखसे गांधीजीने यह ... लिखा।

२. देखिए खण्ड ४, पृष्ठ ४९।

३. तारीख यह गलत है क्योंकि यह पत्र २८-४-१९०९ के अंकमें प्रकाशित हुआ था।

३२२. पत्र: छगनलाल गांधीको

जोहानिसबर्ग
अप्रैल १, १९ १

चि॰ छगनलाल,

आज कुछ और गुजराती सामग्री भेज रहा हूँ। आज सवेरे कुछ सामग्री भेजनेका इरादा था लेकिन कल्याणदास दफ्तर देरीसे आया और मैं दफ्तरके काममें लग जाना चाहता था इसलिए उसे डाकमें नहीं डलवा सका। फिर भी वक्त रहते सामग्री पहुँच जानेकी उम्मीद है।

११-१ पर प्रिटोरिया रवाना हो रहा हूँ। इसलिए बहुत नहीं लिख सकता।

कल्याणदास बुधके सवेरे रवाना होगा मंगलको नहीं। उसकी इच्छा यहाँ एक दिन रहनेकी है। इसलिए गुरुवारको वह तुम्हारे पास पहुँचेगा। तुम काफिर लड़केको उसे मिलने और सामान ले आनेके लिए तीसरे पहरकी गाड़ीपर भेज देना। मैं जानता हूँ गुरुवारको तुम सब अखबारके काममें व्यस्त रहोगे।

सम्भव हो तो गोकुलदास शुक्रवारको निकले। मगर छुट्टी दी जा सके तो वह ४-१ की गाड़ीसे रवाना हो सकता है और डाक गाड़ी पकड़ सकता है। टिकिट तो एक-तरफा ही लगेगा। अगर शुक्रवारको न निकल पाये तो शनिवारको बिलानागा निकले ताकि यहाँ रविवारको आ जाये। कोशिश शुक्रवारको ही भेजनेकी करो क्योंकि मुझपर कामकी भीड़ बहुत रहेगी।

शहरका काम कल्याणदास एकदम हाथमें ले ले। उसके लिए दूसरे दर्जेका सालाना पास निकलवा दो। मगर, जैसा कि तुम कहते थे उसे बीचमें ही लौटना पड़ा तो पैसा वापस मिल सकता है। फिलहाल तुम्हारा सारा ध्यान खाता-बहीपर होना चाहिए।

आज दिनको गाड़ीमें या रातको घरपर अधिक विस्तारसे लिख सकूँगा।

तुमने बुखारसे पीछा छुड़ा लिया यह खुशीकी खबर है।

मोहनदासके आशीर्वाद

श्री छगनलाल खुशालचन्द
मारफत इंडियन ओपिनियन
फीनिक्स

गांधीजीके हस्ताक्षरयुक्त मूल अंग्रेजी प्रतिकी फोटो-नकल (एस॰ एन॰ ४१५४) से।

३२३. नेटाल भूमि विधेयक

नेटालकी संसदमें 'भूमि धारा विधेयक' के रूपमें दूरगामी महत्त्वका एक विधेयक शीघ्र ही प्रस्तुत किया जायेगा। यह नेटाल सरकारका इस विधेयकको संसदसे पास करानेका दूसरा प्रयत्न है। जहाँतक भाड़ेदारोंकी हैसियतसे भूमिपर कब्जेका सम्बन्ध है भारतीय समाजके लिए सबसे महत्त्वकी धारा वह है जिसके द्वारा लाभदायक कब्जेका अर्थ यूरोपीयों तक सीमित कर दिया गया है। इस तरह जो भूमि भारतीय भाड़ेदारोंके कब्जेमें होगी उसका कब्जा अलाभदायक कब्जा माना जायेगा और फलस्वरूप उसपर भारी कर लगाया जा सकेगा। यह बात तो सभीने स्वीकार की है कि भारतीयोंमें अन्य दोष भले ही हों परन्तु वे काहिल नहीं हैं। वे पैदाइशी खेतिहर हैं। सभी मानते हैं कि उन्होंने इस उपनिवेशकी कुछ निकृष्टतम भूमि खेतीके योग्य बनाई है। उन्होंने घने जंगलोंको बागोंके रूपमें बदल दिया है और अपनी उत्पादन शक्तिसे नेटालके गरीब गृहस्थों तक बागोंकी पैदावार सरलतापूर्वक पहुँचाना सम्भव कर दिया है। क्या उनपर उनके गुणोंके कारण ही कर लगाया जायेगा? क्या सरकारके इस कामसे यूरोपीयोंके कब्जेकी जमीनोंमें वृद्धि होगी? हमें इसमें सन्देह है। और अगर हमारा सन्देह युक्ति संगत है तो हम यह निर्विवाद रूपसे कह सकते हैं कि सरकार 'लाभदायक कब्जा' शब्द समुच्चयकी उल्लिखित परिभाषाको कायम रखनेका आग्रह करके 'न खाय न खाने दे' की नीतिका अनुसरण करेगी। सरकार ऐसे कानूनोंसे नेटालकी भारतीयोंकी समस्याको हल न कर सकेगी। मन्त्रियों और लोकमत निर्माता नेताओंका कर्तव्य है कि वे समूचे सवालपर गम्भीरता-पूर्वक और शान्तिपूर्वक विचार करें और उसको अभी हालके आवेशपूर्ण भारतीय-विरोधी कानूनके बजाय निपुणतासे हल करें।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन ५-५-१९११

३२४. केपके विक्रेता-परवाने

अप्रैल २ के 'केप गवर्नमेंट गज़ट' में सामान्य वस्तु विक्रेताओंके व्यापारको नियमित करनेके लिए एक विधेयकका मसविदा प्रकाशित किया गया है। हम बिना हिचकिचाहट इस कदमका स्वागत करते हैं। यह मान लेनेपर कि व्यापारिक परवाने अन्धाधुन्ध जारी करनेपर कुछ प्रतिबन्ध लगाना जरूरी है, प्रस्तुत विधेयक अनिन्द्य है। इसमें निहित अधिकारोंकी रक्षा होती है और इसमें नये परवानोंके प्रार्थियोंके साथ अन्याय न होने देनेकी उचित सावधानी रखी गई है। इसमें यह निर्णय करनेका अन्तिम अधिकार लोगोंके हाथोंमें आ जाता है कि वे अपने बीचमें एक नया व्यापारी चाहें या न चाहें। प्रस्तुत विधेयक वर्तमान व्यापारियोंकी अनुचित प्रतियोगितासे रक्षा करता है और साथ ही इससे उनको नये उद्योगोंके लिए उचित सुविधाएँ भी मिलती हैं। यह नेटाल विक्रेता परवाना अधिनियमके समस्त दोषोंसे मुक्त है। इसमें निहित अधिकारोंकी सुरक्षाका पूरा ध्यान रखते हुए नेटालके कानूनसे जो कुछ कभी प्राप्त हो सकता था वह सब प्राप्त हो जाता है। हमें आशा है कि नेटाल-सरकार इस कानूनका

अनुकरण करेगी और उपनिवेशकी विधान-संहिताको उस कानूनसे मुक्त कर देगी जिसकी निन्दा सभी विचारशील लोगोंने की है और जिससे महामहिम सम्राट्की प्रजाके एक वर्गमें बहुत तीव्र क्षोभ उत्पन्न हुआ है।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, ५-५-१९०६

३२५. ब्रिटेन, तुर्की और मिस्र

हालके तारोंसे पता चलता है कि ब्रिटिश सरकार और तुर्क सरकारके बीच फिरसे घबराहट बढ़ गई है। मिस्रकी सीमाका निश्चय नहीं हो पाया है, इसीलिए यह सारी झंझट है। पहला झगड़ा अकाबाके पास शुरू हुआ। फिर सिनाई प्रायद्वीपमें टाबा नामपर कब्जा करनेके लिए तुर्क फौज गई। इसपर ब्रिटिश राजदूत सर निकोलस ओ'कोनरको ब्रिटिश सरकारने लिख भेजा कि वह तुर्क सरकारसे टाबासे फौज हटा लेनेकी सख्त माँग करें। किन्तु तुर्क सरकारने इस माँगपर कोई ध्यान नहीं दिया और मुकाबलेपर डटे रहनेमें जर्मन सम्राट्ने उसे प्रोत्साहित किया। अब तुर्क सिपाही अकाबामें किला बना रहे हैं और ऐसा लग रहा है, मानो लड़ाईकी तैयारी कर रहे हों। इसपर ब्रिटिश सरकारने मिस्रमें अपनी सेना बढ़ाना शुरू कर दिया है। ब्रिटिश सरकारको इस बातका भी डर लग रहा है कि मिस्रके लोग भी तुर्क सरकारके पक्षमें हैं। अगर ब्रिटिश और तुर्क सरकारके बीचकी इस तनातनीसे लड़ाईका मौका आया तो यह इस तरहका पहला ही मौका होगा। ऐसा नहीं लगता कि तुर्क सरकार भी पीछे हटेगी। 'विटनेस' के नाम आये तारसे ऐसा मालूम होता है कि रफाके पास जो सीमा-सूचक खम्भे गड़े थे उन्हें तुर्क फौजने उखाड़ फेंका है।[1]

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, ५-५-१९०६

३२६. हमारा कर्तव्य

एक्सेल्स नामसे किसी व्यक्तिने 'ऐडवर्टाइज़र' को एक पत्र लिखा है। उसका अनुवाद हमने इस अंकमें दूसरी जगह दिया है। वह सभी भारतीयोंके लिए विचारणीय है। एक्सेल्स का पत्र हमारे विरुद्ध उत्तेजना फैलानेवाला है। उसने सब-कुछ मजाक उड़ाते हुए लिखा है जिसका तात्पर्य यह है कि लड़ाईके समय भारतीय किसी कामके नहीं।

हमें इन आरोपोंपर पूरी तरह विचार करना चाहिए। हमने नेटालकी सरकारको सूचना भेजकर ठीक ही किया है। उससे हम अपना सिर कुछ तो ऊँचा रख ही सकते हैं। लेकिन इतना काफी नहीं है। हमें लगता है कि हम लोगोंको और भी ज्यादा मेहनत करके लड़ाईके वक्त उसमें हाथ बँटा सकनेकी हालतमें आ जाना चाहिए। नागरिक सेनाके कानूनकी [illegible]

१. रफियाह और अकाबाके बीच [illegible]

गोरोंको कानूनी तौरपर लड़ाईमें जाना पड़ता है। हम भी अपनी ताकत और तैयारी दिखा सकें तो भाग्यसे हमारे दुःख कटनेकी संभावना है। दुःख कटें चाहे न कटें लेकिन नेटालपर या दक्षिण आफ्रिकाके दूसरे किसी हिस्सेपर संकट आनेकी हालतमें दक्षिण आफ्रिकाके भारतीयोंको उसमें हाथ बँटानेके लिए तैयार होना ही चाहिए। अगर ऐसा न हुआ तो इसमें कोई शक नहीं कि यह हमारा दोष माना जायेगा।

सुना जाता है कि स्वाज़ीलैंडमें बलवा शुरू हो गया है। नेटालकी सरकारने बड़े पैमानेपर गोला-बारूद मँगवाया है। इस सबसे जाहिर होता है कि नेटालका विद्रोह अभी लम्बे समय तक चलेगा।[1] और अगर वह ज्यादा फैला तो समूचे दक्षिण आफ्रिकापर उसका असर पड़ेगा। इस बार नेटालको ट्रान्सवालकी मदद पहुँच चुकी है। केपने मदद देनेको कहा है और विलायतसे भी वचन आ गया है। यदि हम ऐसे समय अलग रहे तो इसमें शक नहीं कि उसका बहुत ही बुरा असर होगा। हम मानते हैं कि इस विषयमें हरएक भारतीयको बहुत गम्भीरताके साथ सोचना चाहिए।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन ५-५-१९०६

३२७. मोम्बासाका उदाहरण

मोम्बासासे वहाँके समाचारपत्रके दो और अंक आये हैं। उनसे पता चलता है कि मोम्बासाके भारतीय अपने अधिकारोंके लिए भरपूर कोशिश करना चाहते हैं। उन्होंने जो काम शुरू किया है वह हम सबके लिए अनुकरणीय है। हम मोम्बासाके भारतीयोंकी सफलता चाहते हैं।

पिछले अंकोंसे पता चलता है कि वहाँकी सभामें[2] दक्षिण आफ्रिकाके बारेमें जो गलतफहमी हुई-सी लगती थी जान पड़ता है उसमें कसूर अखबारवालोंका था। वहाँके भारतीय यह जानते हैं कि दक्षिण आफ्रिकामें हमें गोरोंकी बराबरीके अधिकार नहीं हैं। लेकिन अधिक महत्वकी बात तो उक्त समाचारपत्रमें उसके सम्पादकने जो लिखी है वह मालूम होती है। सम्पादक लिखते हैं कि भारतीयोंमें एकता नहीं है और जबतक एकता नहीं होगी वे अधिकार पाने योग्य बन नहीं सकेंगे। उनमें फूट-फाट बहुत है। अगर कमिश्नरको गोरोंके बारेमें कुछ जानना हो तो वह फौरन जान सकता है कि कौन-सा गोरा सब गोरोंकी ओरसे बोल सकता है। लेकिन जब कमिश्नरको भारतीयोंके बारेमें कुछ जानना हो तब उसे अलग-अलग जातियोंके पाँच-सात भाइयोंको बुलाना पड़ता है। अगर ऐसा है तो कहना होगा कि यह दुःखद है। हम सब एक ही देशके हैं। हम अलग-अलग जातियोंके हैं यह चीज हमें भूल जानी चाहिए। जबतक एक देशकी बात हमारे ध्यानमें नहीं रहेगी तबतक हमपर आनेवाले संकट दूर नहीं होंगे।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन ५-५-१९०६

१. देखिए "नेटाल विद्रोह" पृष्ठ ३१२–३।

२. देखिए "मोम्बासाकी सभा" पृष्ठ ३०६–७।

३२८ मजदूरोंका रहन-सहन

जो लोग समझदार हैं, उनमें आजकल खुली हवाकी कीमत बढ़ रही है। जहाँ बड़े शहर बसे हैं वहाँ मजदूरोंको सारा दिन कारखानेमें बन्द रहकर काम करना पड़ता है। शहरमें जमीनकी कीमत ज्यादा होनेसे कारखानाकी इमारतें छोटी होती हैं और मजदूरोंके रहनेके घर भी तंग होते हैं। इस कारण मजदूरोंकी शारीरिक हालत निरंतर बिगड़ती जाती है। लन्दनमें हीन्सबरोके डॉक्टर न्यूमनने दिखा दिया है कि जहाँ एक कोठरीमें ज्यादा लोग रहते हैं वहाँ एक हजारपर १८ आदमी मरते हैं। उतने ही लोग दो कोठरियोंमें रहें, तो २२ आदमी मरते हैं मगर उतने ही लोगोंके लिए तीन कोठरियाँ हों तो ११ आदमी मरते हैं और चार कोठरियाँ हों तो सिर्फ पाँच आदमी मरते हैं। इसमें अचरजकी कोई बात नहीं। आदमी खानेके बिना कुछ दिन बिता सकता है, पानीके बिना एक दिन बिता सकता है पर हवाके बिना एक मिनट बिताना असम्भव है। जिस चीजका इतना अधिक उपयोग है, अगर वह चीज शुद्ध न हो तो उसका बुरा परिणाम निकले बिना रह नहीं सकता। इस विचारके कारण कैडबरी ब्रदर्स लीवर ब्रदर्स वगैरह बड़े कारखानेवालोंने जो हमेशा अपने मजदूरोंकी बहुत चिन्ता रखते हैं अपने कारखाने शहरोंसे हटाकर खुली जगहोंमें बसाये हैं। मजदूरोंके रहनेके लिए भी बहुत अच्छे घर बनाये हैं, और वहाँ बाग-बगीचे पुस्तकालय वगैरह सब सुविधाएँ हैं। इतना सारा खर्च करनेपर भी उन्हें अपने व्यापारमें लाभ रहा है। इससे प्रेरणा लेकर अब इंग्लैंडमें चारों तरफ ऐसी हलचल बढ़ रही है।

यह बात भारतीय नेताओंके लिए विचारणीय है। हम साफ हवाकी कीमत नहीं समझते इस कारण बहुत नुकसान उठाते हैं। हमारे बीच प्लेग जैसी बीमारियाँ फैल सकनेका भी यह एक प्रबल कारण है।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन ५–५–१९११

३२९ भारतीय व्यापार-संघ

पिछले अंकमें हम इस विषयपर श्री उमर हाजी आमद झवेरीका पत्र प्रकाशित कर चुके हैं। यह पत्र विचार करने योग्य है। अंग्रेजी व्यापार-संघ (चेम्बर ऑफ कॉमर्स) का कितना प्रभाव है इसे दक्षिण आफ्रिकाकी स्थितिका जाननेवाला हर भारतीय समझ सकता है। अगर भारतीयोंने पहलेसे अंग्रेजोंके संघोंमें हाथ बँटाया होता तो आज भारतीय व्यापारियोंकी हालत कुछ और ही होती। उसमें बहुत सुधार हो जाते। हम जानते हैं कि जब भारतीय व्यापारी पहली बार दक्षिण आफ्रिकामें दाखिल हुए तब अंग्रेज उन्हें अपने संघमें भरती होनेके लिए निमन्त्रित करते थे। अब हालत यह है कि हम प्रवेश करना चाहें तो वे नामंजूर कर देंगे।

श्री उमर झवेरीने अब यह विचार प्रकट किया है कि अगर हम अंग्रेजोंके संघमें प्रवेश न पा सकें तो भी हम अपना निजी व्यापार-संघ बना सकते हैं। अगर ऐसा संघ स्थापित करके व्यापारी उसमें लगनसे काम करें और आवश्यक सुधार कर लें तथा हम तरहका तंत्र

जो कहे उसके अनुसार दूसरे भारतीय व्यापारी चलें तो यह बहुत काम कर सकेगा। अंग्रेजोंके संघका इसलिए बहुत प्रभाव पड़ता है कि दूसरे व्यापारी उसकी सत्ता स्वीकार करते हैं। मगर हम ऐसी हालत पैदा न कर सकें तो संघकी स्थापना करना या न करना बराबर ही माना जायेगा। अतएव खूब विचार करके अनुभवी और परोपकारी भारतीय व्यापारी इकट्ठे होकर भारतीय व्यापार-संघकी स्थापना करें, तो काम हो सकता है और यह माना जा सकता है कि भारतीय व्यापारियोंकी स्थितिको सुधारनेके लिए एक अच्छा रास्ता अपनाया गया है।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन ५-५-१९०६

३३० जोहानिसबर्गकी चिट्ठी

मई ५, १९०६

मलायी बस्ती

मैं यह खबर दे चुका हूँ कि मलायी बस्तीके बारेमें शिष्टमण्डल जाकर लौट आया है।[1] लेफ्टिनेंट गवर्नरने उसका जवाब भेजा है। उसमें कहा गया है कि मलायी बस्तीका कुछ हिस्सा रेलवेवाले ले लेंगे। बाकी हिस्सा जोहानिसबर्गकी नगरपालिका लेगी। जिन लोगोंके मकान बस्तीमें हैं उन्हें दोनों विभागोंकी ओरसे हर्जाना मिलेगा और उपनिवेश-सचिव बस्तीके निवासियोंके लिए दूसरी बस्ती बनायेंगे। इस जवाबका कोई मतलब नहीं होता। इतना तो शिष्टमण्डलके जानेसे पहले भी सब लोग जानते थे। स्थानीय सरकारकी ओरसे तत्काल किसी प्रकारका इन्साफ मिलता नहीं दिखता।

रेलवेकी परेशानी

जोहानिसबर्गसे प्रिटोरिया जानेवाली ८-३ की और ४-४ की गाड़ीमें और प्रिटोरियासे आनेवाली सुबह ८-३ की गाड़ीमें भारतीय और दूसरे काले लोगोंको यात्रा करनेकी जो मनाही है, उसके बारेमें ब्रिटिश भारतीय संघकी ओरसे उसके अध्यक्ष और मन्त्री मुख्य प्रबन्धक श्री प्राइससे मिलकर आये हैं। लगभग एक घंटे तक बातचीत हुई। श्री प्राइसका कहना है कि फिलहाल गोरोंमें इतनी तीव्र उत्तेजना है कि इस मामलेमें भारतीयोंको बहुत दबाव नहीं डालना चाहिए। आखिर उन्होंने यह मध्यम मार्ग सुझाया कि यदि किसी भारतीयको किसी खास काममें इन गाड़ियोंमें जाना जरूरी ही हो तो उसे स्टेशन-मास्टरसे कहना चाहिए। वह गार्डके साथ बैठनेका प्रबन्ध कर देगा। लेकिन श्री प्राइसकी सलाह यह है कि फिलहाल जहाँतक बन सके भारतीयोंको इन तीन गाड़ियोंमें कम ही जाना चाहिए। उन्होंने यह मंजूर किया है कि इस प्रकारकी रुकावटें बढ़ाई नहीं जायेंगी। इस बारेमें एक जानने योग्य मामला हुआ है। एक काला आदमी दूसरे दर्जेके डिब्बेमें जा रहा था। उसके पास एक गोरी महिला बैठी थी। यह देखकर बाउकर नामक एक गोरेका खून खौल उठा। उसने उस काले आदमीको वहाँसे हट जानेको कहा। काले आदमीने अपना टिकट दिखाया। लेकिन इससे बाउकरको सन्तोष नहीं हुआ। उसने गार्डसे कहा। गार्डने बीचमें पड़नेसे इनकार कर दिया। इसपर बाउकरने

१ देखिए "जोहानिसबर्गकी चिट्ठी" पृष्ठ २८०–१।

दूसरे गोरे यात्रियोंको इकट्ठा करके काले आदमीको धमकी दी कि उसे जबरदस्ती निकाल बाहर किया जायेगा। इसपर गार्डने लाचार होकर बेचारे काले आदमीको उसकी जगहसे हटा दिया। इसमें किसी अधिकारीका दोष नहीं दिया जा सकता। जबतक गोरे अधिक पक्षपाती हैं, तबतक ऐसी बाधाएँ आती ही रहेंगी। दूसरे एक गोरेने "कुली-यात्री (कुली ट्रैवेलर) शीर्षकसे ट्रान्सवाल लीडर में जो लिखा है, उसका अनुवाद नीचे दे रहा हूँ :

> श्री डाउकरने काले आदमीके बारेमें लिखा है इसके लिए गोरोंको उनका उपकार मानना चाहिए। कुछ समय पहले मैं पॉचिफस्ट्रूमसे पार्क जा रहा था। उस गाड़ीमें दो 'कुली' भी थे। यह सच है कि वे दूसरे डिब्बेमें बैठे थे। लेकिन इससे रोग दूर नहीं होता क्योंकि उनके जानेके बाद फिर उसी डिब्बेमें गोरोंको बैठना होगा। फिर, उन दोनों कुलियोंने अपने हाथ पाख़ानेमें टँगे हुए रूमालोंसे पोंछे। बादमें इन्हीं रूमालोंसे गोरोंको भी अपने हाथ पोंछने पड़ेंगे। और मुझे तो विश्वास है कि कोई भी अच्छा गोरा कुली द्वारा काममें लाये गये प्यालों या तौलियेका उपयोग करना नहीं चाहेगा। दरअसल रेलवेवालोंको चाहिए कि वे पब्लिक का कुछ ख्याल रखें।

लोग इस तरह कई अखबारोंमें लिखते पाये जाते हैं। ऐसे मौक़ोंपर भारतीयोंके लिए एक ही रास्ता है कि वे धीरज रखें।

श्री रिच तथा सर्व श्री जॉर्ज और जेम्स गॉडफ्रे

यहाँके अखबारमें तारसे प्राप्त खबर छपी है कि श्री रिच विलायतमें अपनी परीक्षा पास कर चुके हैं। इसी तरह श्री जॉर्ज और श्री जेम्स गॉडफ्रे भी अपनी अन्तिम परीक्षामें पास हो गये हैं। अब कुछ ही समयमें ये दोनों भाई बैरिस्टर बनकर वापस आयेंगे।

चीनियोंकी हालत

जो चीनी खानोंमें काम कर रहे हैं उन्हें यदि यहाँका काम पसन्द न हो तो सरकारके खर्चसे वापस भेजनेकी विज्ञप्ति चीनी भाषामें जारी करनेके लिए केन्द्रीय सरकार भार डाल रही है। दूसरी तरफ खानमालिक कहते हैं कि वे अपनी बस्तियोंमें इस तरहकी विज्ञप्ति नहीं चिपकाने देंगे। अगर खानवालोंने इस तरह विरोध किया तो सम्भव है कि भारी झगड़ा खड़ा हो जाये।

ट्राम सम्बन्धी मामला

ट्राम सम्बन्धी परीक्षात्मक मुकदमा अभी ख़त्म नहीं हुआ है। यो दुबारा यह मामला फिरसे न्यायाधीशकी अदालतमें चलनेवाला है। पक्षके वकीलने शनिवार १२ तारीखकी पेशी निश्चित कराई है।

संविधान-समिति

सर जोसेफ वेस्ट रिजवेका आयोग ट्रान्सवाल पहुँच गया है। इस समय वह प्रिटोरियामें है। ब्रिटिश भारतीय संघने पूछा है कि भारतीयोंकी हालतके बारेमें संघ जो प्रमाण पेश करना चाहे आयोग उन्हें लेगा या नहीं? अगर आयोग प्रमाण लेना स्वीकार करेगा तो उसके सामने गवाही दिलाने की भी व्यवस्था की जायेगी।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन १७-५-१९०९

२३१ पत्र : छगनलाल गांधीको

जोहानिसबर्ग
मई ५, १९११

चि० छगनलाल,

तुम्हारी चिट्ठी मिली। तुम्हें इस हफ्ते जोहानिसबर्गकी चिट्ठी नहीं मिली — आश्चर्य है। मैंने निस्सन्देह भेजी थी। जो लेख मैंने भेजे थे उन सबकी मेरे पास सूची है। इंडियन ओपिनियन मिलते ही मैं उसे मिलाकर देखूँगा और तुम्हें सूचित करूँगा। अगर गुजराती और अंग्रेजीकी प्रति मेरे पास पेशगी गुरुवारको भेजी जा सके तो बहुत अच्छा हो। क्योंकि तब वे मुझे शुक्रवारको सुबह मिल जायेंगी और उनका उपयोग कर सकूँगा। तुमने बहुत-सी कतरनें भेजी हैं। गुजरातीमें उनका उपयोग कर रहा हूँ। किन्तु सचमुच तो उनमें से कुछका उपयोग इसी हफ्तेमें हो जाना चाहिए था। अगर हो गया हो तो मुझे उनके बारेमें कुछ नहीं लिखना चाहिये। अगर पेशगी प्रति मिले तो यह लिखना रविवारको किया जा सकता है। प्रतियाँ भेजते हुए तुम वहाँ भी उनपर निशान लगा सकते हो कि तुमने हालके अंकमें उनका उपयोग किया है अथवा नहीं। आशा करता हूँ कल माकुमदास रवाना हो चुका होगा। फिर मैं उसे सोमवारके कामके लिए तैयार कर सकूँगा किन्तु कोई तार न होनेसे मुझे डर है कि वह रवाना नहीं हुआ। मुझे यह बताओ कि क्या भी आइजकने जो काम तुमने उन्हें सौंपे थे किये हैं। अगले हफ्ते श्री मागरकी चीजोंकी सूचीकी याद दिलाना। मैं तुम्हारी चिट्ठी फाड़ रहा हूँ इसलिए मुमकिन है मैं इसके बारेमें बिलकुल भूल जाऊँ। दूसरे कामोंकी तरह तुम्हें सर्वसाधारण देखरेख करनी चाहिए और अपना बाकी समय हिसाब-किताब ठीक करनेमें लगाना चाहिए। मैं चाहता हूँ कि तुम अपने आपसे किसी निश्चित तिथि तक हिसाब तैयार कर लेनेका वादा कर लो।

जमनादासको तुम्हारे लिए शक्तिकी मीनार हो सकना चाहिए। अगर वह तुम्हारे साथ रहनेको तैयार है तो रहे मगर मैं चाहता हूँ यदि वह हेमचन्दके साथ रहे तो उसका असर हेमचन्दपर ज्यादा ठीक पड़ेगा। दोपहरको वह शाम फीनिक्समें भोजन नहीं करेगा। इसलिए चाहे हुआ तो वह प्यारी [यहाँ] करेगा। सो वह अलग भी कर सकता है मगर तुम चाहो तो मिलकर दूसरी बात भी निश्चित कर सकते हो। मैं प्रसन्न हुआ कि तुम अपनी जमीनको सुधरी बनानेकी ओर ध्यान दे रहे हो। यह बहुत जरूरी काम है और मैं चाहता हूँ कि अब चूँकि तुम्हें अपेक्षाकृत अधिक स्वतन्त्रता रहेगी तुम व्यवस्थित रूपसे अपना समय इसमें लगाओ। तुम्हारे इन दो एकड़ोंमें जरा भी घासपात नहीं होना चाहिए। बगीचेके बारेमें मामको लिखूँगा[1]। बागवानीके बारेमें जो कतरन तुमने भेजी है, उसे वापस कर रहा हूँ। मेरा खयाल है भी वेस्टके पास एक छोटी-सी किताब है। ऐसे मामलोंमें तुम्हें अगुआई करनेकी बात सामनी

१. यह उपलब्ध नहीं है।

२. श्री वेस्टका कहना है कि [illegible] गुजराती पेशगी [illegible] थी। [illegible] पेशगी [illegible] था। [illegible] हुए [illegible] था। [illegible] पत्र [illegible] परन्तु [illegible] ऐसे ही रहने [illegible]।

चाहिए। मैं मोहनलालको एक साप्ताहिक चिट्ठीके बारेमें लिखूँगा। व्यासमे भी मैंने कहा। उन्हें फिनिक्स ओपिनियन निःशुल्क भेजनेकी जरूरत मुझे नहीं लगती। उन्हें अनुभव करने दो कि ये पत्र लिखना उनका कर्तव्य है।

नाटकवालोंसे अभीतक मैंने पैसा वसूल नहीं पाया। जबतक मैं वसूली कर न लूँ तुम काम मत करना।

जोहानिसबर्गके पत्रके सिलसिलेमें क्या वह सीधा आनन्दलालको तो नहीं मिला। क्योंकि मुझे लगता है मैंने अपने गुजराती लेखोंकी पहली किस्त आनन्दलालके नाम भेजी थी।

मूल अंग्रेजी प्रतिकी फोटो-नकल (एस० एन० ४३५६) से।

३३२ पत्र छगनलाल गांधीको

रविवार

[मई ९, १९०६][1]

चि० छगनलाल,

मुझे तुमको बहुत-कुछ लिखना है किन्तु आज समय नहीं। तुम्हें फिनिक्स एकदम हिसाबमें भिजना है। इसके साथ गुजराती सामग्री भेज रहा हूँ। उसे देखकर और श्री हरिलाल ठाकुरको दिखाकर चि० आनन्दलालको दे देना। उसे अलग पत्र लिखनेकी इस समय फुरसत नहीं है। दूसरा पत्र आज रातका लिखूँगा वह उसे सीधा भेज दूँगा। गुजरातीमें पत्रक न छपे इसका ध्यान रखना। अपनी निगाह रखना किन्तु सारा बोझा भी ठाकुरपर डालना। मैं उन्हें लिखनेवाला हूँ कि गुजरातीकी सब सामग्री वे तुमको दिखायें। किन्तु तुम्हें उसपर फिनिक्स एकदम बहुत समय नहीं देना है। शुक्रवार तक मैंने २ नाम और प्राप्त कर लिये हैं। भेजूँगा। उनमें से ९ व्यक्तियोंका पैसा भी आ गया है। चि० कल्याणदास मंगलको मुबह आयेगा। वह यहाँ बुधवारकी शामको पहुँचेगा। बुधवारकी शामको तुम या कोई और, उसे क्रीनिक्स स्टेशनपर मिल जाओ तो काफी है। चि० कल्याणदासको दर्शनका सारा काम सौंप देना। तुम पखवाड़ेमें एक बार सम्पादककी टिकटसे जाओ तो काफी है। हिसाबके ऊपर मुख्य ध्यान तुम्हें ही देना चाहिए।

चि० गोकुलदासको जितनी जल्दी बने, भेजना। अथवा शनिवारको भेजना।

मोहनदासके आशीर्वाद

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल गुजराती प्रतिकी फोटो-नकल (एस० एन० ४३५७) से।

1. यह पत्र अधूरा है।

३३१. पत्र : लॉर्ड सेल्बोर्नको[1]

[जोहानिसबर्ग
मई १२, १९०६ के पूर्व]

महोदय,

आपका गत मासकी ३ तारीखका क्रमांक १५/४/१९०६ पत्र मिला। मेरे संघका यह मत है कि जो शिकायत परमश्रेष्ठकी सेवामें बताई गई थी उसकी जैसी जाँच नहीं की गई जैसी परिस्थितियोंके अनुसार आवश्यक थी। जहाँतक टाउनटोकी बात है मेरा संघ नये विभागकी कारगुजारीपर निगाह रखेगा। इस बीच आपका ध्यान सादर इस तथ्यकी ओर आकर्षित करता हूँ कि प्रार्थनापत्र महीनोंसे विचारार्थ पड़े हुए हैं। एक तरफ इतनी देरदार की जाती है और दूसरी तरफ प्रार्थियोंकी सुविधाका खयाल रखनेका दावा किया जाता है। इन दोनोंका मेल बैठाना मेरे संघके लिए कठिन हो रहा है।

जहाँतक श्री सुलेमान मंगाके मामलेका सम्बन्ध है मेरे संघने पूरे तथ्योंका पता लगाया है और मेरे संघका खयाल है कि इस बारेमें परमश्रेष्ठको जो सूचना दी गई थी वह किसी भी तरह पूर्ण नहीं है। प्रार्थनापत्रके सम्बन्धमें जो महत्त्वपूर्ण तथ्य दिये गये थे उनमें एक भी गलत नहीं था। प्रार्थनापत्र श्री गांधीके द्वारा दिया गया था और मेरे संघको मालूम है कि श्री मंगाके एक मित्रसे उन्हें निर्देश प्राप्त हुए थे। प्रार्थनापत्रकी आधारभूमि यह नहीं थी कि श्री मंगा अपने चाचाको देखने जाना चाहते थे बल्कि यह कि वह डेलागोआ-बे जाते समय ट्रान्सवालसे गुजरना चाहते थे। उन्हें अस्थायी अनुमतिपत्रकी प्रार्थनाका अस्वीकृतिसूचक उत्तर १४ मार्चको मिला। रिश्तेदारके परिचयके सम्बन्धमें अन्तर तो प्रार्थनापत्रकी अस्वीकृतिके बाद हुआ था। उपर्युक्त पत्रके उत्तरमें श्री गांधीने अनुमतिपत्र अधिकारीका अपना आश्चर्य प्रकट करते हुए जो पत्र लिखा उसमें वे चाचाको पिता लिख गये। जैसा वे कहते हैं पूर्ववर्ती पत्रका हवाला न देनेके कारण ही उनसे ऐसा हो गया। कुछ भी हो इसमें धोखा देनेका सवाल ही नहीं उठता क्योंकि रिश्तेका फर्क इतना हल्का है कि उसे सिर्फ एक गलती ठहराया जा सकता है। बल्कि सच पूछिए तो जैसा अब पता चला है डेलागोआ-बेमें श्री मंगाके न पिता थे न चाचा बल्कि एक चचेरे भाई थे। इसी कारण एक दूसरी अशुद्धि भी हो गई कि श्री मंगाको उसमें ब्रिटिश भारतीय कहा गया जबकि वह दरअसल पुर्तगाली भारतीय थे। यह सब इसलिए हुआ कि निर्देश देनेवाला श्री मंगाका एक ऐसा मित्र था जो उन्हें घनिष्ठ रूपमें नहीं जानता था। परन्तु इनमें से किसी भी तथ्यका कोई सीधा प्रभाव प्रार्थनापत्रपर नहीं पड़ता था। दूसरे पत्रमें इस आशयकी सूचना दी गई थी कि श्री मंगा इंग्लैंडसे आनेवाले एक छात्र हैं। इस मामलेको बादमें जो रूप दिया गया उससे तो यही दुःखदायी तथ्य सामने आता है कि एक ब्रिटिश भारतीयकी हैसियतसे श्री मंगा वह न पा सके जो इस बातका पता लगनेपर कि वे पुर्तगाली प्रजा हैं, अनायास मिल गया।[2] मेरे संघकी तुच्छ सम्मतिमें श्री सुलेमान मंगाका मामला इस दृष्टिसे बहुत महत्त्वपूर्ण है कि उससे प्रकट हो जाता है कि ट्रान्सवालमें ब्रिटिश भारतीय समाज किस कठिन परिस्थितिमें है। अनुमतिपत्र नामंजूर करनेका जो कारण

१. यह "ब्रिटिश भारतीय संघका पत्र" शीर्षकसे इंडियन ओपिनियनमें छपा था।
२. देखिए "पत्र : ब्रिटिश एजेंटको", पृष्ठ २८३-४।

दिया गया था उसे बतानेसे भी संघको इनकार कर दिया गया। मेरे संघको तो पहली बार आपके पत्रसे ही इसका पता चला। तथापि उक्त विवरणसे पता चलता है कि डेलागोआ-बेके रिश्तेदारके बयानमें हेरफेर अस्वीकृतिका कारण नहीं बन सकता क्योंकि जब निर्णयकी घोषणा हुई तब बालकको पिता बतानेकी भूलका पता नहीं चल पाया था। मेरे संघका यह निवेदन है कि अस्थायी अनुमतिपत्र या जिसे अभ्यागत पास कह सकते हैं देनेमें काफी ढिलाईसे काम लिया जाना चाहिए और हर हालतमें प्रार्थियोंको यह भी बता दिया जाना चाहिए कि उनके प्रार्थनापत्र क्यों नामंजूर हुए हैं। इस मामलेमें हुए पत्र-व्यवहारकी जो प्रति मेरे संघने प्राप्त की है उसे इसके साथ नत्थी करता हूँ।[1]

एशियाई नाबालिग पुरुषोंकी आयु-सीमाके बारेमें मेरे संघका सादर निवेदन है कि आपके पत्रमें जिन बुराइयोंका जिक्र किया गया है, वे आयुकी सीमा घटा देनेसे दूर नहीं होंगी। जो धोखा देनेका इरादा रखते हैं वे तो धोखा देते ही रहेंगे फिर चाहे आयु-सीमा सोलहकी हो या बारहकी। मानव-स्वातन्त्र्यको बाँधनेवाले कानूनोंका दुरुपयोग तो अनिवार्य है किन्तु मेरा संघ सादर निवेदन करता है कि ये बुराइयाँ भी कोई विस्तृत पैमानेपर नहीं हैं और इनसे सर्वथा बचाव किया जा सकता है। क्या मैं यह कहनेका और साहस कर सकता हूँ कि आयु-सीमामें कमी करना अपराधी व्यक्तियों द्वारा किये गये अपराधोंके लिए निर्दोष व्यक्तियोंको दण्ड देना है।

बिना किसी आयु या लिंग-भेदके सभी व्यक्तियोंके लिए अनुमतिपत्र लेनेकी शर्तके बारेमें मेरा संघ यह समझता है कि यह सिर्फ ब्रिटिश भारतीयों या एशियाइयोंपर ही लागू होती है, क्योंकि मेरे संघको इस बातकी जानकारी है कि अनेक यूरोपीय बच्चों और स्त्रियोंने बिना किसी अनुमतिपत्रके इस देशमें प्रवेश किया है। मेरे संघका निवेदन है कि पत्नियों और पाँच वर्ष तक के माँकी गोदके बच्चोंके लिए अनुमतिपत्र लेकर चलनेकी शर्तकी कोई आवश्यकता नहीं है, और इससे बहुत अधिक सन्ताप ही पैदा होनेवाला है। इसलिए मेरा संघ सादर एक बार फिर परमश्रेष्ठ द्वारा सहानुभूतिपूर्ण हस्तक्षेपके लिए अनुरोध करता है।

आपका आज्ञाकारी सेवक,
अब्दुल गनी
अध्यक्ष
ब्रिटिश भारतीय संघ

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन १२–५–१९ ९

१. ये यहाँ नहीं दिये जा रहे हैं।

३१४. भारतीय स्वयंसेवा

वतनी-विद्रोहके सम्बन्धमें भारतीय समाजकी स्थितिपर नेटाल ऐडवर्टाइज़र में जो पत्र-व्यवहार प्रकाशित हुआ है, उसकी ओर सामान्यतः हमारा ध्यान देना उचित नहीं होता। परन्तु चूँकि हमारे सहयोगीके संवाददाताओंने जिस विषयपर विचार व्यक्त किये हैं वह भारतीय समाज और उपनिवेश — दोनोंके लिए अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है, इसलिए हमारा उनके द्वारा उठाये गये मुद्दोंपर विचार करना कोई गुनाह नहीं है। कुछ संवाददाताओंने अन्धाधुन्ध गालियोंकी जो बौछार की है उससे हमारा कोई सरोकार नहीं है।

एक संवाददाताने व्यंग्यपूर्वक यह सुझाव पेश किया है कि भारतीयोंको सनाकी अगली पंक्तिमें रखा जाये ताकि वे भाग न जायें और फिर उनकी और वतनियोंकी लड़ाई देवताओंके देखने लायक होगी। हम संवाददाताकी बातपर गम्भीरतापूर्वक विचार करना चाहते हैं। और यह सुझाते हैं कि यदि यह तरीका अपनाया जाये तो निस्सन्देह भारतीयोंके लिए उससे बढ़िया कोई दूसरी बात न होगी। अगर वे कायर हैं तो उनकी जो गति होगी वे उसके पात्र होंगे। यदि वे वीर हैं तो वीरोंके लिए अगली पंक्तिमें रहनेसे अच्छी दूसरी बात नहीं हो सकती। परन्तु दुःख तो यह है कि सरकारने और यूरोपीय उपनिवेशियोंने जिन्होंने बरसोंकी नीतिका संचालन किया है, भारतीयोंको आवश्यक अनुशासन और प्रशिक्षण देनेकी प्रारम्भिक सावधानी भी नहीं बरती है। इसलिए भारतीयोंसे बन्दूक चलाने अथवा युद्ध-सम्बन्धी कोई भी कार्य बहुत कुशलतापूर्वक करनेकी आशा रखना व्यवहारतः असम्भव है। पिछले युद्धमें भारतीय आहत सहायक-दलने आवश्यक प्रशिक्षण तथा अनुशासनके बिना भी बहुत अच्छा काम किया था वह इसीलिए कि जिन भारतीय नेताओंने उसमें योग दिया था वे डॉ० बूथ द्वारा पहले ही प्रशिक्षित और तैयार किये जा चुके थे।

दूसरे संवाददाताने सुझाव दिया है कि भारतीयोंको हथियार न दिये जायें क्योंकि यदि ऐसा किया गया तो वे अपने हथियार वतनियोंके हाथ बेच देंगे। यह सुझाव मूर्खतापूर्वक दिया गया है और वस्तुतः निराधार है। भारतीयोंको कभी हथियार नहीं दिये गये इसलिए यह कहना स्पष्ट मूर्खता है कि यदि उनको हथियार दिये गये तो वे एक विशेष दिशामें काम करेंगे। यह भी सुझाया गया है कि वह प्रस्ताव सस्ती वाहवाही लूटने तथा कुछ ऐसी चीज प्राप्त करनेके लिए किया गया है जो कानूनकी सामान्य कार्यवाहीमें प्राप्त नहीं की गई है। प्रथम वक्तव्य निन्दात्मक है और उसके खण्डन साबित होनेका सर्वोत्तम मार्ग यही है कि ये संवाददाता सरकारको हमारा प्रस्ताव माननेके लिए तैयार करें और तब देखें कि प्रतिक्रिया पर्याप्त है अथवा नहीं। दूसरे वक्तव्यको तो समझना ही कठिन है। अगर उसका मंशा साफतौर यह प्रकट करनेका है कि भारतीय युद्ध-कार्यमें सेवा करके अपनी शिकायतोंको दूर करानेकी आशा रखते हैं तो वह बिलकुल ठीक है और इस उद्देश्यके लिए किसी भी भारतीयको लज्जित नहीं होना चाहिए। इससे ज्यादा अच्छी और प्रशंसनीय और क्या बात हो सकती है कि समाज संकटके अवसरपर भारतीय अपने उपनिवेशवासी अन्य भाइयोंके साथ कन्धेसे कन्धा मिलाकर लड़ें और यह साबित करें कि वे नागरिकताके उन सामान्य अधिकारोंके जिन्हें वे अबतक बराबर माँगते आ रहे हैं अयोग्य नहीं हैं। परन्तु यह भी उतना ही सच है कि यह प्रस्ताव बिना इसे युद्ध-कार्यके बदलेमें और इस बातका खयाल किये बिना किया गया है कि हमारी शिकायतें दूर होंगी या

नहीं। इसलिए हमारे खयालसे प्रत्येक उपनिवेशीका विशेष उद्देश्य होना चाहिए कि वह भारतीय समाजके इस प्रस्तावका समर्थन करे और इस प्रकार अपने विवेक एवं दूरदर्शिताका परिचय दे क्योंकि यह गम्भीरतापूर्वक नहीं कहा जा सकता कि युद्धके लिए एक खास पूर्णतः वफादार और अच्छे प्रशिक्षणके योग्य भारतीयोंकि उपयोगसे आँख मूँदकर इनकार करनेमें कोई बुद्धिमानी या नीति-कुशलता है।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, १२-५-१९०६

२३५ भारतीयोंके अनुमतिपत्र

अनुमतिपत्र अध्यादेशके अमलके सम्बन्धमें ब्रिटिश भारतीय संघने जो आवेदनपत्र भेजा था अब उसका उत्तर लॉर्ड सेल्बोर्नने दे दिया है। परमश्रेष्ठके उत्तरमें जो तथ्य एवं तर्क दिये गये हैं उनका निराकरण करते हुए संघने फिर एक पत्र भेजा है। हम यह कहे बिना नहीं रह सकते कि लॉर्ड सेल्बोर्नका उत्तर अत्यन्त निराशाजनक है। संघने अपने उत्तरमें[1] श्री मंगाके मामलेकी विशद चर्चा की है। इसलिए श्री मंगाकी अनुमतिपत्रकी दर्खास्तको अस्वीकार करनेका जो विचित्र कारण दिया गया है, उसपर हम इससे ज्यादा कुछ कहनेकी आवश्यकता नहीं समझते।

लॉर्ड सेल्बोर्नके पत्रसे यह प्रत्यक्ष है कि उम्रकी सीमा मनमाने तौरपर सोलहसे बारह कर दी गई है क्योंकि जैसा संघने कहा है कुछ लोगों द्वारा नियमोंका उल्लंघन उम्रकी सीमा घटानेका कोई कारण नहीं हो सकता। जो स्त्रियाँ अपने पतियोंके साथ आती हैं उनके लिए अलग अनुमतिपत्र लेना आवश्यक करके भारतीयोंकी भावनाकी बिलकुल उपेक्षा की गई है। यह एक नई बात है जिसका कतई कोई औचित्य नहीं है। एशियाई-विरोधी दलने भारतीय स्त्रियोंकी बाबत विषयमें एक शब्द भी नहीं कहा है। जैसा सुविदित है, ट्रान्सवालमें बहुत कम भारतीय स्त्रियाँ हैं और वे किसी प्रकार व्यापारमें प्रतियोगिता नहीं करतीं। उनका काम केवल अपनी घर-गृहस्थीकी व्यवस्था तक सीमित है। इसलिए हमें स्पष्ट रूपसे स्वीकार करना पड़ता है कि लॉर्ड सेल्बोर्नने पत्नियोंके लिए अलग अनुमतिपत्र लेनेके बारेमें जो उत्तर दिया है उसके लिए हम तैयार नहीं थे। क्या यह कोई नई बात मालूम हुई है कि शान्ति-रक्षा अध्यादेशके अनुसार आयु और लिंगका विचार किये बिना ट्रान्सवालमें सभीको अनुमतिपत्र लेना जरूरी है? अगर यह कोई नई बात नहीं मालूम हुई है तो अभीतक भारतीय स्त्रियोंसे कोई अनुमतिपत्र क्यों नहीं माँगा जाता था? और भारतीय बच्चोंको अभी कुछ समय पहले तक अनुमतिपत्रकी छूट क्यों दी गई थी?

और जैसा कि संघने बताया है शान्ति रक्षा अध्यादेश यूरोपीयोंपर लागू नहीं है क्योंकि जब यूरोपीय महिलाएँ अपने पतियों और १६ सालसे कम उम्रके बच्चे अपने माता-पिताओंके साथ यात्रा करते हैं तो वे अनुमतिपत्र लेने या साथ रखनेसे मुक्त होते हैं। परमश्रेष्ठने भारतीय महिलाओंके विषयमें भारतीयोंकी विशेष भावप्रवणताका भी ख्याल नहीं किया है। हमें यह कहनेमें जरा भी झिझक नहीं है कि वह कानून अनुचित अपमानजनक और बिलकुल अनावश्यक है। अगर इसको लागू किया गया तो इससे ऐसा क्षोभ पैदा होगा जिसको दूर करना कठिन होगा। दरअसल यह आश्चर्य है कि इन नये कायदोंको जारी करनेके बाद भी परमश्रेष्ठ अपने उत्तरकी समाप्ति इन शब्दोंके

[1] देखिए "पत्र: लॉर्ड सेल्बोर्नको" पृष्ठ ११८-१९।

साथ कह सकते हैं कि अनुमतिपत्र देनेका काम “अभी परिस्थितियोंमें प्रार्थियोंकी सुविधाका यथासंभव खयाल रखते हुए किया जा रहा है। जबतक आयुकी सीमा फिर वही नहीं कर दी जाती जबतक भारतीय स्त्रियाँ अनावश्यक अपमानसे मुक्त नहीं की जातीं और जबतक भारतीय परवानार्थियोंके प्रार्थनापत्रोंपर, मिलते ही तुरन्त विचार नहीं किया जाता तबतक हमारी विनम्र सम्मतिमें यदि परमश्रेष्ठ तनिक भी न्याय दिखायें तो यह नहीं कह सकते कि अनुमतिपत्र-सम्बन्धी नियम किसी भी अंशमें औचित्यके साथ लागू किये जा रहे हैं। जिन अधिकारियोंको कानूनपर अमल कराना है हम उनकी कठिनाइयोंको भली भाँति समझ सकते हैं परन्तु यदि उनकी तादाद कम है तो सरकारका कर्तव्य है कि वह कमीको पूरा करे जिससे प्रार्थनापत्रोंपर विचार करनेमें विलम्ब न हो। कर्मचारियोंकी इस तरहकी कमी अस्थायी ही होगी क्योंकि कभी-न-कभी परवानार्थियोंके प्रार्थनापत्र समाप्त हो ही जायेंगे। कार्यालयमें जो काम जमा हो गया है यदि उसका निबटाना है तो कुछ और आदमी रखकर उस जमा कामको निबटानेकी व्यवस्था क्यों नहीं की जाती?

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन १२-५-१९०६

३३६. रंगदार लोगोंका प्रार्थनापत्र

ट्रान्सवाल और ऑरेंज रिवर कालोनीका जो नया विधान बन रहा है, उसके सम्बन्धमें रंगदार लोगोंकी निगरानी-समितिने ब्रिटिश लोकसभाको भेजनेके लिए एक प्रार्थनापत्र तैयार किया है। अखबारको यह नहीं बताया गया है कि आफ्रिकी राजनीतिक संघने सम्राट् सप्तम एडवर्डको जो प्रार्थनापत्र[1] भेजा था यह उसीके सिलसिलेमें है या यह कोई अलग और स्वतन्त्र कार्रवाई है। कुछ भी हो दोनों प्रार्थनापत्रोंमें लगभग समान हितोंकी हिमायत है। एकमात्र अन्तर यह है कि जहाँ सम्राटको भेजा गया प्रार्थनापत्र वतनी लोगोंके परे अन्य रंगदार जातियोंके सम्बन्धमें है वहाँ वर्तमान प्रार्थनापत्रमें वतनी लोग भी शामिल कर लिये गये जान पड़ते हैं। इसमें सन्देह नहीं कि अगर यहाँ संघ राज्य बनना है और ब्रिटिश झंडेके अधीन रहना है तो अन्ततोगत्वा दक्षिण आफ्रिकाको स्वर्गीय श्री रोड्स[2] द्वारा बताई गई नीति ही अपनानी होगी। परन्तु श्री चर्चिलने जो बात कई बार कही है उसको देखते हुए, प्रार्थियोंकी प्रार्थनाको स्वीकार करना सम्भव होगा इसमें हमें सन्देह है — यद्यपि दोनों प्रार्थनापत्रोंसे भलाई ही हो सकती है क्योंकि उनसे उत्तरदायी शासनके अन्तर्गत दोनों उपनिवेशोंकी संसदोंके अधिवेशन शुरू होते ही इस विषयपर विचार करनेका रास्ता साफ हो जायेगा।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन १२-५-१९०६

१. देखिए “रंगदार जातियोंका प्रार्थनापत्र,” पृष्ठ ३५१-२।

२. सेसिल रोड्स १८९० से १८९६ तक केपके प्रधानमन्त्री थे। उनकी नीति थी कि केप और ब्रिटिश कॉलोनी [illegible] समानताके आधारपर संयुक्त दक्षिण आफ्रिकी संघ-राज्य बनाया जाय और धीरे-धीरे उसकी सीमाओंमें अन्य भागोंको भी मिलाया जाये। ट्रान्सवालका [illegible] स्वाधीन [illegible] इसमें बाधक [illegible] था।

३३७ भारतको स्वराज्य

भारतीय स्वराज्य-संघ (इंडियन होम रूल सोसाइटी) के उपसभापति श्री पारेखने ईस्ट न्यूकैसिल नगरमें इस आशयका भाषण किया है कि भारतको स्वराज्य दिया जाना चाहिए उसमें वे कहते हैं कि भारतको पूर्ण स्वतन्त्रता दी जाये और गोरे भारत छोड़ दें। आजकलकी राजनीति न राज्यकर्ताओंके लिए लाभप्रद है और न जनताके लिए। ऐसी प्रणालीसे नौकरीके लिए जानेवालोंके नीति-विचारमें कभी-कभी बहुत बिगाड़ होता है। कहा यह जाता है कि भारत प्रजाजन संसदकी सत्ताके अधीन है। लेकिन असलमें वह सत्ता बहुत ही कम है अथवा यों कहिए कि नाममात्रको है। भारतके लाखों लोगोंकी शिकायतें सुननेका समय संसदके पास बिलकुल नहीं होता इसलिए अधिकारी वर्ग अपनी मर्जीके मुताबिक सत्ताका उपयोग करता है। अगर स्वराज्य दिया जाये तो निश्चित रूपसे भारतके लोगोंकी हालत सुधरेगी।

भारतमें बार-बार अकाल पड़ते हैं। इसका कारण अनाजका अभाव नहीं है। अनाजका अभाव हो तो वह देशके किसी एक भागमें होगा। सारे देशमें अकाल पड़नेका कारण कुछ और ही है। अनाज तो है, पर लोगोंके पास उसे खरीदनेके लिए पैसा नहीं है। भारत भुखमरीसे पीड़ित है इसका कारण पैसोंका अकाल है, अनाजका नहीं। वहाँकी सरकार अपनी रैयतके प्रति अपने कर्तव्यका पालन नहीं करती और अंग्रेजी राज्य भारतीयोंके कल्याणके लिए है यह कहना एक ढोंग और दिखावा है। अतः न्याय और मानवताके कल्याणके लिए भारतको स्वराज्य दिया जाना चाहिए।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन १२-५-१९०६

३३८ चीनी वापस जा सकेंगे

चीनियोंको उनके देश वापस जाने देनेके बारेमें सरकार जो विज्ञप्ति चिपकाना चाहती थी उसके सम्बन्धमें ट्रान्सवालके खान-मालिकोंकी ओरसे जोरदार आवाज उठाई गई थी। ८ तारीखके दिन जोहानिसबर्गमें आम सभा की गई थी। उसमें यह बताया गया था कि चीनियोंको स्वदेश लौटनेके लिए सरकारको पैसे नहीं देने चाहिए। मार्केट स्क्वेयरकी सभा, रैंड अग्रगामी दलकी सभा तथा खान-मालिकोंके व्यापार-मण्डल (चेम्बर ऑफ कॉमर्स) ने भी इसी आशयके प्रस्ताव पास किए थे।

एक खानवालेने सरकारी अधिकारीका अपने क्षेत्रमें इस प्रकारकी विज्ञप्ति लगानेसे रोका था और ट्रान्सवालके उच्च न्यायालयमें परीक्षात्मक मुकदमा दायर किया था। उसपर फैसला देते हुए मुख्य न्यायाधीशने कहा है कि सरकारको इस तरहकी विज्ञप्ति लगवानेका पूरा हक है। अर्जदारकी अर्जी खर्चेके साथ खारिज कर दी गई है। इस मतलबके परिपत्र जारी किए गये हैं कि खान-मालिकोंको चीनियोंके हर मुकाममें विज्ञप्ति लगवानेमें सरकारी अधिकारियोंकी मदद करनी चाहिए।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन १२-५-१९०६

३३९. जोहानिसबर्गकी चिट्ठी

मई १४, १९०९

ट्राम सम्बन्धी परीक्षात्मक मुकदमा

ट्राम सम्बन्धी मामला आज चलनेवाला था किन्तु नगरपालिकाने मजिस्ट्रेटके सामने भी बैरिस्टर लानेका प्रस्ताव किया है इसलिए मामला अगले शुक्रवार तक मुल्तवी कर दिया गया है। इस मामलेपर सर रिचर्ड सॉलोमन और लॉर्ड सेल्बोर्न बहुत ध्यान दे रहे हैं।

रेलगाड़ीकी तकलीफ

ट्रान्सवालकी रेलोंमें मुसाफिरोंका एक डिब्बेसे दूसरे डिब्बेमें हटानेका जो अधिकार गार्डोंको मिला है, यहाँके व्यापार-संघने उसका विरोध किया है। यह कानून सबपर लागू होता है। अतएव संघके विरोधसे भारतीयोंको सहज ही फायदा हो सकता है। एक गोरेका थोड़ी तकलीफ हुई थी उसीकी वजहसे यह सब हुआ है। संघकी बैठकमें भी कड़े भाषण हुए हैं।

अलीवाल नार्थके श्री अहमद मूसाजी कुछ दिन पहले जर्मिस्टनसे पार्क स्टेशन जा रहे थे। उस समय गार्डने उन्हें परेशान किया। उन्होंने इसकी शिकायत की है। रेलवे अधिकारियोंसे जवाब मिला है कि गार्डको झिड़की दी गई है। मैं लिख चुका हूँ कि ब्रिटिश भारतीय संघके अध्यक्ष और मंत्री महाप्रबन्धकसे मिल आये हैं। अँगुली पकड़कर पहुँचा पकड़ना — इस कहावतके अनुसार महाप्रबन्धक सूचित करते हैं कि प्रिटोरियासे शामको पाँच बजे छूटनेवाली गाड़ीमें भी भारतीय अथवा दूसरे काले मुसाफिर न जायें। संघने लिखा है कि यह मुमानियत मंजूर नहीं की जा सकती क्योंकि पाँच बजेवाली गाड़ी एक सुविधाजनक गाड़ी है और भारतीय उसपर से अपना अधिकार नहीं छोड़ेंगे।

आयोगकी बैठकें

सर जोजेफ वेस्ट रिजवेके आयोगकी तीन बैठकें जोहानिसबर्गमें हुई हैं। उनमें प्रगतिशील दल (प्रोग्रेसिव पार्टी) और रैड अग्रगामी दल (रैंड पायोनियर्स) ने प्रमाण पेश किये हैं। मगर मार्लेटने ब्रिटिश भारतीय संघको लिखा है कि आयोग जब दूसरी बार जोहानिसबर्ग आयेगा तब उसकी ओरसे भी प्रमाण लेगा। रंगदार लोक संघ (कलर्ड पीपल्स असोसिएशन) की ओरसे भी डैनियल्स भी प्रमाण पेश करनेकी तजवीज कर रहे हैं।

भारतीयोंकी गन्दगी

फोर्ड्सबर्गमें पायोनियर और पार्क रोडके कोनेपर एक भारतीयकी साग-सब्जी और फलकी दूकान है। उसपर आरोप यह था कि जिस कोठरीमें खानेकी चीजें थीं उसीमें वह सोता था। सिपाहीने बयान देते हुए कहा कि जिस कोठरीमें अभियुक्त और दूसरा एक आदमी सोता था उसीमें उसने फल रोटी और साग-सब्जी देखी थी। उसी कोठरीमें एक परदेके पीछे एक कुतिया और उसके आठ पिल्ले भी थे। दूकानमें से बहुत बदबू आ रही थी। अदालतने उस आदमीको पाँच पौंडका जुर्माना अथवा तीन हफ्ताकी कैदकी सजा सुनाई। स्टार में इस मामलेका विवरण छपा था। वह एक गोरेने मुझे बताया और कहा — ऐसे लोग तुम्हारे देशवासियोंको मुसीबतमें डालते हैं। ऐसे लोगोंके बचावमें तुम्हें क्या कहना है? मेरे पास बचावमें कुछ नहीं था। उन अखबारको लिये हुए मुझे अपना सिर शर्मसे नीचा कर लेना पड़ा था।

१ देखिए “जोहानिसबर्गकी चिट्ठी” पृष्ठ २१५-६।

ट्रान्सवालकी विधानसभा

ट्रान्सवालकी विधानसभाकी बैठक २५ तारीखसे शुरू होगी। उसमें जो काम किया जायेगा सो जानने योग्य होगा। क्योंकि सम्भव यह है कि इस विधानसभाकी यह आखिरी बैठक होगी। अगले वर्ष नई विधानसभा बननेकी आशा है।

चीनी विज्ञप्ति

गिरमिटिया चीनियोंको स्वदेश जानेके लिए पैसे देनेके बारेमें हुए कानूनके बहानेमें विज्ञप्ति लगानेका जो हुक्म जारी हुआ था उसके सिलसिलेमें मामला सर्वोच्च न्यायालय तक पहुँच चुके हैं। श्री क्रिमोनाईने उनकी ओरसे बहुत मेहनत की लेकिन सर्वोच्च न्यायालयने फिर अपनी स्वतंत्रता और न्याय-बुद्धिका परिचय दिया है। मुख्य न्यायाधीश सर जेम्स रोज इन्सने फैसला देते हुए कहा है कि सरकारको *कानूनोंमें ऐसी सूचनाएँ लगानेका पूरा अधिकार है।* अदालतने चीनोंकी अर्जी खर्चेके साथ खारिज कर दी है सूचनाएँ डच भाषामें तथा चीनी भाषामें लगाई गई हैं। अब देखना यह है कि इसका असर क्या होता है। कुछ लोगोंका खयाल है कि इस सूचनाका लाभ उठाकर बहुतसे चीनी वापस अपने देश चले जायेंगे। दूसरे कुछ लोगोंकी राय है कि चीनियोंके मनपर इसका कोई असर नहीं होगा। मगर चीनी बड़ी संख्यामें चले जायेंगे तो खानवालोंको बहुत भारी धक्का लगेगा। कुछ खान-मालिक खानें बन्द कर देनेकी धमकी दे रहे हैं।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन १९–५–१९११

३४०. पत्र : दादाभाई नौरोजीको

२१–२४ कोर्ट चेम्बर्स
नुक्कड़ रिसिक व ऐंडर्सन स्ट्रीट्स
पो° ऑ° बॉक्स ६५२२
जोहानिसबर्ग
मई ११, १९११

माननीय श्री दादाभाई नौरोजी
[लन्दन]

महोदय,

इस पत्रका उद्देश्य आपको श्री ए० एच० वेस्टका परिचय देना है। ये इंटरनेशनल प्रिंटिंग प्रेसके प्रबन्धक और *इंडियन ओपिनियन* के सह-सम्पादककी तरह काम करते रहे हैं। पत्र जिस योजनाके अन्तर्गत प्रकाशित किया जाता है श्री वेस्ट उसके संस्थापकोंमें एक हैं। ये यहाँ कुछ दिनोंके लिए स्वजनोंसे मिलने-जुलने जा रहे हैं और इस बीच यथाशक्ति कुछ सार्वजनिक काम भी करेंगे।

आपका सच्चा,
मो° क° गांधी

मूल अंग्रेजी प्रतिकी फोटो-नकल (जी० एन० २२७२) से।

३४१. एक एशियाई नीति

प्रख्यात लेखक एल० ई० एन० ने रैंड डेली मेल में अपने योग्यतापूर्ण लेख समाप्त कर दिये हैं। ये उन्होंने उपनिवेशोंमें आबाद एशियाइयोंके सम्बन्धमें लिखे हैं। उन्होंने सुझाव दिया है कि इस प्रश्नको हल करनेके निमित्त निम्नलिखित उपाय किये जाने चाहिए:

(१) जहाँतक सम्भव हो और चाहे कितनी ही हानि उठानी पड़े, स्थायी निवासियोंके रूपमें एशियाई लोगोंको यहाँ न आने दें।

(२) गिरमिटिया मजदूरोंकी जरूरत हो तो उनकी गिरमिटकी अवधि पूरी होनेपर उनकी वापसीपर जोर दें।

(३) जो एशियाई पुराने जमानेकी हालतोंमें इस देशकी आबादीका भाग बन गये हैं उनके साथ न्यायोचित ही नहीं बल्कि उदार बरताव किया जाये।

(४) अस्थायी दर्शकों या यात्रियोंकी गतिविधिपर कोई परेशान करनेवाली रुकावटें न लगाई जायें। लेखक यह कहकर अपनी लेखमाला समाप्त करता है:

> ऐसी नीतिके साथ सन्तापजनक रुकावटें नहीं रहनी चाहिए, जिनसे शिक्षित व्यक्तियोंका अपमान हो। ये रुकावटें उस कानूनकी अपेक्षा ज्यादा परेशान करनेवाली और हानिकर हैं जिसके द्वारा अपेक्षाकृत ज्यादा गरीब वर्गके हजारों लोग देशमें प्रवेश करनेसे चुपचाप रोक दिये गये हैं। पूर्वी दुनियाके सुसंस्कृत यात्रीके साथ ऐसा व्यवहार नहीं किया जाना चाहिए जो न्यूयार्क जहाज घाटमें एक कैंटके प्रवासीके साथ भी नहीं किया जाता। उसको एक अपराधीकी भाँति अपनी अँगूठा-निशानी देना मंजूर करनेके लिए मजबूर करना अथवा तुरन्त किसी बस्तीमें जाकर रहनेकी धमकी देना जैसी दृष्टान्तस्वरूपके उपहासकारी बातें हैं, उचित नहीं है।

जो बातें पेश की गई हैं उनमें से एकको छोड़ कर हम सबसे हृदयसे सहमत हैं। असलमें एल० ई० एन० की बताई नीति वही है जिसको भारतीय समाज स्वीकार कर चुका है। किन्तु जो अपवाद हमारे दिमागमें है वह बहुत ही गम्भीर है। यदि भारतसे गिरमिटिया मजदूर लाने हैं — चाहे रैंडकी खदानोंके लिए, चाहे नेटालकी खेतियोंके लिए, तो वे वापसीकी धाराके अन्तर्गत नहीं लाये जाने चाहिए। यदि ऐसे मजदूर न लाये गये होते तो दक्षिण आफ्रिकामें भारतीयोंका सवाल शायद कभी उठता ही नहीं। किन्तु यदि गिरमिटिया मजदूरोंका देशमें लाना दक्षिण आफ्रिकाके किसी भागकी समृद्धिकी दृष्टिसे पूर्णतः आवश्यक समझा जाये तो न्यायोचित यही है कि उनको इस प्रकार लानेके बाद और स्वर्गीय श्री एस्कम्बके शब्दोंमें उनके जीवनके सर्वोत्तम पाँच वर्ष यहाँ बितानेके बाद उनको इस देशमें बसने और अपनी पसन्दका कोई भला धन्धा चुनकर अपनी सेवाओंका पुरस्कार भोगनेकी स्वतन्त्रता होनी चाहिए। स्वर्गीय सर विलियम विल्सन हंटरको भी, जो अपने अत्यन्त नरम विचारोंके लिए प्रसिद्ध थे और जिनकी ख्याति यह थी कि वे सदा सभी बातोंपर बुद्धिमत्तापूर्वक विचार करते हैं, गिरमिटिया मजदूरोंकी हालतको खतरनाक रूपसे गुलामीके नजदीक मानने में कोई हिचक नहीं हुई थी। इसलिए उन्हें न्यायका कम-से-कम अधिकार यह है कि उनको उस देशमें रहनेकी स्वतन्त्रता दी जाये जिसकी सेवा वे इतनी अच्छी तरहसे कर चुके हैं। इसलिए हमारा खयाल यह है कि यदि लेखक महोदयने मुक्त भारतीयोंके प्रश्नसे

प्रश्नपर उसके गुणावगुणकी दृष्टिसे विचार किया होता तो उनके लेखोंका महत्व और भी ज्यादा बढ़ जाता। क्योंकि जहाँ प्रवास साम्राज्यकी नीतिका मामला है, वहाँ गिरमिटिया मजदूरोंका प्रश्न करार और बातचीतका है।

एक प्रश्नपर विचार करनेमें जिन बातोंका खयाल रखना होता है वे दूसरे प्रश्नपर भी लागू हों यह जरूरी नहीं है। दक्षिण आफ्रिकामें जहाँ ट्रान्सवाल और नेटाल बहुत-कुछ गिरमिटिया मजदूरोंपर निर्भर हैं फिर वे भारतसे आयें या एशियाके अन्य भागोंसे इस अन्तरको खयालमें रखना अत्यन्त आवश्यक है।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, १-५-१९११

३४२. दक्षिण आफ्रिकामें दूकान-बन्दी आन्दोलन

सभी जानते हैं कि नेटालमें निश्चित समयपर दूकानें बन्द करनेका कानून बन चुका है। हम यह कह चुके हैं कि केपकी धारासभामें इस प्रकारका विधेयक पेश होनेवाला है। अब जोहानिसबर्गसे समाचार मिले हैं कि ट्रान्सवालमें भी इस तरहकी हलचल शुरू हो गई है। मेसॉनिक टेम्पलमें बड़े-बड़े यूरोपीय लोगोंकी सभा हुई थी। सर जॉर्ज फेरार उसके सभापति थे। जोहानिसबर्गके महापौर उसमें हाजिर थे। इस सभामें तय किया गया है कि निश्चित समयपर दूकानें बन्द करनेका कानून बनना चाहिए। भारतीय व्यापारियोंको इस विषयमें चेतकर चलना चाहिए। कानून बने और हमारे लिए लाजिमी हो जाये उससे पहले हम कदम उठा लें इसीमें हमारी शोभा है। नेटालके दूकान-व्यवस्थापकोंका कहना है कि यदि हम लाजिमी हो जानेके बाद अपनी दूकानें बन्द करते हैं तो कोई खास बात नहीं करते। एक हद तक यह बात ठीक भी है। पॉचेफस्ट्रूमके भारतीय व्यापारियोंने नियमानुसार दूकानें बन्द करनेका प्रस्ताव पास किया था। इसपर हम उन्हें बधाई भी दे चुके हैं। पर हमारे प्रतिनिधिने लिखा है कि वहाँके भारतीय व्यापारियोंने नियमानुसार दूकानें बन्द करना फिर छोड़ दिया है। अगर ऐसा हुआ है तो हमें इसका अफसोस है। पॉचेफस्ट्रूमके भारतीय व्यापारियों और दूसरी जगहोंके व्यापारियोंको खास तौरपर हमारी सलाह यह है कि अगर वे कानून बननेसे पहले चेत जायें और दूकानें बन्द करनेके बारेमें गोरे व्यापारियोंके साथ समझौता कर लें तो बहुत अच्छा होगा।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, १९-५-१९११

३४३ पॉचेफस्ट्रूम और क्लार्क्सडॉर्प[1]

पॉचेफस्ट्रूममें फिलहाल व्यापार मन्दा दिखाई पड़ता है। यहाँके भारतीयोंको खास दिक्कत है बग्घी और सार्वजनिक बगीचामें न जा सकनेकी। भारतीयोंके लिए बग्घी तत्काल प्राप्त करना मुश्किल होता है। इसका कोई कानूनी उपाय हो सकनेकी कम सम्भावना है। क्योंकि पहले जब यह घटना घटी थी उस समय पॉचेफस्ट्रूमकी नगरपालिकाने जो उपनियम बनाया था वह अब भी लागू है। बगीचेवाले मामलेका इलाज तो भारतीयोंके हाथमें ही है। हमें बगीचेमें जानेसे रोका नहीं जा सकता। इस विषयमें मजिस्ट्रेटकी अदालतमें ही मुकदमा दायर किया जाये तो चल सकता है।

पॉचेफस्ट्रूमके भारतीयोंने अंग्रेज व्यापारियोंसे मेलजोल करके दूकानोंके मामलेमें गोरों जैसा कुछ प्रबन्ध किया हो तो जान पड़ता है उसे उन्होंने तोड़ दिया है। यह ठीक नहीं हुआ। जिस तरह शुरू किया था उसी तरह पार भी लगाना चाहिए था। गोरे हमसे सीधा व्यवहार नहीं करते तो हम भी सीधा व्यवहार न करें, ऐसा नहीं होना चाहिए।

क्लार्क्सडॉर्प और पॉचेफस्ट्रूम दोनोंकी तुलना की जाये तो क्लार्क्सडॉर्पके भारतीय भण्डार बढ़िया है। क्लार्क्सडॉर्पके भण्डारोंकी रचना सुन्दर दिखती है और बाहरका दिखावा भी सुहावना है। कोई वजह नहीं कि पॉचेफस्ट्रूममें भी ऐसा क्यों न हो। क्लार्क्सडॉर्प और पॉचेफस्ट्रूम दोनों जगहोंके भारतीय भण्डार सुघड़तामें और दूसरी तरहसे बहुत-कुछ यूरोपीय भण्डारों जैसे ही पाये गये है। लेकिन भण्डारोंके पीछेके अहातेमें और रहनेकी स्थितिमें हेरफेर करना जरूरी है। अहातेमें रहनेके लिए जो कोठरियाँ बनी है वे अधिक साफ और प्रशस्त होनी चाहिए और स्नानघर आदि स्थान बिलकुल साफ रहने चाहिए।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन १९-५-१९११

३४४ हमारे अवगुण

हमारे जोहानिसबर्गके संवाददाताने भारतीयोंकी गन्दगीकी जो खबरें भेजी है वे सबके लिए विचारणीय है। अगर पिछले बीस सालोंके अखबारोंको कोई जाँच देखे तो पता चलेगा कि भारतीयोंके विरुद्ध सबसे बड़ा आरोप गन्दगीका है। इसमें गोरोंने जितनी बातें बढ़ा-चढ़ा कर कही है उन इलजाम प्रकाश हम दे चुके है। लेकिन हमारे जोहानिसबर्गके संवाददाताने जिन मामलेकी ओर हमारे पाठकोंका ध्यान खींचा है वह सचमुच ही हमें नीचा दिखानेवाला है। जिस कोठरीमें सोना उसीमें साग-सब्जी रखना उसीमें रोटी रखना — ये बहुत भयंकर बातें है। अदालतने इनपर जो सजा दी है उसके खिलाफ कुछ कहनेको नहीं रहता। जिन आदमीने यह गुनाह किया है, उसने अनजाने ऐसा किया है सो भी नहीं कहा जा सकता। हम ऐसी बातोंकी ओर दक्षिण आफ्रिकाके भारतीयोंका ध्यान बार-बार खींचना चाहते है। असलमें एसा गन्दगीका उपाय हमारे ही हाथों होना चाहिए। हम खुद ऐसे गुनाहोंसे दूर रहें इतना ही काफी नहीं है बल्कि हमारा

१. यह "हमारे विरुद्ध अभियोगका जवाब" आधारित था।

फर्ज है कि अपने अड़ोसी-पड़ोसियों परिचितों और जिन-जिनपर हमारी बातका असर पड़ता है, उन सबको ऐसी मूर्खतासे दूर रहनेके लिए समझायें। इस प्रकारके सुधार करनेके लिए हम समितियाँ बनायें तो वह भी गलत नहीं कहा जायेगा। हम मानते हैं कि जो समितियाँ हालमें कायम हुई हैं उनका मुख्य कर्तव्य यही है। हम ऐसी बातोंकी ओर मुस्लिम संघ और हिन्दू सनातन धर्म सभाका ध्यान विशेष रूपसे खींचते हैं। हमारे बड़े-बड़े व्यापारी या सचमुच अगुआ हैं इस मामलेमें बहुतसे सुधार कर सकते हैं। सबसे पहले तो वे अपने भंडारोंके पीछेकी जगहोंको साफ करवा सकते हैं और यों वे छोटे व्यापारियों और फेरीवालोंपर अपना प्रभाव डाल सकते हैं।

यह कहना गलत न होगा कि कुछ कानून तो हमने निमंत्रित किये हैं। और अगर अब भी हम न चेतेंगे तो ज्यादा सख्तीका सामना करना पड़ेगा। हम बातचीतमें बातचीत करते समय अपनी तुलना यहूदियोंके साथ करते हैं। तुलना करते हुए हम यह कहते हैं कि यहूदियोंकी रहन-सहन हमसे ज्यादा गन्दी है फिर भी उन्हें कोई नहीं सताता। इस बातमें सिर्फ आधी सचाई है और अर्ध-सत्य आदमीको सदा नुकसानमें डालता है। यहूदियोंकी रहन-सहन गरीबीमें हमसे खराब रहती है इसमें कोई शक नहीं। लेकिन हाथमें पैसा आ जानेपर वे उसका उपयोग अधिक अच्छी तरह कर सकते हैं। धनका गलत संग्रह करनेके बदले वे उसका उपयोग उचित स्थानमें करते हैं। डर्बनमें जोहानिसबर्गमें अथवा केप टाउनमें हम जहाँ भी देखते हैं हमें साफ दिखाई देता है कि जिन यहूदियोंने पैसा कमाया है वे उसका उपयोग करना भी जानते हैं। उनके घर बहुत साफ और सुन्दर हैं। उनकी रहन-सहन ऊँचे दर्जेकी है। वे दूसरे यूरोपीयोंके साथ आसानीसे घुलमिल सकते हैं। अपने इस व्यवहारके कारण वे ज्यादा पैसा भी कमा सके हैं। और यह यहाँ तक कि आज जोहानिसबर्गमें वे राज्यकर्ताओं जितना ही प्रभाव रखते हैं। दुनियामें अधिकसे अधिक धनवान लोग उनमें मिल सकते हैं।

मनुष्य जातिमें यह विशेषता है कि वह अपने जैसे अवगुण दूसरोंमें खोज लेती है, और फिर यह जानकर सन्तोषका अनुभव करती है कि दूसरोंमें भी उसके जैसे अवगुण मौजूद हैं। जो समझ सकते हैं जिनके मनमें देशके लिए दर्द है जिन्हें दूसरोंकी बहादुरीको देखकर रश्क आता है ऐसे गुणीजनोंको सद्भावनापूर्वक दूसरोंके अवगुणोंका खयाल न करते हुए उनके गुणोंका ही ध्यान रखना चाहिए और उनके अनुसार चलकर दूसरोंको चलानेकी कोशिश करनी चाहिए।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन १९-५-१९ ९

३४५. भारतकी स्थितिपर 'रैंड डेली मेल'के विचार

पिछले कुछ हफ्तोंसे जोहानिसबर्गके 'डेली मेल' में कोई व्यक्ति 'एम॰ ई॰ एन॰' नामसे दक्षिण आफ्रिकामें भारतीयोंकी स्थितिके बारेमें लिखा करता है। पिछले हफ्तेमें उसका अन्तिम लेख छपा गया है। उसमें उसने भारतीयोंके बारेमें नीचे लिखे विचार प्रकट किये हैं।

१. इसके बाद अधिकतर एशियासे आनेवाले लोगोंको दक्षिण आफ्रिकामें आनेसे रोका जाये।

२. अगर एशियाके मजदूरोंकी जरूरत पड़े तो उन्हें इकरारके अनुसार गिरमिटकी अवधि पूरी होनेपर कानूनी तौरसे भारत या उनका जो भी देश हो वहाँ वापस भेजा जाये।

३. एशियाके जो लोग इस देशमें आकर बसे हैं उनके प्रति उदारताका बरताव किया जाये।

४. कुछ समयके लिए आनेकी इच्छा करनेवाले भारतीयपर किसी प्रकारकी सख्ती न की जाये।

इस प्रकार विचार प्रकट करनेवाला लेखक प्रभावशाली है और उसने दूसरे कई अखबारोंमें भी लिखा है। गिरमिटिया मजदूरोंको कानूनी तौरपर वापस भेजनेकी बातको छोड़कर हम लेखककी दूसरी सब बातें बहुत-कुछ मानने योग्य हैं। और इस प्रकारकी माँग हम कबसे करते आ रहे हैं।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, १९–५–१ ९

३४६. बालकोंके अनुमतिपत्रके बारेमें सूचना

सोलह सालसे कम उम्रवाले बालकोंको फिलहाल अनुमतिपत्र नहीं दिये जाते। लेकिन ब्रिटिश भारतीय संघ इसके लिए लड़ रहा है। सम्भव है कि १६ सालसे कम लेकिन १२ सालसे अधिक उम्रके जो बालक इस समय दक्षिण आफ्रिकामें आ चुके हैं उनको कोई अड़चन नहीं होगी। इसलिए जिन लोगोंके १२ सालसे अधिक उम्रके लड़के दक्षिण आफ्रिकाके किसी भी बन्दरगाहमें हों वे उनके नाम-पते हमारे पास भेज दें। हम उन नामोंको यथास्थान पहुँचा देंगे।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, १९– –१९ ९

३४७ चीनियोंको वापस भेजनेका सवाल

हम अपने पाठकोंको यह बता चुके हैं[1] कि ब्रिटिश सरकारने चीनियोंको वापस उनके देश भेजनेका सवाल अपने हाथमें ले लिया है और वह उसके लिए खर्च देनेको भी तैयार हो गई है। इसके कारण ट्रान्सवालमें बहुत असमंजस मची है। और सारे खान-मालिक इस बातकी व्यवस्था करनेमें लगे हैं कि चीनियोंको वापस भेजनेसे रोकनेके लिए एक शिष्टमण्डल विलायत भेजा जाये। जनरल बोथाने चीनियोंके जुल्मोंको देखकर सरकारके पास यह शिकायत भेजी है कि चीनी लोग किसानोंपर जुल्म करनेसे बाज नहीं आते वे और अधिक क्रूर बनते जा रहे हैं। सवाल यह खड़ा होता है कि वे कबतक इस तरह जुल्म करते रहेंगे। अगर ट्रान्सवालकी सरकार और खानवाले इन लोगोंको इनके अत्याचारपूर्ण व्यवहारसे नहीं रोकेंगे तो बोअर लोग ब्रिटिश सरकारको इसकी खबर करेंगे। वे यह भी कहते हैं कि अगर सरकार इस मामलेमें कोई सन्तोषजनक जवाब नहीं देगी तो वे चीनियोंको वापस भिजवानेकी बात कहनेके लिए ब्रिटिश सरकारके पास शिष्टमण्डल भेजेंगे।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन १९-५-१९०६

३४८ जोहानिसबर्गकी चिट्ठी

[मई १८, १९०६ के बाद[2]]

ट्रामका परीक्षात्मक मुकदमा

पिछले शुक्रवार १८ तारीखको मजिस्ट्रेट श्री क्रॉसकी अदालतमें जोहानिसबर्गकी नगरपालिकाके विरुद्ध श्री इब्राहीम सालेजी कुवाड़ियाका मुकदमा चला था। श्री कुवाड़ियाने बयान देते हुए कहा कि वे ब्रिटिश भारतीय संघके कोषाध्यक्ष हैं। ७ अप्रैलको जब वे बिजलीकी ट्रामपर चढ़ रहे थे कंडक्टरने उन्हें रोक दिया। नगरपालिकाकी ओरसे कंडक्टरने बयान दिया और नगरपालिकाका कथन पूरा हो गया। इस बार नगरपालिकाकी तरफसे बैरिस्टर श्री फीथम खड़े हुए थे और श्री कुवाड़ियाकी तरफसे फर्मके वकील श्री लेन और उनको सलाह देनेके लिए श्री गांधी हाजिर थे। श्री फीथमने दलील देते हुए कहा कि सन् १८८७ में बोअर सरकारने चेचककी बीमारीके मौकेपर कुछ कानून जारी किये थे। उन कानूनोंके अनुसार काले लोग अगर वे गोरोंके नौकर न हों तो गोरोंके साथ नहीं बैठ सकते। वे कानून आज भी कायम हैं इसलिए भारतीय ट्राममें नहीं बैठ सकते। मजिस्ट्रेट श्री क्रॉसने यह दलील मानी और जोहानिसबर्गकी नगरपालिकाके गाड़ियोंके लिए बनाये गये नियमोंके आधारपर श्री कुवाड़ियाको ट्रामगाड़ीका उपयोग करनेका हक है, यह फैसला देते हुए उन्होंने कंडक्टरको दो

१. देखिए "जोहानिसबर्गकी चिट्ठी", पृष्ठ ३१५-६।

२. मूल प्रतिमें तिथि १८-५-१९०६ है, जो गलत जान पड़ती है। नगरपालिकाके विरुद्ध श्री कुवाड़िया द्वारा दायर किये गये मुकदमेकी १८ मईको हुई सुनवाईके उल्लेखसे यह स्पष्ट है कि यह पत्र उस दिन अथवा उसके बादकी तारीखको लिखा गया। अगले कुछ अनुच्छेदोंमें मई २२, १९०६ की तारीख पड़ी है।

विलायतमें आया हुआ आयोग

इस आयोगके सामने भारतीयोंका शिष्टमण्डल मंगलवार २२ तारीखको दिनमें १-१५ बजे जानेवाला है। उस समय जो होगा उसका विवरण समय रहा तो इस अंकमें दूँगा।

मंगलवार, २२-५-१९०६

संविधान समितिके पास भारतीय शिष्टमण्डल

आज भारतीय शिष्टमण्डल संविधान समितिसे मिल आया। शिष्टमण्डलमें श्री अब्दुल गनी (अध्यक्ष) श्री हाजी वजीर अली श्री इब्राहीम सालेजी कुवाड़िया (जोहानिसबर्ग) श्री इस्माइल पटेल (क्लार्क्सडॉर्प) श्री इब्राहीम कोटा (हीडेलबर्ग) श्री इब्राहीम जमाल (स्टैंडर्टन) श्री ई० एम० पटेल (पॉचेफस्ट्रूम) तथा श्री मो० क० गांधी उपस्थित थे। श्री हाजी हबीबने तार दिया था कि अधिक काम होनेके कारण वे आखिरी घड़ी तक नहीं निकल सके।

शिष्टमण्डलकी ओरसे वक्तव्य तैयार किया गया था। वह आयोगके सदस्योंके सामने पेश किया गया। आयोगके अध्यक्षने उसे पढ़नेके बाद कुछ प्रश्न पूछे और कहा कि यदि किसीको और ज्यादा प्रश्न पूछने हों तो वह पूछ सकता है। उस परसे श्री हाजी वजीर अलीने कहा कि भारतीयोंको मताधिकारके बजाय अपने साधारण अधिकारोंकी ज्यादा जरूरत है। उन्हें ट्राममें भी नहीं बैठने दिया जाता और बहुत अपमान होता है।

अध्यक्ष महोदयने जब विशेष स्पष्टीकरणके लिए कहा तो श्री गांधीने ट्रामका इतिहास सुनाया और कहा कि ट्रामसे ज्यादा दुःख देनेवाली बात यह है कि भारतीयोंको जमीन धारण करनेका अधिकार बिलकुल नहीं है। इतना ही नहीं उन्हें यदि धार्मिक कार्योंके लिए भी जमीनकी आवश्यकता हो तो वह भी उनके नामपर नहीं चढ़ती। प्रिटोरिया जोहानिसबर्ग हीडेलबर्ग वगैरह जगहोंपर जमीनें हैं उन्हें नामपर चढ़ानेकी आपत्ति उठ ही खड़ी होती है। भारतीयोंको काफिरोंकी बराबरीका मानना चाहते हैं यह बहुत ही अन्याय है। ट्रान्सवालमें बहुतसे कानून हैं। उनमें कहीं भी बतनी शब्दमें भारतीयोंका समावेश नहीं किया गया है।

फिर आयोगके अध्यक्षने कहा कि ट्रामका इतिहास और दूसरी बातें सब लिखकर उनके नाम भेज दीजिए, तब उसपर आयोग ध्यान देगा। इसके बाद शिष्टमण्डल विदा हुआ।

फिर लॉर्ड सैंडहर्स्ट जो बम्बईके गवर्नर रहे थे बाहर निकले और उन्होंने बम्बई वगैरहके बारेमें समाचार पूछकर कहा कि मुझे बम्बई बहुत पसन्द है। मेरी वहाँ फिर जानेकी इच्छा होती है।

आयोगके समक्ष पेश किया गया वक्तव्य अगले सप्ताह दूँगा।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन २६-५-१९०६

३४९. पत्र 'ट्रान्सवाल लीडर' को

जोहानिसबर्ग
मई २१, १९०६

सेवामें
सम्पादक
ट्रान्सवाल लीडर
[जोहानिसबर्ग]

महोदय

ब्रिटिश भारतीय संघके मुकदमेपर चलाये गये ट्रामगाड़ी अभियोगके सम्बन्धमें आपने जो अग्रलेख लिखा है, उसके बारेमें मैं यह कहनेकी अनुमति चाहता हूँ कि न्यायाधीशके निर्णयसे ट्रामगाड़ियाँ हर वर्गके व्यवहार लानेके लिए उपलब्ध नहीं हो जाती। उदाहरणके लिए इस कानूनसे वे वतनियोंके लिए उपलब्ध नहीं और इससे वह कानून भी अछूता रहता है जिसके अनुसार कण्डक्टर उन मुसाफिरोंको बिठानेसे इनकार कर सकता है जो शराब पिये हों, खराब कपड़े पहने हों अथवा उनका बैठना अन्यथा आपत्तिजनक हो। इसलिए जब आप यह कहते हैं कि आपकी टिप्पणी मामलेके अत्यन्त व्यापक रूपको ध्यानमें रखकर लिखी गई है तब आप परिषदके पक्षको दुर्बल कर देते हैं। क्योंकि कभी किसीने भी यह नहीं कहा कि ट्राम गाड़ियोंका उपयोग किसी भेदभावके बिना सभीको करनेका अधिकार होना चाहिए।

किन्तु महोदय, नगर-परिषदने एक ऐसे तरीकेसे जो सम्माननीय नहीं है भारतीयोंको उनकी जीतके फलसे वंचित कर दिया है। क्योंकि 'गवर्नमेंट गज़ट' के इसी अंकमें एक उपनियम छपा है जिससे ट्रामगाड़ियोंसे सम्बन्धित उपनियम मंसूख हो जाते हैं। इसका अर्थ है कि अब ट्रामगाड़ियाँ यातायातके नियंत्रण सम्बन्धी उपनियमोंके बिना ही चलाई जायेंगी किन्तु उसका अर्थ यह भी है कि अब ब्रिटिश भारतीयोंके लिए सामान्य उपनियमोंके अन्तर्गत नगरपालिकाकी ट्रामगाड़ियोंमें बैठनेके अधिकारका दावा करना सम्भव न होगा। और नगरपालिका मैं आशा करता हूँ यह तर्क उपस्थित करेगी कि इस मंसूखीसे पुरानी सरकारके पैदल-सम्बन्धी वे कायदे फिर बहाल हो जाते हैं जो, न्यायाधीशके फैसलेके अनुसार अब मंसूख किये गये उपनियमोंकी मौजूदगीमें लागू नहीं होते थे। अवश्य ही यह तर्क उचित ही है कि वे अनुचित प्रकार कभी नहीं थे। मुझे अत्यन्त आदरके साथ यह कहना है कि नगर-परिषदने उस विधिका अवलम्बनकर उस गर्व-योग्य पद्धतिका त्याग कर दिया है। मुझे यही दिखाई देता है और आशा है कि अनेक दूसरे लोगोंको भी ऐसा ही दिखाई देगा।

जब नगर-परिषदकी कार्यवाहियाँ [illegible] पेश किये [illegible] भी [illegible] कि ट्रामगाड़ियोंका [illegible] करते।

१ [illegible]

फिर भी मैं आपसे पूछता हूँ कि नगर-परिषदने अपने उद्देश्यकी पूर्तिके लिए जो साधन ग्रहण किये हैं क्या आप उनका समर्थन करते हैं?

आपका आदि,
मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]
ट्रान्सवाल लीडर, २५-५-१९०६

३५० साम्राज्य दिवस

पिछले गुरुवारको साम्राज्य भरमें स्वर्गीया सम्राज्ञीका जन्मदिन मनाया गया। यद्यपि सालपर साल बीतते जाते हैं फिर भी उस श्रेष्ठ महिलाकी स्मृति सदाकी तरह ताजी बनी है। भारत और वहाँके लोगोंमें उनकी गहरी दिलचस्पी थी और बदलेमें उन्हें भारतकी करोड़ों जनताका सम्पूर्ण हार्दिक स्नेह प्राप्त था। जब १८५८ के राजघोषणापत्रमें इस बातका अवाञ्छनीय उल्लेख किया गया कि सरकारको देशी धर्मों और प्रथाओंका प्रभाव कम करनेका अधिकार है, तब उन्होंने सारा घोषणापत्र फिरसे लिखवाया। और इस कृत्यके द्वारा उन्होंने भारतके धर्मोंमें अपनी दिलचस्पी और उनके प्रति सहिष्णुताको व्यक्त किया। अपने एक पत्रमें महारानीने लॉर्ड डर्बीको[1] लिखा

> ऐसा आलेख उदारता, नम्रता और धार्मिक सहिष्णुताकी भावनाओंसे भरा हुआ होना चाहिए और उसमें उन विशेष अधिकारोंका संकेत होना चाहिए जो भारतीयोंको ब्रिटिश सम्राट्की प्रजाके साथ समानताके आधारपर प्राप्त होंगे और उस सुख-समृद्धिका जिक्र भी होना चाहिए जो सभ्यताके पीछे-पीछे आयेगी।

ये सिद्धान्त थे जिनपर साम्राज्यकी नींव रखी गई थी। केवल व्यापार-विस्तार और भूमिपर प्रभुत्व प्राप्त करना सच्चे साम्राज्यवादियोंका लक्ष्य नहीं हुआ करता। उनके सामने एक महान और उच्च आदर्श होता है। जॉन रस्किनके शब्दोंमें वह आदर्श है यथासम्भव अधिकसे-अधिक संख्यामें पूर्ण प्राणवान तेजस्वी नयन तथा सुखी हृदयवाले मानव-प्राणियोंका प्रादुर्भाव करना। हम इस आदर्शको अपने दक्षिण आफ्रिकाके जन-नायकोंके सामने रखेंगे और उनसे अनुरोध करेंगे कि वे जातीय विद्वेष और रंग भेदकी भावनाओंको दूर कर दें। महान ब्रिटिश साम्राज्य न तो अत्याचारपूर्ण तरीकोंसे अपनी वर्तमान गौरवपूर्ण स्थितिमें पहुँचा है और न पक्षपात दिखानेके साथ अनुचित व्यवहारसे उस स्थितिको कायम रखना ही सम्भव है। ब्रिटिश भारतीय अपने सम्राट्के प्रति सदैव गहरी भक्ति रखते रहे हैं और उनको अपने प्रजाजनमें सम्मिलित करके साम्राज्यने कुछ खोया नहीं है। ग्रेट ब्रिटेनके लिए भारत सम्पत्तिका एक विशाल भण्डार है जब कि उसके हजारों निवासी बिना कुछ कहे भुखमरीके कारण मौतके मुँहमें समाते जा रहे हैं। हमारा सुझाव है कि यदि साम्राज्यके मामलोंमें महारानी विक्टोरियाकी प्रबुद्ध भावनाका अधिक उपयोग किया जाये तो हम इतनी महान साम्राज्य-निर्माताके अधिक योग्य अनुयायी बन जायेंगे।

[अंग्रेजीसे]
इंडियन ओपिनियन, २६-५-१९०६

1. चौदहवें अर्ल डर्बी (१७९९–१८६९) १८५२, १८५८ और १८६६ में इंग्लैंडके प्रधानमंत्री।

३५१. नेटाल गवर्नमेंट रेलवे : एक शिकायत

एक संवाददाताने हमें गुजरातीमें पत्र लिखा है, उसका अनुवाद नीचे दिया जाता है :

मई १, १९०६ को जो रेलगाड़ी ६ बजे शामको डर्बनसे रवाना हुई उसमें श्री मुहम्मद लाल मिठालाल महाराज नामके एक भारतीय सज्जनने एस्टकोर्टसे एमर्सडेलके लिए दूसरे दर्जेका टिकिट लिया। वे सुरक्षित डिब्बोंमें एक जगहपर बैठ गये। पर चूँकि उस गाड़ीसे जानेवाले दूसरे दर्जेके गोरे मुसाफिर बहुत थे, स्टेशन मास्टरने श्री मुहम्मद लालको अपने डिब्बेसे निकलकर तीसरे दर्जेके डिब्बोंमें जा बैठनेको मजबूर किया।

हमारा संवाददाता आगे लिखता है कि पीड़ित मुसाफिर द्वारा इस मामलेपर महाप्रबन्धकका ध्यान आकर्षित किया जा चुका है। हमें आशा है कि इस शिकायतकी जाँच पूरे तौरसे की जायगी। एस्टकोर्टके स्टेशन मास्टरके अनुचित व्यवहारको उचित ठहरानेकी कोई भी वजह दिखलाई नहीं पड़ती।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, २६–५–१९०६

३५२. नेटालका भूमि-विधेयक

पिछले सालकी तरह इस साल भी गोरोंकी जान्में हमारे बच जानेकी सम्भावना है। नेटालके नये विधेयकोंमें जमीनपर कर लगानेवाला विधेयक पास होनेके बारेमें हम पहले खबर दे चुके हैं। वह विधेयक नेटालकी संसदमें पास हो चुका है। लेकिन जब समितिमें इसकी जाँच-बीन हुई तो वह रद कर दिया गया। सदनके एक सदस्य श्री ऐपमनने यह प्रस्ताव रखा था कि इस विधेयकसे रेलवेकी सीमासे दूर रहनेवाले लोगोंको बहुत नुकसान होगा, इसलिए वह रद किया जाना चाहिए। इस प्रस्तावके पास हो जानेसे नेटाल-सरकारकी हार हुई है। असलमें यह ऐसा मौका है जब पदाधिकारियोंको इस्तीफा देना चाहिए। उन्होंने यह नहीं किया और पदोंपर कायम हैं। लेकिन भूमि-करवाला विधेयक अभी कुछ समयके लिए लटका रहेगा। देखना है कि आगे क्या होता है। हालाँकि यह उम्मीद की जा सकती है कि उक्त विधेयक इस सत्रमें पास नहीं होगा।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, २६–५–१९०६

३५३ चीनी-जागृतिकी एक निशानी

चीनके पूर्वमें वीहाइवी नामका एक द्वीप है। चीनकी सरकारने अंग्रेज सरकारको यह द्वीप कुछ शर्तोंपर दिया था। उनमें एक शर्त यह थी कि जबतक पोर्ट आर्थर रूसके अधिकारमें रहेगा तबतक गोरे इस द्वीपपर रह सकेंगे वगैरह। रूस-जापानकी लड़ाईके कारण अब रूसको पोर्ट आर्थर छोड़ना पड़ा है। इसलिए ब्रिटेनसे कहा गया है कि वह उक्त द्वीप छोड़ दे। ब्रिटेनने उस द्वीपपर जो भारी पूँजी लगाई है, चीन उसे लौटानेसे इनकार करता है। इस मामलेको लेकर चीन जर्मनी और अंग्रेज सरकारके बीच बड़ी राजनीतिक झड़प[1] होना सम्भव है।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन २७-५-१९०५

३५४ पीला भय

हम लिख चुके हैं कि कुछ जापानी आस्ट्रेलिया देखने गये हैं। यद्यपि वहाँ उनके प्रति आदरकी भावना दिखाई जाती है, तो भी ऐसा लगता है कि अन्दर-ही-अन्दर आस्ट्रेलियाइयोंकी भावना जापानियोंके विरुद्ध है। मेलबोर्नसे भेजे गये एक तारकी खबरसे पता चलता है कि वहाँ पहुँचे हुए जापानी यात्री-दलके अधिकारीने एक लड़ाकू जहाज देखनेके लिए निवेदन किया था तो अस्वीकृत कर दिया गया। क्योंकि आस्ट्रेलियाके भूतपूर्व रक्षा-मन्त्रीके कथनानुसार, वे जापानियोंपर विश्वास नहीं कर सकते। उन्हें लगता है कि जापानी किसी दिन आस्ट्रेलियापर अधिकार करनेका प्रयत्न कर सकते हैं। वहाँके मुख्य समाचारपत्रोंकी खबरोंसे मालूम होता है कि इस प्रकारकी राय बहुतेरे आस्ट्रेलियाइयोंकी है।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, २७-५-१९०५

३५५ अमेरिकाके धनाढ्य

यह एक जानी-मानी बात है कि अमेरिकामें धनाढ्य लोग बड़ी संख्यामें हैं। आम तौरपर यह देखा जाता है कि धन कमानेमें यूरोपके लोग सबसे आगे हैं। यूरोपवाले नई-नई खोजों और कलाओंकी मददसे समूची दुनियाके बाजारको अपने पंजेमें से छूटने नहीं देते। फिर भी यह कहना गलत न होगा कि धन कमानेकी दौड़में यूरोपके लोग अमरीकियोंसे बहुत पीछे हैं। इसके कुछ कारण भी हैं। यूरोपवालोंकी तुलनामें अमेरिकावाले धनके मामलेमें अधिक उलझे हुए हैं और देखा यह गया है कि जब एक बार धन बड़े पैमानेपर इकट्ठा हो जाता है तब वह बढ़ता ही जाता है। दीर्घ दृष्टिसे सोचें तो यह बात समझमें भी आ सकती है। अब इन अमरीकियोंमें से कुछ इतने अधिक धनाढ्य हो गये हैं कि अमेरिकी सरकारको कानून द्वारा सम्पत्तिकी सीमा निश्चित करना अनुचित नहीं मालूम होता। अमेरिकाके राष्ट्रपति रूजवेल्टने

१ जर्मनीने १८९७ में क्याओचाउपर कब्जा किया। उसके बाद वह वीहाइवेईमें उसके साथ चीनके उत्तरी हिस्सोंमें दिलचस्पी लेने लगा।

एक भाषणसे इसका पता चलता है। उन्होंने कहा है कि एक आदमीके पास दस लाख या बीस लाख पौंड हों तो उसे हम अनुचित नहीं मानते लेकिन आज तो यह बात इस हद तक पहुँच गई है कि अमेरिकामें बहुत-से ऐसे हैं जिनके पास अरबोंकी सम्पत्ति है। उन्होंने कहा है कि ऐसे अरबपति कभी सरकारपर भी बहुत प्रभाव डाल सकते हैं। वे चाहें तो देशके संविधानको जैसे न्यायाधीशोंको नगरपालिका अथवा संसदके चुनाव वगैराको अपने पैसेके जोरसे अपनी इच्छाके मुताबिक प्रभावित कर सकते हैं। यह स्थिति खतरनाक जान पड़ती है, इसलिए यह सोचा गया है कि कानूनके द्वारा धनकी सीमा निश्चित की जानी चाहिए। एक आदमी दस लाख पौंडसे अधिक न रख सकेगा। अगर किसीके पास इससे अधिक है, तो वह अपनी इच्छानुसार उसे अपने सगे-सम्बन्धियों आदिमें अमुक प्रकारसे हिस्से करके बाँट दे। राष्ट्रपति रूजवेल्टके इन विचारोंके कारण अमेरिकाके अरबपतियोंमें एक खलबली मच गई है।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन २६-५-१९०६

३५९. चीनकी स्थितिमें परिवर्तन

यह तो निर्विवाद है कि सुधार दिनपर-दिन आगे बढ़ता जा रहा है। यूरोपके सुधारोंने भारतपर कितना प्रभाव डाला है, इससे कम ही लोग अपरिचित होंगे। जापानने जो सारी दुनियाको चकित करनेवाली उन्नति की है उससे इस सुधारकी गतिको बढ़ावा मिला है। जिधर देखिए उधर जापानकी चर्चा सुनी जाती है। ऐसी स्थितिमें जापानके पड़ोसी चीनपर इन सुधारोंका प्रभाव पड़ना स्वाभाविक ही है।

चीनमें जगह-जगह सुधारके अंकुर फूटने लगे हैं। एक ओर चीनमें रहनेवाले जापानियोंके कारण चीनियोंका ध्यान शिक्षाकी तरफ गया है। दूसरी ओर सैकड़ों चीनी नौजवान विद्या और कला सीखनेके लिए परदेश जाने लगे हैं। जापानमें रहनेवाले कुछ चीनी विद्यार्थी हर प्रकारकी शिक्षा प्राप्त करनेके लिए, कुछ कला-कौशल सीखनेके लिए, अमेरिका तक भी पहुँचे हैं। ये विद्यार्थी वहाँसे केवल कला-कौशल ही सीखकर आते हैं सो बात नहीं। जानने लायक बात तो यह है कि ये कला-कौशलके साथ अमेरिका जापान और यूरोपके सुधरे हुए विचार भी अपने साथ लाते हैं। साथ ही इन देशोंमें उत्पन्न स्वतन्त्रताके जोशने भी उनके लौटते हुए खूनपर पूरा प्रभाव डाला है। इसके परिणामस्वरूप ये विद्यार्थी चीनकी उन्नतिके लिए महान प्रयत्न करने लगे हैं।

ये जगह-जगह सभाएँ और भाषण करके लोगोंके दिलोंपर अपने विचारोंकी छाप डाल रहे हैं। नये-नये पत्र निकाल कर चारों तरफ उपदेशकोंको भी भेजते हैं और इस तरह अनेक प्रकारसे लोगोंके मनपर संस्कार डालते हैं तथा स्वतन्त्रताके और सुधरे हुए विचारोंके बीज बोते हैं। इसके सिवा ऐसा नहीं लगता कि ये राजनीतिक परिवर्तनाकी आशा नहीं करते। ये विदेशियोंको अपने देशसे दूर हटानेका आन्दोलन चलाने लगे हैं। इनसे गोरे सोचमें पड़ गये हैं। कहीं-कहीं अमेरिकी मालका बहिष्कार कुछ-कुछ सफलताके साथ चल रहा है यह भी इस नई उमंग ही का नतीजा है। इस नई जागृतिमें कुछ जापानी भी आगे बढ़कर हाथ बँटाते हैं।

स्वाभाविक है कि उन्नतिकी ये किरणें हर सुधारकी प्रगति चाहनेवालेको रुचें। फिर भी कुछ यूरोपीय ऐसा कहते हैं कि यह जोश हदसे ज्यादा है और गलत रास्ते ले जा सकता

है। अतएव इसपर अंकुश लगना चाहिए। इस दृष्टिसे एक-आध लेखकने यह सुझाव दिया है कि चीनी सरकारसे कहकर कुछ समाचारपत्रोंपर, जो अवांछनीय विचार फैलाकर व्यर्थ और हानिकारक उत्तेजना फैलाते हैं अंकुश लगवाये जाने चाहिए और सम्भव हो तो उन्हें बन्द भी करना चाहिए।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन २६-५-१९०६

३५७ भारतमें युवराजकी यात्रा

माननीय युवराज युवराज्ञी और उनका दल भारतकी अपनी यात्रा पूरी करके विलायत पहुँच गये हैं। लन्दनमें उनके स्वागतके लिए एक बड़ा समारोह किया गया था। उस अवसरपर माननीय युवराजने जो भाषण किया था वह ध्यान देने योग्य है। उन्होंने भारतके लोगोंका आभार माना और उनकी वफादारीकी प्रशंसा की। अन्तमें उन्होंने कहा:

> मैं मानता हूँ कि यदि भारतवर्षका राज्य चलानेमें हम प्रजासे सहानुभूति बरतें तो हमारे लिए राज्य चलाना आसान होगा और ऐसी भावना रखनेपर मुझे विश्वास है कि हमें उसका बदला भी खूब मिलेगा। भारत जानेवाला हर अंग्रेज भारत और इंग्लैंडके बीच अधिक मेल पैदा करनेमें मदद कर सकता है और प्रेम तथा भाईचारेको बढ़ा सकता है।

इस भाषणका सही रहस्य समझनेकी जरूरत है। इस भाषणसे प्रकट होता है कि युवराज कोमल हृदय हैं। उनके मनमें भारतीयोंके प्रति सहानुभूति है। उन्होंने हमारी मुसीबतोंको समझ लिया है। और चूँकि राज-काजके मामलेमें वे खुद ज्यादा दखल नहीं दे सकते इसलिए अपनी ओरसे उपर्युक्त इशारा करके उन्होंने भारतके शासकोंको समझाया है कि उन्हें नरमीसे काम लेते समय सीखना चाहिए। युवराजके इस भाषणका[1] समर्थन भारतमंत्री श्री जॉन मॉर्लेने किया था इसलिए यह आशा की जा सकती है कि थोड़े समयमें हमें भारतमें कुछ-न-कुछ राहत मिलेगी।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन २६-५-१९०६

३५८ बसूटोलैंडमें भारतीयोंका बहिष्कार

ब्लूमफौंटीनसे 'रैंड डेली मेल' का संवाददाता सूचित करता है कि बसूटोलैंडमें भारतीयोंको व्यापारके परवाने नहीं दिये जायेंगे। एक बार सरकारने कोई खास परवाने देनेका विचार किया था मगर अब वह विचार छोड़ दिया गया है।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन २६-५-१९०६

१. युवराज (प्रिंस ऑफ वेल्स) के सम्मानमें लन्दनके गिल्ड हॉलमें १० मई, १९०६ को एक भोज दिया गया था। युवराजके बाद श्री मॉर्ले भी बोले थे। उन्होंने युवराजके वक्तव्य कि यदि भारतवर्षका राज्य चलानेमें हम प्रजासे सहानुभूति बरतें ... का जोरदार समर्थन किया था। देखिए इंडिया २५-५-१९०६।

३५९. चीनी मजदूर

हम लिख¹ चुके हैं कि बोअर किसानोंके प्रति चीनी मजदूरोंके दुष्ट व्यवहारके बारेमें जनरल बोथाने ट्रान्सवाल सरकारको पत्र लिखा था। उसके जवाबमें सर रिचर्ड सॉलोमनने लिखा है कि मैं आपके पत्रके लिए आभारी हूँ। मुझे चीनियोंके निर्दयतापूर्ण व्यवहारके लिए खेद है। मैं खानोंके अधिकारियोंको सुझाऊँगा कि वे ऐसी व्यवस्था करें, जिससे चीनियोंको विस्फोटक पदार्थ न मिल सकें। चीनियोंके व्यवहारको सुधारनेके लिए जितना भी सम्भव होगा प्रयत्न किया जायेगा। मेरी यह आन्तरिक धारणा है कि जहाँ चीनी काम करते हैं, वहाँ उन्हें अंकुशमें रखनेकी मैंने जो सिफारिश की है, उसपर अमल होते ही ऐसे अत्याचार बन्द हो जायेंगे।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन २६–५–१९०६

३६०. दूकान-बन्दीका कानून

श्री रैचमनने नेटालकी विधानसभामें यह माँग की थी कि मालिकोंको दूकानें बन्द करनेके कानूनमें हेरफेर करके आधी छुट्टीका दिन स्वयं निश्चय करनेका अधिकार दे दिया जाये। इसके उत्तरमें नेटालकी सरकारने कहा है कि एक मास तक यह कानून जैसा है वैसा ही रहने दिया जायेगा। इससे जान पड़ता है कि अन्ततोगत्वा इस कानूनमें कुछ-न-कुछ परिवर्तन अवश्य किया जायेगा।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन २६–५–१९०६

३६१. नेटालका चेचक-अधिनियम

ऊपरके इस अधिनियमकी धाराएँ हम पहले दे चुके हैं। इस कानूनकी कठोरताके बारेमें गोरोंने जो आपत्ति की है उसके सम्बन्धमें भी हमने अपने पत्रमें इशारा किया था। यह मामला बहुत-कुछ आगे बढ़ा है और इसपर चर्चा चल रही है।

विरोधी पक्षवाले कहते हैं कि यह बात निश्चित रूपसे नहीं कही जा सकती कि चेचकका टीका लगानेसे आदमी चेचकका शिकार होता ही नहीं। यही नहीं बल्कि चेचकके टीकेसे बहुत बार नुकसान भी हुआ है। ऐसे उदाहरण दिये गये हैं जिनमें चेचकके टीकेकी खराबीके कारण लोगोंको उनके बालकोंमें गर्मीकी बीमारी हुई है। साथ ही एक ऐसा विचित्र उदाहरण भी दिया गया था कि जिसमें टीका लगानेके बाद एक बालकका कद कई सालों तक बिलकुल नहीं

मुकदमेका परिणाम

इस मुकदमेंपर अमर अपील न हुआ तो यह निश्चित है कि जो लड़के फिलहाल ट्रान्सवालमें हैं, उनके पास यदि अनुमतिपत्र या पंजीयनपत्र न हों तो भी उनके रहनेमें कोई आपत्ति नहीं होगी। वास्तवमें इस मुकदमेके द्वारा अनुमतिपत्रका अन्तिम फैसला नहीं होता। किन्तु इसका ऐसा अर्थ निकल सकता है। यह सम्भव है कि लड़कोंके अनुमतिपत्रका मुकदमा कभी न-कभी लड़ना पड़े।

ट्रामका मुकदमा

इसके बारेमें अब भी चर्चा होती रहती है। श्री लेनने परिषदमें सवाल पूछा है। अभी परिषदने उसका जवाब नहीं दिया है। श्री गांधीने उसके विषयमें 'स्टार' को जो पत्र लिखा है उसका भावार्थ नीचेके अनुसार है

आप लिखते हैं कि मजिस्ट्रेटने जो फैसला दिया है वह असन्तोषजनक है। क्योंकि उसके कारण अब चाहे जैसा (गन्दा) आदमी हो बैठ सकेगा। वतनी भी बैठ सकेगा। किन्तु अदालतका फैसला ऐसा नहीं है। वतनीको ट्राममें बैठनेका कानूनन अधिकार नहीं है, ऐसा न्यायाधीशने जाहिर किया है। और ट्रामके नियमके मुताबिक गन्दे कपड़ेवालों अथवा शराब पिये हुए लोगोंको बैठनेकी मनाही है। इसलिए न्यायाधीशके फैसलेके आधारपर केवल साफ रहनेवाले भारतीय अथवा गैर-वतनी काले ही बैठ सकेंगे।

किन्तु इस जीतको भी परिषदने अनुचित ढंगसे छीन लिया है। शुक्रवारको न्यायाधीशने फैसला दिया और शनिवारको गवर्नमेंट गज़ट में खबर निकली कि नगर-परिषदने ट्रामके नियम वापस ले लिये हैं। इसका यह अर्थ हुआ कि अब इस उपनियमके आधारपर भारतीय मुकदमा नहीं चला सकेंगे और शायद परिषद ऐसा भी विचार करती हो कि अब १८९७ का पेचकका कानून भारतीयोंपर लागू हो जायेगा।

हमेशा माना गया है कि अंग्रेजी प्रजा किसीकी पीठमें छुरा नहीं मारती। किन्तु जैसा मुझे लगता है और ऐसा ही दूसरे करदाताओंको भी लगना चाहिए, नगर-परिषदने भारतीय कौमकी पीठमें छुरा मारा है। आप फैसलेके नतीजेपर खेद प्रकट करते हैं। किन्तु मैंने जो उदाहरण दिये हैं उनके सम्बन्धमें भी फिलहाल तो खेद करने योग्य कुछ नहीं बचा। किन्तु परिषदने जिस अनीति पूर्ण तरीके से आजकी स्थिति पैदा की है उसे क्या आप पसन्द करते हैं?

अब ट्रामके मामलेकी तीसरी अवस्था शुरू हुई है।

रेलगाड़ियोंकी तकलीफ

यह तकलीफ तो हमें हमेशा ही रही है। मैं लिख चुका हूँ कि महाप्रबन्धकने प्रिटोरियासे जोहानिसबर्ग जानेवाली शामकी ५-५ की गाड़ीमें काले आदमी न जायें ऐसा लिखा था। इसके जवाबमें संघने लिखा और महाप्रबन्धकने उत्तर दिया कि गाड़ीमें काले आदमियोंके लिए छूट रखी जायेगी। इसी तरह जोहानिसबर्गसे जानेवाली शामकी ४-४ की गाड़ीके लिए भी छूट माँगी है। यदि इसके बारेमें भी ऐसा ही जवाब आया तो भी प्रिटोरिया-जोहानिसबर्गके बीचकी सुबहकी गाड़ीमें तो फिलहाल मुमानियत रहेगी ही।

१ देखिए "एक सम्भावित कठिनाई" पृष्ठ ३३५-६।

विलायत जानेवाला शिष्टमण्डल

सर विलियम वेडरबर्न तथा हमारे दूसरे हितचिन्तकोंको पत्र लिखे गये थे कि हम शिष्टमण्डल विलायत भेजें या नहीं। उसके जवाबमें उन लोगोंने तार भेजा है कि जबतक उनका पत्र न आये रुकें। उनके पत्रकी १५ जून तक आ जानेकी सम्भावना है।

भारतीयका खून

आजके अखबारमें यह खबर है कि हैवर नामके एक एशियाईको क्लीवलैंड स्टेशनके पास गत रातको मार डाला गया। जान पड़ता है मृत व्यक्तिको किसीने छुरा मारा है। खूनी कौन है अथवा खून किस कारण हुआ यह मालूम नहीं पड़ा। अखबारमें यह भी बताया गया है कि हैवर कमालों हाउसमें था। यह काम ढूँढ़ रहा था।

वतनियोंके लिए नई बस्ती

वतनियोंको बस्ती-जल्दी क्लिपस्प्रूटमें ले जानेकी हलचल हो रही है। नगरपालिकाने नियम भी बनाये हैं। किन्तु अफवाह यह है कि यद्यपि कुछ वतनियोंने वहाँ जमीन ली है, तो भी वे अपनी बस्तीमें जानेके बदले अभी नगरमें अपने मालिकोंके यहाँ रहते हैं।

नगरपालिकाके नये नियम

जोहानिसबर्ग नगरपालिका विधान सभाके चालू सत्रमें नया कानून पास कराना चाहती है। उसमें उसने एशियाई बाजार पर भी अधिकारकी माँग की है।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन २-९-१९११

२६२ पत्र लक्ष्मीदास गांधीको[1]

जोहानिसबर्ग
मई २० १९११

आदरणीय भाई साहब,

आपका १७ अप्रैलका पत्र मिला। क्या लिखूँ कुछ समझमें नहीं आता। आपकी मेरे खिलाफ धारणा बन गई है। बनी हुई धारणाका तो कोई इलाज नहीं। मैं लाचार हूँ। मैं आपके पत्रका पूरा जवाब ही दे सकता हूँ।

१ आपसे जुदा होनेका मेरा कोई सवाल नहीं है।
२ वहाँकी जायदाद में कोई हक नहीं जताता।
३ कुछ भी मेरा है वह मेरा दावा नहीं है।
४ मेरे पास जो-कुछ भी है, वह सब लोक-सेवामें लगाया जा रहा है।
५ वह उन रिश्तेदारोंका मुख्य है जो लोक-सेवा करते हैं।

१ यह पत्र मूलतः गुजरातीमें था। इसका अनुवाद श्री छगनलाल गांधीने किया और उसके अनुसार अंग्रेजीमें श्री पोलकने किया था। इस गुजराती प्रति उपलब्ध न होनेसे यह अनुवाद अंग्रेजीसे किया गया है।

प्रतिनिधियोंको चुननेमें जिन समाजोंका कोई हाथ नहीं है स्वशासनका उपयोग करनेवाले उपनिवेशमें उनकी अत्यधिक उपेक्षा की गई है।

यूरोपीयोंके भारतीय विरोधी विधानका इतिहास

(२) इस समय ट्रान्सवालमें ब्रिटिश भारतीयोंकी अनुमानित जनसंख्या १२, अधिक है। युद्धके पहले बालिग भारतीयोंकी जन-संख्या १५ थी।

(३) प्रथम भारतीय निवासी ट्रान्सवालमें गोरों बसनेके प्रारम्भमें आये।

(४) तब उनपर किसी प्रकारका प्रतिबन्ध नहीं था।

(५) किन्तु कारोबारमें उनकी सफलताने गोरे व्यापारियोंमें ईर्ष्या उत्पन्न कर दी और वा ही व्यापार संघने जिसमें ब्रिटिश तत्वोंकी प्रमुखता थी भारतीय विरोधी आन्दोलन शुरू किया।

(६) फलस्वरूप स्वर्गीय राष्ट्रपति क्रूगरकी सरकारने स्वर्गीया महारानीकी सरकारसे ब्रिटि भारतीयोंकी स्वतंत्रतापर प्रतिबंधक विधान लागू करनेकी अनुमति माँगी। उन्होंने लंदन-समझौ प्रयुक्त पारिभाषिक शब्द 'बतनियों' की व्याख्यामें एशियाइयोंको सम्मिलित करनेका प्रय किया।

(७) महारानीके सलाहकारोंने इस दावेको अस्वीकृत कर दिया किन्तु व्यापारी भारतीयोंको पूर्णतया स्वतंत्र छोड़कर स्वच्छताके आधारपर शेष एशियाइयोंके निवासको बाजा और बस्तियोंमें सीमित करनेका विधान बनानेके बारेमें वे असम्मत नहीं थे।

(८) इस पत्र-व्यवहारके परिणामस्वरूप १८८५ का कानून ३ १८८६ के संशोधनके पास किया गया।

(९) जैसे ही यह प्रकट हुआ ब्रिटिश भारतीयोंकी ओरसे इसका कड़ा विरोध किया गया

(१) उस समय यह बात समझमें आई कि स्वर्गीया महारानीकी सरकारकी आश्वा विपरीत सभी ब्रिटिश भारतीयोंपर इस कानूनको लागू करनेका प्रयत्न किया जा रहा है।

(११) तब स्वर्गीया महारानीकी सरकारकी ओरसे भूतपूर्व बोअर सरकारके नाम प्रतिवेदनोंका क्रम चला और उसकी परिणति मामलेको ऑरेंज रिवर उपनिवेशके तत्का मुख्य न्यायाधीशके पंच-फैसलेपर छोड़नेमें हुई।

(१२) इसलिए, १८८५ से १८९५ के बीच यह अवधि एक मृत-पत्र रहा यद्यपि बो सरकार सदा १८८५ के कानून ३ को लागू करनेकी धमकी देती रही।

(१३) पंच-फैसलेने कानूनकी स्थितिको निश्चित नहीं किया बल्कि उसमें १८८ कानून ३ की व्याख्याका प्रश्न भूतपूर्व गणतंत्रकी अदालतोंपर छोड़ दिया।

(१४) ब्रिटिश भारतीयोंने फिर ब्रिटिश सरकारसे संरक्षणकी प्रार्थना की।

(१५) यद्यपि श्री चेम्बरलेनने पंच फैसलेमें दखल देनेसे इनकार कर दिया, तथ उन्होंने स्वर्गीया महारानीकी ब्रिटिश प्रजाके पक्षको नहीं छोड़ा। ४ सितम्बर १८९५ के खरीतेमें उन्होंने कहा

> अंतमें मैं कहूँगा कि यद्यपि मैं सबसे पहले पंच-फैसलेको मानने और उसके द्वारा सरकारोंके बीचके कानूनी और अन्तर्राष्ट्रीय विवादके एक प्रश्नको हल होने देने इच्छुक हूँ तथापि मैं भविष्यमें व्यापारियोंके बारेमें अन्तिम आखिरी गणतंत्रके स

१ १८८८ में, देखिए खण्ड १ पृष्ठ १६२।

२ देखिए यही ग्रंथ।

मैत्रीपूर्ण प्रतिवेदन प्रस्तुत करने और सरकारको यह विचार करनेका निमंत्रण देनेकी अपनी स्वतन्त्रता सुरक्षित रखता हूँ कि क्या एक बार कानूनी स्थिति मान्य हो जानेपर परिस्थितिपर नये दृष्टिकोणसे विचार करना और उसके अपने नागरिकोंके हितमें भारतीयोंके साथ अधिक उदारता बरतना तथा उन्हें उस व्यापारिक ईर्ष्याभावके अनुमोदनके आभाससे भी मुक्त करना अच्छा न होगा जिसे मैं कुछ कारणोंसे गणतंत्रमें सत्तारूढ़-वर्गसे उद्भूत नहीं समझता।

यह बात १८९५ की है।

(१६) इस प्रकार ऐसे प्रतिवेदनोंके कारण जो युद्धके समय किये जाते रहे उक्त कानून कभी पूरअसर तरीकेपर लागू नहीं किया गया और भारतीय उसमें निर्धारित प्रतिबंधके बावजूद जहाँ चाहे वहाँ रहते और व्यापार करते रहे।

(१७) किन्तु १८९९ में जब उसके लागू किये जानेका समय सिरपर आ गया था युद्धके पहले ब्लूमफ़ॉटीन परिषदमें अन्य बातोंके साथ यह भी चर्चाका एक विषय था। लार्ड मिलनरने इसे इतना महत्वपूर्ण माना कि जब युटलैंड निवासियोंके मताधिकारके प्रश्नपर किसी समझौतेकी सम्भावना दिखाई दी तब लॉर्ड मिलनरने जाहिर किया कि रंगदार ब्रिटिश प्रजाकी स्थितिका प्रश्न जमीतक वैसाका-वैसा बना है।

(१८) लॉर्ड लैंसडाउनने इसे युद्धका सहायक कारण घोषित किया।

(१९) युद्ध समाप्त होनेपर और वेरीनिखन (वेरीनिगिंग) की संधिके समय बड़ी सरकारने बोअर प्रतिनिधियोंको सूचित किया कि दोनों उपनिवेशोंमें रंगदार लोगोंकी स्थिति वही होनी चाहिए जैसी केपमें है।

वर्तमान स्थिति

(२०) किन्तु आज स्थिति युद्धके पहलेसे अधिक खराब है।

(२१) जिस प्रगतिशील दलने भारतीय कमसे-कम सहृदयता और युद्धके पहलेके वायदेकी होनेके नाते समुचित न्यायकी अपेक्षा कर सकते हैं उसने इस बातको अपने कार्यक्रमके अंगके रूपमें घोषित किया है कि ब्रिटिश भारतीयोंकी स्वतन्त्रतापर निश्चित रूपसे प्रतिबन्ध लगाये जाने चाहिए। यदि उसकी इच्छाएँ कार्यरूपमें परिणत हुईं तब तो आजकी परिस्थिति इससे बदतर हो जायेगी।

(२२) इस दलसे अब किसी भी प्रकारके औचित्यकी अपेक्षा रखना असम्भव है।

(२३) इस हालतमें उत्तरदायी सरकारके अंतर्गत बिना विशिष्ट संरक्षणके भारतीयों और उन्हीं जैसी स्थितिके अन्य लोगोंके लिए न्यायकी गुंजाइश बहुत कम है।

उपाय

(२४) इसलिए जान पड़ता है कि ब्रिटिश भारतीयोंके हितोंके संरक्षणके लिए उन्हें मताधिकार प्रदान करना सर्वाधिक स्वाभाविक उपाय है।

(२५) यह बात जोर देकर कही गई है कि लेनिग्नमकी सन्धि ऐसी किसी व्यवस्थाके विधानका निषेध करती है।

(२६) किन्तु सादर निवेदन है कि चाहनी सन्धिका और चाहे जो अर्थ हो उसमें ब्रिटिश भारतीयोंका समावेश कदापि नहीं किया जा सकता।

प्रतिनिधियोंको चुननेमें जिन समाजोंका कोई हाथ नहीं है स्वशासनका उपभोग करनेवाले उपनिवेशोंमें उनकी अत्यधिक उपेक्षा की गई है।

बोअरोंके भारतीय विरोधी विधानका इतिहास

(२) इस समय ट्रान्सवालमें ब्रिटिश भारतीयोंकी अनुमानित जनसंख्या १२, से अधिक है। युद्धके पहले वालिग भारतीयोंकी जन-संख्या १५, ० थी।

(३) प्रथम भारतीय निवासी ट्रान्सवालमें गौवें दशकके प्रारम्भमें आये।

(४) तब उनपर किसी प्रकारका प्रतिबन्ध नहीं था।

(५) किन्तु कारोबारमें उनकी सफलताने गोरे व्यापारियोंमें ईर्ष्या उत्पन्न कर दी और जल्दी ही व्यापार सघने जिसमें ब्रिटिश तत्त्वोंकी प्रमुखता थी भारतीय विरोधी आन्दोलन शुरू कर दिया।

(६) फलस्वरूप स्वर्गीय राष्ट्रपति क्रूगरकी सरकारने स्वर्गीया महारानीकी सरकारसे ब्रिटिश भारतीयोंकी स्वतंत्रतापर प्रतिबंधक विधान लागू करनेकी अनुमति माँगी। उन्होंने लंदन-समझौतेमें प्रयुक्त पारिभाषिक शब्द वतनियों की व्याख्यामें एशियाइयोंको सम्मिलित करनेका प्रस्ताव किया।

(७) महारानीके सलाहकारोंने इस दावेको अस्वीकृत कर दिया किन्तु व्यापारी वर्गके भारतीयोंको पूर्णतया स्वतंत्र छोड़कर स्वच्छताके आधारपर शेष एशियाइयोंके निवासको बाजार और बस्तियोंमें सीमित करनेका विधान बनानेके बारेमें वे असम्मत नहीं थे।

(८) इस पत्र-व्यवहारके परिणामस्वरूप १८८५ का कानून ३ १८८६ के संशोधनके साथ पास किया गया।

( ) जैसे ही यह प्रकट हुआ ब्रिटिश भारतीयोंकी ओरसे इसका कड़ा विरोध किया गया।

(१) उस समय यह बात समझमें आई कि स्वर्गीया महारानीकी सरकारकी धारणाके विपरीत सभी ब्रिटिश भारतीयोंपर इस कानूनको लादनेका प्रयत्न किया जा रहा है।

(११) तब स्वर्गीया महारानीकी सरकारकी ओरसे भूतपूर्व बोअर सरकारके नाम कठोर प्रतिवेदनोंका क्रम चला और उसकी परिणति मामलेको ऑरेंज रिवर उपनिवेशके तत्कालीन मुख्य न्यायाधीशके पंच-फैसलेपर छोड़नेमें हुई।[1]

(१२) इसलिए, १८८५ से १८९५ के बीच यह सम्बन्ध एक युद्ध-पत्र रहा यद्यपि बोअर सरकार सदा १८८५ के कानून ३ का लागू करनेकी धमकी देती रही।

(१३) पंच-फैसलेने कानूनकी स्थितिको निश्चित नहीं किया बल्कि उसमें १८८५ के कानून ३ की व्याख्याका प्रश्न भूतपूर्व गणतंत्रकी अदालतोंपर छोड़ दिया।

(१४) ब्रिटिश भारतीयोंने फिर ब्रिटिश सरकारसे संरक्षणकी प्रार्थना की।

(१५) यद्यपि श्री चेम्बरलेनने पंच फैसलेमें दखल देनेसे इनकार कर दिया तथापि उन्होंने स्वर्गीया महारानीकी ब्रिटिश प्रजाके मामलेको नहीं छोड़ा। ४ सितम्बर १८ ५ के अपने खरीतेमें उन्होंने कहा

> अन्तमें मैं कहूँगा कि यद्यपि मैं सच्चे दिलसे पंच-फैसलेको मानने और उसके द्वारा दो सरकारोंके बीचके कानूनी और अन्तर्राष्ट्रीय विवादके एक प्रश्नको हल होने देनेको इच्छुक हूँ तथापि मैं भविष्यमें व्यापारियोंके बारेमें दक्षिण आफ्रिकी गणराज्यके सामने

1. १८८८ के नीले ग्रन्थ ३ पृष्ठ १८९।
2. देखिए वही पृष्ठ।

(२७) उपनिवेशकी विधान-संहिता ऐसे कानूनोंसे भरी पड़ी है जो "वतनियों" पर लागू होते हैं, किन्तु जो एशियाइयों या ब्रिटिश भारतीयोंपर निश्चय ही लागू नहीं होते।

(२८) यह तथ्य कि १८८५ का कानून ३ खास तौरपर एशियाइयोंके लिए है और वह "वतनियों" पर लागू नहीं होता यह भी प्रकट करता है कि ट्रान्सवालके कानूनोंने सदा "वतनियों" और एशियाइयों में सदा अंतर किया है।

(२९) वस्तुतः "वतनी" शब्दके मान्य अर्थके कारण ट्रान्सवालमें वतनियोंको जमीन-जायदाद रखनेका हक है एशियाइयोंको नहीं।

(३०) इस प्रकार जहाँतक ग्लेनिलग संधिका सम्बन्ध है भारतीयोंको मताधिकारसे वंचित रखनेका कोई औचित्य नहीं दिखाई देता।

(३१) किन्तु ब्रिटिश भारतीय संघकी समिति अच्छी तरह जानती है कि गोरे लोग लगभग सर्वसम्मतिसे ब्रिटिश भारतीयोंके लिए संविधानमें मताधिकारकी व्यवस्था रखे जानेके खिलाफ हैं।

(३२) इसलिए यदि ऐसा करना असम्भव माना जाये तो यह नितांत आवश्यक है कि उसमें संविधानके निषेधाधिकारसे सम्बन्धित परम्परागत संरक्षणकी धाराके अतिरिक्त एक विशेष धारा भी होनी चाहिए जो एक जीती-जागती वास्तविकता हो और जो यदा-कदा ही काममें लाई जानेके बजाय ब्रिटिश भारतीय अधिवासियोंको उनके जमीन-जायदाद रखने तथा आने-जाने और व्यापार करनेके अधिकारों सम्बन्धी पूरी-पूरी सुरक्षाका आश्वासन दे। अलबत्ता उनमें सर्वसामान्य रूपके ऐसे धाराओंकी व्यवस्था हो जिनकी जरूरत समझी जाये और वे समान जाति तथा रंगके भेदके बिना सबपर लागू किये जायें।

(३३) तब और केवल तभी अंग्रेजी राज्यमें साधारण रूपसे निहित प्रत्येक ब्रिटिश प्रजाको प्राप्य नागरिक अधिकारके सिवा सम्राट्के सलाहकार ट्रान्सवालके ब्रिटिश भारतीयोंकी स्थिति सम्बन्धी उन्हें विशिष्ट रूपसे दिये गये वचनोंकी रक्षा कर सकेंगे।

(३४) ऊपर जो कुछ कहा गया है उसमें से बहुत-सा ऑरेंज रिवर उपनिवेशके ब्रिटिश भारतीयोंपर लागू है।

(३५) सिवा घरेलू नौकर होनेके वहाँ भारतीयोंका कोई अधिकार नहीं है। उनसे लगभग सारी ही नागरिक स्वतन्त्रता एक विशद एशियाई विरोधी कानूनने छीन रखी है।

(हस्ताक्षर) अब्दुल गनी
अध्यक्ष ब्रि० भा० सं०
ई० एस० कुवाडिया
एच० ओ० अली
इब्राहीम एम० सोटा
ई० एम० पटेल
ई० एम० जोसफ
जे० ए० पटेल
मो० क० गांधी

५ पाँच जातियोंके लिए अलग पंजीयन विधान नहीं था ।

६ अनेक कठोर कानूनी प्रतिबंधोंपर बहुत हद तक ब्रिटिश हस्तक्षेपके कारण अमल नहीं किया जाता था ।

५. पंजीयन पंजीयन-कार्यालय व्यक्तिगत । इसके कर्मचारी मनमानी है और अधिकतर मनोभाव, अनुचित ढंग आदिके निर्णयमें देरी करता है ।

६. वे मौजूदा कानून जिनपर अमल नहीं होता था, अब लिये गये तथा अध्यादेशों और न्यायिक अनुशासनोंके द्वारा अधिक कठोर बना दिये गये। ये बुद्धिपूर्वक ब्रिटिश भारतीयोंकी कानूनी स्थिति घटाने, अपमान और अर्द्ध-सभ्य जातियोंके समान कर देते हैं।

आगे दिया गया परिशिष्ट विधान समितिके सुझावपर तैयार किया गया था।

नागरिक निर्योग्यताएँ

१ आयुक्तोंका यह खयाल मालूम होता है कि ब्रिटिश भारतीयोंको ट्रान्सवालमें पूर्ण अधिकार प्राप्त हैं।

२ दुर्भाग्यवश जैसा कि वक्तव्यके साथ संलग्न सूचीसे स्पष्ट हो जाएगा ब्रिटिश भारतीयोंको बहुत कम अधिकार प्राप्त हैं। नागरिक निर्योग्यताएँ नीचे दी जा रही हैं

भूमिका स्वामित्व नहीं

१ (१) ब्रिटिश भारतीय अपने लिए निर्धारित बस्तियों या मोहल्लोंको छोड़कर कहीं जमीन-जायदाद नहीं रख सकते। यह नियम लंबे अरसेके पट्टोंपर भी लागू है।

(२) मोहल्ले निर्धारित नहीं हैं किन्तु यूरोपके यहूदी-बाड़ोंकी तरह नगरसे बहुत दूर बस्तियाँ निर्धारित हैं और उनमें भी एक दो स्थानोंको छोड़कर भारतीय माहवारी किरायेदार हैं। केवल प्रिटोरिया और पीटर्सबर्गमें इक्कीससाला पट्टे मिलते हैं। जर्मिस्टनमें उन्हें नोटिस दिये गये हैं कि वे गुमटियोंमें दूसरे किरायेदार न रखें। नोटिस इस तरह है

> इत्तला दी जाती है कि आपको व्यक्तियों या दूसरोंको अपने यहाँ किरायेदार रखनेकी इजाजत नहीं है। किसी दूसरेको किरायेदार रखना उस शर्तनामेको तोड़ना है जिसके मुताबिक आपका बाड़पर कब्जा है। इससे आपका बाड़ेका अनुमतिपत्र रद किया जा सकता है और आप इस बस्तीसे निकाले जा सकते हैं।

(३) इस प्रतिबंधपर इस हद तक अमल किया जाता है कि भारतीय अपनी मसजिदें तक भारतीय न्यासियोंके नामपर नहीं बदलवा पाते।

पंजीयन शुल्क

(४) इस देशमें पहुँचनेपर भारतीयोंको ३ पौंड पंजीकरण शुल्क देना पड़ता है। अब सरकारने धमकी दी है कि स्त्रियों और बच्चोंको भी पंजीयन प्रमाणपत्र लेने पड़ेंगे।

पैदल पटरी और ट्राम गाड़ियाँ

(५) प्रिटोरिया और जोहानिसबर्गमें भारतीयोंको पैदल पटरियोंपर चलनेकी कानूनन मनाही है। फिर भी वे रियायतके तौरपर उनका उपयोग करते हैं। अभी हालमें उन्हें उनका उपयोग करनेसे रोकनेका प्रयत्न हुआ है।

(६) प्रिटोरियामें भारतीयोंको ट्रामगाड़ियोंपर उनका उपयोग करनेकी इजाजत नहीं है।

(७) जोहानिसबर्गमें उन्हें सर्वसामान्य गाड़ियोंमें बैठनेसे रोका जाता है, किन्तु रंगदार लोगोंके लिए कभी-कभी खास पिछलग्गू डिब्बे लगा दिये जाते हैं।

(८) भारतीयोंकी ओरसे दावा किया गया था कि सामान्य उपनियमोंके अन्तर्गत वे ट्राम गाड़ियोंमें यात्रा करनेका आग्रह रख सकते हैं। नगर-परिषदने दावेका विरोध इस आधारपर किया कि भूतपूर्व डच-सरकारके द्वारा १८९७ में जो कुछेक पैदल सम्बन्धी विनियम बनाये गये थे वे अभी लागू हैं। दो बार जोहानिसबर्गमें इस मामलेकी न्यायाधीशके सामने कसौटी हुई और हर बार नगर-परिषदकी हार हुई। इसलिए अब उसने ट्रामगाड़ियोंमें यातायात सम्बन्धी उपनियमोंको रद करके भारतीयोंको जवाब दिया है। अपना उद्देश्य सिद्ध करनेके लिए नगर-परिषद अब बिना किन्हीं उपनियमोंके नगरपालिकाकी गाड़ियाँ चला रही है। सर्वसामान्य कानूनके अन्तर्गत भारतीय अपना अधिकार सिद्ध कर सकेंगे या नहीं यह देखनेकी बात है।

ध्यान देने योग्य बात है कि उपनियमोंका उक्त रद किया जाना निम्न प्रकार चालाकीसे विज्ञापित किया गया था :

> इन प्रस्तावित संशोधनोंका सामान्य सारांश प्रस्तुत करते हुए और यह कहते हुए कि वे परिषदके कार्यालयमें देखे जा सकते हैं १९ १की १६वीं घोषणा धारा २२के अनुसार ९ मई १९ ६के पहले एक विज्ञप्ति नगरपालिकाकी सीमामें प्रचारित एक समाचारपत्रमें प्रकाशित की गई थी।

तारीख ९का नगर-परिषदकी एक बैठक हुई। स्पष्ट ही इतना कम समय विज्ञापितकी गई थी कि सम्बन्धित लोगोंका प्रस्तावित संशोधनोंको चुनौती देना लगभग असम्भव हो गया था — मुख्यत दो कारणोंसे। पहला, समाचारपत्रोंके सामान्य स्तम्भोंमें उसका कोई विवरण प्रकाशित नहीं हुआ था और दूसरा, प्रस्ताव ट्रामवे या बिजली समितिकी बजाय जो साधारणतया ट्रामवे-नियमोंसे सम्बन्धित रहती है और मूलरूपमें रही है, कार्य-समिति (वर्क्स कमिटी) के मारफत आया था।

कार्य-समितिने परिषदकी उक्त बैठकमें निम्न बहानेसे संशोधन प्रस्तुत किया :

> चूँकि ट्राम-पद्धतिको नगरपालिकाने अपने हाथमें ले लिया है इसलिए अब ट्रामगाड़ियोंपर लागू होनेवाले यातायात-उपनियमोंकी आवश्यकता नहीं रहती क्योंकि वे गैर-सरकारी ट्रामगाड़ियोंके लिए ही थे। अतः उपनियमोंको तदनुरूप संशोधित करनेका प्रस्ताव है।

प्रस्ताव एक लम्बी-चौड़ी कार्यसूचीके अन्तमें उस समय प्रस्तुत किये गये जब कानूनमें जागृत सदस्य भी किंचित उसकी निरापद-सी भूमिकाके कारण इस भुलावेमें डाला जा सकता था। प्रस्ताव बिना किसी टीकाके पास हो गये। तारीख १८ के गवर्नमेंट गज़ट में सूचना प्रकाशित हुई कि इन उपनियमोंकी प्रस्तावित उपधाराओंको स्वीकार करके कानूनकी ताकत दे दी गई है। इस प्रकार सारी बात करीब-करीब भारतीयोंके पीठ पीछे और छिपाकर अरसेमें तमाम आवश्यक कार्रवाई किए, बिना चेतावनी दिये निश्चित हो चुकी थी।

( ) अब जोहानिसबर्गमें मलायी बस्तीके नामसे प्रसिद्ध बस्तीको जिसमें भारतीय निवासियोंकी बड़ी संख्या है, बेदखल करके भारतीयोंको जोहानिसबर्गसे बाहर दूर भेजनेका प्रयत्न किया जा रहा है।

अनुमतिपत्र अध्यादेश

[illegible] भारतीय समाजमें [illegible] अब [illegible] [illegible] गवर्नमेंटने कानून [illegible] भारतीयोंके [illegible] [illegible] नहीं

उद्देश्यसे विफल किया जा रहा है। नये भारतीयोंका देशमें प्रवेश रोका जा रहा है। इतना ही नहीं बल्कि ट्रान्सवालके निवासियोंपर निम्न असाधारण परेशानियाँ लाद दी गई हैं

(क) अध्यादेशको अमलमें लानेके बारेमें कोई प्रकाशित नियम नहीं है।

(ख) यह लागू करनेवाले अधिकारियोंकी सनक और पूर्वग्रहके अनुसार बदलता रहता है।

इसलिए आजका तौर-तरीका इस प्रकार है

(१) जो भारतीय युद्धके पहले ट्रान्सवालमें थे और जो पंजीयनके ३ पौंड दे चुके हैं उन्हें भी, जबतक वे पूरी तरह यह सिद्ध नहीं कर पाते कि वे यहाँसे युद्ध शुरू हो जानेपर गये थे वापस नहीं आने दिया जाता।

(२) जिन्हें ट्रान्सवालमें आने दिया जाता है उन्हें अपनी अभिभाके अतिरिक्त अनुमतिपत्रों-पर भी अपने अँगूठोंके निशान देने पड़ते हैं और जब-जब वे ट्रान्सवालमें आते हैं उन्हें ऐसा करना पड़ता है। अपनी स्थिति और इस तथ्यके बावजूद कि वे अंग्रेजीमें अपने हस्ताक्षर कर सकते हैं या नहीं यह प्रत्येक भारतीयपर लागू होता है। एक इंग्लैंड होकर आये हुए धर्मनिष्ठ सज्जनको जो अच्छी तरह अंग्रेजी बोलते हैं और जाने-माने व्यापारी हैं दो बार अँगूठेका निशान देना पड़ा।

(३) ऐसे भारतीयोंकी पत्नियों और बारह सालसे कम उम्रके बच्चोंको अब अलग अनुमति-पत्र लेने पड़ते हैं।

(४) ऐसे भारतीयोंके बारह सालके या उससे ज्यादा उम्रके बच्चोंको अपने माता-पिताके साथ आने अथवा रहने नहीं दिया जाता।

(५) भारतीय व्यापारियोंको बाहरसे भरोसेके मुनीम या प्रबन्धक बुलानेकी इजाजत नहीं मिलती — जबतक वे लोग उक्त पहली धाराके अन्तर्गत न आते हों।

(६) जिन्हें आनेकी इजाजत मिलती भी है उन्हें प्रवेशके लिए महीनों रुकना पड़ता है।

(७) सम्भ्रान्त भारतीयोंको अस्थायी अनुमतिपत्र देनेसे भी इनकार कर दिया जाता है। श्री सुलेमान मंगा जो लन्दनमें वकालत पढ़ रहे हैं ट्रान्सवालके मार्गसे डेलागोआ-बे जाना चाहते थे। उन्हें ब्रिटिश प्रजा मानकर इसकी इजाजत नहीं दी गई। जब यह मालूम हुआ कि वे पुर्तगाल राज्यकी प्रजा हैं तब स्पष्ट ही अन्तर्राष्ट्रीय उलझनोंके डर कर उन्हें अनुमतिपत्र दे दिया गया।

(८) ऐसी भयानक स्थिति है ट्रान्सवालमें रहनेवाले ब्रिटिश भारतीयोंकी। यह रोज-रोज बदतर होती जा रही है और यदि सम्राटकी सरकार उनके संरक्षणके लिए राजी और तैयार नहीं होती तो अन्तिम परिणाम यही होगा कि धीरे-धीरे उनका लोप हो जायेगा।

यूरोपीय क्या करेंगे

(९) यदि यूरोपीय स्वतन्त्र छोड़ दिये जायें तो वे क्या करेंगे यह नीचेके तथ्योंसे प्रकट हो जायेगा

(क) एशियाई प्रश्नपर विचार करनेके लिए जो विशिष्ट राष्ट्रीय परिषद (नेशनल कन्वेन्शन) हुई थी उसने निम्नलिखित प्रस्ताव पास किये

१ इस देशमें अन्य जातियोंकी अधिकता अन्यायी नीति निश्चित करनेकी कठिनाइयाँ, वर्तमान यूरोपीय प्रजाकी रक्षा और भविष्यमें उनके प्रवास (इमिग्रेशन) को प्रोत्साहन देनेकी आवश्यकताके विचारसे यह परिषद इस निष्कर्षपर बल देती है कि मजदूर आयात अध्यादेश (लेबर इम्पोर्टेशन ऑर्डिनेन्स) की धाराओंके अतिरिक्त एशियाई प्रवास निषिद्ध होना चाहिए।

२ सारे प्रश्नके बारेमें एक स्थायी और अन्तिम निपटारेके महत्वको देखते हुए और मामले-पर पुनर्विचारके प्रयत्नोंको रोकनेके लिए यह परिषद सिफारिस करती है कि सरकारसे प्रार्थना की जाये कि वह सभी एशियाई व्यापारियोंको मुआवजे पहलेसे कानूनन प्राप्त निहित स्वार्थोंके मुआवजेकी व्यवस्था करके बाजारोंमें भेजनेके औचित्यपर विचार करे।

३ यह परिषद एशियाइयोंको बाजारोंसे बाहर व्यापार करनेकी इजाजत देनेवाले व्यापारिक परवाने निरन्तर देते रहनेसे उत्पन्न गम्भीर खतरेको समझकर सरकारसे प्रार्थना करती है कि वह भविष्यमें ऐसे परवानोंको रोकनेके लिए तत्काल आवश्यक कानून बनानेकी व्यवस्था करे और एशियाई प्रश्नपर विचार करनेके लिए प्रस्तावित आयोगकी नियुक्तिके विषयमें यह परिषद सरकारसे उसमें सरकारी कर्मचारियोंके अतिरिक्त वणिज मालिकोंकी वर्तमान परिस्थितियोंको भली-भाँति जाननेवाले व्यक्तियोंको सम्मिलित करनेकी आवश्यकताका आग्रह करती है।

४ यह परिषद अपनी इस रायपर कायम है कि सभी एशियाइयोंको बाजारोंमें रहनेपर बाध्य किया जाना चाहिए।

(च) प्रगतिशील दलकी घोषित नीति निम्नलिखित है

जिन्हें इकरारनामेकी समाप्तिपर वापस जाना है उन गिरमिटिया मजदूरोंको छोड़कर ट्रान्सवालमें एशियाइयोंके प्रवासपर रोक लगाना और एशियाई व्यापारिक परवानोंका नियन्त्रण।

(ग) पोचेफस्ट्रूमके लोग एक बार इकट्ठे हुए, ऊधम मचाया और भारतीय भण्डारोंकी खिड़कियाँ तक तोड़ डालीं।

(घ) बॉक्सबर्गके यूरोपीय भारतीयोंको उस वर्तमान बस्तीसे जिसमें वे लड़ाईसे पहले बस चुके थे शहरसे बहुत दूर ऐसी जगह हटा देना चाहते हैं जहाँ व्यापार एकदम असम्भव है और उन्होंने एकाधिक बार यह धमकी दी है कि यदि कोई भारतीय बस्तीके बाहर दूकान खोलनेकी कोशिश करेगा तो शारीरिक बलका प्रयोग किया जायेगा।

पिछला अनुभव — एक समतुल्य उदाहरण

(१२) मुख्य वक्तव्यमें शिष्टमण्डलने कहा है कि पिछले अनुभवसे यह मालूम होता है कि मताधिकारसे वंचित करना और परम्परागत निषेधाधिकार, दोनों ही भारतीयोंको संरक्षण देनेमें एकदम अपर्याप्त सिद्ध हुए हैं।

(१३) अब हम उदाहरण देते हैं

नेटालमें उत्तरदायी शासन देनेके बाद भारतीय मताधिकारसे लगभग वंचित कर दिये गये थे। स्वर्गीय सर जॉन रॉबिन्सनने विधेयकके समर्थनमें कहा कि भारतीयोंको मताधिकारसे वंचित करके नेटाल संसदका प्रत्येक सदस्य भारतीयोंका न्यासी हो गया है।

विधेयकके संसदीय अधिनियम बनते ही न्यास इस तरह निभाया गया

(क) कानून लागू होनेके बाद आनेवाले सभी गिरमिटिया भारतीयोंपर इकरारनामेकी समाप्तिपर भारत न लौटने अथवा नया इकरारनामा न भरनेकी परिस्थितिमें — ३ पौंड वार्षिक कर लगाया गया।

[illegible]

(ख) एक प्रवासी प्रतिबन्धक अधिनियम बनाया गया जिसके द्वारा जो उपनिवेशके पूर्व निवासी न रहे हों और जिन्हें किसी एक यूरोपीय भाषाका ज्ञान न हो ऐसे सभी व्यक्तियों मेटाल प्रवेशपर पाबन्दी लगाई गई।

(ग) एक व्यापारी परवाना अधिनियम बनाया गया जिसने नगर परिषदों और परवान निकायोंको व्यापारी परवानोंपर अंकुश रखनेकी निरंकुश सत्ता दे डाली। उससे सर्वोच्च न्यायाल अधिकार क्षेत्रका भी उच्छेद कर दिया गया है। प्रकट रूपमें यह यद्यपि सभी व्यापारियों लिए है फिर भी उसका अमल सिर्फ भारतीयोंके विरुद्ध किया जाता है। और उसके अन्त कोई भी भारतीय फिर वह चाहे जितना जमा हुआ क्यों न हो वर्षके अन्त तक अपने परवानें दृष्टिसे सुरक्षित नहीं है।

इन तमाम कानूनोंसे साम्राज्यीय सरकार ब्रिटिश भारतीयोंकी रक्षा करनेमें अपनेको असम पाती है।

ट्रान्सवाल और ऑरेंज रिवर उपनिवेशमें अनोखी स्थिति

(१४) भारतीयोंको संविधानके अन्तर्गत मताधिकार दिया जाये या नहीं किन्तु स्थि स्वार्थोंकी रक्षा के लिए विशिष्ट धारा नितान्त आवश्यक है।

(१५) किसी भी उपनिवेशको स्वराज्य प्राप्त होनेके समय ऐसी परिस्थिति नहीं थी जै ट्रान्सवाल और ऑरेंज रिवर उपनिवेशकी है।

(१६) वे सब कारण जिनसे युद्ध हुआ था दूर नहीं हुए हैं। उनमें एक कारण ट्रान्स वालका भारतीय विरोधी कानून था।

(१७) ब्रिटिश सरकारका यह वचन कि भारतीय और रंगदार लोगोंके साथ दोनों उ निवेशोंमें वैसा ही बरताव होना चाहिए जैसा केपमें होता है अभीतक पूरा नहीं किया गया

(१८) जब भारतीयोंकी निर्योग्यताएँ हटानेके विषयमें ब्रिटिश सरकार और स्थानि सरकारोंके बीच वार्ताएँ होने ही वाली थी उसी समय सम्राटकी सरकारके नये मंत्रियोंने दो उपनिवेशोंको उत्तरदायी शासन देनेका निश्चय कर लिया। इसलिए वार्ताएँ स्थगित कर गई हैं, या बिलकुल छोड़ ही दी गई हैं।

(१९) केपमें परिस्थिति यह है कि भारतीयोंको यूरोपीयोंके बराबरीके अधिकार है अर्थात्

(क) जैसा मतदानका अधिकार यूरोपीयोंको है वैसा ही उन्हें है।

(ख) वे उसी प्रवासी-प्रतिबन्धक अधिनियमके अन्तर्गत हैं जिसके अन्तर्गत यूरोपीय।

(ग) उन्हें यूरोपीयोंके समान जमीन जायदाद रखने और व्यापार करनेका अधिकार है।

(घ) उन्हें एक स्थानसे दूसरे स्थानपर जाने-आनेकी पूरी स्वतन्त्रता है।

जोहानिसबर्ग आज तारीख २९ मई, १९ ६।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन २-६-१९ ६

३६५. भारतीय मुसाफिर

पिछले कुछ दिनोंसे हमारे गुजराती पत्र-व्यवहारवाले स्तम्भ भारतीय डेक मुसाफिरोंकी जो जर्मन पूर्व आफ्रिकी कम्पनीके जहाजका इतना अधिक प्रतिपालन करते हैं शिकायतोंसे पूर्णतः भरे रहते हैं। हमारे संवाददाताओंने अत्यधिक भीड़, स्वच्छताकी अपर्याप्त व्यवस्था और छत (डेक) के मुसाफिरोंके प्रति आम लापरवाहीकी शिकायतें की हैं। उनमें कुछका कहना है कि जब जहाज किसी बन्दरगाहपर पहुँचते हैं तब मुसाफिरोंको बड़ी असुविधाका सामना करना पड़ता है। वे बिलकुल खुलेमें होते हैं और उनसे अपना सामान खुद हटानेको कहा जाता है। हम कम्पनीके स्थानीय एजेंटोंका ध्यान इन शिकायतोंकी ओर आकर्षित करते हैं। हम जानते हैं कि गरीब भारतीय मुसाफिरोंको यात्राका जो तरीका मजबूरीकी हालतमें चुनना पड़ता है उससे थोड़ी-बहुत असुविधाका होना अनिवार्य है। मुसाफिरोंके लिए छतपर जो स्थान रहता है उससे अधिक सुविधाकी उम्मीद करना असम्भव है। साथ-ही-साथ यह एक कुख्यात तथ्य है कि छतपर की जानेवाली यात्रासे कम्पनीको सबसे ज्यादा लाभ और सबसे कम तकलीफ होती है। इसलिए कम्पनीके व्यवस्थापकोंका कर्तव्य है कि परिस्थितियोंके अनुसार जितना आराम छतके मुसाफिरोंको देना सम्भव हो दें — और किसी दृष्टिसे नहीं तो सिर्फ मनोत्साहनकी ही दृष्टिसे सही।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन २-१-१९११

३६६. एक अनुमतिपत्र सम्बन्धी मामला

हमारे जोहानिसबर्ग-संवाददाताने जोहानिसबर्गकी अदालतमें श्री जॉर्डनके सामने पेश हुए एक मुकदमेका विवरण भेजा है। आदम इब्राहीम नामक बारह सालसे कमका एक लड़का मजिस्ट्रेटके सामने पेश किया गया क्योंकि वह बिना पंजीयन-प्रमाणपत्रके ट्रान्सवालमें था।

मुकदमेका रूप कुछ अजीब था क्योंकि अभीतक ऐसे सब मुकदमे शान्ति-रक्षा अध्यादेशके अन्तर्गत चलाये जाते थे। यद्यपि इस कानूनसे बचना कम सहज था तथापि जुर्माने या कारावासके रूपमें उसमें कोई दण्ड नहीं था। इधर, १८८५ के कानून ३ के अन्तर्गत अभियुक्तपर १ पौंड तक के जुर्माने या छः मास तक के कठोर या सादे कारावासका विधान है। और, यह खुशीकी बात है कि अभियुक्तके वकीलको यह साबित करनेमें कोई कठिनाई नहीं हुई कि लड़केपर ट्रान्सवालमें प्रवेश करनेके लिए पंजीयन शुल्क नहीं लग सकता।

इस प्रकार सरकार द्वारा भारतीयोंपर लगाई गई बेड़ियाँ जितनी ही पीड़ाकारी होती जाती हैं न्यायके हथौड़ेकी मुक्तिकारी चोट जान पड़ता है, उतनी ही भारी पड़ती है। प्रशासन जिसे प्रबलता-से नष्ट करना चाहे उसकी न्याय-विभाग रक्षा करता है। क्या लॉर्ड ग्लैडस्टन अब भी कहेंगे कि कानूनका अमल जिसके बारेमें सिद्ध कर दिया गया है कि वह अवैध है उचित तरीकेसे हो रहा है और जो इससे प्रभावित हैं, उनका समुचित खयाल रखा जाता है?

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन २-१-१९११

३६७ स्वर्गीय डॉक्टर सत्यनाथन

हमें मद्रासके प्रोफेसर सत्यनाथनकी मृत्युका समाचार दुःखके साथ प्रकाशित करना पड़ रहा है। भारतसे हमारे पास परिवर्तनमें आये हुए समाचारपत्र स्वर्गीय प्रोफेसर महोदयके कार्यकी प्रशंसासे भरे पड़े हैं। डॉ॰ सत्यनाथन कर्तव्य-पालन करते हुए तथा भरपूर जवानीमें परलोकवासी हुए। उनकी जीवनचर्या उज्ज्वल थी इसलिए उनका जीवन बड़ी-बड़ी सम्भावनाओंसे पूर्ण था।

दिवंगत महानुभाव मद्रास विश्वविद्यालयके एम॰ ए॰, एलएल॰ बी॰ और बहुत युवा वय करतल बने ईसाई थे। मस्तिष्क और हृदय दोनोंके उत्कृष्ट गुणोंके कारण सभी वर्गके लोग उनका सम्मान करते थे और उनको सरकारका इतना गहरा विश्वास प्राप्त था कि वे लोकशिक्षा विभागके स्थानापन्न उपनिदेशक बना दिये गये। ऐसे भारतीयकी मृत्युसे भारतीय समाजका एक ऐसा पुरुष उठ गया है जिसकी क्षति भारतीय समाज आसानीसे सहन नहीं कर सकता। हम दिवंगत महानुभावके परिवारके प्रति उसके शोकमें समवेदना प्रकट करते हैं। यह क्षति उस परिवारकी ही नहीं वास्तवमें समस्त राष्ट्रकी है।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन २–१–१९ ६

३६८ केपमें प्रवासी अधिनियम

हमारे केपके संवाददाताने जो समाचार भेजा है उससे अनुमान होता है कि थोड़े समयके लिए जानेवाले भारतीयोंको अब केपमें अड़चन नहीं होगी। थोड़े समयके लिए जानेकी जैसी सुविधा नेटालमें है वैसी अबतक केपमें नहीं दिखाई देती थी।

किन्तु दूसरी तरफ, हमारे संवाददाताके कथनानुसार प्रवासी कानूनमें जो परिवर्तन विधान सभाके इस सत्रमें होनेवाला है उससे बहुत नुकसान होगा। हम पहले लिख चुके हैं कि नया कानून पास हो गया तो अधिवासका हक किसे प्राप्त है, यह तय करनेका अधिकार अदालतके बदले अधिकारीके हाथमें चला जायेगा। यदि ऐसा हुआ तो बात बहुत मुश्किल हो जायेगी। फिर अभी तो दक्षिण आफ्रिकाके निवासी केपमें प्रवेश कर सकते हैं। किन्तु नये कानूनके मुताबिक केपका बाशिन्दा ही केपमें प्रवेश कर सकेगा जैसा नेटालमें होता है। इन दोनों परिवर्तनोंके विरुद्ध ब्रिटिश भारतीय समिति (लीग) को संघर्ष करना चाहिए। हम यह उम्मीद करते हैं कि समितिके सदस्य तुरन्त कार्रवाई करेंगे।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन २–१–१ ६

३६९ सर हेनरी कॉटन और भारतीय

'इंडिया' से हमने जो अंश उद्धृत किया है उससे हमारे पाठकोंको पता चलेगा कि आसामके भूतपूर्व कमिश्नर सर हेनरी कॉटन हमारे लिए संसदमें खूब लड़ रहे हैं। इसके लिए हम उनका आभार मानते हैं। इस अवसरपर हमें यह बता देना चाहिए कि सर हेनरी कॉटनके पीछे काम करनेवाली [भारतीय राष्ट्रीय] कांग्रेसकी ब्रिटिश समिति है। उक्त समिति जो सवाल तैयार करती है वही सर हेनरी कॉटन संसदमें पेश करते हैं। और ब्रिटिश समितिके अगुआ हैं सर विलियम वेडरबर्न तथा भारतके पितामह दादाभाई नौरोजी। मतलब यह कि उक्त समितिके भी हम बहुत आभारी हैं।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन २–६–१९०६

३७० नेटालका विद्रोह

'टाइम्स ऑफ नेटाल' में एक पुराने उपनिवेशीने जो लिखा है उसका अनुवाद हमने दूसरी जगह दिया है। उसका भावार्थ यह है कि भारतीय लोग लड़ाईमें तो नहीं जा सकते किन्तु जो लड़ाईमें गये हैं उन्हें जिन चीजोंकी आवश्यकता हो वे चीजें देकर मदद कर सकते हैं। जिस तरह बोअर युद्धके समय एक कोष जारी किया गया था और भारतीयोंने उसमें मदद दी थी उसी तरह इस समय भी करना चाहिए। इस समय कुछ चन्दा इकट्ठा करके सरकारको भेजा जाये अथवा जो कोष खुला हुआ हो उसमें चन्दा दिया जाये तो अच्छा होगा और उतना फर्ज अदा हुआ ऐसा समझा जायेगा। हम आशा करते हैं कि नेतागण इस प्रश्नको हाथमें ले लेंगे।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन २–६–१९०६

३७१ नया सानफ्रान्सिस्को

खुदा पलमें चाहे सो करे, यह कहावत हमारे हिन्दी पाठकोंके सामने पहली ही बार आ रही है सो बात नहीं। एक घड़ीमें राजाका रंक और रंकका राजा बननेके उदाहरण इतिहासमें बहुत मिलते हैं। यह तो एक व्यक्तिकी बात हुई। किन्तु राजा-रंकका यह नियम पूरे शहर अथवा देशपर भी लागू होता है। सानफ्रान्सिस्कोकी हालकी घटना इसकी साक्षी भरती है। तीन लाख बल्कि उससे भी अधिक व्यक्ति एक क्षणमें बे-घरबार हो गये। महल-मन्दिरोंमें सुख-चैनसे रहनेवाले हजारों लोगोंको जिन्हें रात और दिनकी भी खबर नहीं होती थी आज टूटी-फूटी झोंपड़ी भी नसीब नहीं है। आलिशान सुन्दर इमारतें और सुन्दर-सुन्दर मुहल्ले एक क्षणमें धराशायी हो गये और मिट्टीका ढेर बनकर आकाशको नमन कर रहे हैं। बाग-बगीचों और रमणीक स्थानपर वीरान मैदान छा गया है। असंख्य व्यक्ति पलभरमें बे-घरबार और खाने-पीनेके मोहताज हो गये हैं। ईश्वरकी इस अजब गतिसे कौन विस्मित नहीं होगा? किन्तु इससे भी अधिक आश्चर्यचकित करनेवाली बात दूसरी ही है। ऐसी भयानक होनहारका आघात खानेपर भी हिम्मतके साथ कमर कसकर खड़ा रहना सच्ची बहादुरी है। ऐसा कठिन काम सानफ्रान्सिस्कोकी प्रजाने अपने सिर लिया है। उद्यम और धैर्यशीलताके लिए प्रख्यात अमरीकी जनता भारी दृढ़ता प्रकट करने लगी है।

प्रकृतिके ऐसे कोपके समय दुनियासे मदद लिये बिना सानफ्रान्सिस्कोके पुनर्निर्माणके हेतु नये उत्साहसे प्रयत्न शुरू कर दिया गया है। एक सुन्दर और रमणीक सानफ्रान्सिस्कोके द्वारा संसारकी शोभा बढ़ानेके नक्शे तैयार होने लगे हैं। एक नया और दिव्य नगर बनानेके लिए जबरदस्त योजनाएँ बनने लगी हैं। दूर-दूरके देशोंसे हजारों मनुष्य यह नया शहर बनानेके लिए बुलाये गये हैं। इतना अधिक काम मँगवाया गया है कि सारे देशके लोहा-बाजारमें तेजी आ सकती है। नये ढंगका और इतना बड़ा बन्दरगाह बनानेकी योजना की जा रही है कि वैसा बन्दरगाह दुनियामें कहीं-कहीं ही होगा। मुहल्लोंकी रचना इस प्रकार की जानेवाली है कि जिससे नये शहरकी शोभा बढ़े। इस तरह अनेक प्रकारसे वहाँके लोगोंने प्रकृतिके कोपका मुकाबला करनेके लिए कमर कसी है। मनुष्यकी जो बुद्धि बहते हुए जल-प्रपातसे यान्त्रिक बल पैदा करके हजारों मील दूर रेलगाड़ियों और कारखानोंको चलानेमें समर्थ हुई है, बड़े-बड़े महासागरोंको पार करनेवाले जहाज और आकाशको छूनेवाले बुर्ज बना सकी है, विश्वमण्डलके दूसरे ग्रहोंके निवासियोंसे बात करनेके प्रयास कर रही है, वह पृथ्वीके गर्भमें होनेवाली हलचलकी गतिको पहचानकर भूकम्पको नहीं रोक पाती — यह दुःखकी बात है। फिर भी ऐसे सर्वनाशी भूकम्पके बाद भी मनुष्य हिम्मतके साथ जूझनेके लिए कमर कस रहा है, यह सचमुच खुशीकी बात है।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन २-६-१९०६

३७२ पत्र उपनिवेश-सचिवको

डर्बन
जून २, १९०६

सेवामें
माननीय उपनिवेश-सचिव
पीटरमैरित्सबर्ग

महोदय

नेटाल भारतीय कांग्रेस द्वारा आहत-सहायक दल[1] खड़ा करनेकी दिशाके बारेमें भारतीय[2] [illegible] तारीखका पत्र मिला।

इस दिशाको स्वीकार करनेके लिए हमारी कांग्रेसकी समिति सरकारकी कृतज्ञ है। हमारी समितिने जैसा कि सरकारकी इच्छा है नेटाल नागरिक सैनिक दलके मुख्य चिकित्साधिकारीसे पत्र व्यवहार आरम्भ कर दिया है। उपर्युक्त पत्रकी प्रतिलिपि साथ नत्थी है।

आपके आज्ञाकारी
ओ० एच० ए० जौहरी
एम० सी० आंगलिया
संयुक्त अवैतनिक मन्त्री, ने० भा० कां०

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन [illegible]-६-१९०६

१. देखिए "[illegible]" पृष्ठ [illegible]।
२. देखिए अगला शीर्षक।

३७३ पत्र प्रधान चिकित्साधिकारीको

डर्बन
जून २ १९ ६

सेवामें
प्रधान चिकित्साधिकारी
नेटाल नागरिक सैनिक दल
पीटरमैरित्सबर्ग

महोदय

नेटाल भारतीय कांग्रेसके नाम सरकारका एक पत्र आया है। उसमें लिखा है कि भारतीय आहत-सहायक दलके सम्बन्धमें कांग्रेसके द्वारा की गई पेशकशको सरकारने मंजूर कर लिया है।

सरकारका कथन है कि प्रारम्भिक प्रयोगके रूपमें इस टुकड़ीमें २ डोलीवाहक रहें। हमारी समिति सूचित करना चाहती है कि आप जो स्थान और समय बतायें उसपर २ आदमी आपकी सेवामें उपस्थित रहेंगे। हम मानते हैं कि आप उनके लिए आवश्यक साजो-सामान वर्दियों और यातायातकी व्यवस्था भी करेंगे।

सरकारने हमारी समितिको सूचित किया है कि इस दलका वेतन प्रति व्यक्ति डेढ़ शिलिंग रोजाना होगा। जब पेशकश की गई थी तब जिस समाजका प्रतिनिधित्व कांग्रेस कर रही है उसका इरादा खुद वेतन देनेका था। इसलिए हमारी समितिको भरोसा है कि सरकार भारतीय समाजको अपने आदमियोंका वेतन स्वयं चुकानेकी अनुमति देनेकी कृपा करेगी। साथ ही हमारा विनम्र निवेदन है कि प्रति व्यक्ति प्रति सप्ताह एक पौंडसे कम वेतनपर यह सेवादल खड़ा नहीं किया जा सकता। और हमें कहनेका निर्देश किया गया है कि इतनी रकम हमारा समाज तबतक चुकाते रहनेको राजी है जबतक दलकी सेवाओंकी आवश्यकता रहे।

हम यह भी कह देना चाहते हैं कि अधिकतर व्यक्ति सेवा करनेको हर तरहसे तैयार होनेपर भी आहत-सहायक दलके कामके लिए प्रशिक्षित नहीं हैं और इसमें उनका कोई कसूर भी नहीं है।

आपके आज्ञाकारी सेवक
ओ० एच० ए जौहरी
एम० सी० आंगलिया
संयुक्त अवैतनिक मन्त्री ने भा कां

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन ९–६–१९ ६

२७४. जोहानिसबर्गकी चिट्ठी

जून ६, १९११

ट्रामके मामलेकी कहानी

ट्रामके मामलेने दूसरा रूप धारण कर लिया है। नगर-परिषद और भारतीयोंके बीच रस्साकशी चल रही है। दोनोंमें से एक भी पक्ष हार माननेको तैयार नहीं है।

ट्रामगाड़ियोंके लिए कानूनकी जरूरत नहीं है इस बहानेसे नगर-परिषदने कानून रद कर दिया। दूसरी ओर उसकी एक समितिने नया कानून बना डाला। मुझे जो निजी समाचार मिले हैं उनसे मालूम होता है कि परिषदकी उस समितिमें श्री डंकन[1] भी गये थे। समितिकी इच्छा थी कि कानूनमें ऐसी धारा शामिल की जाये जिससे भारतीयोंको ट्राममें बैठनेकी छूट न रहे। वे चाहें तो पृथक ट्राममें बैठें। परन्तु जिन भारतीयोंको विशेष रियायती परवाने दिये गये हों वे सब ट्रामगाड़ियोंमें बैठ सकें। कहा जाता है कि समितिके इस विचारका श्री डंकनने विरोध किया। उन्होंने कहा कि भारतीय समाजने रेलगाड़ीके सम्बन्धमें सब कर लिया उसी तरह ट्राममें भी छूट रहेगी तो वह सब कर लेगा। अधिक सख्ती हुई तो वह उत्तेजित हो जायेगा और उसका परिणाम ठीक न होगा। समिति अभी भी नियम बना रही है। कुछ दिनोंमें नियम प्रकाशित होनेवाले हैं। तब ज्यादा बातें मालूम हो सकेंगी।

इस तरह नगर-परिषद कार्रवाइयाँ करती रहती है। इस बीच भारतीय समाजने एक और काम किया है। संघके प्रमुख श्री अब्दुल गनी और इस समाचारपत्रके वर्तमान अंग्रेज सम्पादक श्री पोलक ट्राममें बैठने गये। कंडक्टरने श्री अब्दुल गनीको रोका। तब श्री अब्दुल गनीने कहा कि जबतक बल-प्रयोग नहीं किया जायेगा वे स्वयं नीचे नहीं उतरेंगे। इसपर कंडक्टरने पुलिसको बुलाया। पुलिसको भी यही उत्तर मिला। अन्तमें ट्रामका निरीक्षक आया। उसने विनयपूर्वक बात-चीत की। आखिर यह तय हुआ कि ट्राम रोकनेका आरोप लगाकर श्री अब्दुल गनीपर मुकदमा चलाया जाये और इस बातको मानकर श्री अब्दुल गनी तथा श्री पोलक गाड़ीसे उतर गये। यह खबर जैसे ही निरीक्षकने नगर-परिषदको दी टाउन क्लार्कने [उन दोनोंको] तुरन्त मिलनेके लिए चिट्ठी भेजी। उसने कहा कि अब भारतीय बहुत कर चुके उन्हें नगर-परिषदको अधिक हैरान नहीं करना चाहिए। कुछ ही दिनोंमें उस सम्बन्धमें कानून प्रकाशित हो जायेगा और यदि वह ठीक न लगे तो उन्हें उसका विरोध करना चाहिए। टाउन क्लार्कने प्रार्थना की है कि अब नगर-परिषदको तकलीफ न दें तो अच्छा होगा।

विलायतको शिष्टमण्डल

विलायतको शिष्टमण्डल भेजनेके बारेमें सर विलियम वेडरबर्नका दूसरा तार आया है। उसमें उन्होंने लिखा है कि यद्यपि हमारी तरफसे काम करनेवाली समितिको अभी सफलताकी बहुत आशा नहीं है फिर भी वह सिफारिश करती है कि जिस जहाजसे संविधान-समिति यहाँसे रवाना हो उसीसे अकेले श्री गांधीको भेजा जाये। संविधान-समिति सम्भव है, जुलाईके आरम्भमें विलायत जायेगी। इस शिष्टमण्डलमें किन व्यक्तियोंको भेजा जाये इस विषयमें विचार करनेके लिए जितने गुजराती

१. उपनिवेश-सचिव।

संघको समितिकी बैठक हुई थी। उस बैठकमें प्रस्ताव हुआ है कि जोहानिसबर्गके सब भारतीयोंकी सभा बुलाकर चन्दा इकट्ठा करनेकी व्यवस्था की जाये। यदि धन एकत्रित हो जाये तो श्री गांधीके अलावा प्रिटोरिया समितिके मन्त्री श्री हाजी हबीब तथा हाजी वजीर अलीको भी भेजा जाये। बैठक वेस्ट ऐंड हॉलमें दो बजे होनेवाली है — यह सूचना दी जा चुकी है।

खनिकोंकी माँग

खनिकायका जो शिष्टमण्डल संविधान-समितिके सामने गया था उसने यह सिफारिश की है कि अब भारतीयोंको बिलकुल न आने दिया जाये और न उन्हें व्यापार आदिके दूसरे परवाने ही दिये जायें।

अनुमतिपत्रकी दिक्कत

अनुमतिपत्रोंकी दिक्कतसे तंग आकर संघने अपना आखिरी कदम उठाया है। उसने सरकारको लिखा है कि यदि अब अनुमतिपत्रकी परेशानी खतम नहीं होगी तो संघ चार प्रकारके परीक्षात्मक मुकदमे चलाना चाहता है। मुकदमे निम्न प्रकारके होंगे

(१) जो यह सिद्ध कर सकें कि उन्होंने बोअर सरकारको तीन पौंड दे दिये हैं उन्हें बिना अनुमतिपत्रके आनेकी छूट होनी चाहिए।

(२) जिन्हें आनेकी छूट है, ऐसे लोगोंके १६ वर्षसे कम उम्रके लड़के-लड़कियोंको भी आनेकी छूट होनी चाहिए और वह भी बिना अनुमतिपत्रके।

(३) जिन्हें आनेकी छूट हो उनकी स्त्रियोंको भी बिना अनुमतिपत्रके आनेकी छूट होनी चाहिए।

(४) सरकार मुखमुख्त्यारीसे जिसे मर्जी हो उसे ही अनुमतिपत्र देती है। यह नहीं होना चाहिए। अनुमतिपत्र किसे दिये जायें इस बाबत स्पष्ट तथा बाकायदा नियम होने चाहिए।

यदि सरकारने इसके बारेमें सन्तोषजनक जवाब न दिया तो संघने इन सबके बारेमें परीक्षात्मक मुकदमा दायर करनेकी सूचना दी है।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, ९-६-१९०६

३७५. पत्र : दादाभाई नौरोजीको

डर्बन
नेटाल
जून ८, १९०६

सेवामें
माननीय दादाभाई नौरोजी
केनिंग्टन रोड
लन्दन

मान्यवर,

मुझे आपका पिछला तार मिला था जिसमें सुझाव था कि मैं उसी जहाजसे इंग्लैंड रवाना हो जाऊँ जिससे आयोग-सदस्य आनेवाले हैं।

मैं तदनुसार तैयारी कर रहा था तभी नेटाल सरकारका पत्र मिला कि उन्होंने भारतीय डोलीवाहक दल बनानेके विषयमें भारतीय समाजका प्रस्ताव स्वीकार कर लिया है। इसलिए अब मेरे किसी भी दिन मोर्चेपर जानेकी सम्भावना है।

इस परिस्थितिमें हम सबने सोचा है कि स्वयंसेवक दलका संगठन इंग्लैंड-यात्रासे कुछ अधिक महत्त्वपूर्ण है। यह जरूरी समझा गया है कि मैं दलके साथ रहूँ — कमसे-कम प्रारम्भिक अवस्थामें। यह स्पष्ट है कि नेटाल-सरकार आहत-सहायता कार्यमें भारतीयोंकी शक्तिकी कसौटी करना चाहती है।

इसलिए लगता है फिलहाल इंग्लैंड जानेका कोई भी विचार मुझे छोड़ देना पड़ेगा।

इस कारणसे यहाँ हम लोग आशा किये हैं कि जो समिति दक्षिण । देख-भाल कर रही है वह सरकारके सामने परिस्थिति पेश करनेके लिए जरूरी कदम उठायेगी।

ट्रान्सवालके ब्रिटिश भारतीयोंकी ओरसे संविधान-समितिके[1] सामने पेश किया गया वक्तव्य आपने देख लिया होगा। इस सम्बन्धमें जो कुछ कहा जा सकता है वह सब उसमें चार पन्नोंमें मौजूद है। यह वक्तव्य इसी २ जूनके इंडियन ओपिनियन[2] में निकला है।

आपका विश्वस्त,
मो॰ क॰ गांधी

मूल अंग्रेजी प्रतिकी फोटो-नकल (एस॰ एन॰ २२७१) से।

३७६. भारतीय और वतनी विद्रोह

आखिर सरकारने भारतीय समाजका प्रस्ताव स्वीकार कर लिया है और उसे अपनी वफादारीका परिचय देनेका अवसर दिया है। प्रयोगके लिए सरकार बीस डोलीवाहकोंका एक दल चाहती है। इसका उत्तर नेटाल भारतीय कांग्रेसने तत्काल भेज दिया है। कांग्रेसने हमारे मतानुसार यह प्रस्ताव करके बहुत अच्छा किया है कि जबतक यह दल प्रयोगकी अवस्थामें रहेगा तबतक डोलीवाहकोंकी मजदूरी भारतीय समाज देगा।

सरकारने इस प्रस्तावको स्वीकार करनेके साथ-साथ वतनी हथियार-कानूनमें संशोधन करके भारतीयोंको शस्त्र देनेकी व्यवस्था कर दी है। इसी बीच श्री मेडनने इस आशयका वक्तव्य भी दिया है कि सरकार भारतीयोंको उपनिवेशकी रक्षामें भाग लेनेका अवसर देना चाहती है।

अब भारतीयोंको यह दिखानेका शानदार अवसर मिला है कि वे नागरिकताके कर्तव्योंको समझ सकते हैं। साथ ही उनको संगठित करनेकी बातमें ऐसा कुछ नहीं है जिसका अनुचित उपयोग किया जाये। मोर्चेपर बीस या दो सौ भारतीयोंका भी जाना नगण्य-सा है। भारतीयोंका यह त्याग सूक्ष्मतम ही माना जायेगा और यह उचित ही होगा। किन्तु इस घटनाके पीछे जो सिद्धान्त है उससे इसका महत्त्व प्रकट होता है। सरकारने भारतीयोंका प्रस्ताव स्वीकार करके अपने सद्भावका परिचय दिया है। अब यदि भारतीय इस अग्नि परीक्षामें उत्तीर्ण हो जाते हैं तो भविष्यके लिए सम्भावनाएँ बहुत बड़ी हैं। यदि उनको नागरिक सेनामें स्थायी रूपमें शामिल कर लिया जाये तो यूरोपीयोंको यह शिकायत करनेका कोई कारण न रहेगा कि उपनिवेशकी रक्षाका समस्त भार यूरोपीयोंको ही उठाना पड़ता है। और तब भारतीय भी यह अनुभव न करेंगे कि उनको नागरिक सेनामें शामिल होनेकी इजाजत न देकर उनके साथ तिरस्कारपूर्ण व्यवहार किया जाता है।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, ९-६-१९०६

१. देखिए "वक्तव्य : संविधान-समितिको", पृष्ठ १४५–१५८।
२. देखिए "पत्र : 'इंडियन ओपिनियन'को", पृष्ठ १८।

३७७ फौजियोंकी मदद

काफिरोंके खिलाफ लड़ाईमें गये हुए सिपाहियोंकी मददके लिए डर्बन महिला-मण्डलने एक विशेष निधि शुरू की है। इस निधिमें सभी प्रमुख लोगोंने चन्दा दिया है। उनमें कुछ भारतीय नाम भी दिखाई पड़ते हैं। हमारी सलाह है कि और भी अधिक भारतीय व्यापारियों तथा दूसरे भारतीयोंको इसमें चन्दा देना चाहिए। हम पिछले सप्ताह लिख चुके हैं कि एक व्यक्तिने हमें मैरित्सबर्गमें ऐसी निधि इकट्ठा करनेकी सलाह दी है। उनका कहना है कि हम और तरहसे लड़ाईमें पूरा हाथ नहीं बँटा सकते तो इस तरहसे सहायता कर लें।

फौजियोंकी जिन्दगी कठिन होती है। उन्हें सरकार जो वेतन, भत्ता आदि देती है, वह हमेशा काफी नहीं होता। इसलिए लड़ाईमें न जानेवाले हमेशा अपनी भावना जाहिर करनेके लिए और उन्हें जरूरी चीजें पहुँचानेके लिए निधि इकट्ठा करते हैं और उससे मेवा, तम्बाकू, गर्म कपड़े आदि लेकर भेजते हैं। ऐसी निधिमें मदद करना हमारा कर्तव्य है।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, ९-६-१९०६

३७८ नेटालमें भारतीयोंकी स्थिति

[जून १३, १९०६ के पूर्व]

नेटालके भारतीय समाजको दो चीजें बहुत अधिक तकलीफ देती हैं। इनमें पहली है विक्रेता परवाना अधिनियम।

जब यह अधिनियम पास हुआ था तब स्वर्गीय सर हेनरी बिन्सने इसका कड़ा विरोध किया था और कहा था कि यह कार्रवाई अशिष्ट है और सर्वोच्च न्यायालयके सामान्य क्षेत्रसे इसको भिन्न रखा जाना एक खतरनाक सिद्धान्त है। अनुभवने इस भविष्यवाणीका औचित्य प्रकट कर दिया है। प्रारम्भिक अवस्थामें इस अधिनियमके प्रशासनमें ब्रिटिश भारतीयोंके व्यापारको रोकनेकी इच्छा अतिरेक दिखलाई पड़ता था। न्यूकैसिलके परवाना-अधिकारीने सभी भारतीय परवानोंको नया करनेसे इनकार कर दिया था। ये परवाने संख्यामें नौ थे। उनमें से छः परवाने बहुत अधिक खर्च और परेशानीके बाद नये कर दिये गये। परिणामस्वरूप और उपनिवेश-कार्यालयके दबावके कारण सरकारने परवाना-अधिकारियोंके नाम एक चेतावनी जारी की कि यदि वे अधिनियमका उपयोग बुद्धिमानी और नरमीके साथ तथा वर्तमान परवानोंका ध्यान रखते हुए नहीं करेंगे तो सरकार कानूनका संशोधन करने और उसे सर्वोच्च न्यायालयके कार्यक्षेत्रमें रखनेको बाध्य हो जायेगी। इस गश्ती चिट्ठीका असर कुछ समय तक रहा। अधिक रहना सम्भव नहीं था।

१ नेटाल मर्क्युरीने सुझाव दिया था कि भारतीयोंको अपनी शिकायतें संक्षेपमें लिख कर जनताके सामने प्रस्तुत करनी चाहिए। इससे अपना पक्ष रखनेमें वे अधिक अच्छी स्थितिमें होंगे। यह लेख उसी सुझावके जवाबमें १३-६-१९०६ के नेटाल मर्क्युरीमें प्रकाशित हुआ था। बादमें यह इंडियन ओपिनियनमें उद्धृत किया गया था।

ऊपरके तीनों मामलोंमें प्राथियोंको उनके परवाने न देने और इस तरह उन्हें शायद उनकी जीविकाके साधनसे वंचित करनेमें औचित्यका लेश भी नहीं है। ये सब निहित स्वार्थ थे फिर भी हमारी रायमें सार्वजनिक निकायोंने न्याय और अधिकारकी समस्त मान्यताओंको कुचलनेमें आगा पीछा नहीं किया। यदि सर्वोच्च न्यायालयका अधिकार-क्षेत्र सुरक्षित रखा जाता तो ऐसा जबरदस्त अन्याय कभी सम्भव न होता। जिन व्यापारियोंकी दूकानें गन्दी हों अथवा भद्दी ही हों या जो अपने व्यापारका समझने योग्य लेखा-जोखा प्रस्तुत न कर सकें या जो अपने साहूकारोंको धोखा देनेके लिए बदनाम हों उनपर आपत्ति करना समझमें आ सकता है जनताकी भावना और पूर्वग्रहको ध्यानमें रखकर भारतीय व्यापारियोंको नये परवाने देनेमें बहुत ज्यादा हिचकिचाना भी समझा जा सकता है किन्तु उक्त उदाहरणोंमें लोगोंके साथ किये गये व्यवहारका औचित्य सिद्ध करना कठिन है। इस सन्दर्भमें हालमें प्रकाशित केपके विधेयकका अध्ययन कर लेना बहुत ही उचित होगा और उससे इस प्रश्नपर बहुत प्रकाश पड़ेगा। यद्यपि इस विधेयकपर कोई तर्कसंगत आक्षेप नहीं किया जा सकता फिर भी इससे ब्रिटिश परम्पराओं अथवा उचितानुचितके प्रारम्भिक विचारोंको ठेस पहुँचाये बिना वह सब-कुछ हो जायेगा जो नेटाल अधिनियमके द्वारा अभिप्रेत था।

सरकारने परवाना देनेवाले अधिकारियोंके नाम इस आशयकी गश्ती चिट्ठी भेजी है कि दिये गये परवानोंके प्रतिपत्रोंपर शिनाख्तका पक्का बनानेके लिए भारतीय प्राथियोंके अंगूठेके निशान लिये जायें। इससे एक अतिरिक्त कठिनाई सामने आ गई है। सरकार वर्तमान परवानेदारोंकि व्यापारको हटा या मरते ही उनके कारोबार को चलते हुए धन्धेके रूपमें न बेचकर एकदम बेच देनेका इरादा रखती है। भारतीयोंके साथ इस तरहका भेदभाव करनेका इसके सिवा कोई दूसरा कारण समझमें नहीं आता। किसी व्यापारीके लिए इसका क्या अर्थ है सो कहनेकी नहीं कल्पना करनेकी बात है।

प्रवासी-प्रतिबन्धक अधिनियम

इस अधिनियमके अन्तर्गत हालमें सरकारने ऐसे नियम बनाये हैं, जिनके मकसद खालिस लूट जैसा शुल्क लगाया गया है। जो भारतीय नेटालका निवासी है और नेटालमें वापस लौटना चाहता है वह प्रायः अपने साथ कुछ लिखित प्रमाण रखता है। उसे सरकार पर्याप्त सबूत मिलनेपर अधिवासी प्रमाणपत्र दे देती है। इसके लिए अभीतक नाममात्रको २ शिलिंग ६ पेंसका शुल्क लिया जाता था किन्तु अब इसे बढ़ाकर एक पौंड कर दिया गया है। इसी प्रकार, जो कुछ दिनोंके लिए उपनिवेशमें आना चाहते हैं या भीतरी राज्योंके निवासी होनेके कारण भारत जाते हुए नेटालसे गुजरना चाहते हैं उनको भी सुविधाएँ दी जाती हैं। इन्हें अभ्यागत पास या नौकारोहण पास कहते हैं। अभी हाल तक १ पौंड जमा कर देनेपर ये बिना किसी शुल्कके जारी कर दिये जाते थे। जमा की हुई रकम उपनिवेश छोड़नेपर वापस कर दी जाती थी। अब इन पासोंपर भी एक पौंड शुल्क लगा दिया गया है। यह कर असाधारण है। ब्रिटिश भारतीय नेटालमें गुजर कर रेलवेकी आमदनी बढ़ाते हैं इस विशेषाधिकारके बदले अब उन्हें एक पौंड शुल्क भी देना पड़ेगा। अभ्यागतोंपर भी यही तर्क लागू होता है। यह देखते हुए कि कानून बाहर जानेपर प्रतिबन्ध लगाता है कुछ दिन ठहरनेपर नहीं यह सोचना स्वाभाविक है कि जो उपनिवेशमें कुछ दिन रहना चाहते हैं वे वापस हो ही जायें इस बातको पक्का करनेका खर्च सरकारी खजानेपर पड़ना चाहिए। किन्तु सरकारने दूसरा ही दृष्टिकोण अपनाया है। वह मानती है कि जो आदमी भारती तौरपर नेटालकी यात्रा करता है उसपर भी प्रवासी प्रतिबन्धक अधिनियम लागू किया जा सकता है और इसलिए उपनिवेशमें यात्राकी अनुमति देना उसे एक बहुत बड़ी सुविधा देना है। कानूनमें इस मान्यताका कोई समर्थन नहीं मिलता। ऐसे उदाहरण मिलते हैं जिनमें

जोहानिसबर्गके ब्रिटिश भारतीयोंने १ पौंड देकर नौकारोहण पास लिये और बादमें उन्हें इसका बदलकर अपनी भारत-यात्रा अनिश्चित कालके लिए स्थगित कर देनी पड़ी। इस तरह जिस नौकारोहण पासके लिए उन्होंने एक पौंड शुल्क दिया था उसका कोई उपयोग न करनेपर भी उन्हें उसके शुल्कसे हाथ धोना पड़ा और जब वे भारत जाना चाहेंगे उस समय उन्हें फिर नौकारोहण पास जारी कराना पड़ेगा और उसके लिए फिरसे शुल्क देना पड़ेगा। अतः ऐसे शुल्कका अर्थ यही लगाया जा सकता है कि ब्रिटिश भारतीयोंपर अप्रत्यक्ष रूपसे कर लगानेका प्रयत्न किया जा रहा है।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन १६-६-१९०६

३७९. वफादारीका प्रतिज्ञापत्र

हम नीचे हस्ताक्षर करनेवाले गम्भीरता और ईमानदारीके साथ घोषणा करते हैं कि हम महामहिम सम्राट एडवर्ड सप्तम उनके उत्तराधिकारियों और वारिसोंके प्रति वफादार रहेंगे और सच्ची निष्ठा रखेंगे तथा नेटाल उपनिवेशक सक्रिय नागरिक सेनाकी अतिरिक्त सूचीमें डोलीवाहकोंकी हैसियतसे वफादारीके साथ तबतक सेवा करेंगे जबतक कि हम कानूनन उसकी सदस्यतासे पृथक न हो जायें। हमारी सेवाकी शर्तें ये होंगी कि हममें से प्रत्येकको भोजन वर्दी सामग्री तथा १ शिलिंग ६ पेंस प्रतिदिन मिलेगा।

मो० क० गांधी यू० एम० शेलत एच० आई० जोशी एस० बी० मेढ़ लाल मुहम्मद मुहम्मद शेख दादा मियाँ पूती नायकन अप्पासामी कुंजी शेख मदार, मुहम्मद अलवार मुतुसामी कुप्पुसामी अयोध्यासिंह किस्तमा अली भाई लाल अमासुद्दीन।[1]

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन १६-६-१ ६

१ देखिए "भारतीय डोलीवाहक दल" पृष्ठ १०८।

३८० लॉर्ड सेल्बोर्न

जर्मिस्टनके नये नगर-भवनका शिलान्यास करते हुए लॉर्ड सेल्बोर्नने एक अर्थगर्भित भाषण दिया है। उसमें नैतिक तथा राजनीतिक दोनों प्रकारकी सीखोंका समावेश है। राजनीतिक दृष्टिसे देखें तो यह भाषण गोरोंको लक्ष्य करके दिया गया है। इसलिए हमारे लिए विचार करने योग्य सामग्री उसमें कम ही है। किन्तु नैतिक दृष्टिसे लॉर्ड सेल्बोर्नके शब्द मनन करने योग्य हैं। इसलिए हम उनका सारांश नीचे दे रहे हैं:

राजकीय मामलोंमें प्रवृत्त हमारी (गोरी) जनताके जीवनके लिए नगरपालिकाओंका असर बहुत जरूरी है। नगरपालिकाएँ राज-काज चलानेके लिए व्यक्तियोंको तैयार करनेवाली पाठशालाएँ हैं। यहाँ हमारी सारी कौमके स्वतन्त्रता रूपी बीजको पोषण मिलता है। अंग्रेज लोग सरल किन्तु पराधीन राज्यकी अपेक्षा निष्ठुर किन्तु स्वाधीन राज्य-पद्धतिको अधिक पसन्द करते हैं। नगरपालिकाएँ हर समय और हर जगह लोकमत जाहिर करनेका मुख्य स्थान हैं। नगरपालिका निर्वाचित सदस्योंको ही नहीं निर्वाचकों तथा निर्वाचनके सम्बन्धमें चर्चा करनेवालोंको भी एक तरहका शिक्षण देती है। उचित आलोचना किस तरह की जाये यह निर्वाचकोंको भूलना नहीं चाहिए। यह प्रदेश ऐसा है जहाँ विविध प्रकारके तूफान उठा करते हैं। तूफान प्राकृतिक और राजनीतिक दो तरहके होते हैं। जिस प्रकार प्राकृतिक तूफानोंके समय स्थिरता बनाये रखनेवाला स्थिरचित्त व्यक्ति कहलायेगा उसी प्रकार राजनीतिक तूफानोंके समय स्थिर वृत्ति रखनेवाला स्थिर नीतिका व्यक्ति माना जायेगा। शुभ और अशुभ दोनों अवसरोंपर जो व्यक्ति अपने आचरणमें स्थिरता दिखाता है उसीको मैं विश्वासपात्र मानता हूँ। लोग उसके शब्दों या कामोंका सीधा अर्थ करें या उलटा उसे यह सिद्ध कर दिखाना चाहिए कि वह अपने सिद्धान्तोंपर अडिग है।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन १६–६–१९०६

३८१ श्री सीडन[1]

न्यूज़ीलैंडके प्रधान मंत्री श्री सीडन ६१ वर्षकी आयुमें किसी भी प्रकारकी बीमारी भोगे बिना इस संसारसे विदा हो गये। वे एक होशियार राजनीतिज्ञ अंग्रेज थे। उन्होंने लम्बी अवधि तक न्यूज़ीलैंडके निर्वाचित प्रधान मन्त्रीका पद भोगकर नाम प्राप्त किया था और अपनी देख-रेखमें देशको सम्पन्न बनाया। उन्हें औपनिवेशिक राजनीतिज्ञोंमें अग्रगण्य माना जा सकता है। यद्यपि वे बड़ी सरकारकी अवगणना करके भी उपनिवेशकी सत्ता बढ़ानेका प्रयत्न करते रहते थे फिर भी चूँकि उनका रुख ब्रिटिश साम्राज्यके हितोंके लिए घातक नहीं था इसलिए ब्रिटिश राजनीतिज्ञोंमें उन्हें बड़े प्रमुख कार्योंके योग्य माना जाता था।

अबकी औपनिवेशिक-सम्मेलन और राज्याभिषेक सम्मेलनके समय उपनिवेशोंके प्रधान मन्त्रियोंमें उनपर सबसे पहले नजर पड़ती थी। ऐसे राजनीतिज्ञके देहावसानका समाचार ब्रिटिश

१. ओसेस्ट्री ग्रेंज जहाज द्वारा आस्ट्रेलियाके दौरेसे न्यूज़ीलैंड वापस जाते समय जून १, १९०६ को रिचर्ड सीडनका देहान्त हुआ।

राज्यके प्रत्येक भागमें शोक उत्पन्न करेगा। श्री सीडनके देहान्तके इस शोकमय अवसरपर महामहिम एडवर्डने प्रजाके नाम शोक-सन्देश भेजा है। नेटाल सरकारने भी शोक-सन्देश भेजा है। इससे मालूम होता है कि वे कितने विख्यात थे।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन १६–६–१९०६

३८२ पत्र टुकड़ी नायकको

डर्बन
जून १८, १९०६

मुख्य नायक एल॰ [illegible]
पॉइंट
[डर्बन]

प्रिय महोदय

टुकड़ी नं॰ ४ के नेता कप्तान ग्रेने दलके उन सदस्योंको जो स्वयं वर्दियोंका प्रबन्ध करनेमें समर्थ नहीं हैं, वर्दियाँ देनेके निमित्त उपर्युक्त टुकड़ीमें रहनेवाले भारतीय व्यापारियोंसे चन्दा उगाहनेके प्रयत्न किये हैं। फलतः हम बड़े हर्षके साथ आपको सूचित करना चाहते हैं कि कप्तान ग्रेने जितनी रकमका अनुमान बाँधा था उससे अधिक अब हम इकट्ठी कर चुके हैं। साथमें जो सूची नत्थी है उसका अवलोकन करनेपर आपको यह बात प्रकट हो जायेगी। आवश्यकता थी ७ पौंड १५ शिलिंगकी और चन्देमें आये हैं ८१ पौंड ७ शिलिंग।

हम ५ पौंडकी नकद रकम उपर्युक्त प्रयोजनके लिए इस पत्रके साथ आपके हवाले करते हैं। अगर आपको अधिककी आवश्यकता पड़ेगी तो हम बची हुई रकम आपके पास भेज देंगे।

यदि आप चन्दा देनेवालोंकी जानकारीके लिए उन व्यक्तियोंके नाम जिन्हें वर्दियाँ दी जायें हमें लिख भेजनेकी कृपा करेंगे तो हम आपके आभारी होंगे।

विद्रोह पूरी तौरपर विफल हो ही चुका है। यदि इस लिहाजसे अब इस रकमकी जरूरत न रह गई हो तो हम मानते हैं यह हमें लौटा दी जायेगी।

हम यह भी कहना चाहेंगे कि अगर वर्दियाँ खरीदी जायें तो वे टुकड़ी नं॰ ४की मिल्कियत रहें।

अन्तमें हम कप्तान ग्रेको धन्यवाद देना चाहते हैं। उन्होंने हमें इस बातका अवसर दिया है कि हम उन नागरिकोंके कार्यकी सराहना — छोटे ही रूपमें सही — व्यक्त कर सकें जो टुकड़ी नं॰ ४ में रहनेवाले अपने सहनागरिकोंके जान-मालकी हिफाजत करनेके लिए आगे बढ़े हैं।

आपके विश्वस्त
एस॰ पी॰ मुहम्मद व कम्पनी

[अंग्रेजीसे]

१ इन्होंने ९ जुलाई [illegible] अपने इलाकेके भारतीय निवासियोंकी एक सभामें भाषण दिया था। [illegible] भी उसमें बोले थे। उसमें यह निश्चय किया गया था कि [illegible] १९०६के [illegible] के लिए दिये जायें।

३८३ पत्र गो० कृ० गोखलेको

स्टीमर पहाड़
जून २२, १९११

प्रिय प्रोफेसर गोखले,

मैं यह पत्र स्टीमरके[1] दैनिक पड़ावसे लिख रहा हूँ। भारतीय डोलीवाहक हलको बस पूरा करनेका हुक्म मिला है। इस बार हम सबके सामने जो काम है वह ज्यादा मुश्किल तरीकेका है। कुछ भी हो मेरे लिए यह पूरी तौरसे जरूरी था कि यदि यह बन सके तो मैं इसके साथ पूरूँ। इसलिए मेरे इंग्लैंड आनेका प्रश्न स्थगित ही रखना होगा।

मैं आपके लम्बे पत्र और आपके दिये सुझावोंके लिए कृतज्ञ हूँ।

मेरा खयाल है कि श्री मॉर्लेसे आपकी मुलाकातोंका परिणाम हमें समयपर ज्ञात हो ही जायेगा। अपनी यात्रामें यदि आप दक्षिण आफ्रिकासे गुजर सकें तो आपका यह शानदार काम और भी खिल उठेगा। मैं जानता हूँ कि यह स्वार्थीपनका विचार है। परन्तु यह देखते हुए कि आजकल मेरा सम्पूर्ण कार्य एकमात्र दक्षिण आफ्रिकासे सम्बन्धित है, आप मुझे ऐसे विचारके लिए क्षमा करेंगे।

आपका सच्चा
मो० क० गांधी

प्रो० गो० कृ० गोखले
लन्दन]

हस्तलिखित मूल अंग्रेजी प्रतिकी फोटो-नकलसे।
सौजन्य : भारत सेवक समिति (सर्वेन्ट्स ऑफ इंडिया सोसाइटी)।

४८४ अनुमतिपत्रका एक महत्त्वपूर्ण मुकदमा

न्यायकी एक बार पुनः विजय हुई है और ट्रान्सवालके एशियाई अनुमतिपत्र विभागकी ज्यादतियोंपर जोहानिसबर्गके प्रधान मजिस्ट्रेटके हाथों अस्थायी रूपसे रोक लगी है। इस मुकदमेके बारेमें हमारे जोहानिसबर्गके संवाददाताने जो सारांश भेजा है उससे मालूम होता है कि हीडलबर्गके एक प्रतिष्ठित भारतीय व्यापारी श्री ए० एम० भायातके भाई श्री ई० एम० भायातको ट्रान्सवालमें पुनः प्रवेशके लिए अनुमतिपत्र देनेसे इनकार किया गया यद्यपि उन्होंने साबित कर दिया था कि वे बस्तीके एक पुराने निवासी हैं और ट्रान्सवालमें बसनेके लिए, शुल्कके रूपमें डच सरकारको तीन पौंड अदा कर चुके हैं। श्री भायातके प्रार्थनापत्रको अत्यधिक प्रभावशाली यूरोपीय समर्थन प्राप्त हो चुका था। उन्हें

१ डर्बन [illegible] रास्तेमें [illegible]।

२ श्री मॉर्लेने सिर्फ नवम्बर १९१०में, [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] और [illegible] [illegible] श्री [illegible] [illegible] कर दिया था।

ट्रान्सवाल जाकर अपने भाईका स्थान ग्रहण करना था। क्योंकि उनके भाईका स्वास्थ्यके खयालसे भारत जाना जरूरी हो गया था। ऐसे प्रमाणके होते हुए भी श्री मायात अनुमतिपत्र प्राप्त न कर सके। इसका कथित कारण यह बताया गया कि चूँकि युद्ध छिड़नेके कुछ वर्ष पूर्व ही वे ट्रान्सवाल छोड़कर जा चुके थे इसलिए उन्हें शरणार्थी नहीं कहा जा सकता। ब्रिटिश भारतीय संघके द्वारा मामला लॉर्ड सेल्बोर्नके पास भेजा गया परन्तु परमश्रेष्ठने भी राहत देनेसे इनकार कर दिया। हमारे लिए यह दुःखद आश्चर्यका विषय है कि ऐसे महत्त्वपूर्ण मामलेमें उच्चाधिकृत न्याय करनेसे इनकार कर दे। भारतीयोंको यह शिकायत करनेका अधिकार है कि परमश्रेष्ठने भारतीय समाजके प्रति वह उचित सम्मान नहीं दिखाया जिसके उन्होंने कुछ ही समय पहले कहा था भारतीय सही तौरपर अधिकारी हैं।

इस इनकारीसे चिढ़कर श्री मायातने उपनिवेशकी अदालतोंसे अपील की जिसका फैसला पूर्ण रूपसे भी मायातके पक्षमें हुआ। शान्ति-रक्षा अध्यादेशकी मजिस्ट्रेट द्वारा की गई व्याख्याका अर्थ यह है कि जो भारतीय पुरानी सरकारको तीन पौंड दे चुके हैं वे ट्रान्सवालमें उक्त रकमकी अदायगीका प्रमाण देकर, बिना अनुमतिपत्रके प्रवेश कर सकते हैं।

इस मुकदमेने एक बार फिर प्रदर्शित कर दिया है कि ट्रान्सवालमें सरकारसे न्याय पाना किसी भारतीयके लिए कितना कठिन है। जबसे इस उपनिवेशमें ब्रिटिश शासनकी स्थापना हुई है तबसे ब्रिटिश साम्राज्यके उस भागमें भारतीयोंको अपने अस्तित्वके अधिकारके लिए संघर्ष करना पड़ा है। अनेक बार वे उपनिवेशकी अदालतोंकी सहायता द्वारा अनिच्छुक सरकारसे न्याय हासिल करनेको मजबूर हो चुके हैं। लॉर्ड सेल्बोर्नको ब्रिटिश भारतीय संघकी यह शिकायत बुरी लगी कि परवाना सम्बन्धी परीक्षात्मक मुकदमेमें सरकारने भारतीयोंका विरोध किया। शायद उसमें बुरा लगनेका कुछ आधार था भी क्योंकि गणराज्यके उच्च न्यायालय द्वारा किया गया एक फैसला मौजूद था जिसे अमलमें लानेके लिए वर्तमान सरकारने अपनेको बाध्य महसूस किया। पर वर्तमान मामलेमें तो ऐसा कोई पूर्वोदाहरण भी नहीं था। शान्ति-रक्षा अध्यादेश ब्रिटिश सरकारकी रचना है। भारतीय प्रवासियोंके आगमनपर प्रतिबन्ध लगानेकी गरजसे उसे उसके उचित क्षेत्रसे खींचतान कर लागू किया गया। किसी पूर्वोदाहरणका विचार किये बिना स्वयं ही आगे बढ़कर राहत देना सरकारके अपने हाथमें था। फिर भी एक भारतीय व्यापारीको बहुत व्यय करना पड़ा है वह परेशानीमें फँसा है और उसे प्रारम्भिक न्यायपूर्ण व्यवहार पानेके लिए भी उपनिवेशकी अदालतोंका सहारा लेनेको मजबूर होना पड़ा है। हमें कौतूहल है कि लॉर्ड सेल्बोर्न ट्रान्सवालकी शासन-सत्ताकी इस नवीनतम कार्रवाईको किस प्रकार न्यायसंगत ठहराते हैं।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन २१-६-१९०६

३८५. भारतीय स्वयंसेवक

युद्धमें भारतीय भाग लें अथवा न लें इस बातकी काफी चर्चा इस पत्रमें हो चुकी है।[1] सरकारने २ आदमियोंका दल स्वीकार किया है और कांग्रेसने उतने आदमी तैयार कर दिये हैं। इसका असर प्रमुख गोरोंके मनपर बहुत अच्छा हुआ है। हमने इतना किया इससे कुछ प्रमुख गोरे मानने लगे हैं कि ऐसे कामोंके लिए हममें स्वाभाविक क्षमता है और इस आधारपर उनकी राय है कि हम स्थायी स्वयंसेवकोंमें भरती होनेकी माँग करें।

इस सुझावमें और जो डोलीवाहक दल तैयार हो चुका है उसमें बहुत अन्तर है। डोली ले जानेवाली टुकड़ी थोड़े ही दिनोंके लिए है। उस टुकड़ीको सिर्फ डोली लाने-ले जानेका काम दिया जानेवाला है और उस कामकी जरूरत न रहनेपर उसे छुट्टी मिल जायेगी। इन लोगोंको हथियार रखनेकी इजाजत भी नहीं है। स्वयंसेवक दलका काम इससे बिलकुल अलग है और अपेक्षाकृत महत्त्वपूर्ण है। यह दल स्थायी होगा। उसमें शामिल होनेवालोंको हथियार मिलेंगे और हर वर्ष निर्धारित दिनोंमें फौजी काम सीखनेके लिए जाना पड़ेगा। उन्हें अभी तो लड़ाईका काम नहीं करना पड़ेगा। लड़ाई हमेशा नहीं होती। अन्दाजन बीस वर्षमें एक बार लड़ाई होती है ऐसा लोग कहते हैं। नेटालमें वतनी-विद्रोह हुए आज बीस वर्षसे अधिक समय हो गया है। इसलिए स्वयंसेवकोंको भरती होनेमें किसी भी प्रकारकी जोखिम नहीं है। उसे एक तरहकी शारीरिक सैर कहा जा सकता है। उसमें दाखिल होनेवालेको पूरा व्यायाम मिलता है, जिससे उसका शरीर नीरोग रहता है और तन्दुरुस्ती अच्छी हो जाती है। स्वयंसेवकोंमें भरती होनेवालेको सदा अच्छा आदर मिलता है। उसे लोग चाहते हैं और 'नागरिक सैनिक' कहकर बखान करते हैं।

यदि भारतीय इस अवसरका लाभ उठायें तो हमारे विचारसे यह बात बहुत अच्छी होगी। इससे सहज ही राजनीतिक लाभ मिलना सम्भव है। वैसा लाभ हो या न हो किन्तु यह काम करना हमारा कर्तव्य है इसमें कोई सन्देह नहीं है। सैकड़ों प्रमुख गोरे इस काममें भाग लेते हैं और इसमें गौरव मानते हैं। सरकार कानूनन किसी भी व्यक्तिको इसके लिए बाध्य कर सकती है। हम जिस देशमें रहते हैं उस देशके सुरक्षा-कानूनोंका हमें पालन करना चाहिए। इस तरह चाहे जिस दृष्टिसे देखें यह ठीक मालूम होता है कि यदि हम स्वयंसेवकोंमें शामिल हो सकें तो हमारे ऊपर जो लांछन लगाया जाता है वह इससे हमेशाके लिए दूर हो जायेगा।

आज पन्द्रह वर्षोंसे भारतीयोंपर गोरे यह तोहमत लगाते आये हैं कि यदि नेटालकी रक्षामें अपनी जान देनेकी नौबत आ पड़े तो भारतीय लोग अपने कर्तव्यका ख्याल छोड़कर घर भाग जायेंगे। इसका जवाब हम कहकर नहीं दे सकते। इसका एक ही तरीकेसे स्पष्टीकरण किया जा सकता है, और वह है करके दिखाना। वैसा करनेका आज समय आया जान पड़ता है। किन्तु वह किस तरह किया जाये? गिरमिटसे छूटे हुए गरीब लोगोंको स्वयंसेवक बनाकर नहीं। व्यापारी वर्गका कर्तव्य है कि वह स्वयं इस आन्दोलनमें भाग ले। हर दूकानसे एक व्यक्ति लिया जाये तो भी काफी व्यक्ति तैयार हो सकते हैं। ऐसा करनेसे व्यापारको धक्का नहीं लगेगा। जो आदमी शामिल होंगे उनकी स्थिति सुधरेगी, उत्साह बढ़ेगा और माना जायेगा कि उन्होंने नागरिककी हैसियतसे अपना कर्तव्य पूरा किया।

कुछ लोगोंका खयाल है कि लड़ाईमें जाने अथवा उसके लिए तैयारी करनेमें जानकी अधिक जोखिम है। यह निरा भ्रम है। इसके प्रमाण हम अगले सप्ताह देना चाहते हैं।

१. देखिए "भारतीय युद्धमें भाग लें या नहीं?" पृष्ठ ३०८।

अतएव हम नेताओंके सामने उपर्युक्त विचार रख रहे हैं और हमें आशा है कि वे उसपर अवश्य सोचेंगे।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन २३-६-१९०६

३८६. सुलेमान मंगाका मुकदमा

श्री सुलेमान मंगाके[1] अनुमतिपत्रके बाबत जो मुकदमा हुआ था उसका पूरा विवरण हमने अंग्रेजीमें दिया था। उसके आधारपर सर हेनरी कॉटनने संसदमें सवाल पूछा था। श्री चर्चिलने[2] जवाब दिया कि उसके बारेमें तत्काल तजवीज की जायेगी। यह सवाल और जवाब बहुत महत्त्वपूर्ण हैं। लॉर्ड सेल्बोर्न क्या जवाब देते हैं यह देखना है। सम्भव है कि अनुमतिपत्र-सम्बन्धी राहतका मिलना-न-मिलना बहुत-कुछ उनके जवाबपर निर्भर करेगा।

श्री चर्चिलने जो जवाब दिया कि जाँच कराई जायेगी उससे ऐसा माना जा सकता है कि बड़ी सरकार अपनी जवाबदेही एकदम अस्वीकार नहीं करेगी।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन २३-६-१९०६

३८७. लेडीस्मिथके गिरमिटिया भारतीय

लेडीस्मिथके गिरमिटिया भारतीयोंपर किये गये अत्याचारोंका विवरण हमारा लेडीस्मिथका संवाददाता दे चुका है। यह हकीकत हमने अंग्रेजी विभागमें भी दी थी। वह संरक्षक श्री पोलकिन्गहॉर्नके ध्यानमें आया इसलिए उन्होंने हमें सूचित किया है कि उस मामलेकी पूरी जाँच की जा रही है। यह प्रसन्नताका समाचार है और उम्मीद की जा सकती है कि गरीब भारतीयोंको कुछ-न-कुछ न्याय मिलेगा।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन २३-६-१९०६

३८८. भारतीय डोलीवाहक दल

इस टुकड़ीके वेतनके सम्बन्धमें कांग्रेसने जो पत्र लिखा था उसका उत्तर अवैतनिक मन्त्री श्री उमर हाजी आमद झवेरी तथा श्री मुहम्मद कासिम आंगलियाको मिला है। उसमें सरकारने लिखा है कि वह कांग्रेसकी वेतन चुकानेकी माँग स्वीकार करती है।

श्रीमती नानजी तथा श्रीमती मैकियनने मिलकर टुकड़ीके सदस्योंके लिए रेशमके पट्टे बनाये हैं। ये पट्टे बायीं भुजापर पहने जाते हैं। इनसे यह जाना जाता है कि ये केवल जख्मियोंकी

1. देखिए "नया अनुमतिपत्र-सम्बन्धी मामला" पृष्ठ ३५५।
2. श्री विन्स्टन चर्चिल, जो उस समय सहायक उपनिवेश-मन्त्री थे।
3. देखिए इंडियन ओपिनियन, ९-६-१९०६।

पेशा करनेवाले व्यक्ति हैं। वतनियोंके विद्रोहमें इन पट्टोंका बहुत महत्त्व नहीं है किन्तु यूरोपीय कौमोंमें तो यह परिपाटी बन है कि इस पट्टेवाले व्यक्तिपर हथियार नहीं उठाया जा सकता।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन २१-१-१९०९

३८९ किरायेके बारेमें महत्त्वपूर्ण मुकदमा

नेटालके सर्वोच्च न्यायालयमें मासिक किरायेदारोंको नोटिस देनेके बारेमें एक महत्त्वपूर्ण मुकदमेका फैसला हुआ है। साधारण मान्यता यह है कि किरायेदारको चाहे जिस तारीखसे एक महीनेकी सूचना देना काफी है, और किरायेदार भी ऐसी सूचना देकर घर छोड़ सकता है। जान पड़ता है कि ऐसा ही वकीलोंका भी खयाल था। किन्तु सर्वोच्च न्यायालयने फैसला दिया है कि सूचना उसी तारीखसे दी जानी चाहिए जिस तारीखको किरायेदार आया हो अर्थात् यदि कोई किरायेदार अमुक महीनेकी छठी तारीखको आया हो तो वह घर छोड़नेकी एक महीनेकी सूचना उसी तारीखसे ही दे सकता है अथवा छठी तारीखसे शुरू होनेवाली पेशगी सूचना दे सकता है। इसी तरहकी सूचना देनेके लिए मकान-मालिक भी बाध्य है।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन २३-१-१९०९

३९० जोहानिसबर्गकी चिट्ठी

श्री मायातके अनुमतिपत्रका मुकदमा

जैसा श्री सुलेमान मंगाका मामला था वैसा ही श्री इब्राहीम मायातका भी हुआ है। श्री मंगाको नियमानुसार अनुमतिपत्र पानेका पूरा हक था फिर भी अनुमतिपत्र अधिकारीने नहीं दिया। किन्तु अन्तमें उन्होंने डेलागोआ-बे से अनुमतिपत्र प्राप्त किया। श्री इब्राहीम मायात ट्रान्सवालके पुराने निवासी हैं और बहुत-से नामी गोरोंसे उनकी जान-पहचान है। उनकी अर्जीको बहुतसे व्यक्तियोंका समर्थन प्राप्त था। फिर भी चूँकि वे ठीक लड़ाईके समय नहीं बल्कि एक वर्ष पहले ट्रान्सवाल छोड़कर चले गये थे इसलिए अनुमतिपत्र देनेसे इनकार किया गया। यह तो जुल्मकी हद हो गई। श्री मायातको अपने भाईके व्यापारके लिए हर हालतमें आना था इसलिए उन्होंने मुकदमा दायर करना तय किया। उन्होंने श्री बेन्सनकी सलाह ली थी और फोक्सरस्टमें श्री सिवृटनस्टाइनने पैरवी की थी। श्री मायातके बचावमें नीचे लिखी दलीलें दी गईं

(१) श्री इब्राहीम मायात ट्रान्सवालके पुराने निवासी हैं।

(२) उन्होंने बच सरकारको तीन पौंड दिये थे और, तीन पौंड देकर ट्रान्सवालमें रहनेके लिए रहनेका हक प्राप्त कर लिया था।

(३) लन्दन समझौतेके अनुसार ऐसे लोगोंको स्थायी रूपसे रहनेका अधिकार है।[1]

[1] लन्दन समझौतेकी शर्तोंके अनुसार जबतक कोई व्यक्ति ट्रान्सवालका रहनेवाला न समझा जाये तबतक उसके विरुद्ध गमन करने [illegible] लागू नहीं कर सकता। समझौतेकी शर्तोंके द्वारा सभी ब्रिटिश प्रजाजनोंको भूतपूर्व गणराज्यमें घूमने और व्यापार करनेका भी अधिकार दिया गया था।

(४) चूँकि श्री मायातकी शादी ट्रान्सवालमें हुई है इसलिए वे ट्रान्सवालके स्थायी निवासी माने जायेंगे।

इन दलीलोंके सामने अनुमतिपत्र अधिनियम बौना पड़ गया और मजिस्ट्रेटने यह फैसला दिया कि ऐसे व्यक्तियोंको अनुमतिपत्रकी आवश्यकता नहीं है।

यह बहुत अच्छा परिणाम निकला है और इससे अनुमतिपत्र कार्यालयकी करारी हार हुई है। इसके जवाबमें लॉर्ड सेल्बोर्न कौन-सी दलील पेश करते हैं यह हमें देखना है।

इस मुकदमेका नतीजा यह हुआ है कि जो भारतीय पहलेसे ट्रान्सवालके निवासी हैं और जिनके पास डचों द्वारा पंजीकृत प्रमाणपत्र हैं वे ट्रान्सवालमें बिना अनुमतिपत्रके आ सकते हैं। इससे बहुत-से व्यक्तियोंका कष्ट दूर होगा।

फिर भी मुझे कहना चाहिए कि उपर्युक्त मुकदमेमें खोटापन है। फोक्सरस्टके न्यायाधीश भले हैं और उन्होंने दया करके कानूनका अर्थ हमारे पक्षमें किया है। पंजीकृत लोगोंको भी अनुमतिपत्र लेना चाहिए, ऐसा कहनेवाले बहुत-से बड़े-बड़े बैरिस्टर हैं। और इस बातमें काफी मुश्किलें हैं इसमें कोई शक नहीं। फिर भी इस न्यायाधीशके फैसलेके विरुद्ध अब सरकार अपील नहीं कर सकती इसलिए जबतक भारतीय सावधानीसे मजबूत मुकदमा लेकर जायेंगे तबतक उन्हें कोई रुकावट नहीं होगी। सम्भव है लोगोंके लिए कोमाटीपोर्टके बजाय फोक्सरस्ट जाना अधिक आसान होगा क्योंकि सब न्यायाधीश एक ही तरहका फैसला देंगे ऐसा माननेका कारण नहीं है। जबतक इस मुकदमेका फैसला सर्वोच्च न्यायालयमें नहीं होता तबतक यह न माना जाये कि इस बातका अन्तिम फैसला हो गया है। साथ ही यह भी खयाल रखना है कि यह मुकदमा सर्वोच्च न्यायालयमें ले जाने योग्य नहीं है।

जोहानिसबर्गकी नगरपालिकाका नया कानून

जोहानिसबर्गकी नगरपालिका विधानसभासे इसी सत्रमें अपने लिए नया कानून पास कराना चाहती है। उसके द्वारा वह एशियाई बस्ती अथवा बाजार मुकर्रर करनेकी सत्ता चाहती है और जिन्हें परवाना पानेका अधिकार है उन्हें यदि उनके मकान खराब हों या उन्होंने कोई गुनाह किया हो तो परवाना न देनेका अधिकार माँगती है। नगर-परिषदका निर्णय जिन्हें मंजूर न हो वे न्यायाधीशके पास अपील कर सकते हैं। इन दोनों बातोंका विरोध करना आवश्यक नहीं लगता। बाजार मुकर्रर करनेका अख्तियार मिलनेसे नगर-परिषदको उनमें भेजनेका अख्तियार नहीं मिल जाता।

लॉर्ड सेल्बोर्न

यहाँके समाचारपत्रोंसे मालूम होता है कि लॉर्ड सेल्बोर्नकी तबियत आजकल [illegible] गमगीन हो रही है। आमूल सुधारवादी (रैडिकल) पक्षके सरकारकी मान्यता है कि लॉर्ड सेल्बोर्न उत्तरदायी विधानोंको ठीक तरहसे अमलमें नहीं लाये।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन २१-९-१९०९

२९१ भारतीय लड़ाईमें जायें या नहीं ?

पिछले अंकमें हम इस विषयमें विवेचन कर चुके हैं।[1] उसके अन्तिम हिस्सेमें हमने बतलाया था कि हममें से ज्यादातर लोग प्रायः भयके कारण ही पीछे रहते हैं। यदि लोग ऐसा चाहते हैं कि हम नेटाल, दक्षिण आफ्रिका अथवा ब्रिटिश राज्यके किसी भी हिस्सेमें सुख और इज्जतसे रहें तो हमें लड़ाईके काममें भाग लेनेके लिए तैयार रहना चाहिए। उन्हें समझानेके लिए हम कुछ ऐसे उदाहरण देना चाहते हैं जिनसे स्पष्ट मालूम हो जायेगा कि डरनेका कोई भी कारण नहीं। क्रीमियाकी लड़ाई बड़ी ही खून-खराबीकी थी किन्तु आँकड़ोंसे पता चलता है कि जितने मनुष्य अपनी खाट बाही अथवा अलग तरीकेसे रहकर मरे हैं उससे क्रीमियाकी लड़ाईमें भाले या गोलीसे कम मरे हैं। ट्रान्सवालके आक्रमणके समय भी ऐसी गणना की गई थी। उसमें भी मालूम हुआ है कि गोलाबारियोंकी अपेक्षा ज्वर और दूसरी बीमारियोंसे औसतन अधिक मनुष्य मरे। ऐसा ही अनुभव [illegible] लड़ाईका है।

[illegible] जो लड़ाईमें अपने शरीरकी अच्छी सम्भाल रखते हैं और नियमसे रहते हैं वे बहुत ही सकते हैं। और जो लड़ाईमें बहादुरी दिखाने अथवा खूनकी प्यास लेकर ही नहीं जाते, [illegible]समय जो तालीम मिलती है वैसी तालीम दूसरी जगह कभी नहीं मिलती। लड़ाईमें [illegible]को कठिन दुःख सहना सीखना पड़ता है। बहुत-से मनुष्योंके साथ हिलमिलकर [illegible] गुजरती डालनी पड़ती है। सादी खुराक खाकर सुख मानना वह सहज ही सीख[illegible] [illegible] सोना बैठना भी उसे अनिवार्य रूपसे सीखना पड़ता है। अपने वरिष्ठ [illegible]का विचारके मानलेनेकी आदत पड़ती है। नियमपूर्वक चलना-फिरना भी वहाँ [illegible] ही तंग जगहमें भी स्वास्थ्यके नियमोंका निर्वाह करते हुए रहना आवश्यक पड़ता है। [illegible] देखनेमें आये है कि बहुत लापरवाह और उद्धत व्यक्ति भी युद्धमें जानेके बाद सुधरकर अपने मन और शरीरपर संयम रखना सीख कर, वापस आये हैं।

भारतीय कौमके लिए तो लड़ाईमें जाना सहज बात होनी चाहिए, क्योंकि हम चाहे मुसलमान हों चाहे हिन्दू हम ईश्वरपर बहुत आस्था रखते हैं। हमें अपने कर्तव्यका भान ज्यादा है इसलिए लड़ाईमें जानेकी बात सहज ही हमारी समझमें आनी चाहिए। हमारे देशमें अकाल और प्लेगसे लाखों मनुष्य मरते हैं उसका हम शोक नहीं करते। इतना ही नहीं जब हमें बताया जाता है कि उनके विषयमें हमारा कर्तव्य क्या है तब भी हम भरसक लापरवाही करते हैं, घर-बार गन्दे रखते हैं और पैसोंसे चिपटे पड़े रहते हैं। ऐसी अधम जिन्दगी बिताते हुए घिस-घिसकर मरना पसन्द करते हैं। ऐसे जो हम हैं उन्हें यदि लड़ाईमें जाकर कदाचित् मरना पड़े तो उससे डरना क्यों चाहिए? लड़ाईमें गोरे जो करते हैं उसे देखकर हमें बहुत सबक लेना है। शायद ही उनमें कोई ऐसा कुटुम्ब हो जिसमें से शान्ति-विद्रोहमें एक-न-एक आदमी न गया हो। उनसे सीखकर हमें अपने मनमें जोश भरनेकी पूरी आवश्यकता है। यह एक ऐसा अवसर आया है जब प्रमुख गोरे चाहते हैं कि हम उन्नति करते जायें। यदि हम इसमें चूक जायेंगे तो पीछे पछताना होगा। इसलिए हम सारे भारतीय नेताओंको सलाह देते हैं कि वे इस विषयमें अपने कर्तव्यका भली भाँति पालन करें।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, १०-६-१[illegible]६

१ देखिए "भारतीय [illegible]" पृष्ठ ३०२-३।

सार्जेंट मेजर गांधी

३९२. उद्धरण : दादाभाई नौरोजीके नाम पत्रसे[1]

जून १, १९०१[2]

मैं 'इंडियन ओपिनियन' की एक प्रति निशान लगाकर अलग लिफाफेमें भेज रहा हूँ। उसमें नगर-निगम संग्राहक विधेयक (म्युनिसिपल कॉरपोरेशन्स कन्सॉलिडेशन बिल) के सम्बन्धमें नेटाल उपनिवेशके गवर्नरके नाम लॉर्ड एल्गिनके पत्रोंकी नकल उपलब्ध है। लॉर्ड एल्गिनके खरीतेपर विचार करनेके लिए हालमें नगरपालिका संघकी जो बैठक हुई उसमें किये गये निर्णयकी ओर मैं आपका ध्यान आकर्षित करना चाहता हूँ। निर्णयका आशय यह है कि "रंगदार" की परिभाषामें कोई परिवर्तन नहीं किया जाना चाहिए। इस निर्णयसे भारतीय समाजके वंचित और अपमानित होते रहनेका खतरा जैसा-का-तैसा बना रहता है। आशा है कि भारत-मन्त्री और भारत-सरकार उपनिवेश-मन्त्री द्वारा दिये गये सुझावको कार्यान्वित करानेका आग्रह करेंगे। साथ ही यह भी इंगित करना चाहता हूँ कि *लॉर्ड एल्गिनने विधेयककी उस धाराका कोई उल्लेख नहीं किया है*, जिसके द्वारा उन सबके मतदानका अधिकार छीन लिया गया है जिन्हें संसदीय मताधिकार प्राप्त नहीं है। आपको निस्सन्देह याद होगा कि स्वर्गीय श्री हैरी एस्कम्बकी तीव्र इच्छापर नेटालके भारतीय समाजने उन सब भारतीयोंका मताधिकारसे वंचित रखा जाना स्वीकार कर लिया था जिनके नाम उस समय संसदीय मतदाताओंकी सूचीमें शामिल नहीं थे। इसमें यह खयाल स्पष्ट था कि मताधिकारसे वंचित रखनेकी सीमा बढ़ाई नहीं जायेगी। आपको एक बार फिर याद दिला देना ही पर्याप्त होगा कि यदि नेटाल-निवासी ब्रिटिश भारतीयोंको नगरपालिका मताधिकारसे इस तरह वंचित रखा जाता है तो उनकी स्थिति जैसी भारतमें होती उससे खराब होगी। भारतमें बगैर ऐसी प्रातिनिधिक संस्थाओंका लाभ उन्हें प्राप्त है। कुछ नगरपालिकाओं द्वारा ब्रिटिश भारतीयों और यूरोपीयोंमें निर्वाचक और मनमाने भेदभाव का विवरण 'इंडियन ओपिनियन' के स्तम्भोंमें अनेक बार प्रकाशित हो चुका है। उसे देखते हुए यह प्रकट है कि यदि नेटालके भारतीय समाजके नागरिक-अधिकारोंपर यह कुठाराघात रोकनेके उपाय तत्काल नहीं किये गये तो उक्त समाज बेहद अन्यायका शिकार हो जायेगा।

दादाभाई नौरोजीके अंग्रेजी पत्रकी फोटो-नकल (जी॰ एन॰ २११९) से।

१ और २. मूल प्राप्त नहीं है। दादाभाई नौरोजीने इस अनुच्छेदको भारत-मन्त्री [illegible] [illegible] जून [illegible] के पत्रमें "[illegible]" के अंशके रूपमें उद्धृत किया था। [illegible] [illegible] यह स्पष्ट नहीं कि [illegible] पत्र ही लिखा रहा हो।

मलेरियासे ग्रस्त थे उसी दिन आवेदन किया। इसलिए दवाइयाँ अत्यन्त उपयोगी सिद्ध हुईं, और दलके कार्यका एक भाग छावनीमें ही शुरू हो गया।

२२ तारीखकी रात छावनीमें बीती और हम सब लोगोंको बाहर, खुलेमें सोना पड़ा। हममें से हर एकको एक-एक कम्बल दिया गया था पर वह सर्दीसे रक्षा करनेके लिए काफी न था। इसलिए भारतीय समाज द्वारा खोले गये सुख-सुविधा निधि (कम्फर्ट्स फंड) के जरिये हमें जो लबादे (ओवरकोट) दिये गये थे उनकी बहुत कद्र की गई।

जून २३ को सुबहके नाश्तेके बाद सारी टुकड़ी जिसमें अर्धसुरक्षित सैन्यदल भारतीय दल तथा पृष्ठ-रक्षक सैन्यदल शामिल थे आगे बढ़ी।

हमें अपना सामान लादकर चलना पड़ता था। यह अनुभव हममें से अधिकांशके लिए नया था और फिर हमें ज्यादातर चढ़ाईपर ही चलना पड़ता था इसलिए हममें से कुछको यह बहुत खला। रास्तेमें हम सर जेम्स हलेटके बागसे गुजरे और सैनिकोंको मधुर नारंगियाँ[1] फल जिनसे बागके वृक्ष लदे हुए थे भरपेट खानेकी अनुमति दी गई। इस सामयिक भेंटके लिए दाताका तीन बार जय जयकार कर टुकड़ी आगे बढ़ी और बागानसे एक मील आगे उसने डेरा डाला। तारीख २४ को ६-१ बजे सुबह ही कूच आरम्भ हो गया। इस बार हमें अपना सामान गाड़ियोंपर रखनेकी इजाजत मिल गई जिससे बड़ी राहत मिली। टुकड़ीने ओटीमाटीपर, जो उस सुन्दर घाटीकी एक पहाड़ी है डेरा डाला। हमारे पास ही एक स्वच्छ झरना बह रहा था। यह इरादा नहीं था कि टुकड़ी मापूमुलो तक जाये। बल्कि उसे ओटीमाटी छावनीसे सैनिक कार्रवाई करनी थी। किन्तु हमारे दलका प्रथम खण्ड दलके साथ मापूमुला जानेका आदेश था। इसलिए २५ जूनको हम अपने निम्नके बारेमें अनिश्चित स्थितिमें थे किन्तु हमारा दोपहरका भोजन मुश्किलसे आधा पका था कि आदेश मिला — हम कुछ गाड़ियोंके साथ जो उधर जा रही थीं मापूमुलाके लिए रवाना हो जायें। इसलिए हमें खाना-पीना छोड़ आदेश मिलनेसे पन्द्रह मिनटके अन्दर ही सामान बाँधकर कूचकर देना पड़ा। हमने ५ बजे शामको मापूमुला पहुँचकर उस स्थानके सैनिक अधिकारी कप्तान हाउडेनको अपने आगमनकी सूचना दी। कप्तान हाउडेनने हमसे साथ बहुत अच्छा व्यवहार किया और फौरन सिटिम जिनको हमारी देखभालका काम सौंपा गया था ९ बजे रात तक हमारे लिए तम्बुओंका बन्दोबस्त करनेमें लगे रहे। हमें एक अण्डाकार तम्बू और पाँच मच्छर नाम दिये गये जो तीन रात तक खुलेमें सो चुकनेके बाद न्यूनाधिक रूपमें विश्राम सामग्रीके समान था यद्यपि इसमें से अधिकांशके लिए वे बहुत आवश्यक थे। कर्नल स्पार्क्स भी आये और उन्होंने हमारा हाल-चाल पूछे।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन २१-७-१९०६

[1] स्थिति अनिश्चित अपेक्षा एक फल।

तय कर चुके तब जिस जापानी डोंगीमें हम घायलको ले जा रहे थे वह उसके बहुत ही अधिक वजनदार होनेके कारण टूट गई। सौभाग्यसे घायलको कोई चोट नहीं आई। रेखेकी जिस डोंगीमें हम उसे पहले ले जा रहे थे वह उसके वजनसे टूट ही चुकी थी। अब हम क्या करते? खुशकिस्मतीसे हमारे साथ कुछ कुशल कारीगर थे। हमने कामचलाऊ तौरपर रेखेकी डोंगीको सुधार लिया और अपने घायलको लगभग चार बजे शाम तक मापुमूलो पहुँचा दिया। शायद यह दूरी पन्द्रह मीलसे अधिक ही थी।

मापुमूलोमें एक दिन आराम करनेके बाद ११ तारीखको हम स्प्रिंग्ज़ पोस्ट वापस पहुँचे। किन्तु हमें फौरन १४ तारीखको मापुमूलाके पास एक स्थानपर जाना पड़ा जहाँ हम इस समय जमा स्थायी हुए हैं। मैचिनी और उसके सहयोगी मुखियाकी गिरफ्तारीके कारण विद्रोह खतम हुआ जान पड़ता है और हम लोग रोज दलको विसर्जित करनेके हुक्मकी प्रतीक्षा करते हुए आराम कर रहे हैं। इस तरह जुलाईकी तीसरी तारीखसे हमारा दल भारी महत्त्वपूर्ण कार्रवाइयोंमें लगा रहा है, और अब उनकी समाप्तिपर, इन टिप्पणियोंका लेखक भरोसेके साथ इस बातका दावा कर सकता है कि हमारा छोटा-सा दल जो भी काम उसे दिया जाये और जिस कामको कोई भी ऐसा दल कर सकता हो उस कामको करनेमें समर्थ है।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, २८-७-१९०६

३९५. भाषण : आहत-सहायक दलके सत्कारके अवसरपर

भारतीय आहत-सहायक दलको ६ सप्ताह मोर्चेपर काम करनेके बाद जुलाई १९को विसर्जित कर दिया गया था। उसके सम्मानमें नेटाल भारतीय कांग्रेसने एक स्वागत-समारोहका आयोजन किया। उसमें दलके कामकी प्रशंसा की गई, जिसका गांधीजीने उत्तर दिया। समारोहकी कार्यवाहीका एक अंश नीचे दिया जा रहा है।

डर्बन
जुलाई २ , १९०६

श्री गांधीने उत्तरमें दलकी ओरसे आभार मानते हुए कहा कि दलने जो कुछ किया है वह उसका कर्तव्य था। उन्होंने आशा व्यक्त की कि यदि भारतीय समाज दलका वास्तविक मूल्य समझना चाहता हो तो उसे सरकारकी मारफत ऐसा प्रयत्न करना चाहिए कि इसको स्थायी रूप मिल जाये। इसमें भरती होनेकी योग्यता प्राप्त करनेके लिए मेहनत करके शरीरको ठीक तरहसे रखना चाहिए। यदि व्यापारी लोग उसमें शामिल न हो सकें तो न सही, पढ़े-लिखे दूसरे भारतीय व्यापारियोंके नौकर, मुनीम वगैरह तो बहुत ही शामिल हो सकते हैं। लड़ाईके समय उन्हें अनुभव हुआ कि गोरे लोग भारतीय सदस्योंके साथ बहुत ही प्रेमसे व्यवहार करते थे और काले-गोरेका भेद नहीं रहा था। यदि और भी अधिक लोगोंका स्थायी दल बन जाये तो उस तरहका भाईचारा बढ़ सकता है और उससे गोरोंके मनमें भारतीयोंके प्रति जो चिढ़ है वह दूर हो सकती है। इसलिए उन्होंने बहुत ही आग्रहपूर्वक आहत-सहायक दल बनानेके लिए परामर्श दिया।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, २८-७-१९०६

इसके अलावा उसका यह भी उद्देश्य था कि नेटाल नागरिक सेनाके एक स्थायी अंगके रूपमें भार तीयोंका उपयोग करनेके लिए सरकारको राजी किया जावे। मैं मानता हूँ कि मेरे देशवासी आहत सहायता तथा अस्पताली कार्यके सर्वथा योग्य हैं। घुड़सवार फौजियोंको हम डोलीमें आदमीसे लाये थे। उन्हें लानेके अतिरिक्त उनकी सेवा-सुश्रूषा भी हमें ही करनी पड़ी थी और वे हमसे इतने सन्तुष्ट हुए थे कि स्वस्थ होनेपर इन आदमियोंके कार्यकी प्रशंसा करनेके लिए वे मुझे खोजकर मेरे पास आये।

दलमें कुछ अंग्रेजी पढ़े लिखे कर्तव्य-कुशल भारतीय थे। मजदूर श्रेणीके भारतीय भी थे। पर सब होशियार थे और भारतीय समाज उन्हें जो कुछ दे रहा था उससे नागरिक जीवनमें कहीं अधिक कमाने योग्य थे। चूँकि समाज इस बातके लिए उत्सुक था कि उसकी सेवाएँ स्वीकार की जायें और कोई कठिनाई पैदा न हो इसलिए लोगोंको राजी किया गया कि वे १ शिलिंग ६ पेंस दैनिक लेकर काम करना स्वीकार कर लें और इसे उन्होंने प्रसन्नतापूर्वक स्वीकार कर लिया। किन्तु मेरी सम्मतिमें एक पौंड प्रति सप्ताहसे कमपर होशियार आदमियोंको प्राप्त करना सम्भव नहीं है।

मैं यह भी मानता हूँ कि डोली-वाहक टोलियोंके नायक माने जानेवाले लोगोंको ५ शिलिंग प्रतिदिन मिलना चाहिए।

दलके सब लोग अप्रशिक्षित और बिना जाँचे-परखे थे। किन्तु उन्हें भी जिम्मेवारीभरा स्वतन्त्र काम दिया गया और अपनी मिश्रित स्थितिमें ही उन्होंने खतरेका सामना किया। अगर सरकार एक स्थायी आहत-सहायक दल बनाना चाहे तो मेरी सम्मतिमें उसके लिए विशेष प्रशिक्षण बिलकुल आवश्यक है और आत्मरक्षाके हित दलके सब सदस्योंको सशस्त्र भी किया जाना चाहिए।

मेरा भारतीय समाजसे पिछले तेरह वर्षोंसे घनिष्ठ सम्बन्ध रहा है और उसी हैसियतसे मैंने ये बातें आपके विचारार्थ पेश करनेका साहस किया है।

[आपका विश्वासपात्र]
मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन ११–८–१९०६

४०१. जोहानिसबर्गकी चिट्ठी

[अगस्त ४, १९०९ के पूर्व]

शिकायतकी शिष्टमण्डल

ब्रिटिश भारतीय संघकी समितिकी बैठक गत शुक्रवार, तारीख २७ को हुई थी। उसमें सर्वश्री अब्दुल गनी, ईसप मियाँ, मुआविया मुहम्मद, बहाबुद्दीन, गुलाम साहब, मुहम्मद हुसैन, भीखूभाई तथा प्रिटोरियाके हाजी हबीब और आमद तैयब, हीडेलबर्गके आमद आगान और हर्बनके उमर हाजी आमद झवेरी उपस्थित थे।

कुछ चर्चाके बाद यह निश्चय हुआ कि शिष्टमण्डल भेजना अब भी जरूरी है। हमारा जितना सम्बन्ध संविधान-समितिकी रिपोर्टसे है उसकी अपेक्षा [illegible]में संविधान बन जानेके बाद जो कानून बनाये जायेंगे उनसे हमारा अधिक सम्बन्ध होगा। श्री हाजी हबीबके प्रस्तावपर यह निश्चित हुआ [illegible] नेटाल भारतीय कांग्रेसने शिष्टमण्डलके खर्चके लिए जो १ [illegible] पौंडकी रकम स्वीकार की है, [illegible]म में २५ पौंडकी सहायता माँगी जाये। प्रत्येक व्यक्ति १२ पौंड ले सकता है और बाकी पैसा [illegible]मण्डलपर खर्च किया जा सकता है। केपकी ओरसे जो मदद मिले उसका उपयोग [illegible]। इस तरहका पत्र लिखनेकी जिम्मेदारी मन्त्रीको दी गई। शिष्टमण्डलमें दो व्यक्ति [illegible]भग ५ [illegible] पौंड तक खर्च पड़ेगा। समितिका विचार है कि ट्रान्सवालकी तरफसे भी बाकी [illegible] व्यापारी होना चाहिये। गाँव-गाँवसे चन्दा एकत्रित करनेका प्रस्ताव हुआ है और [illegible]के सदस्योंके नाम भी दिये जा चुके हैं। मन्त्रीको जगह-जगह पत्र लिखनेकी आज्ञा [illegible]के सारे मुख्य शहरोंमें पत्र पहुँच गये हैं। इसलिए यदि ठीक चन्दा इकट्ठा [illegible] भारतीय कांग्रेसने चंदा करके २५ पौंड तक खर्च करना तय कर लिया और यदि शिष्टमण्डल न भजनेके विषयमें विलायतसे कोई पत्र नहीं आया तो सितम्बरमें[1] शिष्टमण्डलके जानेकी सम्भावना है।

मुआवजेके दावे

ट्रान्सवाल गज़ट में मुआवजेके दावेदारोंकी जो सूची प्रकाशित हुई है, वह मैं संलग्न कर रहा हूँ। उसकी ओर सभी पाठकोंका ध्यान आकृष्ट करना आवश्यक है, नहीं तो उसमें सूचित रकमोंपर यदि वर्षके अन्त तक दावा नहीं किया गया तो वे डूब जायेंगी।

ट्रान्सवाल घुड़सवार राइफल टुकड़ीकी वापसी

काफिरोंके विद्रोहको दबानेके लिए यहाँसे जो ट्रान्सवाल घुड़सवार राइफल टुकड़ी (ट्रान्सवाल माउन्टेड राइफल्स) नेटाल भेजी गयी थी वह वापिस आ गई है। बड़ी धूम-धामसे ट्रान्सवालके गोरोंने उसका स्वागत किया है। बड़ी-बड़ी सभाएँ की गईं और उन्हें बड़ी दावतें दी गईं। धूम-धाम अभी भी चल रही है। भारतीय डोलीवाहक दलको भंग करनेके बारेमें और उसके अच्छे कामके बारेमें यहाँके सभी समाचारपत्रोंमें रायटरके तार छपे हैं।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, ४-८-१९०६

१. शिष्टमण्डल अक्तूबरमें गया।

२. गोरोंनुरूको प्रति-पूर्ति।

४०२. गुप्त न्याय

हमारे जोहानिसबर्गके संवाददाताने पिछले सप्ताह हमारा ध्यान विशेष रूपसे इस बातकी ओर खींचा था कि एशियाइयोंके विषयमें अनुमतिपत्र विभागने जो काम किया है, उसका भी लन्दनने समर्थन[1] किया है और समुद्र तटपर एक निरीक्षक-अधिकारीकी नियुक्तिपर अपनी स्वीकृति दे दी है। जाहिरा तौरपर जितना दिखाई पड़ता है उससे कहीं ज्यादा घटनाके पीछे छिपा हुआ है। जनताको इस तथ्यका बिलकुल ज्ञान नहीं है कि कुछ ऐसे सलाहकार मण्डल भी हैं जो लगभग गुप्त हैं और जो एशियाई पंजीयन अधिकारी (रजिस्ट्रार ऑफ एशियाटिक्स) के जिसके द्वारा अनुमतिपत्र जारी होते हैं, कार्यपर नियन्त्रण रखते हैं। इसलिए नाममात्रके लिए अनुमतिपत्र जारी करनेका जिम्मेदार अधिकारी यद्यपि पंजीयक ही है, फिर भी वास्तवमें वह इन परामर्श निकायोंकी कठपुतली है और इनके आदेशोंका पालन यन्त्रवत् किया करता है। स्पष्टतः भी लगते है इन मण्डलोंके प्रधान हैं यद्यपि सरकारने सार्वजनिक तौरपर उनकी नियुक्ति नहीं की है। यही कारण है कि ब्रिटिश भारतीयोंके रास्तेमें जिन्हें ट्रान्सवालमें पुनः प्रवेश करनेका वैध अधिकार है, असंख्य कठिनाइयाँ खड़ी की जा रही हैं।

यदि शरणार्थियोंके आवेदनपत्रोंके विषयमें बहुत अधिक सख्ती बरती जाती है तो इसपर हमें कोई आपत्ति नहीं है। लेकिन हमें सख्त आपत्ति है उस गोपनीयतासे जो इन परामर्श-निकायोंकी कार्रवाइयोंको छिपाये रखती है। हमें ज्ञात नहीं कि जिन वर्गोंका इन मामलोंसे प्रत्यक्ष सम्बन्ध है उनकी बातें पञ्चायतमें सुनी गई हैं या नहीं या उन्हें पेश करनेका मौका दिया गया है या नहीं। यह तो केवल निकाय ही जानते हैं कि वे कैसी गवाही लेते हैं और बस्तीमें ब्रिटिश भारतीयोंके पुनः प्रवेश पानेके दावोंको सिद्ध करनेके लिए किन प्रमाणोंको काफी मानते हैं। आज-जैसी व्यवस्थामें तो बिलकुल अनजानमें ही क्यों न हो पक्षपात होना सम्भव है। जो दावे आसानीसे साबित किये जा सकते हैं, किन्तु जिन्हें अस्वीकार कर दिया गया है उनके बारेमें हमारे पास चारों ओरसे कड़ी शिकायतें आ रही हैं। ये निकाय जिन्हें ब्रिटिश भारतीय शरणार्थियोंके आवेदनपत्रोंका मनमाने ढंगसे निर्णय करनेका अधिकार दिया गया है, नन्हें-नन्हें बच्चोंको बस्तीसे बाहर रखते हैं।

ऐसा निकाय प्रतिपक्षियोंको उनके विरोधियों या उन कामोंके न्यायका काम सौंपना जिनकी वे आज तक बराबर निन्दा करते आये हैं, न्याय करनेका एक विचित्र तरीका है। ब्रिटिश भारतीयोंके प्रति ट्रान्सवाल शासनका कमसे-कम इतना फर्ज तो है ही कि वह उन्हें निश्चित रूपसे उनकी स्थिति बता दे। ब्रिटिश भारतीय अनुमतिपत्रोंके सम्बन्धमें छान-बीनकर जो जाँच की जाती है उसमें तो कार्य-विधिके सुपरिभाषित एवं ठीक तरहसे समझे-बूझे कठोरतम नियम कहीं ज्यादा अच्छे हैं। आज तो कोई भी भारतीय इस बातमें अपनेको सुरक्षित नहीं समझ सकता कि अपने पूर्व निवासका प्रमाणपत्र पेश करनेके बाद वह बिना किसी कठिनाईके ट्रान्सवालमें पुनः प्रवेश पा सकेगा। हमारे ब्रिटिश भारतीय शरणार्थियोंके लिए ट्रान्सवाल शासनने जो स्थिति पैदा कर रखी है वह अत्यन्त असन्तोषजनक और अतीव असम्मानप्रद है। वह तो नेटाल या केप बस्तीसे भी बदतर बनी हुई है जहाँ प्रवासियोंके आगमनके सम्बन्धमें चाहे जैसे प्रतिबन्ध क्यों न हों, हर व्यक्ति

१. यह "जोहानिसबर्गके रिपोर्टर" इंडियन ओपिनियन १८-७-१९०३ में था।

अपनी कानूनी स्थितिको जानता है और उसके लिए अदालतमें लड़ सकता है। यह ऐसी स्थिति है जिसे मिटाना प्रत्येक न्याय एवं विवेक-प्रेमीका कर्तव्य है।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन ४-८-१९०९

४०३. श्री बाइटका वसीयतनामा

स्वर्गीय श्री बाइटके वसीयतनामेका[1] संक्षिप्त विवरण हम पिछले अंकमें दे चुके हैं। वह हमारे समृद्ध भारतीयोंके लिए समझने जैसा है। श्री बाइटने दक्षिण आफ्रिकामें करोड़ों रुपये पैदा किये और उसका अधिकांश भाग दक्षिण आफ्रिकाको दिया है। स्वयं परदेशी होते हुए भी उन्होंने ब्रिटिश प्रजाकी छायामें नाम और धन उत्पन्न किया था इसलिए उन्होंने अपने वसीयतनामेमें [illegible]यतमें भी अपनी सम्पत्तिका उदारतापूर्वक उपयोग करनेकी व्यवस्था की। इस तरह अच्छे [illegible] वे लाखों पौंड लगानेको लिख गये हैं। उसका मुख्य अंश शिक्षापर खर्च करनेके लिए [illegible]नेके लिए जोहानिसबर्गमें उन्होंने हजारों एकड़ जमीन दी है। वहाँ एक विशाल विद्या[illegible]नवाई जायेगी। जोहानिसबर्गका विश्वविद्यालय भी उन्हींकी दानशीलताका परिणाम है। [illegible]ना गोरोंकी बढ़तीका एक सबल कारण है। वे जिस तरह पैसा कमाना जानते हैं, उसी [illegible] उपयोग करना भी जानते हैं। हम दोनों बातोंमें पिछड़े हुए हैं और विशेषतः ठीक [illegible]नेमें। हम खर्च भी करते हैं तो अनुचित तरीकेसे और अधिकतर अपना स्वार्थ [illegible]ा मौज-शौकमें।

[illegible]फ्रिकाका उदाहरण लें तो ऐसे बहुत थोड़े भारतीय दिखाई पड़ते हैं जिन्होंने अपने पसका [illegible] अपनी सन्तानको सच्चा शिक्षण देनेके लिए किया हो। इसलिए हमें चाहिए कि हम श्री बाइटकी मिसाल अपने सामने रखें। दक्षिण आफ्रिकामें भारतीय बच्चोंको शिक्षाके सम्पूर्ण साधन देना हमारा पहला कर्तव्य है। दूसरा कर्तव्य है स्त्री शिक्षाकी ओर ध्यान देना। जबतक स्त्रियाँ माताके रूपमें अपने धर्मको नहीं समझ पातीं तबतक भारतीय पिछड़े ही रहेंगे। हमारा तीसरा कर्तव्य यह है कि धन्धोंमें लगे हुए प्रौढ़ रातको पढ़नेके लिए कुछ समय निकाल सकें। इन सबके लिए पैसेकी जरूरत है। यदि श्री बाइटका अनुकरण करनेके लिए भारतीय तैयार हो जायें तो उपर्युक्त बातें आसानीसे की जा सकती हैं। दक्षिण आफ्रिकामें हम अधिकार माँगते हैं वह उचित है। वह नहीं मिलते यह अन्याय है। फिर भी हमें इतनी बात स्वीकार करनी चाहिए कि हक प्राप्त करनेकी हममें पूरी-पूरी योग्यता नहीं है। ताली एक हाथसे नहीं बजती। यदि हममें कोई दोष न होता तो इस देशमें हम जितने कष्ट भोग रहे हैं उतने नहीं भोगने पड़ते।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन ४-८-१९०९

[1] जुलाई २८, १९०९ के इंडियन ओपिनियनमें प्रकाशित एक गुजराती समाचारके अनुसार श्री बाइटने अपने वसीयतनामेमें दक्षिण आफ्रिकामें संचार और परिवहन प्रणालियोंमें सुधारके लिए १२,००० पौंड, जोहानिसबर्गमें एक विश्वविद्यालयकी स्थापनाके लिए पौंड, [illegible] शिक्षाके लिए १,०० पौंड और केप कालोनी और ट्रान्सवालमें शिक्षा प्रसारके लिए १५-१५ हजार पौंड दिए गये हैं।

४०४ मिस्र और नेटालकी तुलना

कैसा सुधार!

काफिरोंके विद्रोहमें नेटालकी सेनाने जो काम किया उसकी विलायतमें चर्चा हो रही है। यहाँके लोगोंका खयाल है कि गोरोंने बहुत ही जुल्म किया है। उसके विरुद्ध 'स्टार' ने मिस्रमें ब्रिटिश सरकारकी सेनाके द्वारा किये गये कार्मोंका विवरण दिया है। मिस्रमें जिन मिस्रियोंने विद्रोह किया था और उनमें से जो पकड़े गये थे उन्हें कोड़े लगानेका हुक्म दिया गया था। उन्हें सहनशक्तिकी हद तक कोड़े लगाये गये थे और सो भी खुले मैदानमें हजारों मनुष्योंके सामने। उसी समय जिन लोगोंको फाँसीकी सजा हुई थी उन्हें फाँसी भी दी गई थी। और जब फाँसी पाया हुआ व्यक्ति लटकता होता उस समय दूसरोंपर कोड़ोंकी मार चलती थी। कहा जाता है कि ऐसे प्रसंगोंपर सजा पाये लोगोंके सगे-सम्बन्धी रोते रोते मूर्छित हो जाते थे। यदि यह विवरण सही हो तो नेटालके बारेमें विलायतमें चर्चा होनेका कोई कारण नहीं रहता।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन ४-८-१९०६

४०५ जोहानिसबर्गकी चिट्ठी

अगस्त ४, १९०६

एलगिनका संविधान

ट्रान्सवालको नया संविधान देनेके सम्बन्धमें जो प्रस्ताव हुआ है और उसकी जो हकीकत जाहिर हुई है हर व्यक्तिकी जबानपर आजकल उसीकी चर्चा है। पिछले वर्ष दिये गये श्री लिटिल्टनके संविधान और अब दिये गये लॉर्ड एलगिनके संविधानमें बहुत अन्तर है।

श्री लिटिल्टनके संविधानके मुताबिक राज्य कारोबार अभी ब्रिटिश अधिकारियोंके हाथमें ही रहनेवाला था। लॉर्ड एलगिनके संविधानके अनुसार राज्य कारोबार, जो सदस्य निर्वाचित होकर आयेंगे और उनमें जिस पक्षका बहुमत होगा उसके हाथमें होगा। यह मुख्य भेद है। और इसलिए श्री लिटिल्टनका संविधान प्रातिनिधिक शासनवाला है अर्थात् उसमें जनताकी इच्छा जाहिर करनेवाले व्यक्ति जायेंगे और श्री एलगिनका संविधान उत्तरदायी शासनवाला है अर्थात् उसमें सत्ताधिकारी चुने हुए सदस्योंके प्रति जिम्मेदार होंगे। अर्थात् उसमें लोगों द्वारा चुने हुए प्रतिनिधि अधिकारियोंको हटा सकेंगे। लंका और मॉरिशसमें प्रातिनिधिक शासन है। नेटाल और केप कालोनीमें उत्तरदायी शासन है।

दूसरा बड़ा अन्तर यह है कि लॉर्ड एलगिनके संविधानके मुताबिक बोअर लोग राज्यसत्ताका उपभोग कर सकने योग्य स्थितिमें आ गये हैं अर्थात् केपकी तरह ट्रान्सवालमें बोअर या ब्रिटिश लोग सत्ता प्राप्त कर सकते हैं। अभी यह संविधान बड़ा नहीं गया है। किन्तु श्री चर्चिलने उसके गढ़े जानेकी सूचना दी है। सम्भव है कि इसमें तीन हफ्ते लग जायें। और नये संविधानके अनुसार बनी हुई सभाकी बैठक सम्भवतः है जनवरीके पहले न हो।

कानून। अनुभवसे यह देखा गया है कि ये दोनों कानून एशियाइयोंको बाहर रखनेमें पूरी तरह सफल नहीं हैं। क्योंकि इसमें कतई शक नहीं है कि जिन्हें इस देशमें आनेका हक नहीं था ऐसे एशियाई, झूठे प्रमाण पेश करके दाखिल हो गये हैं। जो ट्रान्सवालमें पहले नहीं आये ऐसे एशियाई झूठ-मूठ यह कहकर दाखिल हो गये कि वे ट्रान्सवालमें पहले आये थे। पंजीयनके बारेमें कानून अनिश्चित है और जब-जब उस कानूनको पूरी तौरपर लागू करनेका प्रयत्न किया गया है तब-तब अदालतोंमें मुकदमे चले हैं। इसलिए हमें दो उद्देश्योंकी पूर्ति करनी है। एक तो यह कि जो लोग लड़ाईके पहले इस देशमें थे उनके साथ न्याय किया जाये और उत्तरदायी सरकार आनेके पहले ऐसा प्रबन्ध किया जाये कि नये एशियाई न आ सकें। अर्थात् जो अभी ट्रान्सवालमें हैं उन सबका फिरसे पंजीयन किया जाये। वे पंजीयनपत्र ले लें ताकि कोई उन्हें कुछ रोक न सके। इसी समय ऐसे एशियाइयोंपर से कुछ प्रतिबन्ध उठा लिये जायेंगे। जमीनके बारेमें कोई बड़ा परिवर्तन नहीं होगा। किन्तु कायदेमें ऐसी छूट रहेगी कि जिस जमीनपर धार्मिक इमारत बनाई जायेगी वह जमीन मकान बनानेवालेके नामपर चढ़ सकती है। और जो १८८५ के कानून ३ के पहले जमीनके मालिक हो गये होंगे उनके वारिसोंको भी उस जमीनकी मालिकीका हक मिलेगा। इसके अलावा अनुमतिपत्रके कानूनमें भी कुछ परिवर्तन करनेका इरादा है जिससे थोड़े समयके लिए आनेकी इच्छा करनेवाले एशियाइयोंको अड़चन न हो।

ऊपरकी बातें इतनी जबरदस्त और असरकर हैं कि ब्रिटिश भारतीय संघकी समितिकी बैठक उनके बारेमें तुरन्त कदम उठाने जा रही है। इस समय शिष्टमण्डलका तत्काल विलायत जाना बहुत ही अनिश्चित है।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन ११–८–१९०९

४०६ जोहानिसबर्गकी चिट्ठी

अगस्त ४, १९०९ [के बाद]

शिष्टमण्डल

हमने पिछले सप्ताह जो संकटका तार प्रकाशित किया था उसके कारण फिलहाल विलायत जानेवाला शिष्टमण्डल रुक गया है। शिष्टमण्डलके विषयमें बहुत लोगोंके मनमें यह सन्देह है कि वह केवल संविधान-समितिको विवरण देनेके लिए विलायत जानेवाला था और चूँकि अब ट्रान्सवालके लिए कैसा संविधान बने यह निश्चित हो गया है, इसलिए शिष्टमण्डल भेजनेका कोई सबब ही नहीं रहा। यह विचार गलत है क्योंकि शिष्टमण्डल संविधानके सम्बन्धमें कुछ भी कर नहीं सकता था। जो भी कानून बननेवाले हैं वे अब इसके बाद बनेंगे। उन कानूनोंके बारेमें बड़ी सरकारके सामने

१ शान्ति-रक्षा अध्यादेश।

२. मालूम होता है कि तिथि भूलसे पिछले मंगलकी ही दे दी गई है। पर सम्भवतः ४ अगस्तके बाद ही लिखा गया होगा।

३ देखिए पिछला शीर्षक।

मेरे नम्र विचारसे भारत-मन्त्री तथा उपनिवेश-मन्त्रीसे व्यक्तिगत मुलाकात जरूरी है।

आपका सच्चा
मो० क० गांधी

[पुनश्च]

मेरे पास अखबारोंकी कतरनें नहीं बची हैं। आज बैंककी छुट्टीका दिन होनेसे मैं मँगा भी नहीं सकता।[1]

मो० क० गां०

गांधीजीके हस्ताक्षरयुक्त टाइप की हुई मूल अंग्रेजी प्रतिकी फोटो-नकल (जी० एन० १२७५) से।

४०८. पत्र "रैंड डेली मेल"को[2]

[जोहानिसबर्ग
अगस्त ९, १९०६ के पूर्व]

[सेवामें
सम्पादक
रैंड डेली मेल]

महोदय,

श्री डंकनने अपने असाधारण वक्तव्यमें — मैं तो उसे असाधारण ही कहूँगा — जिस एशियाई विधेयककी पूर्व सूचना दी है उसके सम्बन्धमें आपके पत्रस्तम्भपर मैं अपने कुछ विचार प्रकट करना चाहता हूँ। मुझे भरोसा है आप इसकी अनुमति देंगे। अपने संक्षिप्त वक्तव्यमें उन्होंने अपने भाषणमें तीन बार कहा कि सरकार अधिवासी एशियाई प्रजाके साथ उचित और न्याय्य व्यवहार करना चाहती है और इसी कारण जिस विधेयकका उन्होंने जिक्र किया है वह विधान-परिषदके अगले सत्रमें पेश किया जानेवाला है।

आपका खयाल है कि जो अध्यादेश पास होनेवाला है उससे अधिवासी एशियाई प्रजाके साथ उदार व्यवहार होगा।

प्रस्तावित विधेयकमें, मुझे भय है, उदारता नाम-मात्रको नहीं है। उलटे वह "उचित और न्याय्य व्यवहार" की मर्यादासे भी बहुत दूर रह जायेगा। पुनः पंजीयन तो निश्चय ही ऐसे व्यवहारका अंग नहीं है, और वह बिलकुल निरर्थक है। जो भारतीय बस्तीमें प्रवेश कर चुके हैं अधिवासपत्र उनमेंसे प्रत्येकका दुबारा पंजीयन हो ही चुका है। दरअसल दूसरा पंजीयन तो अनुमतिपत्र विभागको दी गई एक सहूलियत थी जिसे उस समय खूब पसन्द किया गया था। एशियाइयोंके धोखा देकर बस्तीमें प्रवेश करनेकी कथित करतूतका तीसरा पंजीयन कोई इलाज नहीं है। अधिवासी एशियाई प्रजाके वर्तमान पंजीयन प्रमाणपत्रोंकी जाँच करना और जिनके पास न हों उनपर मुकदमे चलाना काफी आसान है। सबके सब लोग धोखा-धड़ीसे घुस आये हैं इस आरोपका ब्रिटिश भारतीय संघने प्रतिवाद किया है। कानून चाहे जितनी सख्तीसे बनाये जायें और उनपर अमल चाहे जितनी अच्छी तरह क्यों न किया जाये कुछ ऐसे व्यक्ति सदा ही रहेंगे

१. यह [illegible] कतरनोंमें है।
२. यह ११-८-१९०६ के इंडियन ओपिनियनमें उद्धृत किया गया था।

या उन्हें छोड़नेपर आमादा होंगे। इसलिए सम्पूर्ण समाजको बरायम पेसा करार देना— क्योंकि यही पुनःपंजीयनका मंशा है — उचित या न्याय्य नहीं है।

परन्तु श्री डंकन कहते हैं कि नये पंजीयनके बदलेमें वे एशियाइयोंको चार उपहार देनेवाले हैं अर्थात् (१) तीन पौंडके करका निर्मूलन (२) धार्मिक कार्योंके लिए एशियाइयोंको भूमिका स्वामित्व रखनेकी अनुमति (३) जिन एशियाइयोंके पास १८८५ का कानून ३ लागू होनेके पूर्व जमीन थी उनको उसे अपने वारिसोंके नाम दाखिल-खारिज करानेकी अनुमति और (४) एशियाई अभ्यागतोंके लिए अस्थायी अनुमतिपत्र जारी करनेका अधिकार।

अब पहली रियायतको मैं तिरी धोखेकी टट्टी ही कहूँगा। याद रखना चाहिए कि यह उन्हीं लोगोंको मिलती है, जो बस्तीके निवासी हैं अथवा शायद उन्हें भी जिन्हें युद्धके पूर्व ट्रान्सवालके निवासी होनेके नाते पुनःप्रवेश पानेका अधिकार है। यहाँ रहनेवाले लोगोंने तो ३ पौंडका शुल्क दे ही दिया है, और जो अबतक बस्तीके बाहर हैं उनमें से भी अधिकतर दे चुके हैं। वर्तमान कानून ऐसा कोई अधिकार नहीं देता कि तीन पौंडका शुल्क दुबारा लिया जाये। यह कोई वार्षिक कर नहीं है, बल्कि ऐसा शुल्क है जो १८८५ के कानून ३ के अनुसार उन सब एशियाइयोंको केवल एक बार देना पड़ता है जो बस्तीमें बसना चाहते हैं।

इसी तरह धार्मिक कार्योंके लिए जमीनपर कब्जा रखनेके प्रस्तावित अधिकारमें भी कोई तथ्य नहीं है क्योंकि ऐसा वर्तमान कानूनके अन्तर्गत भी किया जा सकता है। वरिष्ठ न्यायालयने फैसला दे दिया है कि रैंसदार कोष एक संस्थाके रूपमें धार्मिक कार्योंके लिए जमीन रख सकते हैं।

तीसरी बात अवश्य एक रियायत होती यदि वह एशियाइयोंके किसी भी बड़े समुदायपर लागू हो सकती। श्री डंकन अच्छी तरह जानते हैं कि इस तरहकी एक ही जमीन है। उसके वारिसोंका ट्रान्सवालमें वासके लिए निर्धारित भूमिके दो पंचमांसपर अधिकार दे देना सामान्य कर्तव्यका पालनमात्र होगा और कुछ भी हो ऐसा करनेसे समाजको नहीं बल्कि एक व्यक्तिको ही न्याय प्राप्त होगा।

चौथी बात भी कोई रियायत नहीं है। श्री नोमूरा तथा श्री मंगाको मुसीबत उठानी पड़ी सो इसलिए नहीं कि अस्थायी अनुमतिपत्र देनेका कोई अधिकार मौजूद नहीं था बल्कि इसलिए कि अधिकारका उपयोग करनेकी अनिच्छा थी। इसलिए कठिनाई कानूनमें नहीं उसपर अमल करनेमें है।

मैं आशा करता हूँ कि इस प्रकार मैंने स्पष्ट रूपसे यह दिखा दिया है कि उपनिवेश-सचिवने पिछले शनिवारको जो पूर्व-अनुमान व्यक्त किया है उसके पीछे अधिवासी एशियाई आबादीके साथ उचित और न्याय्य व्यवहार करनेका कोई सवाल नहीं है। इसके विरुद्ध जिन्होंने ब्रिटिश प्रजा होनेके नाते समान व्यवहारके आश्वासनकी सचाईमें विश्वास करके ट्रान्सवालमें आकर शाहूम किया है उन गरीब एशियाइयोंपर मारकाटने फिरसे नंगी तलवार लटका दी है। लॉर्ड मिलनर तथा सम्राट्के अन्य प्रतिनिधियोंने युद्धके पूर्व और बादमें भी जो वादे किये थे उनकी पूर्तिका कोई आभास भी डंकनके वक्तव्यमें नहीं है।

मैं जानबूझ पहले यह पूछ रहा हूँ उसे यदि बाहरा लहूँ तो पूछूँगा कि ब्रिटिश भारतीय (यदि उन्हें दूसरे एशियाइयोंसे अलग कर लें तो) क्या चाहते हैं? वे इस सिद्धान्तको मानते हैं कि ट्रान्सवालको आव्रजनपर नियन्त्रण रखनेका अधिकार है और यद्यपि इस उपनिवेशमें ऐसी बात नहीं थी फिर भी यदि ब्रिटिश प्रजाजनोंपर लागू केप या आस्ट्रेलियाई प्रणाली कानूनके अन्तर्गत जो प्रतिबन्ध लगाये गये हैं वैसे ही प्रतिबन्ध उनपर लगाये जायें तो उनके लिए वे बिलकुल तैयार हैं। किन्तु इसके साथ ही वे यह भी चाहते हैं कि जो ब्रिटिश भारतीय इस देशमें बस गये हैं उनको

पूरी नागरिक स्वतन्त्रता मिलनी चाहिए — यानी बेरोकटोक घूमने-फिरनेकी स्वतन्त्रता, जमीनकी मालिकीकी स्वतन्त्रता और व्यापारकी स्वतन्त्रता। जमीनकी मालिकीकी स्वतन्त्रतामें ऐसे प्रतिबन्ध लगाये जा सकते हैं जिनसे जमीनका सट्टा-व्यापार न हो। व्यापारकी स्वतन्त्रतामें भी स्वच्छता निर्वाह और न्यायसंगत व्यापारके हितमें नगरपालिकाके जो प्रतिबन्ध लगाना आवश्यक हो लगाये जा सकते हैं। जब ब्रिटिश भारतीयोंके ये प्रारम्भिक अधिकार मान लिये जायेंगे तभी शासनके किसी प्रतिनिधिको यह कहनेका अधिकार प्राप्त होगा कि ब्रिटिश भारतीयोंके साथ उचित और न्याय्य व्यवहार किया जा रहा है उसके पहले नहीं।

याद रहे, उपर्युक्त वक्तव्यमें किसी राजनीतिक अधिकारका दावा करनेका कोई प्रयत्न नहीं है। ब्रिटिश भारतीय केवल ऐसे अधिकार माँगते हैं जिन्हें वे लोग भी सरलतासे दे सकते हैं जो श्वेत दक्षिण आफ्रिका के सुभाषितमें विश्वास रखते हैं। हाँ शर्त यह है कि दक्षिण आफ्रिका लॉर्ड सेल्बोर्नके शब्दोंकी व्याख्याके अनुसार, "न केवल बाहरसे बल्कि अन्दरसे भी गोरा हो।"

आपका आदि
मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]

रैंड डेली मेल, ९-८-१९०८

४०९ "उचित और न्याय्य व्यवहार"

पिछले शनिवारको ट्रान्सवालकी विधानसभाके स्थगित होनेपर, प्रस्तावित एशियाई कानूनके सम्बन्धमें उपनिवेश-सचिव श्री स्मट्सने एक महत्त्वपूर्ण वक्तव्य दिया। अपने वक्तव्यमें जो ट्रान्सवाल लीडर के सिर्फ आधे स्तम्भमें छपा है श्री स्मट्सने तीन बार दुहराया है कि ट्रान्सवालके एशियाई अधिवासी उचित और न्यायसंगत व्यवहार पानेके अधिकारी हैं। इसके बाद उन्होंने ऐसे व्यवहारकी अपनी व्याख्या प्रस्तुत की है। हमने श्री स्मट्स जैसी भ्रमोत्पादक व्याख्या कभी नहीं देखी। हम अनुमान कर सकते हैं कि उन्होंने १८८५ के कानून ३ का गलत रूपमें समझा है और इसीलिए वे इस निष्कर्षपर पहुँचे हैं कि जिस कानूनकी पूर्व कल्पना उन्होंने पिछले शनिवारको दी थी उसके द्वारा सचमुच वे बहुत राहत दे रहे हैं। अब हम यहाँ यह दिखानेकी चेष्टा करेंगे कि प्रस्तावित कानूनसे ट्रान्सवालमें बसे हुए एशियाई परिवारोंको कोई सहायता मिलना तो दूर रहा उससे निरी उत्तेजना ही बढ़ेगी और आज जो भी सुविधाएँ मिली हुई हैं शायद वे भी छिन जायेंगी।

श्री स्मट्सने चार बातोंका वादा किया है

(१) बस्तीके सम्पूर्ण एशियाइयोंका फिरसे पंजीयन।

(२) तीन पौंडी पंजीयन-शुल्कका निर्मूलन।

(३) एशियाई धार्मिक सम्प्रदायोंको धार्मिक कार्योंके लिए भूमि रखनेकी अनुमति।

(४) जिन एशियाइयोंके पास १८८५ के कानून ३ के जारी होनेसे पहलेकी जमीनें हैं वारिसोंको उन्हें अपने नाम दाखिल-खारिज करानेकी अनुमति।

इनमेंसे पहला प्रस्ताव बहुत ही अपमानजनक और बहुत नुकसानदार है। चूँकि सरकार इसे जैसे-तैसे पास कराना ही चाहती है इसीलिए आपाततः सीमा देनेके लिए अन्तिम तीन बातें

रख दी गई है। और पहली बात भी श्री डंकनने ऐसी चतुराईसे रखी है कि मानो वह एशियाइयोंके हितमें की जा रही हो।

जरा पिछला इतिहास देखें। जिन भारतीयोंके पास डच सरकार द्वारा दिये हुए पंजीयन प्रमाणपत्र थे उनको कानूनन नये प्रमाणपत्र नहीं लेने पड़ते थे। किन्तु जब उसी प्रणालीको सबके लिए लागू करनेके उद्देश्यसे लॉर्ड मिलनरने तत्कालीन मुख्य अनुमतिपत्र-सचिवके कहनेपर ३ पौंडी शुल्क वसूल करनेके लिए १८८५ का कानून ३ जारी करनेका निश्चय किया तब ब्रिटिश भारतीयोंने पंजीयनके नये प्रमाणपत्र जिनपर अँगूठेकी छाप भी हो लेना स्वीकार किया। तबसे उस पद्धतिका तमाम ढंगसे अनुसरण किया जा रहा है। यहाँ स्मरण रखना होगा कि कानूनी सलाहपर अमल करते हुए मुख्य अनुमतिपत्र-सचिवने स्वीकार किया था कि भारतीयोंपर नये प्रमाणपत्र लेनेका कोई कानूनी बन्धन नहीं है। इसलिए जब ब्रिटिश भारतीय संघने प्रस्तावको स्वीकार किया तब स्वभावतः उसकी कृतज्ञतापूर्वक कद्र की गई।

परन्तु नये पंजीयनके सिलसिलेमें भारतीयोंको जो-जो मुसीबतें झेलनी पड़ी वे अब भी अनेक भारतीयोंके मनमें ताजी हैं। वे भूल नहीं पाये हैं कि एक दिन बड़े तड़के उन्हें अपने घरोंसे समपूर्ण ही बाहर निकाल दिया गया था। श्री डंकन अब कहते हैं कि वह पंजीयन निरर्थक था। क्यों, सो हम नहीं जानते। इसलिए फिरसे सारे एशियाइयोंको पंजीकृत करानेका प्रस्ताव किया गया है — मानो वे बदमाश पेशा लोग हों। श्री डंकन कहते हैं कि बहुतसे ऐसे एशियाइयोंने जो पहले कभी ट्रान्सवालमें नहीं रहे — क्या ही अच्छा होता कि वे एशियाई-एशियाईमें भेद करके यह स्पष्ट करते कि वे ब्रिटिश भारतीयों चीनियों अथवा अन्य एशियाइयों किनके सम्बन्धमें कह रहे हैं — झूठे बयान देकर उपनिवेशमें प्रवेश किया है। तर्कके लिए हम मान लेते हैं कि बात ऐसी ही है। लेकिन नया पंजीयन उस बुराईको किस प्रकार दूर कर देगा? और थोड़ेसे अपराधियोंके लिए सारे निरपराधियों को क्यों तंग किया जाये?

और यहाँ श्री डंकनको याद दिलाना होगा कि यदि कुछ एशियाइयोंने इस प्रकार उपनिवेशमें प्रवेश किया है तो उसका कारण यह है कि एक समय एक मुख्य एशियाई कार्यालयमें भ्रष्टाचारका बोलबाला था। परन्तु वस्तुस्थिति यह है कि ब्रिटिश भारतीय संघने इस आरोपका जोरोंसे खण्डन किया है कि बहुतेरे एशियाइयोंने झूठे बयान दाखिल करके बस्तीमें प्रवेश किया है। कुछ भी हो यह न्यायिक जाँचका विषय है और ऐसे मामलोंके निपटारेके लिए शान्ति-रक्षा अध्यादेश काफी स्पष्ट है।

दूसरी रियायत भी कोई रियायत नहीं है। हमें आशा है कि श्री डंकनने पंजीयन शुल्कको वार्षिक कर नहीं समझ रखा है। यह शुल्क ऐसा है जो सिर्फ एक बार दिया जायेगा। सभी भारतीय जो इस बस्तीमें रहते हैं और जिन्हें कानूनन पंजीयन शुल्क देना है शुल्क दे चुके हैं। तब फिर यह रियायत किसे दी जा रही है? निश्चय ही यह भावी नये आगन्तुकोंके लिए नहीं है क्योंकि जबतक उत्तरदायी शासन अपनी मर्जीसे निर्धारित शर्तोंपर उपनिवेशके द्वार नहीं खोलता तबतक वे उनके लिए पूरी तरहसे बन्द हैं। इसलिए ३ पौंडी शुल्कके निर्मूलनकी बात बिलकुल निरर्थक है।

इस विषयपर बोलते हुए भी श्री डंकनने फरमाया कि जब-जब पंजीयन कानूनको गम्भीरता पूर्वक लागू करनेकी कोशिश की गई, वह असफल रही है। इस कथनको ठीक नहीं कहा जा सकता। हाँ जब सरकारने कानूनके अर्थमें वह तात्पर्य घुसेड़नेकी चेष्टा की जिसका पूर्ववर्ती डच सरकारने इरादा भी नहीं किया था तब वह अवश्य असफल सिद्ध हुआ। कानूनमें उन्हीं एशियाइयोंके पंजीयन की व्यवस्था है जो ट्रान्सवालमें व्यापारके उद्देश्यसे या अन्यथा बसना चाहते हैं। स्थानीय सरकार

हम पूछते हैं कि उचित और न्याय्य व्यवहारके विषयमें तीन बार दोहराई हुई घोषणाका सचमुच कोई आधार है या वह लॉर्ड मिंटनके इन शब्दोंको कि वह बातें वादोंके रूपमें सुनाई गयी हैं व व्यवहारमें तोड़नेके लिए होती हैं चरितार्थ करेगी और श्री डंकनकी घोषणाका परिणाम केवल शब्दोंमें ही खप जायेगा?

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन ११–८–१९०६

४१० भाषण : हमीदिया इस्लामिया अंजुमनमें

मलायी मस्जिदकी सचाईकी कमेटीके सभा-भवनमें जोहानिसबर्गकी हाल ही में स्थापित हमीदिया इस्लामिया अंजुमनके तत्त्वावधानमें भारतीयोंका एक सम्मेलन हुआ था। आमन्त्रित व्यक्तियोंमें ब्रिटिश भारतीय संघके अध्यक्ष श्री अब्दुल गनी, और मन्त्री श्री गांधी सम्मिलित थे। ट्रान्सवालवासी भारतीयोंकी वर्तमान राजनीतिक स्थिति समझानेके लिए अंजुमनके अध्यक्षके निवेदन करनेपर गांधीजीने एक भाषण दिया था जिसकी संक्षिप्त रिपोर्ट निम्नलिखित है :

जोहानिसबर्ग
अगस्त १२, १९०६

श्री गांधीने शुरूमें हमीदिया इस्लामिया अंजुमनका आभार मानते हुए अंजुमनकी स्थापनाके सम्बन्धमें अपनी प्रसन्नता व्यक्त की। हमीदिया इस्लामिया अंजुमन ब्रिटिश भारतीय संघके मुकाबलेमें खड़ी की गई है ऐसी गलत चर्चा लोगोंमें चल रही थी। उसपर खेद प्रकट करते हुए उन्होंने कहा कि यह बात बिलकुल गलत है। ऐसी अंजुमनकी स्थापनासे तो उलटे ब्रिटिश भारतीय संघकी प्रतिष्ठा बढ़ेगी और भविष्यमें वे एक-दूसरेके सहायक बन जायेंगे।

ट्रान्सवालके भारतीयोंकी वर्तमान राजनीतिक स्थितिपर प्रकाश डालते हुए उन्होंने श्री डंकनके बयानको लेकर विस्तारपूर्वक समझाया कि मामला बहुत ही भयंकर है। श्री डंकनके बयानके विरुद्ध मजबूत मोर्चा बाँधनेकी जरूरत बताते हुए उन्होंने विलायतको शिष्टमण्डल भेजना स्वीकार करनेकी सलाह दी। ब्रिटिश भारतीय संघकी कमजोर आर्थिक स्थिति बताकर उन्होंने उपस्थित सदस्योंसे निवेदन किया कि वे उसकी आर्थिक सहायता करें। उन्होंने कहा कि मुसलमान कौम शिक्षामें पिछड़े हुए हैं इसलिए ऐसी समितियोंके बननेसे उन्हें बहुत फायदा होगा और आशा है आप शिक्षाके विषयमें आगे बढ़नेकी कोशिश करेंगे।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन २१–८–१९०६

४११ पत्र : दादाभाई नौरोजीको[1]

पो० ऑ० बॉक्स १६८
जोहानिसबर्ग
अगस्त ११, १९०६

मान्यवर,

इंडियन ओपिनियन के प्रस्तुत अंकमें १८८५ के कानून ३ में श्री डंकन द्वारा प्रस्तावित संशोधनोंकी पूरी जानकारी प्रकाशित हुई है। श्री लिटिलटन तथा श्री मॉर्लेके खरीतोंके कुछ अंश तथा १८८५ के कानून ३ का सम्पूर्ण पाठ भी दिया गया है।

यह तो एक नजरसे ही स्पष्ट हो जायेगा कि श्री डंकन अपने प्रस्तावित संशोधनसे खरीतोंकी व्याप्तिको बहुत ज्यादा सीमित कर रहे हैं। पुनःपंजीयनके बारेमें श्री लिटिलटन और लॉर्ड मिलनरने कोई जिक्र तक नहीं किया है और उन दोनोंने यह स्वीकार किया है कि कमसे-कम उच्चतर श्रेणीके भारतीयोंको तो पूरे अधिकार मिलने ही चाहिए। इससे श्री डंकनका यह कहना कि वे साम्राज्य-सरकारके इरादोंको कार्यरूप दे रहे हैं वस्तुस्थितिसे दूर हो जाता है। हाँ अगर उत्तरदायी मन्त्रिमण्डल पूर्ण रूपसे बदल गये हों और अब उनका यह विचार हो कि ब्रिटिश भारतीयोंकी स्वतन्त्रताको अनुदार दलका मन्त्रिमण्डल जिस हद तक कम करनेको तैयार था उससे भी अधिक घटा दिया जाये तो बात दूसरी होगी।

मेरी धारणा तो निश्चय ही यह है कि जबतक ट्रान्सवाल सम्राट्के उपनिवेश-विभागके शासनतन्त्रमें है तबतक सम्राट्की सरकारको चाहिए कि वह न्याय-भावनापर आधारित कानून बनाये भले ही जैसा कि लॉर्ड मिलनरने कहा है, यह सरकारी बहुमतका उपयोग करके हो और बादमें इसे बदलनेका भार उत्तरदायी मन्त्रिमण्डलपर — अगर उसमें ऐसा करनेकी हिम्मत हो तो — छोड़ दिया जाये।

आपका सच्चा
मो० क० गांधी

मूल अंग्रेजी पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० २२७९) से।

[1] [illegible]

४१२. प्रार्थनापत्र : लॉर्ड एलगिनको

डर्बन
अगस्त ११, १९०५[1]

सेवामें
परमश्रेष्ठ परममाननीय लॉर्ड एलगिन, पी॰ सी॰, आदि
महामहिमके प्रधान उपनिवेश-मन्त्री
लन्दन, इंग्लैंड

सविनय निवेदन है कि

आपके प्रार्थी परमश्रेष्ठका ध्यान नेटाल संसद द्वारा अभी हालमें पास किये गये नगर निगम संघटन विधेयककी ओर आकर्षित करते हैं।

आपके प्रार्थियोंने कृतज्ञतापूर्वक इस बातको लक्ष्य किया है कि इस विधेयकके विषयमें भारतीय समाजने जो आपत्तियाँ उठाई थीं उनमेंसे कुछको परमश्रेष्ठने अपने खरीतेमें मान लिया है।

फिर भी आपके प्रार्थियोंको दुःख है कि विधेयकके विरुद्ध उठाई गई एक आपत्तिपर परमश्रेष्ठने विचार नहीं किया है और वह है — नगरपालिकाके चुनावोंमें मतदाताओंके रूपमें ब्रिटिश भारतीयोंका मताधिकार छीननेका प्रस्ताव।

जब नेटाल संसदमें यह विधेयक विचाराधीन था तब भारतीय समाजने विधेयकके बारेमें अपनी आपत्तियाँ प्रकट करते हुए एक प्रार्थनापत्र दिया था। उसकी एक प्रति परमश्रेष्ठकी जानकारीके लिए यहाँ नत्थी है।[2]

नेटाल निवासी ब्रिटिश भारतीय अनुभव करते हैं कि यदि उन्हें नगरपालिका-मताधिकारसे वंचित कर दिया गया तो यह एक बड़ी गम्भीर शिकायत होगी और नेटालके जिम्मेदार राजनीतिज्ञों द्वारा की गई उन घोषणाओंके प्रतिकूल होगी जो भारतीयोंको संसदके मताधिकारसे वंचित करते समय की गई थीं। उस समय यह बात मान ली गई थी कि यद्यपि भारतमें संसदीय संस्थाएँ नहीं हैं तथापि नगरपालिकाएँ तो अवश्य हैं और भारतमें नगरपालिकाओंके हजारों मतदाता हैं।

प्रस्तावित मताधिकारके अपहरणके पक्षमें कोई वैध तर्क नहीं दिया गया है। भारतीय नेटाल उपनिवेशमें कोई राजनीतिक सत्ता पानेकी आकांक्षा नहीं रखते। किन्तु वे अन्य करदाताओंके बराबर ही कर देते हैं; इसपर भी जब उनकी नगरपालिका सम्बन्धी *स्वतन्त्रतामें* हस्तक्षेप किया जाता है तब वे स्वभावतः नापसन्द करते हैं।

प्रायः यह कहा जाता है कि नेटालकी भारतीय आबादी सामान्यतः केवल गिरमिटिया वर्ग की है। सादर निवेदन है कि ऐसा कहना उचित नहीं है, क्योंकि इस समय नेटालमें ऐसे

१. *छपे हुए मसविदेसे, जिसमें हस्ताक्षरकर्ताओंके नाम नहीं दिये गये हैं, यहाँ दिया है;* इंडियन ओपिनियनमें जिसके १८-८-१९०५ के अंकमें यह प्रकाशित किया गया था, इसपर १५ अगस्तकी तिथि दी गई है।

२. यह यहाँ नहीं दिया जा रहा है। देखिए खण्ड ४, पृष्ठ ४२०-८।

४१२. प्रार्थनापत्र : लॉर्ड एलगिनको

डर्बन
अगस्त ११, १९०६[1]

सेवामें
परमश्रेष्ठ परममाननीय लॉर्ड एलगिन, पी० सी०, आदि
महामहिमके प्रधान उपनिवेश-मन्त्री
लन्दन, इंग्लैंड

सविनय निवेदन है कि

आपके प्रार्थी परमश्रेष्ठका ध्यान नेटाल संसद द्वारा अभी हालमें पास किये गये नगर निगम संगठन विधेयककी ओर आकर्षित करते हैं।

आपके प्रार्थियोंने कृतज्ञतापूर्वक इस बातको लक्ष्य किया है कि इस विधेयकके विषयमें भारतीय समाजने जो आपत्तियाँ उठाई थी उनमेंसे कुछको परमश्रेष्ठने अपने खरीतेमें मान लिया है।

फिर भी आपके प्रार्थियोंको दुःख है कि विधेयकके विरुद्ध उठाई गई एक आपत्तिपर परमश्रेष्ठने विचार नहीं किया है और वह है — नगरपालिकाके चुनावोंमें मतदाताओंके रूपमें ब्रिटिश भारतीयोंका मताधिकार छीननेका प्रस्ताव।

जब नेटाल संसदमें यह विधेयक विचाराधीन था, तब भारतीय समाजने विधेयकके बारेमें अपनी आपत्तियाँ प्रकट करते हुए एक प्रार्थनापत्र दिया था। उसकी एक प्रति परमश्रेष्ठकी जानकारीके लिए यहाँ नत्थी है।[2]

नेटाल निवासी ब्रिटिश भारतीय अनुभव करते हैं कि यदि उन्हें नगरपालिका-मताधिकारसे वंचित कर दिया गया तो यह एक बड़ी गम्भीर शिकायत होगी और नेटालके जिम्मेवार राजनीतिज्ञों द्वारा की गई उन घोषणाओंके प्रतिकूल होगी जो भारतीयोंको संसदके मताधिकारसे वंचित करते समय की गई थीं। उस समय यह बात मान ली गई थी कि यद्यपि भारतमें संसदीय संस्थाएँ नहीं हैं तथापि नगरपालिकाएँ तो अवश्य हैं, और भारतमें नगरपालिकाओंके हजारों मतदाता हैं।

प्रस्तावित मताधिकारके अपहरणके पक्षमें कोई वैध तर्क नहीं दिया गया है। भारतीय नेटाल उपनिवेशमें कोई राजनीतिक सत्ता पानेकी आकांक्षा नहीं रखते। किन्तु वे अन्य कर दाताओंके बराबर ही कर देते हैं। इसपर भी जब उनकी नगरपालिका सम्बन्धी स्वतन्त्रतामें हस्तक्षेप किया जाता है तब वे स्वभावतः आपत्ति करते हैं।

प्रायः यह कहा जाता है कि नेटालकी भारतीय आबादी सामान्यतः केवल गिरमिटिया वर्गकी है। सादर निवेदन है कि ऐसा कहना उचित नहीं है, क्योंकि इस समय नेटालमें ऐसे

१. छपे हुए मसविदेसे, जिसमें हस्ताक्षरकर्ताओंके नाम नहीं दिये गये हैं, यही तिथि है; लेकिन इंडियन ओपिनियनमें जिसके १८-८-१९०६ के अंकमें यह उद्धृत किया गया था उसपर १५ अगस्तकी तिथि दी है।

२. वह यहाँ नहीं दिया जा रहा है। देखिए खण्ड ४, पृष्ठ ४२७-८।

है। आपके नामको शोभा देने लायक घर नहीं न वैसा साज-बाज ही है। और आजकल वे मेरे साथ रहकर मुझसे भी ज्यादा कष्टमय जीवन व्यतीत करते हैं। यह देखकर कभी-कभी मेरे मनमें छोटेपनकी दुःखद भावना जागृत होती है फिर भी मैं यह समझकर चलने देता हूँ कि उसमें फायदा है। वैसे कल रातको उमर सेठ केवल रोटी मक्खन पावरू और कोकोपर ही रहे, और सोनेके लिए मेरे साथ साढ़े तीन मील पैदल आये। मैं यह नहीं कहता कि आप भी इस हद तक कम खर्च करें। लेकिन इतना जरूर कहता हूँ कि यहाँ आपका खर्च प्रतिमाह २५ पौंडसे अधिक नहीं होना चाहिए। कुछ खर्च ऐसा है जिसे घटानेसे लोग चर्चा करेंगे। लेकिन चर्चा करनेवालोंको दुश्मन मानें। चर्चा करनेवाले आपकी गृहस्थी नहीं चलाते। यानी हमारा जो अपनी स्थिति समझ सकते हैं कर्तव्य है कि उसका विचार करें। अधिक क्या लिखूँ? मैं आपका हित बहुत चाहता हूँ इसीलिए इस तरह लिख रहा हूँ।

तबीयत अच्छी रहती होगी।

आपने जायदाद बेचनेके सम्बन्धमें हस्ताक्षर करके जो कागज भेजा है उसमें गवाहके हस्ताक्षर नहीं थे इसलिए फिरसे हस्ताक्षर करनेकी आवश्यकता है। अब वापस भेजता हूँ। उसमें गवाहके हस्ताक्षर करवाकर और प्रान्तके माहकी मुहर लगवाकर भेज दीजियेगा।

मो० क० गांधीके सलाम

हाजी इस्माइल हाजी अबूबकर झवेरी
[पारबन्दर]

[पुनश्च]

साथका कागज यदि प्रान्तके साहबके हस्ताक्षरके लिए प्रान्त-कार्यालयके वकीलको भेज देंगे तो भी काम चल जायगा।

मो० क० गांधी

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल गुजराती पत्रकी फोटो-नकलसे।
सौजन्य : झवेरी बन्धु, डर्बन।

४१४. भारत भारतीयोंके लिए

यह आवाज भारतमें आज हजारों मुखोंसे निकल रही है। भारत आज एक ही राष्ट्र है, यह कोई नहीं कह सकता। किन्तु कामना तो सबकी यही है कि वह एक राष्ट्र कहलाये। ऐसा करनेके लिए स्वदेशाभिमानी भारतीय अपनी-अपनी समझसे उपाय सुझा रहे हैं। इनमें कलकत्तेसे निकलनेवाले इंडियन वर्ल्ड नामक प्रसिद्ध मासिक पत्रके सम्पादक भी हैं। उन्होंने कहा है कि जबतक भारतके विभिन्न प्रदेशोंमें रहनेवाले भारतीयोंमेंसे ज्यादातर लोग एक ही भाषा नहीं बोलने लगते तबतक वास्तविक रूपमें भारत एक राष्ट्र नहीं बन सकता। विभिन्न प्रदेशोंमें अंग्रेजी बोलनेवाले लोग काफी मिल जाते हैं किन्तु उनकी संख्या बहुत ही थोड़ी है और हमेशा थोड़ी ही रहेगी। इसका मुख्य कारण यह है कि यह भाषा कठिन है और विदेशी है। साधारण मनुष्य इसे ग्रहण नहीं कर सकता। इसलिए यह सम्भव नहीं कि अंग्रेजीके जरिये भारत एक राष्ट्र बन जाये। अतः भारतीयोंको भारतकी ही कोई भाषा पसन्द करनी पड़ेगी। गुजराती बंगाली तमिल आदि

रहनेवालोंको लम्बी अवधिका पट्टा नहीं दिया जायेगा परन्तु उन्हें क्लिपस्प्रूटमें पट्टेपर जमीन दी जायेगी। समितिने इस प्रस्तावका विरोध करना तय किया है।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन २५-८-१९०६

४१६. स्वर्गीय उमेशचन्द्र बनर्जी

श्री उमेशचन्द्र बनर्जीके देहावसानका समाचार हम दुःखपूर्वक प्रकाशित करते हैं। उनकी गिनती आधुनिक कालके सबसे बड़े भारतीय देशभक्तोंमें थी। वे उन देशभक्तोंमें थे जिन्हें नौरोजीकी परम्पराका कहा जा सकता है और जो अपने समय एवं बुद्धि-शक्तिका पूरा उपयोग अपने देशके हितके लिए किया करते थे। श्री बनर्जी बंगालके अग्रगण्य बैरिस्टरोंमें से थे और उन्होंने अपने सूक्ष्म कानूनी ज्ञान तथा नैय्यायिक क्षमताके कारण अपने कार्यकालके आरम्भमें ही ख्याति पा ली थी। इससे उन्हें असाधारण प्रभावकी प्राप्ति हुई जिसका उपयोग उन्होंने अपने देशके लाभके लिए किया। वे भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेसके जन्मदाताओंमें से एक थे और उसके प्रथम अध्यक्ष भी थे। वे अपने जीवनके अन्तिम दिन तक उसकी सेवा करते रहे और मुक्तहस्त होकर अपना धन सार्वजनिक कार्योंमें लगाते रहे।

श्री बनर्जीका पाश्चात्य शिक्षामें बहुत विश्वास था। वे स्वयं उसकी एक श्रेष्ठ उपज थे। इसलिए उन्होंने क्रायडनमें एक मकान खरीदा था। वहाँ वे अपना आधा समय अपने बच्चोंकी शिक्षाकी देखरेखमें खर्च करते थे। फलतः उनके लड़कों एवं लड़कियोंको उदार शिक्षा मिली है जिसका उपयोग वे भी अपने पिताकी भाँति सार्वजनिक सेवामें कर रहे हैं।

श्री बनर्जीके जैसे जीवनसे वर्तमान पीढ़ीके भारतीय युवकोंको अनेक शिक्षाएँ मिलती हैं। उस स्वर्गीय आत्माके प्रति भारतीय अपनी सर्वोत्तम श्रद्धांजलि उनके उदाहरणके अनुकरणके रूपमें ही दे सकते हैं। हम आदरपूर्वक श्री बनर्जीके कुटुम्बके प्रति अपनी सहानुभूति प्रकट करते हैं। उनकी क्षति भारतकी भी क्षति है।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन २५-८-१९०६

४१७ फर्ककी हिमायत

जोहानिसबर्ग स्टार में हाल में ही रंगदार लोगोंकी गुंडागिरी पर एक बड़ा कड़ा अग्रलेख प्रकाशित हुआ था। लेखकके विचारोंका आधार केप टाउनमें हुए हालके दंगे थे। हमारे सहयोगीने रंगदार लोगों और मलायी तथा अन्य लोगोंके बीच जिन सबको भी रंगदार ही कहा जाता है, भेद करनेकी सावधानी बरती है। किन्तु इसमें कोई सन्देह नहीं हो सकता कि अखबारके सामान्य पाठककी दृष्टिमें रंगदार लोगों का अर्थ है — मलायी ब्रिटिश भारतीय तथा अन्य सब एशियाई। स्टार द्वारा किये गये इस भेदमें ही गृहीत है कि जनताके मस्तिष्कमें यह भ्रम मौजूद है।

एशियाइयों और दूसरोंको रंगदार लोगों की श्रेणीमें रखनेसे दक्षिण आफ्रिकी ब्रिटिश भारतीयोंके साथ बहुत-सा अनुचित अन्याय हुआ है। सबसे ज्वलन्त उदाहरण तो यह है जो श्री विन्स्टन चर्चिलने दिया है। सहायक उपनिवेश-मन्त्रीने इस बिनापर ब्रिटिश भारतीयोंका मताधिकारसे वंचित किया जाना उचित ठहराया है कि जब लोग वतनी शब्द — इस प्रसंगमें रंगदार लोग — का अर्थ किसी भी गैर-यूरोपीय देशके निवासी मानते थे। हम जानते हैं कि लॉर्ड मिलनरने उक्त संज्ञाके ऐसे प्रयोग या दुरुपयोग का विरोध किया है परन्तु उनका विरोध उपर्युक्त अन्यायसे ब्रिटिश भारतीयोंकी रक्षामें सहायक नहीं हुआ है।

इस समय ट्रान्सवाल और ऑरेंज रिवर कालोनीकी विधान-पुस्तकोंमें ऐसे कानून हैं जो केवल इसलिए ब्रिटिश भारतीयोंपर लागू होते हैं कि रिवाजके अनुसार "रंगदार लोग" संज्ञा ब्रिटिश भारतीयोंपर लागू है यद्यपि कानूनके मायने लोग यही समझते हैं कि इनको ब्रिटिश भारतीयोंपर, जो दोहरी पीड़ा भोगते हैं लागू करना बिलकुल अनावश्यक है। वे उन निर्योग्यताओंसे भी पीड़ित हैं जो रंगदार लोगों पर लागू हैं और इस कारण भी कि वे एशियाई हैं। इस तरह मादक शराब सम्बन्धी कानून (इम्पीरियल गोल्ड लॉ) और ट्रान्सवालके पैदल पटरी सम्बन्धी विनियम उनपर इसलिए लागू होते हैं कि वे रंगदार लोग हैं और १८८५ का कानून ३ उनपर इसलिए लागू होता है कि वे एशियाई हैं। अतएव वास्तवमें उनकी स्थिति उन रंगदार लोगों से गई-गुजरी है जो एशियाई नहीं हैं।

हम समझते हैं कि हमने ऊपरके उदाहरणोंसे काफी साफ तौरपर दिखा दिया है कि यदि ब्रिटिश भारतीयोंके साथ न्याय करना इष्ट है तो उनको आइन्दा रंगदार लोगों की श्रेणीमें नहीं रखना चाहिए। यह बात हम किसी अप्रिय तुलनाकी इच्छा किये बिना कह रहे हैं। जहाँ अधिकार अधिकारकी लड़ाईमें रंगदार लोगों और ब्रिटिश भारतीयोंको भिन्न-भिन्न स्तरोंपर प्रहार करना है। उनका पृथक्-पृथक् मामलोंमें न्याय प्राप्त करना है और यदि सरकार तथा प्रशासक उन दोनोंके बीच भेद करनेके महत्त्वको स्वीकार कर लें तो अच्छा होगा।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन २५–८–१ ९

४१८ हिन्दुओंके श्मशानकी स्थिति[1]

श्री गोवर्टीने हिन्दुओंके श्मशानकी स्थितिके बारेमें हमें एक पत्र लिखा है। डर्बनके हिन्दुओंका ध्यान हम उसकी ओर आकर्षित कर रहे हैं। यदि इस श्मशानकी स्थिति वैसी ही हो जैसी श्री गोवर्टीने बताई है तो हिन्दुओंके लिए यह बहुत ही लज्जा और कलंककी बात मानी जायेगी। श्मशान स्वच्छ तथा अच्छी स्थितिमें रखना हर हिन्दूका कर्तव्य है। ऐसा न करनेसे कानून और स्वास्थ्यके नियमका तो उल्लंघन होता ही है, मनुष्य जातिके नाते ऐसी बातोंके विषयमें हमें जो कोमल भावना रखनी चाहिए, उस नियमका भी उल्लंघन होता है। हमें श्मशानकी स्थितिके विषयमें और भी अनेक पत्र मिले हैं। वे चुभीले हैं और उनमें हिन्दू जातिकी आलोचना की गई है इसलिए हमने उन्हें प्रकाशित नहीं किया। किन्तु हमें हर हिन्दूसे कहना चाहिए कि और बातोंमें चाहे जैसे झगड़े हों, मरण-जैसी स्थितिके समय अपनी वृत्तियोंको कोमल और पवित्र रखना हमारे लिए बहुत ही आवश्यक है। और यदि ऐसा न करें, तो यह हमारी बहुत बड़ी कमी मानी जायेगी, इसे प्रत्येक व्यक्ति स्वीकार करेगा।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन २५-८-१९०६

४१९ ईरानका मामला

हालमें ईरानके शाहने ऐलान किया है कि आर्थिक दिवालियेपनकी परिस्थितिसे निकलनेके लिए प्रजा परिषद बुलवाई जायेगी। ईरान इस स्थितिमें पहुँचा, इसका मुख्य कारण शाहका उड़ाऊ-पन है। इस वर्षके प्रारम्भमें प्रजा वर्तमान राज्यके विरुद्ध इतनी उत्तेजित थी कि सैकड़ों व्यापारी और मुल्ला तेहरान छोड़कर भाग गये थे। इससे घबराकर शाहने मुल्लों व्यापारियों और जमींदारोंकी चुनी हुई परिषद बुलानेका वचन दिया है, किन्तु कोषके सम्बन्धमें जो गम्भीर परिस्थिति उत्पन्न हो गई है वह शायद ही सुधरे। वर्तमान शाह मुजफ्फरुद्दीनने १० वर्षके भीतर ईरानको इस स्थितिमें ला छोड़ा है। ईरानका सारा राजस्व शाहके हाथमें है। पहलेके शाहोंने थोड़ा-बहुत निजी धन जोड़ लिया था। वर्तमान शाहके पास २ लाख पौंड थे। हिसाब लगानेपर मालूम हुआ है कि निजी धन खर्च हो गया है और वार्षिक आयके १५ लाख पौंड भी खर्च हो जाते हैं। इतना ही नहीं इसके अतिरिक्त ४ लाख पौंडका कर्ज भी हो गया है। देश दिनोंदिन गरीब होता जा रहा है। करका बोझ मुख्यतः मजदूर वर्गपर है। पिछले दो-चार वर्षोंमें यूरोपके दौरों और महलकी शान-शौकतपर बहुत दौलत उड़ाई गई है। ईरानकी ऐसी खराब स्थिति हो गई है कि उसका वर्णन करते हुए जोहानिसबर्गके 'रैंड डेली मेल' ने कहा है कि इस गम्भीर स्थितिका कम लाभ न उठा ले, इसके लिए सावधान रहना जरूरी है। क्योंकि भारतके पड़ोसमें दस पाँव जमा ले तो अंग्रेज सुखसे नहीं बैठ सकेंगे।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन २५-८-१९०६

1. देखिए "हिन्दू श्मशान" पृष्ठ ४२१।

उसम सिर्फ तुर्कियोंकी ही बात की गई है और एशियाके सम्पूर्ण अधिवासियोंके लिए इस शब्दका प्रयोग स्थायी हो जाता है। यह परिभाषा अवास्तविक है क्योंकि यहाँ अरब और तुर्की राज्यके मुसलमान प्रजाजन शायद ही हैं। इससे मलायी लोगोंके साथ घोर अन्याय होता है क्योंकि १८८५ के कानून ३ के अनुसार आजतक वे कभी नहीं सताये गये हैं और न उनको कभी यह दुर्भाग्य ही प्राप्त हुआ है कि वे ब्रिटिश भारतीयोंकी भाँति व्यापारमें यूरोपीयोंके प्रतिस्पर्धी गिने जायें।

(ख) जब कि मसविदेसे उपनिवेशवासी प्रत्येक एशियाईको असंख्य परेशानियाँ होती हैं उससे ट्रान्सवालके युद्धसे पहलेके निवासियोंकी जो अभीतक उपनिवेशमें नहीं लौटे हैं स्थिति पहलेकी भाँति ही अनिश्चित अस्पष्ट और दुःखजनक बनी रहती है।

(ग) उसमें कप्तान हैमिल्टन फाउलके मेहनतसे किये गये पंजीकरणका भी ध्यान नहीं रखा गया है। यहाँ इसका उल्लेख किया जा सकता है कि कप्तान फाउलने पंजीकरणका जो कार्य किया था उसकी व्यवस्था भारतीय समाजकी सलाहसे की गई थी। भारतीयोंने लॉर्ड मिलनरकी सम्मतिको नम्रता एवं शिष्टतासे मानकर पंजीकरण मंजूर कर लिया था यद्यपि जैसा कि स्वीकार किया गया था जो लोग पिछली सरकारको तीन पौंड [कर] दे चुके थे उनके सम्बन्धमें इसके पीछे कोई कानूनी बल नहीं था। इसकी और समाजके अन्य स्वेच्छापूर्वक किये गये कार्योंकी अध्यादेशके मसविदेमें चर्चा भी नहीं है।

(घ) धारा ३ में जान-बूझकर उन सुविधाओंको भी कम कर दिया गया है जो शान्ति रक्षा अध्यादेशके अन्तर्गत भारतीय समाजको प्राप्त थीं। जैसा कि सरकार अच्छी तरह जानती है इस मामलेका एक अदालती फैसला मौजूद है कि जिस ब्रिटिश भारतीयके पास पंजीकरणका पुराना डच प्रमाणपत्र है उसको नया अनुमतिपत्र लिये बिना उपनिवेशमें प्रवेश करनेका अधिकार है। धारा ३ की उपधारा २ से यह फैसला रद हो जाता है।

(ङ) जब कि १८८५ के कानून ३ के अन्तर्गत और सर्वोच्च न्यायालयके हालके फैसलेके अनुसार ट्रान्सवालमें व्यापारके उद्देश्यसे बसनेके इच्छुक बालिग मर्दोंको ही पंजीकरण कराना आवश्यक है वर्तमान अध्यादेशसे ८ वर्षसे ऊपरका प्रत्येक भारतीय स्त्री-पुरुष पंजीकरणके लिए बाध्य होगा। यदि मेरे संघकी आशंका ठीक है तो यह कानून भारतीय स्त्रीत्वपर, उसका जो अर्थ मेरे भारतवासी समझते हैं उस अर्थमें आघात करनेवाला होगा। मेरा संघ जिस समुदायका प्रतिनिधित्व करता है उसकी युगोंसे प्रेमपूर्वक पोषित भावनाएँ बुरी तरह कुचल जायेंगी। यदि पंजीकरण कानूनपर अमल किया गया तो इसका यही अर्थ होगा कि सम्राट्की सरकारने प्रत्येक भारतीयको अपराधी घोषित कर दिया है। जहाँतक मेरे संघकी जानकारी है ब्रिटिश उपनिवेशोंमें सभ्य भारतीय आबादीके सम्बन्धमें इस प्रकारका कानून अज्ञात है।

(च) तीन पौंडी शुल्ककी माफी तो मेरे संघकी नम्र सम्मतिमें बगैर समझ छिड़कनेके समान है क्योंकि उपनिवेशमें इस समय रहनेवाले प्राय: सभी एशियाई पंजीकृत हैं और कई तो ३ पौंडी कर दो-दो बार दे चुके हैं।

(छ) धारा १७ की उपधारा ४ में लेफ्टिनेंट गवर्नरको अधिकार दिया गया है कि वह अस्थायी अनुमतिपत्र प्राप्त किसी ब्रिटिश भारतीयको मद्य-सम्बन्धी अध्यादेशकी धाराओंसे मुक्त कर सकता है। यह बगैर समझ छिड़कनेकी दूसरी मिसाल है। मेरे संघको ऐसे किसी स्वाभिमानी भारतीयका पता नहीं है जो ऐसी मदकी छूट चाहता हो।

प्रस्तावित अध्यादेशमें आपत्तियोग्य और भी अनेक बातें गिनाई जा सकती हैं परन्तु मेरे संघका विश्वास है कि ऊपर यह दिखानेके लिए काफी लिखा जा चुका है कि ब्रिटिश भारतीयोंके

ईश्वरीय अनुग्रहके लिए इससे अधिक हार्दिक हमारी कोई प्रार्थना ही हो सकती है। हमें पूरा निश्चय है — वस्तुतः हम जानते हैं — कि हमें उनका जीवन-कार्य प्रिय है, हम उनके पद चिह्नोंपर चलना चाहते हैं और उनकी मृत्युके पश्चात् भी हम उनको अपनी स्मृति और अपने कार्योंमें जीवित रखेंगे — यह जानकर उनको जितना आनन्द होगा उतना किसी अन्य बातसे नहीं। इस पत्रसे सम्बन्धित लोग तो अनेक बार अपनी परीक्षाकी घड़ियोंमें उनका स्मरण करके ऊपर उठे हैं। वस्तुतः इन महान भारतीय देशभक्तके ऊँचे उदाहरणके कारण ही हमारा यह उपाय संभव हुआ है। हम सर्वशक्तिमान प्रभुसे हार्दिक प्रार्थना करते हैं कि वह भारतके इन पितामहको दीर्घजीवन प्रदान करें।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन १-९-१९०६

४२२ घृणित !

किसी कानूनके सम्बन्धमें घृणित विशेषणका प्रयोग बड़ा ही कठोर प्रयोग है। तथापि शान्तिपूर्वक सोचनेपर भी हमें इसी मासकी २२ तारीखके असाधारण ट्रान्सवाल गवर्नमेंट गज़ट'में प्रकाशित एशियाई अध्यादेशके मसविदेके लिए इतना उपयुक्त कोई अन्य शब्द नहीं मिलता। ट्रान्सवाल विधान-परिषदको स्थगित करते समय श्री डंकनने जो भविष्यवाणी की थी यह उसीकी पूर्ति की गई है। विचाराधीन विधेयकके द्वारा ट्रान्सवालके भारतीय समाजकी बुरीसे बुरी आशंकाएँ मूर्तिमन्त हो गई हैं। इससे उपनिवेशवासी अभागे भारतीयोंके साथ किये गये कितने ही पवित्र वादे टूट जाते हैं न्याय तथा औचित्यका अंग्रेजी सिद्धान्त भी धूलमें मिल जाता है और मानव-जाति न्याय और अन्यायकी जिन सामान्य धारणाओंसे पिछले कितने ही युगोंसे परिचित है वे भी कुचल जाती हैं। दूसरे स्तम्भमें हम ब्रिटिश भारतीय संघका कठोर शब्दावलीयुक्त विरोध छाप रहे हैं, परन्तु इस प्रकारके सरकारी कामके लिए भी उसकी भाषा कड़ाई युक्त नहीं है। श्री डंकनकी भाषासे हमने जितनी कल्पना की थी यह अध्यादेश उससे बहुत आगे जाता है। इससे भारतीयोंके मस्तिष्कमें इतनी अशान्ति उत्पन्न हो गई है जितनी वयस्क बालिकामें किसी कानूनसे कभी नहीं हुई थी। उसके गृह-जीवनकी पवित्रतामें हस्तक्षेप होनेका खतरा है। इसके सामने १८८५का कानून ३[1] बिलकुल फीका पड़ जाता है। इसका सबसे दु:खद अंश तो यह तथ्य है कि बोअर सरकारने हकीकतको बिना समझे अधिक हानि पहुँचानेकी भावना न रखते हुए और ऐसे लोगोंके प्रति जो उसकी प्रजा न थे जो कुछ किया था उसीको ब्रिटिश सरकार तथ्योंका पूर्ण ज्ञान रखते हुए, भारतीय समाजको हानि पहुँचानेके निश्चित इरादेसे और ब्रिटिश प्रजाके सम्बन्धमें कर रही है। अपने तरीकोंमें मौजूदा सरकार बोअर सरकारसे भी आगे बढ़ जाना चाहती है और अब वह अपने कानूनके अन्तर्गत उन लोगोंको भी ले लेगी जो उनके शासनमें इसकी सीमाके बाहर थे — जैसे स्त्रियाँ बच्चे और गैर व्यापारी। हमें यह देखकर बड़ा दुःख हुआ है कि हमारे सहयोगी जोहानिसबर्ग स्टार ने इस कानूनका स्वागत किया है और वस्तुतः वह इसकी कठोरतापर खुश है। इससे वर्तमान कानूनके बारेमें उसका अज्ञान प्रकट होता है और इसलिए वह ऐसी सामान्य बातोंको

[1] देखिए "एशियाई-अधिनियम" पृष्ठ ४११-३।

तभी होगा जब भारतकी उठती पीढ़ी अपने जातीय कर्तव्यको समझेगी और वसी सब कठिनाइयों और मुसीबतोंको सहनेके लिए तैयार होगी जैसी कि दक्षिण-पश्चिमी आफ्रिकामें जर्मन सैनिक सहन कर रहे हैं।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन १–९–१९ ६

४२४ केप परवाना अधिनियम

केप सरकारके इस मासकी २१ तारीखके गजट से हमें ज्ञात होता है कि केप परवाना-विधेयक संसदका अधिनियम बन गया है और इसके बाद यह निश्चित रूपसे अन्य सभी व्यापारियोंके समान भारतीय व्यापारियोंपर लागू होगा। विधेयकमें इतने परिवर्तन हो चुके हैं कि इस अधिनियममें मूल विधानकी खोज निकालना सम्भव नहीं है। निस्सन्देह कुछ बातोंमें यह सख्त है। सर्वोच्च न्यायालयमें अपील करनेका अधिकार निश्चित रूपसे छीना नहीं गया है पर विचारणीय प्रश्न यह है कि परवाना निकायों द्वारा जो फैसला दिया जायेगा वह क्या इस योग्य होगा कि सर्वोच्च न्यायालय उसपर पुनर्विचार करे? फिर, मूल विधेयकमें इच्छुक प्रार्थियोंके लिए करदाताओंके बहुमतकी स्वीकृति प्राप्त करनेके रूपमें जो बचाव रखा गया था वह खत्म कर दिया गया है। साथ ही हिसाब केवल अंग्रेजीमें ही रखनेका नियम हटा दिया गया है। हमने इस धाराको कभी भी कोई महत्त्व नहीं दिया यह निर्दोष थी और हम यहाँ यह बता दें कि यद्यपि हिसाब रखनेके विषयमें कुछ स्पष्ट नहीं कहा गया है फिर भी यदि प्रार्थी नगरपालिकाके अधिकारियोंको सन्तोषजनक ढंगसे यह नहीं बता सकें कि वे अपने व्यापारका समझमें आने योग्य हिसाब रखनेमें समर्थ हैं तो नगरपालिकाके अधिकारियोंका उन्हें परवाने देनेसे इनकार करना सर्वथा उचित होगा। व्यापारिक परवानोंपर लगाये गये सुनियमित नियन्त्रणको हमने सदैव न्यायसंगत माना है। इसलिए हम सोचते हैं कि अधिनियमको निष्पक्ष परीक्षणका अवसर दिया जाना चाहिये। परन्तु बहुत कुछ तो इस बातपर-निर्भर करेगा कि परवाना निकाय अपने नवप्राप्त अधिकारोंका किस प्रकार उपयोग करते हैं। स्वर्गीय श्री एस्कम्बके शब्दोंमें हम विश्वास करते हैं कि एक रासस्की शक्ति प्राप्त कर लेनेपर वे उसका उपयोग दैत्यकी भाँति ही नहीं करेंगे बल्कि न्यायको क्षमाशीलतासे नरम रखेंगे।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन १–९–१९ ६

४२५ पत्र छगनलाल गांधीको

जोहानिसबर्ग
अगस्त २७, १९०५

चि. छगनलाल

आज रात मैं तुम्हें तीन सम्पादकीय लेख भेज रहा हूँ। निस्सन्देह जो दादाभाईके[1] बारेमें है उसका पहला, जो जोहानिसबर्गके[2] बारेमें है उसका दूसरा और उपनिवेशमें जन्मे हुए भारतीयों सम्बन्धी[3] टिप्पणीका स्थान तीसरा होना चाहिए। लिखनेके लिए तो बहुत है किन्तु बहुत थक गया हूँ और समय भी नहीं है कि तुम्हें ज्यादा कुछ दे सकूँ। एक या दो लेख शायद कल भेज सकूँगा। ये बुधवारको तुम्हारे पास पहुँच पायेंगे। अब करीब ५ बज गये हैं। तुम्हें कुछ गुजराती देनेकी मैं कोशिश करूँगा कमसे-कम दादाभाईके बारेमें एक लेख। सम्भव हो तो अगले हफ्ते दादाभाईकी तसवीर पूरककी तरह दो। शायद गैब्रियलके पास नेगेटिव है उन्हें बिना कुछ लिये काम कर देना चाहिए। ब्लॉक अच्छा रहे। पूरकके बारेमें मैं तो तुम्हें तार देनेवाला था किन्तु सोचता हूँ हम जल्दी न करें। अगले हफ्ते यह बहुत अच्छा निकल सकेगा। केप अधिनियमके[4] बारेमें मैं एक और लेख दे रहा हूँ। इस तरह तुम्हारे पास ४ लेख हो गये।

मोहनदासके आशीर्वाद

श्री छगनलाल खुशालचन्द गांधी
फिनिक्स
नेटाल

मूल अंग्रेजी प्रतिकी फोटो-नकल (एस. एन. ४१९८) से।

१. देखिए "चिरायु सिरमौर हों!" पृष्ठ ४१३–४।
२. देखिए "पुलिस!" पृष्ठ ४१४।
३. देखिए "उपनिवेशी भारतीय शिक्षित बनें!" पृष्ठ ४१५–६।
४. देखिए "केप परवाना अधिनियम" पृष्ठ ४१६।

४२६. तार 'इंडिया'को

जोहानिसबर्ग
अगस्त २८, १९०६

एशियाई-अध्यादेशका जो मसविदा प्रकाशित किया गया है वह पिछले वादोंको भंग करता है और बोअर शासनसे लिये गये वर्तमान कानूनसे बदतर है। स्त्रियों और आठ सालसे ऊपरके बच्चोंके लिए पंजीयन कराना जरूरी करके यह भारतीयोंकी भावनाको धक्का पहुँचाता है। भारतीयोंने जिन्हें दो बार पंजीयन करानेके लिए कानूनन बाध्य किया जा चुका है पिछली बार लॉर्ड मिलनरको प्रसन्न करनेके लिए स्वेच्छासे पंजीयन करा लिया था। यह तीसरा पंजीयन अनावश्यक भी है और अत्याचारपूर्ण भी। प्रस्तावित अध्यादेशका मंशा मनमाना अपमान करना है, जिसके सामने सिर झुकानेसे भारतीय पुराने कानूनका जारी रहना पसन्द करते हैं। गैरकानूनी प्रवेशके आरोपका प्रतिवाद और एक जाँच-आयोगकी नियुक्तिका निवेदन किया जाता है।

[अंग्रेजीसे]

इंडिया ११–८–१९०६

४२७. जापानके वीर कोडामा

गत मास टोकियोमें बिना किसी बीमारीके एकाएक जनरल कोडामाका देहान्त हो गया। वे जापानकी समुराई नामक क्षत्रिय जातिमें पैदा हुए थे और इसलिए स्वभावतः ही कुशल सैनिक थे। इसके सिवा वे एक नामी रणनीतिज्ञ थे। उनके मरनेसे जापानकी सेनामें एक बड़ी कमी आ गई है।

सन् १८७२में वे जापानी सेनामें भरती हुए। वहाँ तुरन्त ही उनकी कुशलता प्रकट हुई और उसके कारण वे सेनामें बढ़ने लगे। सन् १८८० में उन्हें लेफ्टिनेंट कर्नलका ओहदा मिला। आगे चलकर १९०४ में वे जनरल हुए। पिछले रूसी-जापानी युद्धके समय वे मार्शल ओयामाके मुख्य सरदार थे। जापानी लोगोंके स्वभावके अनुसार लड़ाईके समय वे हमेशा बहुत ही धैर्यवान और गम्भीर रहते थे, कभी भी उतावली नहीं करते थे। लाईयांगके खूंखार युद्धके समय जब रूसी सेनाने जापानियोंपर भयंकर हमला किया उस समय वे नाश्ता कर रहे थे। रूसी हमला सेनापति कोडामाके डेरेकी तरफ ही शुरू हुआ था। इसलिए साथी सैनिकोंने अपने सरदारको सुरक्षाकी दृष्टिसे निर्भय स्थानपर जानेको कहा। तब उन्होंने उत्तर दिया — ऐसा हो ही नहीं सकता। मुझे भागता हुआ समझकर मेरे सिपाही भयभीत चकित हो जायेंगे। इसलिए यहीं रहना अच्छा है। अपने नायककी ऐसी हिम्मतसे सैनिकोंकी हिम्मत बढ़ी और वे रूसी आवेगको पीछे धकेलनेमें कामयाब हुए।

सेनापति कोडामाका शारीरिक गठन और रूप-रंग अंग्रेजों-जैसा था। १६ वर्षकी उम्रमें जापानकी सरकारने उन्हें पश्चिमी युद्ध-कलाका अभ्यास करनेके लिए यूरोप भेजा था। उस

युद्ध-कालकी परीक्षा उन्होंने चीनी लड़ाईके समय की। उस समय उन्होंने जो सेवा की थी उसकी कद्र करके मिकाडोने उन्हें "बैरन" का खिताब प्रदान किया। वे जापानके सुयोग्य पुरुष माने जाते थे और धारणा थी कि जापानके प्रधान मन्त्रीकी जगह पहुँचेंगे। मृत्युके समय उनकी उम्र ५१ वर्षकी थी।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, १-९-१९०६

४२८. पत्र: छगनलाल गांधीको

जोहानिसबर्ग
सितम्बर १, १९०६

चि. छगनलाल,

तुम्हारा विस्तृत पत्र मिला; हरिलालके बारेमें तुम्हारा तार भी। अनुमतिपत्रके बारेमें मुझे दुःख है किन्तु उसमें कुछ नहीं किया जा सकता। श्री पोलकको मैंने तुम्हारी टीका पढ़कर सुनाई; वे उसपर हँसे। कहते हैं जब वे वहाँ थे तब तुम्हें उनसे बात करनी थी। श्री मेढ[1] खुद थोड़े ही दिनोंके लिए काम चाहते हैं; इसलिए यदि तुम उन्हें कुछ दिनोंके लिए रखना चाहो तो वे बिलकुल राजी होंगे और तुम्हें सहायता मिलनी चाहिए, इसे मैं एकदम मंजूर करता हूँ। बेशक मुझे लगता है कि तुम्हें मददके लिए कोई-न-कोई चाहिए; नहीं तो मुझे डर है कि तुम बीमार पड़ जाओगे या कोई काम, विशेषतः हिसाब जो अब हो जाना चाहिए, पड़ा रह जाने दोगे। लेकिन अगर तुम श्री मेढको सिर्फ कुछ दिनोंके लिए ही रखो तो उन्हें केवल ३ पौंड देना बहुत खराब होगा। उन्हें ४ पौंड मासिक कहो और यदि वे पूरी कुशलतासे काम करें तो दूसरे महीनेसे उन्हें ५ पौंड मिलने चाहिए। मेरा खयाल है श्री वेस्टके लौटनेके बाद भी तुम्हें लगभग ६ महीनेके लिए उनकी जरूरत पड़ेगी। यद्यपि मैं यहाँसे गुजराती सामग्री भेजता रहूँगा, जो राजनीतिक आन्दोलन चल रहे हैं उनसे मेरी स्थिति बहुत अनिश्चित हो जाती है। शायद मुझे इंग्लैंड जाना पड़े या शायद जेल जाना पड़े। आज मैं श्री डंकनसे मिला। मैंने उन्हें सूचित कर दिया है कि यदि कानून बन जाता है तो पंजीयन कराने या जुर्माना देनेके बजाय मैं सबसे पहले जेल जाना पसन्द करूँगा। मुझे भरोसा है कि यहाँ लोग भी दृढ़ हैं। किन्तु मुझे तो ऐसे मामलोंमें स्वभावतः ही आगे होना चाहिए। यदि यह हुआ तो इसका अर्थ शायद तीन महीनेका कारावास होगा। इसलिए बिना मुझपर निर्भर रहे तुम्हें अच्छी तरह काम चलाते रहनेकी तैयारी कर लेनी चाहिए। श्री उस्मान लतीफके नामे जो हिसाब है उसका मुझे ध्यान है; आगे-पीछे रकम वसूल कर सकूँगा, ऐसा सोचता हूँ। सुलेमान मामदकी बहियाँ तुम २ पौंडकी या १ की अपनी सुविधाके अनुसार, छाप सकते हो। नाटालके इश्तहार कर संग्राहकको मिल गये थे। क्या तुम उन्हें पार्सलके बजाय डाकसे नहीं भेज सकते थे? मैं सचमुच प्रसन्न हुआ हूँ कि हरिलालने डेकका टिकट लिया और सब प्रबन्ध खुद ही कर लिया। तुमने जो कागजात पता बदल कर यहाँ भेजे थे मुझे मिल गये

१. सुरेन्द्र बापूभाई मेढ, जिन्होंने वर्षों तक दक्षिण आफ्रिकामें सार्वजनिक काम और बादमें भारतमें गांधीजीके साथ काम किया था।

है। ठाकरसीकी मृत्यु सुनकर मुझे सचमुच बहुत दुःख हुआ। यह आश्चर्यजनक है कि किस तरह जवान इतनी जल्दी उठ जाते हैं। इन घटनाओंका मैं कारण पा गया हूँ ऐसा मेरा विश्वास है किन्तु अगर उसकी चर्चा करूँ तो वह भरणपरोषन ही होगा। उस्मान आमदको सर्वेका अन्दाज भेज देना चाहिए। स्मशान-कोष सम्बन्धी लेखको लेकर मेरे पास एक शिकायत आई है। मैंने मोतीलालको लिख दिया है और उसकी चर्चा गुजराती स्तम्भोंमें करूँगा। उसके बारेमें उसका शिकायत करना और खास कर तुम्हारे खिलाफ हास्यास्पद है। मुझे उम्मीद है ऐसतक लेखको तुमने काफी छाँट दिया होगा। मुझे बताये बिना उसका कोई भी लेख छापना तुम्हारे लिए आवश्यक नहीं है। मैंने उनसे कह दिया है कि ठीक न होंगे तो मैं उन्हें स्थान नहीं दूँगा। मुद्रण ऐंड सनकी पेढ़ीवालोंसे तुम्हें कह देना चाहिए कि उनके हाथ पर्चे पत्रके साथ बाँटनेसे हमें रोक दिया गया है। विज्ञापनके बारेमें मैं दादा उस्मानको लिखूँगा। मुझे तुम्हारे भेजे हुए प्रूफ समाचारपत्रके साथ ही मिले।

मोहनदासके आशीर्वाद

[पुनश्च]

कनेकी किताब यहाँ श्री वेस्टकी कोठरीमें या तुम्हारे पास हो तो मुझे भेजना।

श्री छगनलाल खुशालचन्द गांधी
फीनिक्स
नेटाल

मूल अंग्रेजी प्रतिकी फोटो-नकल (एस० एन० ४१७२) से।

४२९ जोहानिसबर्गकी चिट्ठी

जोहानिसबर्ग
सितम्बर १, १९०९

श्री चैमनेसे मुलाकात

श्री चैमनेने भारतीय शिष्टमण्डलको एशियाई-अधिनियमके सम्बन्धमें मुलाकात देना स्वीकार किया था। इसलिए सर्वश्री अमुल गनी ईसप मियाँ हाजी वजीर अली पीटर मूनलाइट और गांधी जिन्हें ब्रिटिश भारतीय संघकी समितिने इसके लिए नियुक्त किया था, शनिवारको प्रिटोरिया गये थे। वहाँ उनके साथ श्री हाजी हबीब प्रिटोरियाकी समितिकी ओरसे शामिल हो गये। श्री चैमने ११ बजे मिले। इस सम्बन्धमें कुछ मिलनेसे पहले मुझे यह बता देना चाहिए कि जब हम प्रातः साढ़े आठ बजेकी गाड़ीमें बैठने लगे तभी मुश्किलें शुरू हो गईं। गाड़ीके सम्बन्धमें सारा इन्तजाम करनेका जिम्मा श्री चैमनेने लिया था और उन्होंने इन्तजाम कर भी दिया था। किन्तु इस सम्बन्धमें स्टेशन मास्टरको कोई जानकारी नहीं थी। कंडक्टरको भी पता नहीं था। इसलिए उसने यह कहकर रोक दिया कि शिष्टमण्डलके सदस्य सूचना दिये बिना आये हैं। आखिर उन्हें जर्मिस्टन तक दूसरे दर्जेमें भेजना पड़ा और जर्मिस्टनसे पहला दर्जा दिया

१. देखिए "हिन्दुओंके स्मशानकी स्थिति", पृष्ठ ८१।
२. देखिए "हिन्दू स्मशान", पृष्ठ ४२६।
३. यह अंश गांधीजीके हस्ताक्षरोंमें गुजरातीमें है।

मिला। श्री डंकनके साथ बहुत बातचीत हुई। शिष्टमण्डलने श्री डंकनको बताया कि एशियाई अधिनियम भारतीयोंको किसी भी प्रकार स्वीकार न होगा। वे अपने नामोंका पंजीकरण दुबारा करायें यह सम्भव नहीं है। भारतीयोंने राहत माँगी थी। उसके बदले उनके लिए सरकार और भी कठिन कानून बनाना चाहती है यह तो अन्याय ही माना जायेगा। स्त्रियों और बच्चोंके पंजीकरणकी बात कभी सम्भव नहीं है। ऐसा क्योंकि समयमें नहीं था और न अंग्रेजी साम्राज्यके किसी दूसरे भागमें है। अनुमतिपत्रोंके सम्बन्धमें जो अन्याय होता है उसके सम्बन्धमें शिष्टमण्डलने तफसीलवार स्थिति बताई। श्री हाजी वजीर अली और श्री हाजी हबीब बहुत जोशके साथ बोले। श्री डंकनने कहा कि इन सब बातोंपर सरकार विचार करेगी और तब जवाब देगी। मलायी लोगोंके सम्बन्धमें सवाल करनेपर श्री डंकनने जवाब दिया कि मलायी लोगोंपर १८८५का कानून कभी लागू नहीं किया गया था इसलिए उसे अब लागू करना है या नहीं इस सम्बन्धमें सरकार विचार करेगी यद्यपि वास्तविक दृष्टिसे देखें तो वह उनके ऊपर लागू होना चाहिए।

श्री ईसप मियाँको कुछ अपनी बात कहनी थी। श्री डंकनने कहा कि उन्हें दूसरी बैठकमें जाना है, इसलिए वे इसके लिए कभी फिर मिलें।

दादाभाई जयन्ती

जोहानिसबर्गमें ब्रिटिश भारतीय संघकी समितिकी बैठक पिछले बुधवारको हुई थी। इसमें लगभग तीस व्यक्ति आये थे। बैठकमें सर्वसम्मतिसे निश्चय किया गया कि परममाननीय दादाभाई नौरोजीको उनकी ८२वीं सालगिरहपर तारसे बधाईका सन्देश भेजा जाये। इसके अनुसार ४ सितम्बरको माननीय दादाभाई नौरोजीको बधाईका तार भेज दिया गया है।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन ८–९–१९०६

४३० बधाई दादाभाई नौरोजीको

[जोहानिसबर्ग
सितम्बर ४, १९०६]

जन्म-दिवसपर ब्रिटिश भारतीय संघ आपको हार्दिक बधाई देता है। प्रार्थना है देशकी सेवाके लिए आप दीर्घायु हों।

[अंग्रेजीसे]

इंडिया ५–१०–१९०६

१ यह पत्र सम्भवतः सितम्बर ३को आरम्भ और ८ या उसके बाद समाप्त किया गया हो।
देखिए अगला शीर्षक।

४३१. अपराध

ट्रान्सवाल सरकारके एशियाई अध्यादेशके मसविदेको हम पहले ही सूचित कर चुके हैं।[1] इस अध्यादेशका और उसके बारेमें प्राप्त शिकायतोंकी ज्यादा गहरी जाँचके बाद यह आवश्यक है कि सरकारकी प्रस्तावित कार्रवाईको इससे भी कठोर शीर्षक दिया जाये। यदि इस अध्यादेशके सम्बन्धमें आगे कार्रवाई की जायेगी तो वह मानव-जातिके विरुद्ध अपराध होगा।

ट्रान्सवालमें आज स्त्री-बच्चे सब मिलाकर १२ [illegible] से अधिक भारतीय नहीं हैं। स्त्रियों-बच्चोंके पास कोई ऐसा दस्तावेज नहीं है जिससे उनको देशमें प्रवेश करनेका अधिकार दिया गया हो। क्योंकि अनुमतिपत्र सम्बन्धी नियमोंके अनुसार उन्हें ऐसे दस्तावेजोंकी आवश्यकता नहीं है। परन्तु अध्यादेशमें अनुमतिपत्रकी जो परिभाषा की गई है उसके अनुसार वे ट्रान्सवालके वैध निवासी नहीं हैं। तब क्या वे उपनिवेशसे निर्वासित कर दिये जायेंगे? क्या स्त्रियोंको उनके पतियोंसे और बच्चोंको उनके माता-पिताओंसे अलग कर दिया जायेगा? कदाचित् ऐसा न होगा। फिर भी अध्यादेश प्रशासन विभागको स्त्री-बच्चोंके अपमानका और निर्वासनका भी अधिकार सौंप दिया गया है। यह पुराना अनुभव है कि निरंकुश सत्ता अच्छेसे-अच्छे लोगोंके भी हाथोंमें जानेपर उनके मानव-स्वभावके स्तरको गिराती है, और अक्सर, उनके न चाहते हुए भी उन्हें ऐसे कार्य करनेको बाध्य करती है जिनको वे इससे भी ज्यादा उत्तरदायित्वकी अन्य परिस्थितियोंमें कदापि न करते। ईसाई धर्म-प्रवक्ताने हमारे जमानेसे जिसके धार्मिक सिद्धान्तोंका अनुगमन करनेका दम ट्रान्सवाल सरकार भरती है, जब प्रलोभनकी निन्दा की थी तब उन्होंने एक साधारण सत्य ही प्रकट किया था।

बात यहीं खतम नहीं होती। अध्यादेशका परिणाम यह होगा कि अध्यादेशसे पहले जारी किया गया प्रत्येक अनुमतिपत्र और पंजीकरणका प्रमाणपत्र व्यर्थ हो जायेगा — अर्थात् जिनके पास ये कागज होंगे उनमेंसे प्रत्येकको एशियाई पंजीकरण-अधिकारीके सामने जाना और उसको सन्तुष्ट करना होगा कि वह ही उसका कानूनसम्मत मालिक है। ट्रान्सवालके भारतीय जानते हैं कि इसका *अर्थ क्या है*: उनसे सब प्रकारके अनावश्यक और प्रायः अपमानजनक सवाल पूछे जायेंगे और दोबारा प्रमाणपत्र मिलनेके पूर्व उनको एक कड़ी परीक्षासे गुजरना होगा। और यह सब किसलिए? इसीलिए कि कुछ भारतीय जिनकी नैतिक भावनाएँ सरकारी सख्तियों एवं अनावश्यक सख्तियोंसे कुण्ठित हो चुकी हैं, ट्रान्सवाल उपनिवेशमें अधिकारके बिना प्रविष्ट हो गये हैं।

इस अध्यादेशको जारी करनेका एकमात्र प्रकट कारण उस निराधार अभियोगपर पर्दा डालना है जिसमें वर्तमान कानूनोंका उल्लंघन किया जाता है। अन्यथा हमारी मान्यता है कि वर्तमान कानून चोरी-छिपे प्रवेशके सब मामलोंसे निपटनेके लिए काफी है। शान्ति-रक्षा अध्यादेशमें एक धारा है जिसके अन्तर्गत नियुक्त अधिकारियोंको अनुमतिपत्रोंके निरीक्षणका अधिकार प्राप्त है। यदि कोई अनुमतिपत्र नहीं पेश कर सकता है तो उसको गिरफ्तार और अन्तमें उपनिवेशसे निर्वासित किया जा सकता है। जो लोग उपनिवेशमें न निरन्तर [illegible] उनके लिए बहुत [illegible] रखना बाकी है। हमारी मान्यता है कि यदि इन धाराओंपर विवेकपूर्वक अमल किया

[1] देखिए "[illegible]", पृष्ठ ४१४।

जाये तो शीघ्र पता चल जायेगा कि एशियाई-विरोधी आन्दोलनकारियोंके वक्तव्योंमें सत्य कितना है। यह एक विचित्र बात है कि इस उपलब्ध समर्थ साधनको इस्तेमाल करनेके बजाय सरकारने घुसकर उपनिवेशमें प्रवेश करनेवाले लोगोंका पता लगानेके उद्देश्यसे एक अपमानजनक कानून बनानेकी योजना की है।

ट्रान्सवालमें उन्नीस वर्षकी प्रतिष्ठावाले एक पत्र-लेखकने हमारे गुजराती स्तम्भोंमें एक माकूल सवाल किया है, जिसको हम इस अंकमें अन्यत्र अनुवाद करके दे रहे हैं। वह पूछता है कि ट्रान्सवालके ब्रिटिश शासन तथा रूसी शासनमें क्या अन्तर है? हमारी रायमें अन्तर यह है कि जहाँ रूसमें अधिकारी जब-कभी उनका अनुकूल जँचता है लोगोंको सीधे तौरपर और खुलेआम मौतके घाट उतार देते हैं वहाँ ट्रान्सवालके अधिकारी भारतीयोंसे छुटकारा तो पाना चाहते हैं किन्तु खुले तौरपर और ईमानदारीके साथ वैसा कर नहीं सकते इसलिए उनकी हत्या करने या उन्हें निर्वासित कर देनेके सीधे तरीकेको छोड़ कर वे उनको तिल-तिल करके मारना चाहते हैं। इसके लिए वे ऐसी तरकीबें करते हैं कि विनम्र भारतीय भी तंग आकर यहाँसे अपने आप देश छोड़कर चला जाये या ऐसे साधन ग्रहण करे जिससे वही मतलब हल हो। इस तरह अधिकारी घोषित कर सकते हैं: हम उन लोगोंकी नागरिक हत्याके दोषी नहीं हैं; वे तो अपनी मर्जीसे चले गये हैं।" हम यह विचार सरकारके सामने सचाईके साथ गौर करनेके लिए पेश करते हैं और अभी जबकि समय बाकी है उससे माँग करते हैं कि वह इस नितान्त मिथ्या स्थितिको त्याग दे।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन ८-९-१९०६

४३२ पितामह

दक्षिण आफ्रिकाकी विविध संस्थाओंने माननीय दादाभाई नौरोजीको उनकी बयासीवीं वर्षगाँठ पर बधाईके सन्देश भेजकर अपने कर्तव्यका पालन मात्र किया है। उनका जन्म दिवस सारे भारतमें एक राष्ट्रीय उत्सव बन गया है। आज लाखों भारतीयोंके हृदयोंमें उन महापुरुषका जैसा आदर पूर्ण स्थान है वैसा आधुनिक कालके किसी अन्य व्यक्तिका नहीं। अब उनकी वर्षगाँठके समय भारतमें वर्षोंसे जो होता आ रहा है उसकी आवृत्ति चाहे जितनी साधारण ढंगसे क्यों न हो किये बिना दक्षिण आफ्रिकाका भारतीय जीवन अपूर्ण है। उन वृद्ध देशभक्तको इन आत्मप्रेरित श्रद्धाभिवादनसे बड़ा संतोष होगा और जिस अपरिमित लगनशीलता व बिना जरा भी शिकायतके वे कार्य करते आ रहे हैं वह आगे ही बढ़ेगा। हमें आशा है कि एक बार आरम्भ हो चुका है तो दक्षिण आफ्रिकाके भारतीय हर साल ये बधाइयाँ भेजते रहेंगे और हम यह भी आशा करते हैं कि उन्हें यह दिवस मनानेका सौभाग्य अभी वर्षों तक प्राप्त होता रहेगा। हम इस अंकके साथ एक परिशिष्ट छाप रहे हैं जिसमें माननीय दादाभाई नौरोजीका एक चित्र है।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन ८-९-१९०६

१. देखिए "श्री दादाभाई नौरोजी", पृष्ठ ४२२।

देना हमारा कर्तव्य नहीं है। ऐसा करेंगे तो उसके लोगोंने जो गलती की है वही हम भी करेंगे। भारतीय जनता विनम्र है और हम चाहते हैं कि वह सदा विनम्र रहे। तब हम क्या करें, इसका जवाब भारतीय शिष्टमण्डलने श्री डंकनको दिया है। उसने श्री डंकनसे कहा है कि यदि बहुत विनयपूर्वक समझानेपर भी सरकार अपना कानून अमलमें लायेगी तो भारतीय जनता उसे स्वीकार नहीं करेगी। लोग पंजीयन नहीं करायेंगे, जुर्माना भी नहीं देंगे बल्कि जेल जायेंगे। हम मानते हैं कि यदि ट्रान्सवालमें भारतीय इस निश्चयपर अटल रहें तो उनके बन्धन तुरन्त छूट जायेंगे। जेल उनके लिए महल बन जायेगी। उससे बदनामी होनेके बजाय उनकी आबरू बढ़ेगी। और सरकारको मालूम हो जायेगा कि भारतीय प्रजाका अपमान हमेशा ही निर्भय रहकर नहीं किया जा सकता। अभी दैनेक बात जो हमें करना चाहिए और जिसे हम नहीं करते सो यह है कि हम अपने शरीर-सुखका त्याग नहीं करते। हम अपने मौज-शौकमें डूबे रहकर उसे छोड़ नहीं सकते। दूसरोंके लिए अपने सुखका बलिदान करना हमारा कर्तव्य है। इसीमें सच्ची खूबी है, इसीमें खुदा राजी है और इसीसे हमारा सच्चा कर्तव्य पूरा होता है — यह हम नहीं समझते। शिष्टमण्डलका प्रस्ताव[1] एक उत्तम कार्रवाई है। हम उम्मीद करते हैं कि भारतीय प्रजा इस सुनहरे अवसरको जाने नहीं देगी और दक्षिण आफ्रिकाके हरएक भारतीयको इससे प्रोत्साहन मिलेगा।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, ८-९-१९०६

४३४. ट्रान्सवालमें नकली अनुमतिपत्र

हमारे पास नकली अनुमतिपत्रोंके विषयमें कुछ सामग्री आई है। उसे छापनेकी हमें जरूरत नहीं जान पड़ती। लिखनेवाले भाई सूचित करते हैं कि कोई-कोई भारतीय नकली अनुमतिपत्रोंके आधारपर प्रवेश करनेका प्रयत्न करते हैं। इससे निर्दोष व्यक्तियोंको कष्ट होता है और स्वयं ऐसे प्रवेश करनेवाले सजा पाते हैं। वाक्सरस्टमें कुछ ही समय पहले आठ भारतीयोंको ३ पौंड जुर्माना हुआ और उन्हें वापस जाना पड़ा। हमारे विचारसे यह दण्ड अनुचित है फिर भी हम मानते हैं कि प्रत्येक भारतीयको बहुत सावधानीसे काम लेना चाहिए। हम लोग अनुमतिपत्रोंका जितना अनुचित उपयोग करेंगे कष्ट उतना बढ़ता जायेगा। जो ट्रान्सवालमें प्रवेश नहीं कर पाते हैं हमें उनके लिए खेद है। उनसे हमारी सहानुभूति है। किन्तु जबतक कानून उनके खिलाफ है तबतक धीरज रखना जरूरी है। अपना स्वार्थ साधनेके प्रयत्नमें हम दूसरोंको हानि न पहुँचायें इस बातका ध्यान रखना चाहिए। हमें आशा है कि वाक्सरस्टके मामलेसे प्रत्येक पाठक सबक लेगा।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, ८-९-१९०६

१. देखिए "[illegible]", पृष्ठ ४१०-११।

४३५. हिन्दू-श्मशान

हिन्दुओंके श्मशानकी स्थितिके बारेमें हमने पहले लिखा है[1]। जान पड़ता है कि कुछ लोगोंने उसका अर्थ यह किया है कि उसमें हम व्यवस्थापकोंको उलाहना देना चाहते हैं। हम फिरसे उस लेखको पढ़ गये हैं। किन्तु उसका वैसा अर्थ हम नहीं कर सके। फिर भी हमारे लेखका भूलसे भी यह अर्थ न हो इसलिए हम स्पष्ट करना चाहते हैं कि हमने अपनी आलोचनामें व्यवस्थापकोंको दोषी नहीं माना है। हमारी जानकारीके अनुसार उन्होंने श्मशानको स्वच्छ और व्यवस्थित रखनेका पूरा प्रयत्न किया है।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, ८-९-१९०६

४३६. पत्र: उपनिवेश-सचिवको

ब्रिटिश भारतीय संघ

कचहरी

[जोहानिसबर्ग]
सितम्बर ८, १९०६

महोदय,

मैं परमश्रेष्ठसे परममाननीय भारत-मन्त्री और परमश्रेष्ठ भारतके वाइसरायके नाम संलग्न तारोंको[2] उनकी सेवामें भेजनेकी प्रार्थना करता हूँ।

आप देखेंगे कि भारतके परमश्रेष्ठ वाइसरायके नामके तारका पाठ अन्य दो तारोंसे भिन्न है। मेरे संघने मुझे अधिकार दिया है कि मैं तारोंका खर्च चुका दूँ। आपका पत्र पानेपर मैं सेवामें चेक भेज दूँगा। चूँकि बात अत्यावश्यक है मैं विनम्रतापूर्वक निवेदन करता हूँ कि ये तार आज ही भेज दिये जायें।

आपका, आदि,
अब्दुल गनी
अध्यक्ष

[अंग्रेजीसे]

प्रिटोरिया आर्काइव्ज़: एल० जी० फाइल सं० ९ एशियाटिक्स

१. देखिए "हिन्दुओंके श्मशानकी स्थिति", पृष्ठ ४१।
२. देखिए अगला शीर्षक।
३. भारत तथा उपनिवेश-कार्यालय लेख।

४३७. तार : उपनिवेश-मन्त्रीको[1]

[जोहानिसबर्ग]
सितम्बर ८, १९०६

सेवामें
उपनिवेश-मंत्री

विधान-परिषदमें जिस गतिसे एशियाई अध्यादेश पास किया जा रहा है उससे ब्रिटिश भारतीय भयभीत हैं। अध्यादेश भारतीयोंकी स्थिति काफिरोंसे हीन तथा इस राज्यमें प्राप्त स्थितिसे बहुत हीन बनाता है। ब्रिटिश भारतीय संघ एकदम रवाना होनेवाले शिष्टमण्डलके पहुँचने तक शाही स्वीकृति रोकनेकी प्रार्थना करता है। संघ आश्वासनपूर्ण उत्तरका प्रार्थी है।

ब्रिभास

[अंग्रेजीसे]

प्रिटोरिया आर्काइव्ज़ : एल० जी० फाइल सं० ९२ : एशियाटिक्स

४३८. तार : भारतके वाइसरायको

[जोहानिसबर्ग]
सितम्बर ८, १९०६

सेवामें
परमश्रेष्ठ वाइसराय
भारत

विधान-परिषदमें विचाराधीन एशियाई अध्यादेशसे ब्रिटिश भारतीय भयभीत। तात्कालिक अध्यादेश अप्रतिष्ठाकारक और अपमानजनक। भारतीयोंकी स्थितिको अस्पृश्योंसे भी बदतर बनाता है। ब्रिटिश भारतीय संघ वाइसरायके सक्रिय हस्तक्षेपकी प्रार्थना करता है क्योंकि परमश्रेष्ठ उनके कल्याणके लिए प्रत्यक्ष रूपसे उत्तरदायी हैं।

ब्रिभास

[अंग्रेजीसे]

प्रिटोरिया आर्काइव्ज़ : एल० जी० फाइल सं० [illegible] : एशियाटिक्स

1. यह तार भारत-मन्त्रीको भी भेजा गया था।
2. ब्रिटिश भारतीय संघ। मूल अंग्रेजी शब्द "ब्रिटिंड" है जो "ब्रिटिश इंडियन असोसियेशन" का [illegible] है।

४३९. भाषण "खूनी कानून" पर

एशियाई अधिनियम संशोधनके मसविदेपर विचार करनेके लिए कुछ प्रमुख भारतीयोंकी एक सभा हुई थी। उसमें गांधीजीने मसविदेका पूरा अर्थ समझाया था। उन लोगोंको वैसा ही धक्का पहुँचा जैसा गांधीजीको पहुँचा था। इसी पृष्ठभूमिपर निम्नलिखित भाषण दिया गया था। सभी उपस्थित सज्जनोंने एक सार्वजनिक सभा करनेका प्रस्ताव किया जिसमें इस खूनी कानूनका मुकाबला करनेके तरीकोंपर विचार और उन्हें अमलमें लानेका निश्चय किया जा सके।

यह भाषण स्वयं गांधीजीका ही पुनर्लिखित है। सितम्बर ११ को हुई सार्वजनिक सभामें (देखिए पृष्ठ ४२०-४) दिए गये भाषणके समान इससे प्रकट होता है कि इस अन्यायपूर्ण अधिनियमके विरोधका उनकी दृष्टिमें कितना महत्त्व था।

[जोहानिसबर्ग
सितम्बर ९, १९०६ के पूर्व]

यह मामला बहुत ही गंभीर है। यह विधेयक यदि पास हो गया और हमने इसे मान लिया तो इसका अनुकरण सारे दक्षिण आफ्रिकामें किया जायेगा। मुझे तो इसका उद्देश्य ही यह मालूम होता है कि इस देशसे हमारी हस्ती मिटा दी जाये। यह कानून कोई आखिरी कार्रवाई नहीं है, बल्कि तंग करके हमें दक्षिण आफ्रिकासे खदेड़नेके लिए पहला कदम है। अतः हमपर केवल ट्रान्सवालमें बसनेवाले १०-१५ हजार भारतीयोंकी ही जिम्मेदारी नहीं है, बल्कि दक्षिण आफ्रिकाके भारतीय मात्रकी है। फिर यदि हम इस विधेयकका रहस्य पूरी तरहसे समझ सकें तो सम्पूर्ण भारतकी प्रतिष्ठाकी जिम्मेदारी भी हमपर आ जाती है। क्योंकि इस विधेयकसे हमारा ही अपमान होता है सो बात नहीं, इसमें सारे भारतका अपमान निहित है। अपमानका अर्थ ही यह है कि निर्दोषका मान भंग हो। यह कहा ही नहीं जा सकता कि हम इस कानूनके योग्य हैं। हम निर्दोष हैं, और राष्ट्रके एक भी निर्दोष व्यक्तिका अपमान सारे राष्ट्रके अपमानके समान है। अतः इस कठिन अवसरपर यदि हम उतावली करें, अधीर हों, क्रोध करें तो उतनेसे तो इस हमलेसे नहीं बच सकेंगे। बल्कि यदि शान्तिपूर्वक उपाय ढूँढ़कर समयसे उनका उपयोग करें, एकतासे रहें और अपमानका सामना करनेमें जो दुःख हो उन्हें सहन करें, तो मैं मानता हूँ कि ईश्वर स्वयं हमारी सहायता करेगा।

[गुजरातीसे]

मो० क० गांधी: दक्षिण आफ्रिकाना सत्याग्रहनो इतिहास, अध्याय ११, नवजीवन प्रकाशन मन्दिर, अहमदाबाद।

४४० भाषण : हमीदिया इस्लामिया अंजुमनमें[1]

हमीदिया इस्लामिया अंजुमनकी बैठकमें गांधीजीने अनुमतिपत्रोंकी राजनीतिक स्थितिका विवरण दिया। निम्न ब्यौरा उस बैठककी कार्रवाईके विवरणसे लिया गया है।

जोहानिसबर्ग
सितम्बर, ९, १९०९

गांधीजीने कहा कि उपनिवेश-सचिवको हमने जो तार दिया था उसका जवाब आया है। (यह जवाब पढ़कर सुनाया।) उसी प्रकार आदेशके अनुसार विलायत भी एक तार[2] भेज चुका हूँ। और अब बगैर हिम्मतके भेजे छुटकारा नहीं है क्योंकि असह्य तथा जुल्मी कानून हमपर लाद दिया गया है। यह दुःख सहा नहीं जा सकता। ट्रान्सवालमें हमारी स्थिति पहलेसे ही बहुत खराब है, तिसपर अध्यादेशका मसविदा जो आनेसे यह और भी ज्यादा खराब हो गई है। इसलिए मैं सबको सलाह देता हूँ कि हम अब दुबारा पंजीयन न करवायें।

इसमें यदि हमपर सरकारी कानून-भंगका आरोप लगे तो खुशी-खुशी जेल भोगें। इसमें बुरा कुछ नहीं है। अंग्रेजोंकी एक विशेषता उनकी बहादुरी है। इसलिए यदि हम सामूहिक रूपमें बहादुर बनकर अच्छी तरह मुकाबला करेंगे तो आशा है कि सरकार कुछ भी नहीं कर सकेगी। दागले (हाफकास्ट) और काफिर भी जो हमसे सभ्यता में गिरे हुए हैं सरकारका विरोध करते हैं। उनपर पासका नियम लागू है, फिर भी वे पास नहीं लेते।

अब मैं और अधिक न कहकर सबको सलाह देता हूँ कि आपको दुबारा पंजीयन नहीं करवाना है और यदि सरकार जेल भेजती है तो मैं आपसे पहले जानेको तैयार हूँ। अध्यादेशके मसविदेके अन्तर्गत नया पंजीयन स्वीकार न करनेसे जिन भारतीयोंको सरकार परेशान करेगी उनका काम मैं मुफ्त करूँगा।

अगले मंगलवारको आम सभा होनेवाली है। इसलिए सभी लोग काम-काज बन्द करके उसमें हाजिर रहें।

इतना सब विस्तारपूर्वक समझानेके बाद श्री गांधीने जल्दी ही निधि इकट्ठा करने और निधिकी देख-रेखके लिए समिति नियुक्त करनेकी सूचना दी तथा यह भी कहा कि यह समिति हर महीने हिसाब प्रकाशित करे।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन २२-९-१९०६

१. इंडियन ओपिनियनमें इस रिपोर्टका शीर्षक "अंजुमनकी बैठक" था।

२. यह उपलब्ध नहीं है।

३. देखिए "तार : उपनिवेश-सचिवको" पृष्ठ ४२०।

४४१. सार्वजनिक सभा

ब्रिटिश भारतीयोंकी एक सार्वजनिक सभा एशियाई अधिनियम संशोधन अध्यादेशके मसविदेके विरुद्ध आपत्ति प्रकट करनेके लिए बुलाई गई थी। इसकी अध्यक्षता ब्रिटिश भारतीय संघके अध्यक्ष श्री अब्दुल गनीने की थी। अध्यादेशके विरुद्ध कई लोग बोले और उन्होंने उसके कानून बन जानेकी अवस्थामें उसकी अवज्ञा करनेकी शपथ ली। गांधीजीके भाषणकी रिपोर्ट नीचे दी जाती है।

जोहानिसबर्ग
सितम्बर ११, १९०६

बादमें ब्रिटिश भारतीय संघके अवैतनिक मन्त्री श्री मो० क० गांधी (जोहानिसबर्ग) ने सभामें भाषण दिया। उन्होंने बताया कि कुछ आलोचकोंका खयाल हो सकता है कि हमारे प्रस्तावोंमें जिस तर्क-शृंखलाकी रूपरेखा व्यक्त हुई है, उसमें दोष है क्योंकि हमने अपनी शिकायतें दूर करने की माँग की है और बादमें एकदम यह धमकी दी है कि यदि हमारी प्रार्थना मंजूर नहीं की गई तो हम जेल जायेंगे। किन्तु श्री गांधीने दावा किया कि उक्त तर्क-शृंखलामें कोई वास्तविक दोष नहीं है क्योंकि हम धमकी नहीं दे रहे हैं। यह तो सिर्फ थोड़े-से अमलकी बात है जिसका मूल्य बहुत-से भाषणों और लेखोंके बराबर होता है। उन्होंने कहा कि मैंने इस मामलेपर पहले गम्भीरता और आन्तरिकतासे विचार किया है और तब हमें जो कदम उठाना चाहिए उसके सम्बन्धमें अपनी राय दी है। मैं अनुभव करता हूँ कि यदि हमारी प्रार्थना स्वीकार नहीं की जाती तो जो रास्ता तय किया गया है उसे स्वीकार करनेको हम बद्ध-कर्तव्य हैं। श्री गांधीने दावा किया कि उस दिन जिन विशेषणोंका प्रयोग किया गया था उनमेंसे हरएक उस अवसरपर सार्थक था। यदि मुझको कोई और भी कठोर विशेषण मिला होता तो मैं उसका प्रयोग करता। मैंने दक्षिण आफ्रिकाके समस्त एशियाई-विरोधी कानूनोंका अध्ययन किया है किन्तु मैंने अपने अबतक के पूरे अनुभवमें प्रस्तुत अध्यादेशके समान कोई कानून नहीं देखा। ऑरेंज रिवर कालोनीका अध्यादेश कड़ा है किन्तु वह भी इस कानूनसे जो यहाँ अब पेश किया गया है, ज्यादा अच्छा है। यह तो इतना बुरा है कि कोई भी स्वाभिमानी भारतीय इसके अधीन रह ही नहीं सकता। मैं स्वीकार करता हूँ कि मैंने जो गम्भीर कदम उठाया है उसकी जिम्मेदारी मेरे ऊपर है और मैं पूरी जिम्मेदारी ग्रहण करता हूँ। मैं महसूस करता हूँ कि मैंने भारतीयोंको वफादार ब्रिटिश प्रजाके रूपमें यह कदम उठानेकी सलाह देकर उचित ही किया है। इस सम्बन्धमें हमारी सब कार्रवाइयाँ वफादारीसे पूर्ण हैं। इनपर गैरराजभक्तिकी छाया भी नहीं ठहर सकती। कुछ लोग कह सकते हैं कि हम मूर्ख हैं और यदि अपने देशभाइयोंपर मेरा पूर्ण विश्वास न होता तो मैं खुद कहता कि हमारी कार्रवाई मूर्खतापूर्ण है। किन्तु मैं अपने देशभाइयोंको जानता हूँ। मैं जानता हूँ कि मैं उनपर विश्वास कर सकता हूँ और मैं यह भी जानता हूँ कि जब कोई बहादुरीका कदम उठानेका मौका आयेगा तब उनमें से प्रत्येक व्यक्ति वह कदम उठायेगा।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, २२-९-१९०६

सभामें श्री हाजी हबीबने प्रस्ताव किया कि सबको अध्यादेशका विरोध करनेकी शपथ लेनी चाहिए। गांधीजीने इस सुझावका समर्थन करते हुए एक भाषण दिया जिसका सारांश उन्होंने अपनी गुजराती पुस्तक दक्षिण आफ्रिकाना सत्याग्रहनो इतिहासमें इस प्रकार दिया है:

मैं सभाको यह बात समझा देना चाहता हूँ कि हमने आजतक जो प्रस्ताव स्वीकार किये हैं और जिस तरीकेसे स्वीकार किये हैं उन प्रस्तावों और उन तरीकोंमें तथा इस प्रस्ताव और इसके तरीके में भारी अन्तर है। यह प्रस्ताव अति गम्भीर है। क्योंकि दक्षिण आफ्रिकामें हमारा अस्तित्व तभी रह सकता है जब हम इसपर पूरी तरह अमल करें। प्रस्तावका स्वीकार करनेकी जो रीति हमारे भाईने सुझाई है वह जितनी गम्भीर है, उतनी ही नवीन है। मैं खुद इस रीतिसे प्रस्ताव करवानेके विचारसे यहाँ नहीं आया था। इस यशके अधिकारी अकेले सेठ हाजी हबीब हैं और इसकी जिम्मेदारी भी उन्हींपर है। मैं उन्हें मुबारकबाद देता हूँ। उनका सुझाव मुझे बहुत पसन्द है। पर यदि आप उस सुझावको स्वीकार कर लेते हैं तो उसकी जिम्मेदारीमें आप भी साझी हो जायेंगे। यह जिम्मेदारी क्या है, इसे आपको समझना ही चाहिए, और भारतीय समाजके सलाहकार और सेवकके नाते इसे पूरी तरहसे समझा देना मेरा धर्म है।

हम सब एक ही सिरजनहारको माननेवाले हैं। उसे मुसलमान भले ही खुदाके नामसे पुकारें हिन्दू भले ही ईश्वरके नामसे भजें पर वह है एक ही स्वरूप। उसे साक्षी करके उसको बीचमें रखकर हम कोई प्रतिज्ञा करें या शपथ लें यह कोई छोटी-मोटी बात नहीं है। इस तरहसे शपथ लेनेके बाद भी यदि हम बदलते हैं तो समाजके जगतके और खुदाके प्रति गुनहगार होंगे। मैं तो मानता हूँ कि सावधानीसे शुद्ध बुद्धिसे मनुष्य कोई प्रतिज्ञा करे और बादमें तोड़ दे तो वह अपनी इन्सानियत अथवा मनुष्यता खो बैठता है। और जैसे पारा चढ़ा हुआ ताँबेका सिक्का रुपया नहीं है, यह मालूम होते ही सिर्फ सिक्का ही मूल्यरहित नहीं होता बल्कि उसका मालिक भी दण्डका पात्र हो जाता है, वैसे ही झूठी शपथ लेनेवाला अपनी प्रतिष्ठा ही नहीं खोता वह लोक और परलोक दोनोंमें दण्डका पात्र हो जाता है। सेठ हाजी हबीब हमें ऐसी ही शपथ लेनेकी बात सुझा रहे हैं। इस सभामें एक भी ऐसा व्यक्ति नहीं जो बालक या नासमझ माना जा सके। आप सब प्रौढ़ हैं दुनिया देखे हुए हैं बहुतेरे तो प्रतिनिधि हैं और थोड़ी-बहुत जिम्मेदारी भी भोग चुके हैं। अतः इस सभामें एक भी व्यक्ति ऐसा नहीं है जो यह कहकर छूट जाये कि मैंने बिना समझे प्रतिज्ञा की थी।

मैं जानता हूँ कि प्रतिज्ञाएँ, व्रत आदि किसी गम्भीर प्रसंगपर ही लिये जाते हैं और लिये भी जाने चाहिए। उठते-बैठते प्रतिज्ञा करनेवाला निश्चय ही प्रतिज्ञा भंग कर सकता है। परन्तु यदि हमारे समाज-जीवनमें इस देशमें प्रतिज्ञाके योग्य किसी अवसरकी कल्पना मैं कर सकता हूँ तो वह अवसर यही है। बहुत सावधानीसे और डर-डरकर कदम रखना बुद्धिमानी है। किन्तु डर और सावधानीकी भी सीमा होती है। उस सीमापर हम पहुँच चुके हैं। सरकारने सभ्यताकी मर्यादा तोड़ दी है। उसने हमारे चारों ओर जब दावानल सुलगा रखा है तब भी यदि हम बलिदानकी पुकार न करें और आगे-पीछे देखते रहें तो हम नालायक और नामर्द साबित होंगे। अतः यह शपथ लेनेका अवसर है, इसमें तनिक भी शंका नहीं। पर यह शपथ लेनेकी हममें शक्ति है या नहीं यह तो हरएकको अपने लिए सोचना होगा। ऐसे प्रस्ताव बहुमतसे पास नहीं किये जाते। जितने लोग शपथ लेंगे उतने ही उससे बँधते हैं। ऐसी शपथ दिखावेके लिए नहीं ली जाती। इसका यहाँकी सरकार, बड़ी सरकार या भारत-सरकारपर क्या असर होगा इसका कोई तनिक भी खयाल न करे। हरएकको अपने हृदयपर हाथ रखकर उसे ही टटोलना

(४) इससे ट्रान्सवालके ब्रिटिश भारतीयोंकी स्थिति १८८५ के कानूनके अन्तर्गत जैसी थी उससे खराब हो जाती है और इसलिए बोअरोंके शासनमें जैसी थी उससे भी खराब हो जाती है।

(५) इससे पासों और अंगुलियोंकी एक ऐसी प्रणाली आरम्भ होती है जो दूसरे सब ब्रिटिश प्रदेशोंमें अज्ञात है।

(६) इससे उन जातियोंपर, जिनपर यह लागू होता है अपराधी और सक्रिय हमेशा ठप्पा लग जाता है।

(७) अनभिज्ञ ब्रिटिश भारतीयोंको ट्रान्सवालमें आनेका मार्ग बन्द किया जाता है।

(८) यदि यह खण्डन स्वीकार नहीं किया जाता है तो इस कड़े और अवांछनीय कानूनको लागू करनेसे पहले एक अदालती खुली और निष्पक्ष जाँच करा ली जाये।

(९) यह कानून अन्यथा ब्रिटिश लोगोंके लिए अशोभनीय है और इससे निर्दोष ब्रिटिश प्रजाजनोंकी स्वतन्त्रतामें ऐसा कमी होती है और यह ट्रान्सवालके ब्रिटिश भारतीयोंको देश छोड़कर चले जानेका अनिवार्य निमन्त्रण है।

(१) यह सभा आगे और खास तौरसे परम माननीय उपनिवेश-मन्त्री और भारत-मन्त्रीसे प्रार्थना करती है कि वे इस अध्यादेशके मसविदेपर सम्राट्की मंजूरी स्थगित कर दें और इसके सम्बन्धमें ट्रान्सवालके ब्रिटिश भारतीय समाजकी ओरसे एक शिष्ट मण्डलसे भेंट करें।

प्रस्ताव ३

यह सभा इस प्रस्तावके द्वारा इंग्लैंड जाने और मसविदारूप एशियाई अधिनियम-संशोधन अध्यादेशके सम्बन्धमें ब्रिटिश साम्राज्यके अधिकारियोंके सम्मुख ट्रान्सवालके ब्रिटिश भारतीयोंकी शिकायत पेश करनेके लिए एक प्रतिनिधि-दलकी नियुक्ति करती है और ब्रिटिश भारतीय संघकी समितिको ओरसे उसे सदस्योंकी संख्या बढ़ाने या सदस्यतामें हेरफेर करनेका अधिकार देती है।

प्रस्ताव ४

विधानसभा स्थानीय सरकार और साम्राज्य-अधिकारियों द्वारा मसविदारूप एशियाई अधिनियम-संशोधन अध्यादेशके सम्बन्धमें ट्रान्सवालके ब्रिटिश भारतीय समाजकी विनीत प्रार्थना अस्वीकृत कर दी जानेकी अवस्थामें ब्रिटिश भारतीयोंकी यहाँ समवेत यह सार्वजनिक सभा गम्भीरतापूर्वक और खेदपूर्वक यह निश्चय करती है कि इस मसविदारूप अध्यादेशके अपमानजनक अत्याचारपूर्ण और अ-ब्रिटिश विधानोंके सामने झुकनेकी अपेक्षा ट्रान्सवालका प्रत्येक ब्रिटिश भारतीय अपने आपको जेल जानेके लिए पेश करेगा और तबतक ऐसा करना जारी रखेगा जबतक अत्यन्त दयालु महामहिम सम्राट् कृपा करके राहत नहीं देंगे।

प्रस्ताव ५

यह सभा अध्यक्षको निर्देश देती है कि वे पहले प्रस्तावकी नकल विधान-परिषदके अध्यक्ष और सदस्योंको और सब प्रस्तावोंकी नकलें उपनिवेश-सचिव परमश्रेष्ठ कार्यवाहक लेफ्टिनेंट गवर्नर, और परमश्रेष्ठ उच्चायुक्तको भेज दें तथा परमश्रेष्ठ उच्चायुक्तसे प्रार्थना करें कि वे दूसरे तीसरे और चौथे प्रस्तावोंकी प्रतिलिपि साम्राज्य-अधिकारियोंको समुद्री तारसे प्रेषित कर दें।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन १५-९-१९०६

४४२. जोहानिसबर्गकी चिट्ठी

जोहानिसबर्ग
सितम्बर, ११, १९०९

ट्रान्सवालमें एशियाई कानूनको लेकर आजकल जो आन्दोलन चल रहा है उसके सम्बन्धमें मंगलवारको दोपहर २ बजे एम्पायर नाटकघरमें एक विशाल सभा हुई थी। उसमें लगभग १ हजार भारतीय इकट्ठे हुए थे। श्री अब्दुल गनी अध्यक्ष थे। उपनिवेश-मन्त्रीको आमन्त्रण दिया गया था और उन्होंने थी चैमनेको उसमें उपस्थित रहनेके लिए भेजा था।

श्री अब्दुल गनीने अपने भाषणमें कहा

ट्रान्सवालमें ऐसा समय कभी नहीं आया था। इस समय हमें बहुत मेहनत करनी चाहिए। मैं लम्बा भाषण नहीं देना चाहता। हमारे पास काम बहुत है। लॉर्ड सेल्बोर्नने लड़ाईके समय कहा था कि भारतीयोंके अधिकारोंकी रक्षा लड़ाईका एक उद्देश्य है। ब्रिटिश झंडेके नीचे किसीको तकलीफ नहीं होनी चाहिए। सबके समान हक होने चाहिए।

फिर उन्होंने ही कुछ समय पहले मद्रदियाकी सभामें ऐसा भी कहा था कि दूसरे राष्ट्रोंके कोमोंका दुःख दूर करना भी ब्रिटिश सरकारका काम है। कोमोंको रहनेकी मकान जमीन खरीदनेकी मनाही और अन्य दूसरे अपमान ब्रिटिश राज्यमें कदापि नहीं होने चाहिए। लॉर्ड सेल्बोर्नके ऐसे भाषणों और हमपर जुल्म करनेवाले कानूनोंके बीच किस तरह मेल बैठता है यह पूछनेका हमें हक है।

यह कानून कितना सख्त और भावनाओंको चोट पहुँचानेवाला है इस सम्बन्धमें हम सरकारको लिख चुके हैं। किन्तु आज मैं आपके सामने श्री कैमरोवस्कीकी राय रखना चाहता हूँ। श्री ग्रेगरोवस्की लिखते हैं

> यह कानून उस कानूनकी अपेक्षा बहुत सख्त है। इसमें एक भी धारा भारतीयोंके लिए लाभदायक नहीं है। इस कानूनसे भारतीयोंकी स्थिति काफिरोंसे भी खराब हो जाती है। हर काफिरको पास नहीं रखना पड़ता। लेकिन अब हर भारतीयको पास रखना पड़ेगा। शिक्षित काफिर इस प्रकारके कानूनसे मुक्त हैं। भारतीय चाहे शिक्षित हो चाहे कितना बड़ा व्यक्ति हो, फिर भी उसे पास रखना ही पड़ेगा। ऐसा मालूम होता है कि यह पास कैदियों वर्गरहके पास से मिलता-जुलता होगा। १८८५ के कानून [३] में जितने रास्ते खुले रखे गये थे वे सब इस कानूनके द्वारा बन्द कर दिये गये हैं। काफिर जमीनके मालिक हो सकते हैं, लेकिन भारतीय नहीं हो सकते। ऐसा कानून उदारदलीय सरकार स्वीकार करेगी यह सम्भव नहीं जान पड़ता।

हम लोग जो कुछ कहते हैं वह श्री ग्रेगरोवस्कीके कथनसे ज्यादा सख्त नहीं है।

जब ऐसी परिस्थिति आ गई है और जब इस परिस्थितिमें इंग्लैंडकी सरकार हमारी पुकार नहीं सुनती तो हमें क्या करना चाहिए यह सोचनेकी बात है। आज आपके सामने कुछ प्रस्ताव पेश किये जायेंगे। आप विमायन तक सिफ्टमण्डल भेजें इस सम्बन्धमें हम एक प्रस्ताव स्वीकार

१. एशियाई कानून संशोधन अध्यादेश अधिनियम।

न करे कि एक या अनेक व्यक्ति अपनी प्रतिज्ञा तोड़ दें तो दूसरे सहज ही बन्धन-मुक्त हो सकते हैं। हरएक अपनी-अपनी जिम्मेदारीको पूरी तरहसे समझकर स्वतन्त्ररूपसे प्रतिज्ञा करे, और यह समझकर करे कि दूसरे कुछ भी करें, मैं खुद तो मरते दम तक उसका पालन करूँगा ही।

[गुजरातीसे]

मो० क० गांधी: दक्षिण आफ्रिकाना सत्याग्रहनो इतिहास, अध्याय १२, नवजीवन प्रकाशन मन्दिर, अहमदाबाद

सभामें स्वीकृत प्रस्ताव[1]

ब्रिटिश भारतीयोंकी यहाँ समवेत यह सार्वजनिक सभा सम्मानपूर्वक ट्रान्सवालकी विधान परिषदके माननीय अध्यक्ष और सदस्योंसे अनुरोध करती है कि वे मसविदारूप एशियाई अध्यादेशको जो १८८५ के कानून ३ में संशोधन करनेके लिए रखा गया है और अब सम्मान्य सदनके सम्मुख प्रस्तुत है, इन बातोंको देखते हुए मंजूर न करें

प्रस्ताव १

(१) यद्यपि ट्रान्सवालके भारतीय समाजका सम्बन्ध है, यह अत्यन्त विवादास्पद कानून है।

(२) इससे ट्रान्सवालके भारतीय समाजका दर्जा गिरता है और उसका अपमान होता है जिसका पात्र वह अपने गत इतिहासको देखते हुए कतई नहीं है।

(३) वर्तमान व्यवस्था एशियाइयोंकी कथित भरमारको रोकनेके लिए काफी है।

(४) ब्रिटिश भारतीय समाजने कथित भरमारके सम्बन्धमें दिये गये वक्तव्योंका खण्डन किया है।

(५) यदि सम्मान्य सदनको इस खण्डनसे सन्तोष नहीं है तो यह सभा माँग करती है कि कथित भरमारके प्रश्नकी खुली जाँच एक अदालती और ब्रिटिश जाँच-समिति करा ली जाये।

ब्रिटिश भारतीयोंकी यहाँ समवेत यह सार्वजनिक सभा सम्मानपूर्वक उस मसविदारूप एशियाई अधिनियम-संशोधन अध्यादेशके विरुद्ध आपत्ति प्रकट करती है जिसपर अभी ट्रान्सवालकी विधान परिषदमें विचार किया जा रहा है, और स्थानीय सरकारसे तथा ब्रिटिश अधिकारियोंसे नम्रतापूर्वक प्रार्थना करती है कि वे मसविदारूप अध्यादेशको निम्न कारणोंसे वापस ले लें

प्रस्ताव २

(१) यह महामहिमके प्रतिनिधियोंकी भूतकालीन घोषणाओंके स्पष्ट विरुद्ध है।

(२) इसमें ब्रिटिश एशियाइयों और विदेशी एशियाइयोंमें कोई भेद स्वीकार नहीं किया गया है।

(३) इससे भारतीयोंका दर्जा दक्षिण आफ्रिकाकी आदिम जातियों और रंगदार लोगोंसे भी नीचा हो जाता है।

[1] इंडियन ओपिनियनके अनुसार प्रस्ताव २, ३ और ४ क्रमशः गफ्फार तथा ... और ... ने रखे थे। ... से यह प्रार्थना भी की गई थी कि वे उक्त प्रस्ताव सरकारके पास भेज दें। (इंडिया पृ० ४१४ और समाचार ११ ८ फरवरी १९०७)।

(४) इससे ट्रान्सवालके ब्रिटिश भारतीयोंकी स्थिति १८८५ के कानूनके अन्तर्गत जैसी थी उससे खराब हो जाती है और इसलिए बोअरोंके शासनमें जैसी थी उससे भी खराब हो जाती है।

(५) इससे पासों और अगुलियोंकी एक ऐसी प्रणाली आरम्भ होती है जो दूसरे सब ब्रिटिश प्रदेशोंमें अज्ञात है।

(६) इससे उन व्यक्तियोंपर, जिनपर यह लागू होता है, अपराधी और संदिग्ध होनेका ठप्पा लग जाता है।

(७) अनभिज्ञ ब्रिटिश भारतीयोंकी ट्रान्सवालमें मरमारका खण्डन किया जाता है।

(८) यदि यह खण्डन स्वीकार नहीं किया जाता है तो इस कड़े और अवांछनीय कानूनको लादनेसे पहले एक अदालती खुली और निष्पक्षायित जाँच करा ली जाये।

(९) यह कानून अन्यथा ब्रिटिश लोगोंके लिए अशोभनीय है और इससे निर्दोष ब्रिटिश प्रजाजनोंकी स्वतन्त्रतामें बेजा कमी होती है और यह ट्रान्सवालके ब्रिटिश भारतीयोंको देश छोड़कर चले जानेका अनिवार्य निमन्त्रण है।

(१०) यह सभा आगे और खास तौरसे परम माननीय उपनिवेश-मन्त्री और भारत-मन्त्रीसे प्रार्थना करती है कि वे इस अध्यादेशके मसविदेपर सम्राट्की मंजूरी स्थगित कर दें और इसके सम्बन्धमें ट्रान्सवालके ब्रिटिश भारतीय समाजकी ओरसे एक शिष्ट मण्डलसे भेंट करें।

प्रस्ताव ३

यह सभा इस प्रस्तावके द्वारा इंग्लैंड जाने और मसविदारूप एशियाई अधिनियम-संशोधन अध्यादेशके सम्बन्धमें ब्रिटिश साम्राज्यके अधिकारियोंके सम्मुख ट्रान्सवालके ब्रिटिश भारतीयोंकी शिकायत पेश करनेके लिए एक प्रतिनिधि-दलकी नियुक्ति करती है और ब्रिटिश भारतीय संघकी समितिको ओरसे उसे सदस्योंकी संख्या बढ़ाने या सदस्यतामें हेरफेर करनेका अधिकार देती है।

प्रस्ताव ४

विधानसभा स्थानीय सरकार और साम्राज्य-अधिकारियों द्वारा मसविदारूप एशियाई अधिनियम-संशोधन अध्यादेशके सम्बन्धमें ट्रान्सवालके ब्रिटिश भारतीय समाजकी विनीत प्रार्थना अस्वीकृत कर दी जानेकी अवस्थामें ब्रिटिश भारतीयोंकी यहाँ समवेत यह सार्वजनिक सभा गम्भीरतापूर्वक और खेदपूर्वक यह निश्चय करती है कि इस मसविदारूप अध्यादेशके अपमान-जनक अत्याचारपूर्ण और अ-ब्रिटिश विधानोंके सामने झुकनेकी अपेक्षा ट्रान्सवालका प्रत्येक ब्रिटिश भारतीय अपने आपको जेल जानेके लिए पेश करेगा और तबतक ऐसा करना जारी रखेगा जबतक अत्यन्त दयालु महामहिम सम्राट् कृपा करके राहत नहीं देंगे।

प्रस्ताव ५

यह सभा अध्यक्षको निर्देश देती है कि वे पहले प्रस्तावकी नकल विधान-परिषदके अध्यक्ष और सदस्योंको और सब प्रस्तावोंकी नकलें उपनिवेश-सचिव परमश्रेष्ठ कार्यवाहक लेफ्टिनेंट गवर्नर, और परमश्रेष्ठ उच्चायुक्तको भेज दें तथा परमश्रेष्ठ उच्चायुक्तसे प्रार्थना करें कि वे दूसरे तीसरे और चौथे प्रस्तावोंकी सूचना साम्राज्य-अधिकारियोंको समुद्री तारसे प्रेषित कर दें।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन १५–९–१९०६

४४२. जोहानिसबर्गकी चिट्ठी

जोहानिसबर्ग
सितम्बर, ११, १९०६

ट्रान्सवालमें एशियाई कानूनको[1] लेकर आजकल जो आन्दोलन चल रहा है उसके सम्बन्धमें मंगलवारको दोपहर २ बजे एम्पायर नाटकघरमें एक विशाल सभा हुई थी। उसमें लगभग ३ हजार भारतीय इकट्ठे हुए थे। श्री अब्दुल गनी अध्यक्ष थे। उपनिवेश-मन्त्रीको आमन्त्रण दिया गया था और उन्होंने श्री चैमनेको उसमें उपस्थित रहनेके लिए भेजा था।

श्री अब्दुल गनीने अपने भाषणमें कहा

ट्रान्सवालमें ऐसा समय कभी नहीं आया था। इस समय हमें बहुत मेहनत करनी चाहिए। मैं लम्बा भाषण नहीं देना चाहता। हमारे पास काम बहुत है। लॉर्ड सेल्बोर्नने लड़ाईके समय कहा था कि भारतीयोंके अधिकारोंकी रक्षा लड़ाईका एक उद्देश्य है। ब्रिटिश झंडेके नीचे किसीको तकलीफ नहीं होनी चाहिए। सबके समान हक होने चाहिए।

फिर उन्होंने ही कुछ समय पहले यहूदियोंकी सभामें ऐसा भी कहा था कि दूसरे राष्ट्रोंके लोगोंका दुःख दूर करना भी ब्रिटिश सरकारका काम है। लोगोंको रहनेकी अड़चन जमीन खरीदनेकी मनाही और अन्य दूसरे अपमान ब्रिटिश राज्यमें कदापि नहीं होने चाहिए। लॉर्ड सेल्बोर्नके ऐसे भाषणों और इसपर जुल्म करनेवाले कानूनोंके बीच किस तरह मेल बैठता है यह पूछनेका हमें हक है।

यह कानून कितना सख्त और भावनाओंको चोट पहुँचानेवाला है, इस सम्बन्धमें हम सरकारको लिख चुके हैं। किन्तु आज मैं आपके सामने श्री ग्रेगरोवस्कीकी राय रखना चाहता हूँ। श्री ग्रेगरोवस्की लिखते हैं

> यह कानून अब कानूनकी अपेक्षा बहुत सख्त है। इसमें एक भी धारा भारतीयोंके लिए लाभदायक नहीं है। इस कानूनसे भारतीयोंकी स्थिति काफिरोंसे भी खराब हो जाती है। हर काफिरको पास नहीं रखना पड़ता। लेकिन अब हर भारतीयको पास रखना पड़ेगा। शिक्षित काफिर इस प्रकारके कानूनसे मुक्त हैं। भारतीय चाहे शिक्षित हो चाहे जितना बड़ा व्यक्ति हो, फिर भी उसे पास रखना ही पड़ेगा। ऐसा मालूम होता है कि यह पास कैदियों वगैरहके पास से मिलता-जुलता होगा। १८८५ के कानून[३] में जितने रास्ते खुले रखे गये थे वे सब इस कानूनके द्वारा बन्द कर दिये गये हैं। काफिर जमीनके मालिक हो सकते हैं, लेकिन भारतीय नहीं हो सकते। ऐसा कानून उदारदलीय सरकार स्वीकार करेगी यह सम्भव नहीं जान पड़ता।

हम लोग जो कुछ कहते हैं वह श्री ग्रेगरोवस्कीके कथनसे ज्यादा सख्त नहीं है।

अब ऐसी परिस्थिति आ गई है और अब इन परिस्थितियोंमें ईश्वरकी सरकार हमारी पुकार नहीं सुनती तो हमें क्या करना चाहिए, यह सोचनेकी बात है। आज आपके सामने कुछ प्रस्ताव पेश किये जायेंगे। मात्र विलायत एक शिष्टमण्डल भेजें इस सम्बन्धमें हम एक प्रस्ताव स्वीकार

१. एशियाई कानून संशोधन अध्यादेशका मसविदा।

करनेवाले हैं। इसलिए उसपर मुझे ज्यादा कुछ नहीं कहना है। आजका मुख्य प्रस्ताव तो एक ही है कि अपनी अर्जीमें यदि हम सफल न हों तो हमें क्या करना चाहिए? आज तक अपनी फरियादकी सुनवाई न होनेसे हम कष्ट भोगते रहे हैं। लेकिन इस कानूनके कष्ट असह्य हैं। इसलिए हम यह प्रस्ताव करना चाहते हैं कि यदि इंग्लैंडकी सरकार भी हमपर जुल्मकी वर्षा करना चाहती हो तो जुल्म भोगनेकी अपेक्षा जेलमें जाना ज्यादा अच्छा है। हमेशा जब बहुत दुःख पड़ता है तभी मनुष्यको सच्चा इलाज मिलता है। हमारे लिए वह समय आ गया है। और हम सबका यही कर्तव्य है कि हम आज इस स्पष्ट निर्णयपर आ जायें कि हम इस कानूनको स्वीकार नहीं करेंगे बल्कि जेल जायेंगे। जेल जानेमें लज्जित होने योग्य कोई बात नहीं। और मैं खुदासे प्रार्थना करता हूँ कि वह हमें इतनी ताकत और बुद्धि दे जिससे हमारा प्रस्ताव बरकरार रहे।

यह समय हमारे लिए कथनीका नहीं करनीका है। इस समय हमें साहस करना होगा और उस साहसमें नम्रता बरतनी होगी। किसी भी प्रकारके कड़वे शब्द न कहे जायें न सुने ही जायें।

अध्यक्ष महोदयके भाषणके बाद नीचे लिखे प्रस्ताव स्वीकार किये गये

प्रस्ताव १

यह सार्वजनिक सभा नम्रतापूर्वक विधान-परिषदसे प्रार्थना करती है कि एशियाई कानून पास न किया जाये क्योंकि

(१) भारतीय कौमकी रायमें यह कानून बहुत ही आपत्तिजनक है।

([illegible]) यह कानून अकारण भारतीय कौमको गिरानेवाला व उसका अपमान करनेवाला है।

([illegible]) यदि भारतीय बिना परवानेके ट्रान्सवालमें प्रवेश करते हों तो उन्हें रोकनेके लिए मौजूदा कानूनमें बहुत व्यवस्था है।

(४) भारतीयोंके बड़े पैमानेपर बिना परवानेके ट्रान्सवालमें प्रवेश करते हैं इस आरोपको भारतीय कौम स्वीकार नहीं करती।

([illegible]) यदि विधान-परिषदको ऊपरके तथ्य सच न मालूम होते हों तो भारतीय कौम प्रार्थना करती है कि इसकी न्यायपूर्ण और ब्रिटिश पद्धतिके अनुसार जाँच की जाय।

प्रस्ताव २

यह सार्वजनिक सभा नम्रतापूर्वक एशियाई कानूनके खिलाफ आवाज उठाती है और स्थानीय सरकार एवं बड़ी सरकारसे प्रार्थना करती है कि वे इस कानूनको नामंजूर करें क्योंकि

(१) यह कानून महामहिम सम्राट द्वारा दिये गये पिछले वचनोंके खिलाफ है।

(२) यह कानून ब्रिटिश भारतीय और अन्य एशियाइयोंके बीच जरा भी भेद नहीं करता।

(३) इस कानूनसे कुलियों और अन्य वर्गके भारतीयोंकी अपेक्षा भारतीयोंकी स्थिति ज्यादा खराब हो जाती है।

१. [illegible]

(४) इस सरकारके समय भारतीयोंकी जो स्थिति थी वह इस कानूनसे और भी खराब हो जाती है।
(५) किसी भी दूसरे ब्रिटिश उपनिवेशमें इस पास-सम्बन्धी कानूनके समान कानून नहीं है।
(६) इस कानूनसे भारतीय समाजके सभी लोग ऐसे मान लिये जाते हैं मानो वे जरायमपेशा हों।
(७) ट्रान्सवालमें बगैर परवानेके भारतीय लोग आते हैं इस बातसे भारतीय कौम इनकार करती है।
(८) यदि यह इनकार स्वीकार न हो तो भारतीय समाज माँग करता है कि ऐसी आक्षायन्ता जाँच कराई जाये जो ब्रिटिशोंको शोभा दे।
(९) यह कानून दूसरे रूपमें भी गैरवाजिब है। यह भारतीय कौमकी स्वतन्त्रताका अपहरण करता है मानो इसका अर्थ यह हुआ कि भारतीय कौमको जुर्म करके निकाल दिया जाये।
(१) यह सभा उपनिवेश-मन्त्री और भारत-मन्त्रीसे विनती करती है कि जबतक एक भारतीय शिष्टमण्डल उनसे मिल न ले तबतक इस अध्यादेशको बड़ी सरकारकी स्वीकृति न दी जाये।

प्रस्ताव ३

यह सभा ब्रिटिश भारतीय संघको अधिकार देती है कि वह एक शिष्टमण्डल विलायत भेजे जो वहाँ जाकर इंग्लैंडकी सरकारके समक्ष भारतीयोंकी फरियाद पेश करे।

प्रस्ताव ४

यदि विधान-परिषद स्थानीय सरकार और इंग्लैंडकी सरकार भारतीयोंकी प्रार्थनाकी सुन वाई न करें, तो इस सभाका प्रत्येक व्यक्ति अन्तःकरणसे तथा सच्ची निष्ठासे यह प्रतिज्ञा करता है कि इस जुल्मी कानूनको स्वीकार करने और उसकी उन धाराओंके अनुसार जा अंग्रेजोंको नामा नहीं देनी चलनेंगे बजाय वह जेल जाना पसन्द करता है और जबतक सम्राट छुटकारा न दें तबतक वह जेलमें ही रहेगा।

प्रस्ताव ५

यह सभा अध्यक्षको पहला प्रस्ताव विधान-परिषदको और शेष प्रस्ताव उच्चायुक्त महोदयको तथा उनकी मारफत तारसे विलायत भजनेका अधिकार देती है।

मंगलवारकी शाम तक कानूनकी स्थिति

उपर्युक्त सभामें जो और भी भाषण हुए उनकी रिपोर्ट व नाम वगैरह मैं इस सप्ताहके अंकके लिए नहीं दे सकता। सिर्फ इतना ही बतलाना है कि पीटर्सबर्ग क्लार्क्सडॉर्प, क्रूगर्सडॉर्प प्रिटोरिया वगैरा सभी मुख्य-मुख्य भागोंसे प्रतिनिधि आये थे। कानूनके बारेमें सभी बड़ा डर यही था कि उसके लिए इंग्लैंडकी सरकारकी स्वीकृति आ गई है। इस सम्बन्धमें सर रिचर्ड सॉलोमनने पूरा आश्वासन दिया है कि जबतक यह कानून विधायन नहीं आता और वहाँ मंजूर नहीं होता तबतक अमलमें नहीं आयेगा। इसलिए शिष्टमण्डलका वहाँ जाना और प्रार्थनापत्र आदि पेश करनेके लिए पूरा मौका है। इस कानूनमें दूसरा परिवर्तन यह हुआ है कि जो १६ वर्षसे कम उम्रवाले

मजदूरोंपर लागू नहीं होगा, मतलब यह कि ऐसे लड़कोंपर मुकदमा नहीं चलाया जा सकता। तीसरी बात यह जोड़ी गई है कि यदि कोई व्यक्ति दूसरेके लड़केको अपना बना कर लायेगा तो उसपर मुकदमा चलाया जा सकेगा और न सिर्फ उसको सजा होगी बल्कि उसका परवाना व पंजीयन भी रद किया जायेगा तथा उसे देशसे निकाल दिया जायेगा।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन १५-९-१९ ९

४४३ पत्र : विधान-परिषदके अध्यक्षको

[जोहानिसबर्ग]
सितम्बर ११, १९ ९

सेवामें
माननीय अध्यक्ष
[illegible] परिषद

[illegible] जोहानिसबर्गमें ब्रिटिश भारतीयोंकी सार्वजनिक सभा हुई। मैं उसके निर्देशपर [illegible] महत्त्वपूर्ण विचारार्थ सहज प्रस्तावकी प्रतिलिपि संलग्न कर रहा हूँ। यह सर्वसम्मतिसे पास किया गया था।

माननीय सदनको पढ़कर सुना दिया जावे।

आपका आज्ञाकारी सेवक
अब्दुल गनी
अध्यक्ष
ब्रिटिश भारतीय सार्वजनिक सभा

[अंग्रेजीसे]

प्रिटोरिया आर्काइव्ज [illegible]

१ [illegible]

४४४ पत्र ट्रान्सवालके लेफ्टिनेंट गवर्नरको

ब्रिटिश भारतीय संघ

पो० ऑ० बॉक्स ६५२२
जोहानिसबर्ग
सितम्बर १२ १९ ६

सेवामें
परमश्रेष्ठ लेफ्टिनेंट गवर्नर
ट्रान्सवाल और जोहानिसबर्ग

महोदय

जोहानिसबर्गके एम्पायर थियेटरमें ब्रिटिश भारतीयोंकी सार्वजनिक सभामें पारित एक प्रस्तावके अनुसार मैं परमश्रेष्ठके सूचनार्थ प्रस्ताव २ ३ ४ और ५[1] संलग्न कर रहा हूँ।

आपका आज्ञाकारी सेवक
अब्दुल गनी
अध्यक्ष
ब्रिटिश भारतीय संघ

[अंग्रेजीसे]

प्रिटोरिया आर्काइव्ज एल जी फाइल्स १९ २-१ ६

४४५ जवाब 'रैंड डेली मेल'को

[जोहानिसबर्ग
सितम्बर १२ १९ ६]

[सम्पादक]
'रैंड डेली मेल'

महोदय

ब्रिटिश भारतीयोंकी जो सार्वजनिक सभा[1] कल हुई थी उसके सम्बन्धमें आपने अपने अग्रलेखमें मुझपर प्रस्तावका उलटा अर्थ लगानेका दोषारोपण किया है। परन्तु मेरा खयाल तो ऐसा है कि यह दोष मेरा नहीं आपका है। जो बात मैंने तथा अन्य प्रत्येक वक्ताने कही थी वह बिलकुल साफ थी।

आपके पत्रमें मेरे कथनका जो विवरण प्रकाशित हुआ है वह इस प्रकार है

> उन्होंने पूरे ३५ करोड़ लोगोंको इस देशमें आनेको नहीं कहा था बल्कि उन्होंने तो यह कहा था कि जो लोग इस देशमें प्रविष्ट हो चुके हैं उन्हें ठीक वही संरक्षण और वे सब अधिकार प्राप्त होने चाहिए जो यहाँ बसे यूरोपीयोंको सुलभ हैं।

उस सभामें यह बात बहुत ही उत्साहके साथ कही गई थी कि यहाँ बसे हुए ब्रिटिश भारतीयोंके साथ समुचित व्यवहार किया जाये। परन्तु महोदय क्या मैं यह समझता हूँ कि आपने ब्रिटिश तथा अन्य सभी एशियाइयोंको शामिल करके तथा आव्रजनके प्रश्नको उठाकर असम्

१ देखिए "सार्वजनिक सभा" पृष्ठ ४३०-४।

बातको इरादतन विकृत रूप दे दिया है। ट्रान्सवालमें जो मुट्ठीभर ब्रिटिश भारतीय हैं उनके लिए जब यह जीवन और मरणका प्रश्न बन बैठा है, तब हम इस प्रकारके किसी भी मामलेको कैसे उठा सकते हैं? अपने मुद्देपर जोर डालनेके अभिप्रायसे मैंने यह बात अवश्य कही थी कि अगर विदेशी लोग जो सदा ही वांछित प्रकारके लोग नहीं होते बेरोक-टोक और अनुमतिपत्र प्राप्त किये बगैर ही ट्रान्सवालमें आ सकते हैं और सभी प्रकारसे अधिकारोंका उपभोग कर सकते हैं तो यह बात विवेकसम्मत है कि भारतीयोंको जो ब्रिटिश प्रजाजन माने जाते हैं, प्रवेशका प्रथमाधिकार प्राप्त हो।

फिर, आप तफसीलमें जानेके प्रति सन्देहपूर्ण अरुचिका जिक्र करते हैं। इसका कोई अवसर न था क्योंकि वे बातें ब्रिटिश भारतीयोंके द्वारा की गई आपत्तियोंमें आ गई हैं और उसे आप प्रकाशित कर चुके हैं। *अध्यादेशके अर्थों और उपांगोंको परिवर्तित करनेका चाहे जितना प्रयत्न क्यों न* किया जाये वह मान्य नहीं हो सकता क्योंकि उसका मूल सिद्धान्त ही — अर्थात् शिनाख्तके ऐसे दस्तूरके अन्तर्गत जो केवल अपराधियोंपर ही लागू किया जाता है बिना अपवादके प्रत्येक भारतीयको हुक्म दिया जाना कि वह अपना पास अपने साथ ही रखे — दूषित है। हम विनम्र और सहनशील तो हैं ही परन्तु यदि हम इस प्रस्तावित पतनकारी कानूनको बिना किसी प्रभावी आपत्तिके स्वीकार कर लेते हैं तो हम भारतकी अयोग्य सन्तान कहलायेंगे।

[आपका आदि
मो० क० गांधी]

[अंग्रेजीसे]
इंडियन ओपिनियन, २२-९-१९०६

४४६. पत्र 'स्टार'को

[जोहानिसबर्ग
सितम्बर १४, १९०६ के पूर्व]

सेवामें
सम्पादक
स्टार
महोदय

एशियाई अध्यादेशके मसविदेके बारेमें किये गये ब्रिटिश भारतीय विरोधपर अपने अग्रलेखमें आपने ब्रिटिश भारतीय संघको सलाह देनेकी कृपा की है। आपकी रायमें ब्रिटिश भारतीय संघका नेतृत्व बहुत बुद्धिमत्तापूर्ण नहीं है।

एक पुरानी कहावत है कि हमारे लिए क्या अच्छा है यह सदा हमारे पड़ोसी हमसे ज्यादा जानते हैं। मुझे सन्देह नहीं कि इस सिद्धान्तके अनुसार आपकी यह राय सही है कि ब्रिटिश भारतीय संघका नेतृत्व ठीक नहीं है। फिर भी इस समय संघके नेताओंके बारेमें आपकी जो राय है उसमें मुझे इतनी दिलचस्पी नहीं जितनी कि ब्रिटिश भारतीय विरोधपर आपके रुखमें है।

आपका विचार है कि नये अध्यादेशके विरुद्ध समाजकी शिकायतकी कोई गुंजाइश नहीं है क्योंकि उसमें सिर्फ नये पंजीयनका सवाल है और इसमें महामहिमकी प्रजापर किसी वर्गपर नई निर्योग्यताएँ नहीं लगतीं। मैं इन दोनों बातोंसे सहमत नहीं हूँ। जिस प्रकार भारतीय आक्रमणको

रोकनेके लिए शान्ति रक्षा अध्यादेशके प्रशासनको विकृत किया गया है उसी प्रकार इस नये अध्यादेशके द्वारा १८८५ के कानून ३ के क्षेत्रको भी विकृत कर दिया गया है। यह एक ऐसी माँगको पूरा करनेके लिए है जो इस राज्यमें कभी नहीं की गई थी। वह कानून व्यापारियोंके लिए बनाया गया था। उसकी नीति उन प्रवासियोंको वर्जित करना था जो व्यापार करना चाहते थे न कि आव्रजनको परिमित करना। इसी कारण पहले उसके द्वारा २५ पौंडका पंजीयन कर लगाया गया था जो बादमें ब्रिटिश सरकारके हस्तक्षेपके कारण घटाकर ३ पौंड कर दिया गया।

वर्तमान अध्यादेशसे १८८५ के कानून ३ का सिर्फ संशोधन करनेकी अपेक्षा की जाती है। यह कानूनका क्षेत्र वही रखनेके लिए है बदलनेके लिए नहीं। परन्तु इस अध्यादेशमें शिनाख्तकी ऐसी पद्धतिकी व्यवस्था है, जो अमलमें उन लोगोंके लिए अत्यन्त कष्टकारक होगी जिन्हें यह माननी पड़ेगी। पंजीयनका प्रयोजन भारतीय आबादीकी गणना करना नहीं बल्कि निम्नलिखित है

उपनिवेशमें रहनेवाले प्रत्येक भारतीयको अपने पास एक पंजीयन प्रमाणपत्र रखना होगा जिसमें शिनाख्तके अपमानजनक विवरण होंगे। उसे अपने नाबालिग बच्चेका स्वामी पंजीयन कराना होगा और शिनाख्तके लिए ऐसे विवरण देने होंगे जो लेफ्टिनेंट गवर्नर द्वारा बनाये जानेवाले अधिनियमके अनुसार आवश्यक हों। शिनाख्तकी इन्हीं शर्तोंके साथ आठ वर्षसे अधिक आयुवाले बच्चोंका पंजीयन कराना होगा।

यह सब बिलकुल नया है और १८८५ के कानून ३ में इसका कभी इरादा तक नहीं रहा। फिर भी आपको यह कहते हुए कोई संकोच नहीं कि अध्यादेश अधिवासी भारतीय समाजपर कोई निर्योग्यता नहीं लादता।

मैं आपको विश्वास दिलाता हूँ कि सत्याग्रहकी नीति कोरी धमकी नहीं है। यह मेरे देशवासियोंका असहनीय परिस्थितियोंको स्वीकार न करनेका दृढ़ संकल्प है। और अगर इससे जैसा आपका संकेत है उनके सामूहिक रूपमें निर्वासनका महँगा झगड़ा उठ खड़ा होगा तो यह एक बड़ी राहत होगी। यह ब्रिटिश नीतिका एक नया अतिक्रमण होगा अलबत्ता साम्राज्यवादियोंके नई विचारधारावाले दलके लिए — जिसके आप निस्सन्देह अग्रणी हैं — इससे कुछ अन्तर नहीं पड़ेगा। मेरे देशवासी बहुत समय तक पीछे रह चुके हैं। इसमें उनकी विचारशीलता नहीं थी जैसा कि आपका कहना है बल्कि विचारहीनता थी। अपने अलगावका छोड़नेसे उनको कुछ भी लाभ न हो तो ज्यादा हानि भी न होगी। अपने खयालसे वे पहले ही अपना लगभग सब-कुछ खो चुके हैं।

अगर दक्षिण आफ्रिकावासी आपके उकसानेके फलस्वरूप भारतीय प्रश्नमें कुछ दिलचस्पी लेने लगें तो मैं दावेसे कहता हूँ कि आपके उपर्युक्त सुझावके बावजूद उनकी आँखें खुल जायेंगी। उन्हें यह भी समझमें आ जायेगा कि उन्होंने ब्रिटिश भारतीयोंको कितना गलत समझा है और इनके प्रति कितने भारी अपराध किये हैं।

आपका आदि,
अब्दुल गनी
अध्यक्ष
ब्रिटिश भारतीय संघ

[अंग्रेजीसे]

स्टार, २२-७-१९०७

१. यह स्मट्सकी उस सार्वजनिक टिप्पणीके उत्तरमें है कि "निष्क्रिय-प्रतिरोधकी नीतिका मूलाधार या तो धमकी है या उन नेताओंके स्वार्थ जिनकी अपनी जगह आधारित है।"

प्रशंसनीय थे और वे स्त्री-शिक्षाके दृढ़ पक्षपाती थे। उन्होंने न केवल मुसलमानोंमें अपने सावयव स्त्री शिक्षाका प्रचार किया बल्कि स्वयं अपने कुटुम्बमें भी उसका उदाहरण पेश किया। उनकी अपनी लड़कियोंने विश्वविद्यालयकी प्रथम कोटिकी शिक्षा प्राप्त की है।

हम स्वर्गीय श्री तैयबजीके कुटुम्बके प्रति अपनी सादर समवेदना प्रकट करते हैं।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन २२-९-१९०६

४५३ ट्रान्सवालके भारतीयों द्वारा विरोध

पुराने एम्पायर नाटक घरमें जो विशाल भारतीय सभा[1] हुई थी उसका परिणाम प्रकट होने लगा है। रैंड डेली मेल ने ट्रान्सवाल अध्यादेशके मसविदेके विरुद्ध किये गये उस आन्दोलनकी जिसकी परिणति जोहानिसबर्गमें हुए हालके महान प्रदर्शनमें हुई, बंग भंग आन्दोलनसे झूठी तुलना की और उक्त सभाकी हँसी उड़ाई है। इस उपहाससे प्रकट होता है कि सभाका महत्त्व अनुभव [illegible]ा गया है। स्टार तो इस सभाके कारण बौखला गया है। यह दक्षिण आफ्रिकियोंको भड़काता [illegible] भारतीयोंने अध्यादेशके विरुद्ध जो सत्याग्रह करनेका निश्चय किया है उसके जवाबमें [illegible] भारतीयोंको बलपूर्वक निकाल देनेका आन्दोलन आरम्भ करना चाहिए।

[illegible] मेल ने और [illegible] स्टार ने अध्यादेशको समझने या उसका अध्ययन करनेका [illegible] लिए यह पंजीयन करानेकी एक निर्दोष प्रणाली है। यदि इस अध्यादेशको [illegible] अस्पष्ट नाम देनेके स्थानपर शरीरों या अपराधियोंकी पहचानका [illegible] होता तो कदाचित् हमारे सहयोगियोंने इसकी भयंकरताका अनुभव [illegible] मेल कहता है यह जरूरी नहीं है कि हम सरकारपर जानबूझकर [illegible] करनेका दोषारोपण करें। अध्यादेश स्वयं स्पष्ट है। यह बात [illegible] भारतीयोंके पास पहलेसे ही ऐसे पंजीयन प्रमाणपत्र हैं जिनमें अँगूठेके [illegible] दी गई है ताकि प्रमाणपत्रवालेकी ठीक पहचान की जा सके। [illegible] ऐसी प्रक्रियाकी व्यवस्था की गई है जिसका आयोजन [illegible] वाले विनियमके अनुसार होगा।

स्टार [illegible] सरकारसे विश्वास प्राप्त है हमें सूचित करता है कि [illegible]। नई प्रणाली प्रमाणपत्रोंके अनुचित उपयोग या दुरुपयोगका पता लगानेके लिए काफी सक्षम होगी। स्टार द्वारा दी गई सूचनाके बिना भी यह अनुमान करना सर्वथा उचित है कि नई प्रणाली वर्तमान प्रणालीसे अवश्यमेव ज्यादा कठोर होगी क्योंकि श्री डंकनने [illegible] यह शिकायत की है कि वर्तमान प्रणाली अपर्याप्त है। हमारे पास यह विश्वास करनेका कारण है कि अध्यादेश प्रथम वाचनके समय तक प्रचलित प्रणालीकी जानकारी भी [illegible] नहीं थी। [illegible] दिया गया है और भारतीय मामलोंके बारेमें ट्रान्सवालमें जो [illegible] ही है।

भारतीय समाजने [illegible] अन्तर्गत [illegible] पंजीयन अपनी इच्छासे कराया था। इस [illegible]। उसने समझा कि भारतीय [illegible]

१ देखिए "भारतीयोंकी [illegible] पृष्ठ ४३०–८।

४५६. जोहानिसबर्गकी चिट्ठी[1]

ट्रान्सवालकी विराट सभा

'रैंड डेली मेल'का कहना है कि एम्पायर नाटक-घरमें भारतीयोंकी जैसी सभा हुई थी वैसी ट्रान्सवालमें शायद ही कभी हुई हो। नाटक-घर खचाखच भर गया था। कमसे-कम तीन हजार व्यक्ति उपस्थित होंगे। बहुतेरे लोग भीतर जा ही न सके। दूकानदारों और फेरीवालों — सभीने दस बजेसे काम बन्द कर दिया था। दरवाजे यद्यपि २ बजे खुलनेवाले थे फिर भी लोगोंने ११ बजेसे इकट्ठा होना शुरू कर दिया था। १२ बजे नाटक-घर खोलना पड़ा। डेढ़ बजे तो उस विशाल नाटक-घरमें घुसनेकी गुंजाइश ही नहीं थी। इतने लोग होते हुए भी कोई किसीसे लड़ाई झगड़ा नहीं करता था। सब जगह शान्ति थी। सब धीरजके साथ कामकी शुरुआतका रास्ता देखते बैठे या खड़े थे। ऐसी सभा और ऐसा उत्साह कभी देखनेमें नहीं आया।

इससे यद्यपि भारतीयोंके दुःखोंका दिग्दर्शन होता है फिर भी यह स्वीकार करना होगा कि सभाकी इस सफलताका मुख्य श्रेय हमीदिया इस्लामिया अंजुमनको है। इस अंजुमनका भवन हिन्दू-मुसलमान सबके लिए खोल दिया गया था। उसमें आठ दिन पहलेसे सभाएँ होने लगी थीं और सभी भारतीय नेता उसमें इकट्ठा होकर विचार-विमर्श करते थे। बैठकें प्राय रातके बारह बजे तक चलती रहती। हमीदिया इस्लामिया अंजुमनसे दक्षिण आफ्रिकाकी सभी युवक मण्डलियोंको सबक लेना चाहिए।

इस सभामें बहुत जगहोंसे प्रतिनिधि आये थे। मिडिलबर्ग, स्टैंडर्टन, क्लार्क्सडॉर्प आदि स्थानोंसे तार व पत्र आये थे जिनमें सभाके प्रति सहानुभूति व उससे सहमति व्यक्त की गई थी। उपनिवेश मन्त्री और श्री चैमनेको सभामें उपस्थित होनेके लिए निमन्त्रित किया गया था। श्री चैमने हाजिर थे। उन्हें अध्यक्षके दाहिनी ओर कुर्सी दी गई थी। इसके अतिरिक्त प्रिटोरियाके वकील श्री लिक्टन स्टाइन, श्री हासेलस्ट्रम, श्री स्टिटमैन, लैंड्सबर्ग, स्टुअर्ट कैम्बेलके मैनेजर आदि गोरे उपस्थित थे। तीनों समाचारपत्रोंके संवाददाता भी आये थे।

ठीक तीन बजे अध्यक्ष श्री अब्दुल गनीने अपना भाषण शुरू किया। सबको यही महसूस हुआ कि इस बार श्री अब्दुल गनीने तो हद कर दी। उनका भाषण सरल हिन्दुस्तानीमें संक्षिप्त और कब्जेदार था। उन्होंने जो बातें कहीं वे मध्यममार्गकी और जोशीली थीं। उनकी आवाज जोरदार और सबको अच्छी भाँति सुनाई पड़ने लायक थी। लोगोंने उनके भाषणका तालियोंसे स्वागत किया। जब उन्होंने जेल जानेकी बात की तब सबने एक स्वरसे कहा — हम जेल जायेंगे लेकिन फिरसे पंजीयन नहीं करवायेंगे।

श्री अब्दुल गनीका अंग्रेजी भाषण डॉ० गॉडफ्रेने पढ़कर सुनाया।

श्री मामालाल शाह

पहला प्रस्ताव पेश करनेका काम श्री मामालाल कालजी शाहके सुपुर्द था। श्री शाहका भाषण अंग्रेजीमें था। उसका सारांश निम्नानुसार है:

> आज हम बहुत गंभीर कामके लिए इकट्ठा हुए हैं। श्री डंकनने कहा है कि इस नये कानूनकी जरूरत है। उन्होंने इसका कारण यह बताया है कि जो पंजीयनपत्र दिये गये हैं उन्हें बदला जा सकता है और इसलिए उन पंजीयनपत्रोंके आधारपर ऐसे लोग

१. यह [illegible] [illegible] में छपा था।

यदि कानून पास हो जायेगा तो हम सब अदालतमें जाकर कहेंगे कि हमें पकड़िए। (तालियाँ)।

पॉचेफस्ट्रूमके श्री गेटाने गुजरातीमें दूसरे प्रस्तावका समर्थन किया।

श्री ईसप मियाँ

श्री ईसप मियाँका काम तीसरा प्रस्ताव पेश करना था। उन्होंने कहा

ट्रान्सवालमें अंग्रेजी राज्य रूसके राज्यसे भी ज्यादा खराब है। मैं स्वयं श्री डंकनसे मिलने प्रिटोरिया गया था। उन्होंने बहुत-सी बातें कही थीं। लेकिन किया कुछ भी नहीं। उल्टे हमें दगा दिया है। हमें एक शिष्टमण्डल विलायत भेजना ही चाहिए। यहाँ हम शोर मचायेंगे और उसपर भी यदि सरकारने नहीं सुना तो हम जेल जायेंगे। मैं ट्रान्सवालमें उन्नीस वर्षोंसे हूँ। लेकिन जो जुल्म मैंने पिछले तीन वर्षोंमें देखे हैं वैसे कभी नहीं देखे।

श्री ई० एस० कुवाड़िया

इस प्रस्तावका समर्थन करते हुए श्री इब्राहिम सालेजी कुवाड़ियाने नीचे लिखे अनुसार भाषण दिया

एशियाई अध्यादेशके मसविदेके सम्बन्धमें अध्यक्ष आदि महोदयगण कह चुके हैं इसलिए मैं मानता हूँ कि मेरे लिए बोलनेको कुछ नहीं रह जाता। इतना तो साफ है कि जिस सरकारके राज्यमें जुल्म नहीं है वहाँकी प्रजा सुखी है और वहाँ प्रजा और सरकार दोनों आरामसे रहते हैं। उसी प्रकार हमारे इन्हीं अंग्रेज मित्रोंके द्वारा उकसाये जानेपर लड़ाईसे पहले हमारी भूतपूर्व सरकार (बोअर सरकार) ने हमारे लिए जुल्मी कानून बनाया था। लेकिन चूँकि उस सरकारके मनमें हमारे लिए दया थी इसलिए वह उस कानूनको अमलमें नहीं लाई। अंग्रेजोंके साथ लड़ाई चली तबतक उसकी मेहरबानीसे हम चैनसे रहे। अत उसके लिए हम बोअर सरकारका एहसान मानना चाहिए। अब चूँकि हमारी सरकारने इस उपनिवेशको जीत लिया है इसलिए हमें आशा थी कि अब तो हम सब हक मिल जायेंगे और इसी आशाके मुताबिक हमारी सरकारने हमें वचन भी दिये थे। लेकिन दुर्भाग्यसे हम आज उससे उल्टा ही देख रहे हैं और हमारे खिलाफ ऐसे कानून बनाये जा रहे हैं जो हमसे सहन नहीं किये जा सकते। अत हमारा कर्तव्य है कि यदि सरकार हम लोगोंके लिए उचित कानून बनाये तो हमें उसके अधीन रहना चाहिए किन्तु यह कानून वैसा नहीं है। हमारी सरकारने जबसे इस उपनिवेशको जीत लिया है तबसे वह खासकर हम लोगोंपर एकके बाद एक सख्त प्रतिबन्ध लगाती जा रही है। उन प्रतिबन्धोंको हमने आजतक सहन किया। किन्तु हमारा मन भर गया है। जैसे नदीमें बाढ़ आनेपर नदीके भर जानेसे पानी बाहर निकल जाता है पानी नदीमें जगह ही नहीं रहती उसी प्रकार अब हममें ऐसे जुल्मी कानूनोंको सहन करनेकी शक्ति नहीं रही। इसलिए अब हमें इस अध्यादेशके मसविदेके विरोधमें सख्त कदम उठाना चाहिए, यद्यपि हमसे यह कहा जा रहा है कि हम उनकी रैयत हैं और हमारे फायदेके लिए यह कानून बनाया जा रहा है। यदि यह बात है तो इस सम्बन्धमें मुझे इतना ही

मैं जिस प्रस्तावका समर्थन करनेके लिए खड़ा हुआ हूँ वह छोटा-मोटा नहीं है। उसकी जिम्मेदारी बहुत है। मैं ग्यारह बच्चोंका बाप हूँ। फिर भी इस जिम्मेदारीको उठानेको तैयार हूँ। जैसा भी हाजी हबीबने कहा है, मैं भी फिर से पंजीयन करवानेके बजाय जेल जाऊँगा और इसमें अपनी प्रतिष्ठा समझूँगा। हमें सरकारने दगा दिया है। हमारी अर्जीके जवाबमें सरकारने कहा कि हम तुम्हें जवाब देंगे। शिष्टमण्डलसे भी यही कहा था। फिर भी दो दिन बाद विधेयक परिषदमें पेश किया गया और चार दिन बाद पास कर दिया गया। (शर्म)। उस विधेयकमें औरतोंका भी पंजीयन करवाना था। किन्तु हमीदिया अंजुमनके प्रयत्नसे वह तो निकाल दिया गया है।

ब्रिटिश झंडा (यूनियन जैक) निकालकर बोले

मैंने बचपनसे सीखा है कि इस यूनियन जैकके नीचे मेरी सदा रक्षा की जायेगी। उसीके अनुसार आज हम माँग कर रहे हैं। पिछली सरकारके समय सम्राट एडवर्डने कहा था कि वे हमें सम्राज्ञीकी सरकारके समान हक देंगे। हमारी प्रतिष्ठाकी रक्षा करेंगे। क्या उस वचनमें ट्रान्सवाल शामिल नहीं है? हम इतना ही चाहते हैं कि यहाँ बसे हुए भारतीय सुख-शान्तिसे रहें। पराये देशोंके गोरोंकी अपेक्षा हमें ज्यादा हक होने चाहिए। हममें से कोई-कोई बिना अनुमतिपत्रके दाखिल हुए होंगे। उनके लिए ये बड़बड़ाते हैं। मैं हिम्मतके साथ कहता हूँ कि मुझे तीन सिपाही दें तो मैं अभी बिना अनुमतिवाले एक हजार गोरोंको पकड़कर दे दूँ। मैं पच्चीस वर्षसे दक्षिण आफ्रिकामें हूँ। मैंने केपमें मताधिकार और अन्य अधिकार भोगे हैं। मैंने ट्रान्सवालमें जैसा जुल्म देखा है वैसा कहीं नहीं देखा। और ट्रान्सवाल तो अभी ताजका उपनिवेश है। जब यह देश बोअर लोगोंके हाथमें था तब ब्रिटिश गोरे अपनी अर्जीमें मेरी सही करवानेके लिए आये थे। अब वे हमारे विरुद्ध हो गये हैं। हम उनकी तरह बन्दूक नहीं उठाते हैं लेकिन उनके समान हम जेल जायेंगे। (तालियाँ)।

श्री मूनसामी मुदलियारने इस प्रस्तावका तमिल भाषामें समर्थन किया। डॉक्टर गॉडफ्रेने समर्थन करते हुए कहा

भारत ब्रिटिश हुकूमतका ताज है। उसी तरह हम जोहानिसबर्गकी जेलमें जाकर उस जेलके ताज बनेंगे। हमें पकड़नेके लिए आयें उतना इन्तजार भी नहीं करेंगे।

श्री अस्वातने समर्थन करते हुए सबको सलाह दी कि सब भारतीय अपने नाम लिखकर भेज दें कि हम सब जेल जानेकी तैयारी कर रहे हैं।

क्रूगर्सडॉर्पके श्री ए० ई० छोटाभाईने गुजरातीमें समर्थन किया और कहा कि क्रूगर्सडॉर्पके लोग पंजीयन करवानेके बदले जेल जानेको तैयार हैं।

श्री उमरजी साहबने भी समर्थन किया।

पीटर्सबर्गके श्री नूर मुहम्मद मैयतने कहा कि पीटर्सबर्गके लोग पंजीयन करवानेके बजाय जेल जानेको तैयार हैं।

श्री इमाम अब्दुल कादिरने भी समर्थन किया।

जमादार नवाबखाँने समर्थन करते हुए कहा कि उन्होंने लड़ाईमें सरकारी नौकरी की है। वे अब नये सिरेसे पंजीयन करवानेका अपमान सहनेकी अपेक्षा जेल जाना पसन्द करेंगे।

१. मालूम पड़ता है [illegible] और [illegible] जैसे जेल [illegible] ब्रिटिश [illegible] मुकाबला किया गया है जो ब्रिटिश [illegible] थे।

४६२ पत्र 'लीडर'को

[जोहानिसबर्ग]
सितम्बर २७, १९०६

सम्पादक
लीडर
महोदय]

भारतीय नारी जातिपर लगाये गये लाञ्छनसे सम्बन्धित जो पृच्छताछ आपके पत्रमें प्रकाशित[1] हुई थी आशा है आप उसकी शृंखलाको पूरा करनेके लिए निम्नलिखित उत्तरको स्थान देंगे जो मुझे डर्बनके प्रमुख प्रवासी प्रतिबन्धक अधिकारीसे प्राप्त हुआ है

प्रवास सम्बन्धी नियम बनानेमें ट्रान्सवाल सरकारका क्या इरादा था यहाँ इस बातको कोई नहीं जानता इसलिए यह संभव है कि इस विभागने उसके बारेमें कभी कुछ कहा हो।

[आपका आदि
मो॰ क॰ गांधी]

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन ६-१०-१९०६

४६३ पत्र डॉ॰ एडवर्ड नंडीको[2]

२१-२४ कोर्ट चेम्बर्स
जोहानिसबर्ग
सितम्बर २७, १९०६

[डॉ॰ एडवर्ड नंडी
बेलम्ब चेम्बर्स
कोर्ट रोड
जोहानिसबर्ग]

प्रिय डॉ॰ नंडी

वर्णभेदसे मेरा तात्पर्य यह है कि लोगोंपर एशियाई रंगदार या भारतीय होनेके नाते ही लागू होनेवाला कोई कानून नहीं होना चाहिए।

जैसा कि चम्बरलेनने निर्धारित किया है, सारे नियमोंको सर्वसामान्य रूपका होना चाहिए।

आपका सच्चा
(सही) ह॰ मो॰ गांधी
वास्ते—मो॰ क॰ गांधी

[अंग्रेजीसे]

प्रिटोरिया आर्काइव्ज़ एल॰ जी॰ फाइल नं॰ ९३, एशियाटिक्स

१. देखिए "पत्र : 'लीडर'को", पृष्ठ ४४८ और पृष्ठ ४५९-६०।

२. यह पत्र डॉ॰ नंडीको इस जिज्ञासाके उत्तरमें लिखा गया था कि "वर्ण-भेद" से गांधीजीका क्या तात्पर्य था। देखिए "पत्र : डॉ॰ एडवर्ड नंडीको" पृष्ठ ४५ ।

३. गांधीजीके [illegible] ।

लॉर्ड सेल्बोर्नने ट्रान्सवालके नवीन एशियाई अध्यादेशके बारेमें ब्रिटिश भारतीय [illegible] पत्र भेजे हैं, उनकी प्रतिलिपियाँ प्रकाशित करनेका अवसर हमें मिला है। उनमें यह कहा गया है कि लॉर्ड एलगिन अध्यादेशको स्वीकार कर चुके हैं और प्रस्तावित शिष्टमण्डलको भेजनेसे कोई उपयोगी कार्य सिद्ध होगा सम्भव है ऐसा परमश्रेष्ठका खयाल नहीं है।

हम लॉर्ड एलगिनके निर्णयपर ट्रान्सवालके ब्रिटिश भारतीयोंको उनके दुःखमें बधाई देते हैं। यह निर्णय एक उदार उपनिवेश-मन्त्रीके लिए कोई अनोखी बात नहीं है — विशेषकर जब यह अनुभव किया जाता है कि उपनिवेश-मन्त्री किसी समय भारतमें वाइसरायकी कुर्सी सुशोभित कर चुके हैं। लेकिन लॉर्ड सेल्बोर्नने हमें बताया है कि बुराईसे बहुत बार [illegible] निकल आती है और यदि ब्रिटिश भारतीय समाज अपने प्रति सच्चा है, तो लॉर्ड [illegible] महत्त्वपूर्ण निर्णयसे अवश्य ही अच्छा नतीजा निकलेगा। जोहानिसबर्गके एम्पायर नाट्यगृहमें, जो अब मौजूद नहीं है, जिस महती सभाका आयोजन किया गया था उसके ऐतिहासिक प्रस्तावमें[1] परमश्रेष्ठने आग डाल दी है। यह प्रस्ताव एक कसौटी होगा जिसपर ट्रान्सवालके भारतीयोंकी राष्ट्रीय एवं आत्मसम्मानकी भावना कसी जायेगी। स्पष्टतः लॉर्ड [illegible] सेल्बोर्नकी प्रेरणासे भारतीय चुनौतीको स्वीकार कर लिया है। अब एक तरफ शासकीय [illegible] दूसरी तरफ सीधा-सादा अनाक्रमक प्रतिरोध। ब्रिटिश भारतीयोंका उद्देश्य न्याय- [illegible] यह चौथा प्रस्ताव कार्यरूपमें परिणत करनेसे और, लॉर्ड एलगिनकी स्वीकृतिके बावजूद, [illegible] नाशात्मक शर्तों तथा अध्यादेशमें प्रस्तावित गम्भीर तथा मनमाने अन्याय" के [illegible] कार करनेसे और भी अधिक न्यायसंगत और पुनीत हो जायेगा। हमें इस [illegible] सम्मानपूर्वक दुहरानेमें कोई हिचकिचाहट नहीं है यद्यपि अपने एक पत्रमें [illegible] महसूस नहीं है कि अध्यादेशसे इस प्रकारका कोई अन्याय होता है। हमें [illegible] मानको मान ही लेना चाहिए कि परमश्रेष्ठके समय-समयपर प्रकट किये [illegible] कोई विरोध नहीं है। यह तो केवल वे ही जानते होंगे कि अपने मध्यमें क्या-कुछ [illegible] महर्षियोंकी सभामें उदात्त भावनाएँ व्यक्त की और बोअर युद्धके समय सरसफलताका गान की।

इसी प्रकार हम परमश्रेष्ठके अध्यादेश-सम्बन्धी निर्णयपर आपत्ति करनेकी अनुमति चाहते हैं। जिन्हें अध्यादेशका पालन करना है वे ही जान सकते हैं कि यह न्याययुक्त है या अन्याय-युक्त। लॉर्ड सेल्बोर्नने ब्रिटिश भारतीयोंकी आपत्तिका जो उत्तर दिया है उसमें ऐसी अनेक बातें भरी हैं जिनपर ब्रिटिश भारतीयोंके दृष्टिकोणसे बहस की जा सकती है परन्तु इस विषयपर काफी तर्क पहले ही किये जा चुके हैं। अब समय तर्कका नहीं कार्यका है।

पहली जनवरीका दिन महामहिम सम्राटके लाखों प्रजाजनोंके लिए शुभ आशाका दिन होगा। इसी तरह ट्रान्सवालके ब्रिटिश भारतीयोंके लिए भी वह ऐसा ही दिन होगा यद्यपि उसी अर्थमें नहीं। उन्हें अपनी शक्तियाँ संघटित करनी होंगी और बलका संचय करना होगा। उस महत्त्वपूर्ण तारीखको उन्हें भवितव्यका सामना करनेके लिए तैयारी करनेकी जरूरत होगी। अब भारतीय समाज कसौटीपर है। हमें आशा करनी चाहिए कि वह इस कसौटीपर खरा

१ देखिए "सार्वजनिक सभा" पृष्ठ ४३०–४।

उतरेगा। यदि समूची दुनियामें नहीं तो कमसे-कम दक्षिण आफ्रिकामें तो भारतीय समाजके कार्यसे ही भारतीयोंके चरित्रका निर्णय होगा। सभाने इस ऐतिहासिक प्रस्तावको पास करके एक ऐसी जिम्मेदारी ली है जिसे परिणाम जो भी हो ट्रान्सवालके ब्रिटिश भारतीयोंको निभाना ही चाहिए।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन २९-१-१ ९

४६५. पूनिया काण्ड

हमारे सहयोगी *रैंड डेली मेल* ने अभागी ब्रिटिश भारतीय नारी पूनियाकी जोरदार वकालत करके इस विषयको ऐसा महत्व दिया है जो इस मामलेकी परिस्थितियोंके लिहाजसे बिलकुल मुनासिब है। निश्चय ही श्री गांधीने परिस्थितिकी गुरुता कम ही बताई थी क्योंकि उन्होंने एक दुर्भाग्यपूर्ण काण्डके शायद सबसे दुःखद पहलूका जिक्र ही नहीं किया था — अर्थात् यह कि फोक्सरस्टके आरोग्य कार्यालयमें उस स्त्रीकी दसों अंगुलियोंकी निशानियाँ ली गईं और जमिस्टनमें वह फिर वैसा ही करनेके लिए मजबूर की गई। चूँकि तथ्य निर्विवाद हैं इसलिए उस स्त्रीको गिरफ्तार करनेवाले सिपाही मैकंगर द्वारा निर्दिष्ट नियमोंको उचित ठहरानेका निन्दनीय प्रयत्न किया गया है और हमें यह देखकर दुःख होता है कि *नेटाल मर्क्युरी* ने, हमें विश्वास है कि अनजाने ही, इस प्रयत्नका समर्थन किया है। *ट्रान्सवाल लीडर* को *नेटाल मर्क्युरी* के अनुच्छेदका सारांश तार द्वारा भेजा गया था। इसका उत्तर श्री गांधीने भेजा है जिसमें भारतीय सिपाहीपर लगाये गये लांछनापूर्ण आरोपका खण्डन किया है और उसको एक कुत्सित असत्य बताया है। इसके बाद उन्होंने एशियाई पंजीकरण अधिकारीको तार दिया है। पंजीकरण अधिकारीने तुरन्त इस आशयका जवाब दिया है कि पत्रमें जैसा वक्तव्य प्रकाशित हुआ है वैसा कोई वक्तव्य उनके विभागसे सम्बन्धित किसी अधिकारीने नहीं दिया है। हमें आशा है कि *नेटाल मर्क्युरी*, जो सदा न्याय-बुद्धिसे काम लेता है, इस मामलेमें उस अधिकारीका नाम प्रकाशित करेगा जिसने यह वक्तव्य दिया था या फिर इस निन्दाजनक आरोपको वापस ले लेगा।

यदि अनुमतिपत्र अध्यादेशके अमलके बारेमें सामान्य जनताको उतना ही ज्ञान होता जितना कि हमें है तो वह पूनिया-काण्डकी गम्भीरता तथा उस निष्ठुर अपमानका अनुभव करती जो केवल उस स्त्रीके साथ ही नहीं वरन् समग्र भारतीय समाजके प्रति किया गया है। यह विश्वास करनेका कारण है कि इस दुःखदायी काण्डमें सिपाहीका वक्तव्य इस बारेमें

१. [illegible]

२. [illegible]

४६६. ट्रान्सवाल अनुमतिपत्र अध्यादेश

तारीख १५ को शान्ति-रक्षा अध्यादेशके अन्तर्गत जिन्हीं हाफिजी मूसा तथा उनके पुत्र मुहम्मद हाफिजी मूसाका मुकदमा फोक्सरस्टके मजिस्ट्रेटके इजलासमें पेश हुआ। पितापर यह आरोप था कि उसने अनुचित साधनोंसे प्राप्त अनुमतिपत्र द्वारा ट्रान्सवालमें प्रवेश करनेके लिए अपने पुत्रको जो ग्यारह सालसे कम उम्रका माना गया है उकसाया है और लड़केपर यह आरोप था कि उसने अनुचित साधनोंसे प्राप्त अनुमतिपत्र द्वारा उपनिवेशमें प्रवेश किया है। इस बातकी गवाही पेश की गई कि ५ जुलाईको पिता और पुत्रने साथ-साथ यात्रा की और वे फोक्सरस्टमें उतरे। वहाँ उनकी जाँच की गई। पिताने अपना अनुमतिपत्र पेश किया और पुत्रने एक ऐसा, कहा जाता है, आइसा नामक व्यक्तिको दिया गया अनुमतिपत्र पेश किया। निरीक्षक सिपाही यह कहनेमें असमर्थ था कि उपर्युक्त अनुमतिपत्र लड़केने ही पेश किया था। लड़केके अँगूठोंकी निशानियाँ ली गईं और प्रिटोरिया भेजी गईं। और चूँकि वे आइसाको दिये गये अनुमतिपत्रके अँगूठेपर मौजूद अँगूठेकी निशानियोंसे नहीं मिलीं इसलिए पिता और पुत्र दोनों पॉचेफस्ट्रूममें गिरफ्तार कर लिए गये। एशियाई पंजीयन कार्यालयके प्रधान लिपिक श्री काउवीके बयानसे यह भी प्रकट हुआ कि हर उम्रके ब्रिटिश भारतीयको — चाहे वे पुरुष हों या स्त्री — स्त्रियोंको भले ही वे अपने पतियोंके साथ हों और बच्चोंको भले ही वे अपने माता-पिताओंके साथ हों — अपने अलग-अलग अनुमतिपत्र पेश न करनेपर गिरफ्तार कर लिया जाये यह अनुमतिपत्र कार्यालयका निर्देश है। पिता-पुत्र दोनोंने इस बातसे इनकार किया कि पुत्रने आइसाके नाम दिये गये अनुमतिपत्रसे उपनिवेशमें प्रवेश किया है। मजिस्ट्रेटने पिताको बरी कर दिया किन्तु पुत्रको अपराधी ठहराया और ५ पौंड जुर्माने या तीन मासकी सादी कैदकी सजा सुना दी। अपील दर्ज कर ली गई है। यह मामला बड़े महत्त्वका समझा जाता है क्योंकि अपने पिताके साथ सफर करते हुए बच्चे उसके एक लड़केको इतनी सख्त सजा दी गई है यद्यपि मजिस्ट्रेट खास अपराधियोंके मामलोंमें प्राप्त छूटके विवेकाधिकारोंको ध्यानमें रखकर कार्य करते हैं।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, २१-९-१ १

४६७ डेलागोआ-बेके भारतीय

डेलागोआ-बेमें भी ज्यों-ज्यों अंग्रेज घुसते जा रहे हैं त्यों-त्यों भारतीयोंकी आशंका बढ़ती जा रही है। हमारा संवाददाता सूचित करता है कि भारतीयोंको बस्तियोंमें भेजनेकी हलचल चल रही है। यह भी विदित हुआ है कि इस प्रकारकी विरुद्ध भारतीय सख्त कार्रवाई करेंगे। संवाददाता यह भी सूचित करता है कि इस सम्बन्धमें टक्कर लेनेके लिए एक समिति तैयार हुई है। हमें आशा है कि वह जागृत रहकर अपना काम करती रहेगी। हर्षका विषय है कि इस अवसरपर श्री जैसे सज्जन डेलागोआ-बेमें मौजूद हैं। श्री कोठारी बम्बईके उच्च न्यायालयके वकील देशाभिमानी हैं। उन्होंने डेलागोआ-बेमें रहकर अपने समयका बहुत अच्छा उपयोग किया है। उन्होंने पुर्तगाली भाषा सीख ली है और हम मानते हैं कि उनका यह अभ्यास करनेमें बहुत उपयोगी सिद्ध होगा। जहाँ-जहाँ शिक्षित भारतीय बसे हुए हैं वहाँ-वहाँ उनका कर्तव्य है कि अपनी शिक्षाका उपयोग देशसेवामें करें।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन २९-९-१९०६

४६८ चेतावनी

[illegible]नगरके कूर्सडर्बी स्ट्रीट में नगर परिषदने एक भारतीय मामलेका निपटारा किया है। यह चेतावनी और समाजको लज्जित करनेवाला है। एक प्रतिष्ठित [illegible] सूचनाके बावजूद जरूरी सुधार नहीं किया। उसके घोड़ेके कमरेमें जमीनकी उस [illegible] जमीन ऐसी नहीं थी कि जिसमें गन्दा पानी सोखा जा सके। [illegible] फिर भी उसका उपयोग किया गया था। सूचनाकी परवाह नहीं की गई, इसलिए नगर परिषदकी समितिने मुकदमा चलानेका आदेश जारी किया। नतीजा क्या हुआ यह हमें नहीं मालूम। लेकिन एक प्रतिष्ठित भारतीय अपने घरको इतनी खराब हालतमें रखता है यह हमें नीचा दिखानेवाला है। भारतीय समाजपर गोरे कोग कई इल्जाम लगाते हैं। उनमें गन्दगीका इल्जाम एक है। ऐसे उदाहरण उन इल्जामोंको सिद्ध करते हैं। और फिर ये उदाहरण प्रतिष्ठित व सम्पन्न भारतीयोंके यहाँ मिलते हैं तो उनका बुरा प्रभाव पड़े बिना रह ही नहीं सकता। आशा है ऊपर जिस मामलेका उल्लेख किया गया है उससे भी सभी भारतीय सबक लेंगे और अपना घरबार साफ रखेंगे। हमारे घरबारकी हालत जैसी चाहिए वैसी नहीं होती इससे इनकार नहीं किया जा सकता। स्पष्ट ही हमें ऐसी बातोंमें ज्यादा सावधानी बरतनी चाहिए जिनमें हमारे दोष ज्यादा दिखाई पड़ते हों।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन २९-९-१९०६

द्वारा एशियाइयोंकी बहुत कुछ असुविधाएँ दूर हो जायेंगी। इससे ज्यादा सुधार ऐसे समयमें नहीं किया जा सकता जब स्वराज्य दिया ही जानेवाला है। लॉर्ड एल्गिनने यह भी कहलाया है कि जो प्रतिनिधि विलायत जायेंगे उन्हें अपने विचार प्रकट करनेका पूरा मौका दिया जायेगा। लेकिन उससे कुछ लाभ होगा ऐसा वे नहीं मानते।

पत्रका अर्थ

इस पत्रका अर्थ यही हुआ कि लॉर्ड एल्गिनने शिष्टमण्डलको न भेजनेके लिए कहा है। कानून पास हो जानेके बाद यदि शिष्टमण्डल गया तो स्पष्ट ही उससे कुछ लाभ न होगा। इस पत्रका अर्थ यह भी होता है कि भारतीय प्रजाने जो जोर दिखाया है और कानूनका मुकाबला करनेका प्रस्ताव किया है उसे दबाया जाये। यह अंग्रेजोंका रिवाज है कि जो लोग अधिक बढ़ते दिखाई दें उनकी ओर सख्त नजर की जाये और उन्हें जोरसे पछाड़ा जाये। लॉर्ड सेल्बोर्नने लॉर्ड एल्गिनको यह सलाह दी होगी कि यदि शिष्टमण्डल विलायत जायेगा और उससे लॉर्ड एल्गिन मिलेंगे तो भारतीयोंको कानून रद हो जानेकी आशा बँधेगी। इस बीचमें वे अपनी शक्ति भी बढ़ा लेंगे। इसलिए शक्तिका जो अंकुर फूटने ही वाला है, उसे इसी समय दबा दिया जाये तो ठीक होगा। इस सलाहको मानकर लॉर्ड एल्गिनने शिष्टमण्डलकी कहानी सुने बिना ही कानूनको पसन्द किया है।

अधीनस्थ यानी पराजित प्रजाओंपर अंग्रेजी शासन इसी प्रकार चलता रहा है। बहुत हद तक इस व्यवहारमें वे सफल हुए हैं। क्योंकि पराजित और हततेज प्रजा बोलनेमें ही शूर होती है और जब-कभी काम करनेका समय आता है खिसक जाती है।

हमारा कर्तव्य

इस समय भारतीय प्रजाका क्या कर्तव्य है इसपर विचार करें। कानून भंग करनेका जो प्रस्ताव स्वीकार किया गया है वह उत्साहवर्धक भी है और उत्साहनाशक भी। यदि उसपर भारतीय प्रजा डटी रही तो उससे उसका ट्रान्सवालमें मान बढ़ेगा और उसके बहुतेरे दुःख दूर हो जायेंगे। इतना ही नहीं सम्पूर्ण दक्षिण आफ्रिकामें उसका फायदा दिखाई देगा और हमारी जन्मभूमिमें भी सैकड़ों व्यक्तियोंको फायदा होगा। लेकिन यदि प्रस्ताव भंग कर दिया गया तो जिन्होंने शपथ ली है उनकी प्रतिज्ञा टूटेगी, सारी कौमकी नाक कटेगी, बल्कि कौमकी ओरसे जो अर्जियाँ भेजी जायेंगी उनका असर घट जायेगा और स्थिति आजसे भी बदतर हो जायेगी। गोरे हँसेंगे सो तो अलग ही, वे थूकेंगे, हमें लातें मारेंगे और नामर्द कहेंगे। हम एक राष्ट्र हैं यह तो फिर माना ही न जायेगा।

साहसके बिना सिद्धि नहीं मिलती

महान कार्य करनेमें सदा ही ऐसी जोखिम उठानी पड़ती है। हम बड़ी जोखिम उठाकर व्यापार करते हैं तब यदि लाभ हुआ तो वह भी बड़ा होता है और यदि नुकसान हुआ तो वह हमें मटियामेट कर देता है। हमारे कवि[1] लिख गये हैं कि साहससे सिकन्दरने बादशाही भोगी, साहससे कोलम्बसने अमेरिकाकी खोज निकाली। साहसके बिना सिद्धि नहीं मिलती। अंग्रेज कौम स्वयं साहसी है और साहसी राष्ट्रोंकी ही तारीफ करती है। इसलिए हरएक भारतीयका निश्चित कर्तव्य है कि वह दुबारा [पंजीयनपत्र] लेने जानेके बजाय जेल जाय और एम्पायर नाटकघरमें जो शपथ ली है उसका दृढ़तापूर्वक पालन करे।

१. आधुनिक गुजराती गद्य और पद्यके प्रणेता नर्मदाशंकर लालशंकर दवे (कवि नर्मद)की ओर संकेत है जिन्हें [illegible] था।

४७१. तार: ट्रान्सवाल गवर्नरको[1]

[जोहानिसबर्ग
सितम्बर ३०, १९०६][2]

ब्रिटिश भारतीय संघको लॉर्ड एलगिन द्वारा एशियाई अध्यादेशकी मंजूरीपर[3] खेद। उसकी नम्र सम्मतिमें मंजूरीका कारण अध्यादेशके सम्बन्धमें गलतफहमी है। संघके खयालसे भारतीय समाजको कोई राहत नहीं दी जा रही। इसलिए संघने अत्यन्त सम्मानपूर्वक साम्राज्य सरकारके सम्मुख अध्यादेशके बारेमें भारतीय दृष्टिकोण रखनेके लिए मेसर्स गांधी और अलीका शिष्टमण्डल भेजनेका निश्चय किया है और प्रार्थना है कि सुनवाई होने तक सम्राट्की मंजूरी रोक ली जाये। शिष्टमण्डल अगली डाकगाड़ीसे रवाना हो रहा है।

ब्रिभास

[अंग्रेजीसे]

प्रिटोरिया आर्काईव्ज़: एल० जी० फाइल सं० ९१, एशियाटिक्स

१. यह ब्रिटिश भारतीय संघकी प्रार्थनापर ट्रान्सवालके गवर्नर द्वारा ८ अक्तूबरको उपनिवेश-मन्त्रीके पास भेज दिया गया था।

२. शिष्टमण्डल ३ अक्तूबरको इंग्लैंड जानेके लिए केप टाउनसे रवाना हुआ। प्रत्यक्ष है यह तार उससे एक दिन पहले भेजा गया था। शिष्टमण्डल अपने साथ यह प्रमाणपत्र ले गया था: "यह प्रमाणित किया जाता है कि ब्रिटिश भारतीय संघके अवैतनिक मन्त्री श्री मो० क० गांधी और हमीदिया इस्लामिया अंजुमनके अध्यक्ष श्री हाजी वज़ीर अली इंग्लैंड जाने और साम्राज्य-अधिकारियोंके सामने एशियाई अधिनियम संशोधन अध्यादेशके सम्बन्धमें भारतीयोंका दृष्टिकोण रखने एवं इंग्लैंडमें दक्षिण आफ्रिकी ब्रिटिश भारतीयोंके हितोंके लिए कार्य करनेके लिए प्रतिनिधि चुने गये हैं।"

३. पीछे यह पता चला कि यह मंजूरी केवल विधेयक व्यवस्थापिकामें पेश करनेके प्रस्तावपर थी; किन्तु स्वयं अध्यादेशपर सम्राट्की मंजूरी अभी शेष थी।

केप टाउनमें रहते हुए श्री अली संसद और नगरपालिका दोनोंके मतदाता थे। १८९२ में वे रंगदार जनसंघ (कलर्ड पीपल्स ऑर्गनाइजेशन) के अध्यक्ष चुने गये और मताधिकार कानून संशोधन (फ्रैंचाइज लॉ अमेंडमेंट) के सिलसिलेमें उन्होंने प्रमुख रूपसे कार्य किया। २२, रंगदार लोगोंके हस्ताक्षरोंसे प्रार्थनापत्र तैयार करके लन्दन भेजा गया। बादमें श्री अली जोहानिसबर्ग चले गये। वहाँ भी वे ट्रान्सवालके ब्रिटिश भारतीयोंकी स्थितिके बारेमें कार्य करते आ रहे हैं। युद्धसे पूर्व उन्होंने बड़े ओहदेदार कर्मचारियों और ब्रिटिश एजेंटोंसे मुलाकातें करके ब्रिटिश भारतीयोंको राहत दिलानेके लिए बहुत कुछ किया था।

श्री अली हमीदिया इस्लामिया अंजुमनके संस्थापक और अध्यक्ष हैं। यह संस्था जोहानिसबर्गके मुसलमानोंमें उत्तम और उपयोगी कार्य कर रही है। एम्पायर नाटकघरकी सार्वजनिक सभाका आयोजन करनेमें इसका प्रमुख हाथ था। अंजुमन फूलती-फलती हालतमें है और सैकड़ों मुसलमान उसके सदस्य हैं।

श्री अली यद्यपि सर्वांग-सम्पूर्ण वक्ता नहीं हैं लेकिन अंग्रेजी भाषापर उनका बहुत अच्छा अधिकार है। उनकी आवाज उत्तम है और वे प्राय: धाराप्रवाह बोलते हैं। उन्होंने एक मलायी महिलासे विवाह किया है और उनके ११ बच्चे हैं। स्त्री-शिक्षापर उनके विचार उदार हैं और रंगभेदकी बाधाओंके बावजूद वे अपनी लड़कियोंको अच्छी शिक्षा देनेका प्रयत्न करते रहे हैं।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन ९–१०–१९०६

४७४ हांगकांगमें ईश्वरीय प्रकोप

सानफ्रांसिस्को जैसा सुन्दर शहर एक क्षणमें भूमिमें मिल गया और पल-भरमें हजारों मनुष्य दबकर मर गये इस समाचारकी याद अब भी पीड़ा दे रही है। ऐसा ही भूकम्प चिलीमें हुआ है जिससे वाल्पारेसो आदि स्थानोंमें लाखों मनुष्य बेघर-बार हो गये हैं और उनके भूखों मरनेकी नौबत आ गई है। यह गजबकी कहानी अभी पूरी भी नहीं हुई है कि एशियासे आवाज आ रही है कि वहाँकी मुसीबतें अमेरिकासे कम भयानक नहीं हैं। चीनके दक्षिण हांगकांगके समुद्रमें जगह-जगह आँधी और तूफान आनेके समाचार पिछले सप्ताह प्रकाशित हो चुके हैं। कई वाहन और जहाज खराब हो गये हैं कई टूट-फूटकर नष्ट हो गये हैं। छोटी डोंगियाँ और नावें पूरी-की-पूरी समुद्रमें समा गई हैं और हजारों प्राणियोंकी प्यारी जानें चली गई हैं। बन्दरगाहके प्रवेश द्वारमें पानी भर जानेसे नदियाँ शहरके रास्तोंमें बहने लगी हैं और मुसीबतसे घिरे हुए लोग नावोंकी मददसे जान बचानेके लिए छटपटा रहे हैं। कहा जाता है कि इस तूफानमें ५ जहाज और वाहन डूब गये। मछुओंकी ९ डोंगियाँ सैर करने निकली थीं उनमें से कुछका ही पता चला है। कुछ नहीं था १ लोग मौतके मुँहमें समा गये हैं। यह सब दो-तीन घंटोंमें ही हो गया। यह सुनकर विचारवान लोग दुःखी हुए। ईश्वर पलकमें प्रलय करे — पावनमालाकी ये बातें प्रत्यक्ष दीखने लगी हैं। ईश्वरकी गति गहन है। उसके कामोंमें मनुष्यको हमेशा कुछ-न-कुछ सार ग्रहण करनेको मिलता है। जब ऐसी घटना घटती हो तब सद्बुद्धिकी आवाजें सुनाई पड़ने लगती हैं कि मर्द आदमी अच्छा रास्ता पकड़। दीन दया

जायेगी यह कहा नहीं जा सकता इसलिए उसके सभी सम्बन्ध एकदम [illegible] है। उसके रास्ते जानेवालेको चेतावनी है [illegible] मामला अतिशय जोड़ और ईमानदारी कालका निवारण करनेमें कुछ भी देर नहीं लगेगी।"

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन ९-१-१९१

४७५. ट्रान्सवालके भारतीयोंका कर्तव्य

ट्रान्सवालकी स्थितिके सम्बन्धमें हमने दूसरी जगह पूरा विवरण दिया है, इसलिए इस जगह हमें ज्यादा कुछ नहीं कहना है। यह समय इतना नाजुक है कि ट्रान्सवालके बाहर रहनेवाले सभी भारतीय चौंक गये हैं। सभीको लग रहा है कि ट्रान्सवालमें भारतीयोंने जो कदम उठाया है वह बहुत ही मुश्किल है। उसके सफल होनेपर ही उसे सही कहा जा सकता है। भारतीयोंने जो प्रस्ताव पास किया है वह अनोखा है और सही भी है। कानूनके सामने आत्म-समर्पण करनेके बजाय जेल जानेका जो निर्णय किया गया है वैसा निर्णय आजतक चार [illegible] दुनियामें कहीं भी किया हो सो दीख नहीं पड़ता। इससे हम उस कदमको अनोखा [illegible]। दूसरी ओर हमने यह भी कहा है कि उसमें अनोखापन नहीं है। इसका कारण [illegible] इससे मिलते-जुलते उदाहरण बहुतसे मिलते हैं। हम कई बार नाराज होकर [illegible] और भारतमें कई बार हड़तालको हम अपना कर्तव्य मान लेते हैं [illegible] [illegible]ताल द्वारा हम न्याय प्राप्त करते हैं। यहाँ हड़तालका अर्थ इतना ही होता [illegible]ने जो कदम उठाया है वह हमें पसन्द नहीं है। कानूनके विरोधका ऐसा [illegible] जा रहा है जब अंग्रेज लोग जंगली थे। इसलिए जब कहा जाये ही [illegible] जो प्रस्ताव पास किया है उसमें अनोखापन कुछ नहीं है और इसलिए [illegible]।

[illegible] आफ्रिकामें भी ऐसे उदाहरण मिलते हैं। स्वर्गीय राष्ट्रपति क्रूगरकी जब भारतीयोंको [illegible] बस्तीसे हटाकर टोबियान्स्कीके फार्मपर ले जानेकी योजना थी तब *एसरिस ईस्मान्सन या ब्रिटिश एजेंट* ने हमें स्पष्ट सलाह दी थी कि हम राष्ट्रपतिके आदेशको कतई न मानें। इससे यह हुआ कि पुलिसकी जाँच-पड़ताल और जासूसोंके घरोंमें घुस जानेके बावजूद हम लोग अटल रहे और सफल हुए।

परवानेकी तकलीफ थी तब भी भारतीयोंने बेधड़क बिना परवानेके शहरोंमें व्यापार किया। वे बोअर सरकारसे नहीं दबे और विजयी हुए। उस सरकारने हमें बस्तीमें भेजनेका बहुत प्रयत्न किया लेकिन वह भेज नहीं सकी।

लड़ाईके बादके उदाहरण ढूँढ़ना चाहें तो वे भी मिल सकते हैं। लॉर्ड मिलनरने जब भारतीयोंपर बाजार सूचना रूपी तलवार उठाई थी उस समय एक बार तो लोग घबरा गये थे। लेकिन फिर विचार किया और अन्तमें बस्तीमें नहीं जानेका निर्णय किया। परिणामस्वरूप सम्मन भी जारी किये गये थे लेकिन उन्हें वापस लेना पड़ा था। मूअर साहबने लोगोंके [illegible] शुरू किये थे लेकिन उनके लेनेमें लोगोंने आनाकानी की और उस निश्चयको उठाना पड़ा।

दूसरी कौमोंके उदाहरण चाहें तो वे भी हमें सहज ही मिल जाते हैं। हॉटेन्टॉट लोगोंके लिए पासका नियम है। उन्होंने इस नियमका विरोध किया है और वे पास नहीं लेते। सरकार उन लोगोंका कुछ नहीं बिगाड़ पाती। नेटालके काफिरोंपर मकान-कर लगा हुआ है, फिर भी जूलू लोगोंकी कुछ कौमें ऐसी हैं जो बिलकुल परवाह नहीं करतीं। उनसे सरकार कर नहीं ले रही है यह गुप्त रूपसे सभी जानते हैं।

इन सब उदाहरणोंसे स्पष्ट हो जाता है कि हमारे लिए डरनेका कोई कारण नहीं है। फिर भी उपर्युक्त उदाहरणोंमें और भारतीय लोगोंके प्रस्तावोंमें कुछ अन्तर है। इन सब उदाहरणोंमें किसी भी कौमने मिलजुलकर सामूहिक प्रस्ताव नहीं किया था। फिर, लोगोंने कानूनको न माननेकी बात तो पसन्द की थी लेकिन यह तय नहीं किया था कि इसका परिणाम कैसे भोगा जाये। जैसे कि हॉटेन्टॉट लोगोंको यदि कोई पास न लेनेके सम्बन्धमें पकड़ता है, तो उनमेंसे कुछ जुर्माना देते हैं और कुछ जेल चले जाते हैं। ट्रान्सवालके भारतीयोंने यह निर्णय किया है कि वे नया पंजीयनपत्र लेनेके बजाय जेल जाना मंजूर करेंगे। उनके लिए दूसरे दो रास्ते खुले हैं — या तो जुर्माना दें या देश छोड़ दें। इन दोनोंको समितिने गम्भीरतापूर्वक विचार करके नामंजूर कर दिया है। इसीमें नयापन है इसीमें खूबी है और इसीमें बल है। यदि जुर्माना देने लगें तो सरकार इतना ही चाहती है। यदि देश छोड़ दें तो गोरे लोग तालियाँ बजायेंगे खुश हो जायेंगे और झंडे फहरायेंगे। यह सब हमें नहीं करना है। क्योंकि इसमें हमारी बदनामी और नामर्दगी जाहिर होगी। जेल जाना एक विशिष्ट बात है यह एक पवित्र कदम है और इसीके द्वारा भारतीय प्रजा अपनी प्रतिष्ठा कायम रख सकेगी। इससे यदि हमारा व्यापार डूब जाये तो क्या हुआ? मकान और सामान जल जाये तो व्यापारी संतोष मानकर बैठ जाता है और फिर थोड़े-थोड़ेसे व्यापार शुरू करके बैठक लायक कमा लेता है। जिसके हाथ-पैर हैं और बुद्धि है ऐसे मनुष्यके लिए इस देशमें कभी भूखों मरनेका प्रसंग नहीं आता। और कौम या देशके भलेके लिए यदि सौ-सवा-सौ व्यक्ति भिखारी बन जायें तो उसमें शर्म बात कौनसी है? जगत ऐसे ही व्यक्तियोंकी इज्जत करते हैं। उनमें ऐसे महापुरुष हो गये हैं और होते हैं इसीलिए देश चमकता रहता है। वाट टाइलर, जॉन हैम्पडन जॉन बनियन आदि ऐसे ही वीर थे जिन्होंने अंग्रेजी राज्यकी नींव डाली है। वे कौन थे और उन्होंने क्या किया यह हम और कभी कहेंगे। लेकिन जबतक हम उनका अनुकरण नहीं करते तबतक हम अधम स्थिति ही भोगते रहेंगे। इस समय हमारी कौमको अपना पुरुषार्थ बतानेका मौका मिला है। हम आशा करते हैं कि वह मौकेको हाथसे नहीं जाने देगी उसमें भी जुलोंकी और सम्पूर्ण अविश्वासका संबल करके केसरिया बाना धारण करेगी। भारतका वह भी समय था जब कि कोई मरदा रणसे हारकर भाग आता तो उसकी माता उसका मुँह देखनेसे भी इनकार कर देती थी। हमारी जगन्नियन्तासे प्रार्थना है कि ट्रान्सवालका हर भारतीय भारत उस समयकी याद रखे।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन १-१ -१ ६

इसलिए प्रार्थीने आप महानुभावकी सभामें एक तार[1] भेजा था और प्रार्थना की थी कि सम्राट्की इच्छा तबतक घोषित न की जाये जबतक सभाको आप महानुभावके सम्मुख अपनी बात निवेदन करनेका अवसर नहीं मिलता।

(३) सभा उपर्युक्त अध्यादेशकी अनुसूचीकी धारा ५, ८ और ९ का आदरपूर्वक विरोध करती है।

(४) उल्लिखित धाराएँ इस प्रकार हैं

५. यह पट्टा किसी रंगदार व्यक्तिको हस्तान्तरित न किया जा सकेगा और यदि यह किसी ऐसे व्यक्तिके नाम पंजीकृत होगा तो यह पट्टा इस तथ्यके कारण ही अमलके बाहर और खत्म हो जायेगा।

८. उक्त बाड़ा या उसका कोई भाग या उसपर बना मकान किसी भी रंगदार व्यक्ति या एशियाई उपकिरायेदारको नहीं दिया जायेगा। इस शर्तको तोड़नेपर परिषद धारा ४ में बताये गये तरीकेसे लिखित सूचना देकर तुरन्त इस पट्टेको खत्म कर सकेगी।

९. पट्टेदार किसी रंगदार व्यक्ति या एशियाईको जो किसी यूरोपीयका कानून सम्मत नौकर न हो और उस समय उक्त बाड़ेमें न रहता हो उस बाड़ेमें या उसके किसी भागमें न तो रहने देगा और न कब्जा करने देगा। यदि पूर्वकथित नौकर जैसे व्यक्तिके अलावा कोई दूसरा रंगदार व्यक्ति या एशियाई उक्त बाड़ेमें रहता या उसके किसी भागपर कब्जा रखता पाया जायेगा तो परिषद पट्टेदारको धारा ४ में बताये गये तरीकेसे यह सूचना दे सकती है कि वह उस व्यक्तिको सूचना मिलनेके बाद तीन सप्ताहके भीतर उस बाड़ेमें या उसके किसी भागमें रहनेसे या उसपर कब्जा रखनेसे मना कर दे और यदि इस अवधिकी समाप्तिपर ऐसा व्यक्ति उस बाड़ेमें रहता, उसपर या उसके किसी भागपर कब्जा रखता पाया जायेगा तो परिषद तुरन्त पट्टेदारको पहले बताये गये तरीकेसे सूचना देकर यह पट्टा खत्म कर सकती है।

(५) फलतः अध्यादेशमें इस प्रकार घरेलू नौकरोंके सिवा अन्य ब्रिटिश भारतीयोंका निवास निषिद्ध हो जाता है।

(६) इस तरहसे नियमन ब्रिटिश भारतीयोंके लिए एक नई निर्योग्यता पैदा हो जायेगी।

(७) सभाकी विनम्र सम्मतिमें सर्वस्वीकृत प्रतिबन्ध लगानेका कोई औचित्य नहीं है।

(८) इसके अलावा सभा महानुभावका ध्यान इस तथ्यकी ओर आकर्षित करना है कि ब्रिटिश भारतीय अध्यादेशमें प्रभावित क्षेत्रमें पिछले बहुत वर्षोंसे बाड़ेदार कायम रहे हैं जो उनको मुख्यतः फ्रीहोल्ड हक नागरिकोंसे प्राप्त हुए थे।

( ) ऐसे बाड़ोंमें कुछ ब्रिटिश भारतीयोंने पक्की इमारतें बना ली हैं और कुछ इस समय पट्टेपर लिये हुए बाड़ोंमें या तो रहते हैं या व्यापार करते हैं।

(१) यदि ये धाराएँ जिनपर आपत्ति की गई है मंजूर कर दी गईं तो ऐसे सभी भारतीय जिनका उल्लेख इस आवेदनपत्रमें पहले किया जा चुका है और जिनके स्वार्थ स्थापित हो चुके हैं विपरीत प्रभाव पड़ेगा और खतरा तो सामने खड़ा ही दिखाई दे जायेगा।

(११) सभा बड़ी नम्रतापूर्वक पूछना चाहती है कि जब कुछ समय पूर्व इस अध्यादेशकर नगरनिगमको सिफारिश देनेके लिए परिषदकी आज्ञाकी देर हुई थी तब ऐसी कोई भी धाराएँ

[1] देखिए पिछला शीर्षक।

शामिल करनेपर जैसी कि ऊपर बताई गई हैं ब्रिटिश भारतीयोंकी ओरसे आपत्तियाँ पेश की गई थीं।

(१२) संघ महानुभावका ध्यान इस तथ्यकी ओर भी आकर्षित करता है कि से प्रभावित क्षेत्र मलय बस्तीसे लगा हुआ है जिसमें एशियाइयोंकी मुख्यतः ब्रिटिश बड़ी आबादी है। फेरीवालों और मलय बस्तीके निवासियोंके सम्बन्ध सदा ही सन्तोषजनक रहे हैं।

(१३) संघ अनुभव करता है कि यदि उल्लिखित धाराएँ महानुभाव द्वारा मंजूर की गईं तो उनकी मंजूरी दूसरी नगरपालिकाओंके लिए नजीर बन जायेगी और उसके फल-स्वरूप ब्रिटिश भारतीय अन्तत नौकर-चाकरोंके दर्जेमें पहुँच जायेंगे और जबरदस्ती बस्तियोंमें भेज दिये जायेंगे।

(१४) इसलिए प्रार्थी नम्रतापूर्वक प्रार्थना करता है कि उल्लिखित अध्यादेश नामंजूर कर दिया जाये या ऐसी अन्य राहत दी जाये जो महानुभावको उचित प्रतीत हो।

और न्याय तथा दयाके इस कार्यके लिए प्रार्थी सदा दुआ करेगा आदि, आदि।

जोहानिसबर्ग तारीख ८ अक्तूबर, १९ ९

अब्दुल गनी
अध्यक्ष
ब्रिटिश भारतीय संघ

टाइप की हुई अंग्रेजी प्रतिकी फोटो-नकल (एस एन ४९८४) से।

४७८ शिष्टमण्डलकी यात्रा — १

[जहाजपर
अक्तूबर ११ १९ ९के पूर्व]

ट्रान्सवालके कानूनके सम्बन्धमें विलायत जानेवाले शिष्टमण्डलका चुनाव हुआ। उसमें म ा ा उसे इंडियन ओपिनियन के पाठक जानते हैं। श्री अब्दुल गनी थी अब्दुल गनी तीन व्यक्ति जायें यह लोगोंने पहलेसे ही तय कर लिया था। लेकिन आखिर श्री अब्दुल गनी तैयार नहीं हुए, और श्री अली तथा श्री गांधीको ही जाना पड़ा।

प्रारम्भमें ही विघ्न

ऊपर कहे अनुसार शिष्टमण्डलमें दो व्यक्ति जायें ऐसा स्पष्ट निर्णय २८ सितम्बर बुध-वारको हुआ। आर्मीडेल कासिल से जानेका निश्चय हुआ और शनिवार, २९ सितम्बरको जहाजके टिकट खरीदे गये। सोमवार, अक्तूबर १ को केप मेलसे जाना था। उसका टिकट भी ले लिया गया। लेकिन एक घंटे बाद स्टेशन मास्टरने कहलाया कि इस मेलसे शिष्टमण्डल नहीं जा सकता रातको ९ बजे गाड़ी जाती है उससे जा सकता है। इसका अर्थ यह हुआ कि यदि केप मेलसे जाना टल गया तो आर्मीडेल कासिल से नहीं जा सकते और शिष्टमण्डलको एक सप्ताहकी देरी हो जायेगी। श्री गांधीने तत्काल इसकी सूचना टेलीफोनसे महाप्रबन्धकको दी और यह बताया कि जाना कितना जरूरी है। महाप्रबन्धक स्टेशन मास्टरको रोकनेका मतलब समझ नहीं पाये इसलिये उन्होंने कहा कि मैं पता लगाकर टेलीफोन करूँगा। एक घंटेके बाद सूचना मिली कि स्टेशन मास्टरने गलती की है और शिष्टमण्डल केप मेलसे जाये तो कोई हर्ज नहीं है।

रेलगाड़ीपर

शामको ६–१५ बजे गाड़ीपर चढ़े। पहलेसे तय किये हुए लोग स्टेशनपर पहुँचानेके लिए आये थे। उनमें श्री अब्दुल गनी श्री ईसप मियाँ श्री कुवाड़िया श्री उमरजी श्री बहाउद्दीन श्री फैन्सी श्री मीठूभाई आदि सज्जन थे। श्री मीठूभाई नारियल वगैरह लाये थे। सबसे हाथ मिलाकर विदा ली।

श्री हाजी वजीर अलीकी हालत

श्री हाजी वजीर अली पिछले दिनोंके कामके कारण थके हुए थे। इसलिए वे पस्तहिम्मत हो रहे थे। उन्हें सन्निपातका रोग है। उससे रास्तेमें तकलीफ होगी यह भय उन्हें तभी था जब शिष्टमण्डलकी बात चल रही थी और वह रेलगाड़ीसे ही सत्य साबित होने लगा। श्री हाजी वजीर अलीके पाँवोंमें ऐंठन शुरू हुई। मुझसे जितनी भी सेवा करते बनी वह की। मैंने उनके जोड़ोंको दबाया व पकड़ा। लेकिन उससे दर्दमें कमी नहीं हुई। श्री अली अपना खाना साथ लाये थे। उन्होंने वही खाया। कॉफी पी। दूसरा कुछ लेनेकी उनकी इच्छा न थी। मैं सैलूनमें खानेको गया। वहाँ उबाले हुए आलू और मटर थे। वे लिये और रोटी खाई। श्री मीठूभाईने जो मेवा बाँध दिया था वह भी खाया। मुझे जो कुछ लिखना था वह लिखा। श्री अली १ बजे सोये। मैं लिखकर बारह बजे सोया। श्री अलीकी रात अर्ध निद्रामें बीती। मंगलवारको सवेरे उठते ही उनकी पीड़ा बहुत बढ़ गई। साथ ही बुखार भी चढ़ आया और खाँसी भी शुरू हो गई।

केप मेलकी व्यवस्था

जहाजमें जैसी व्यवस्था रहती है केप मेलमें भी लगभग वैसी ही व्यवस्था रखी जाती है। सवेरेसे ही खाना शुरू हो जाता है। स्नान तक की व्यवस्था वहाँ रहती है। यात्री फुहारेसे भी स्नान कर सकते हैं। इस ट्रेनमें सिर्फ पहले दर्जेके लोग ही जा सकते हैं।

केप टाउनमें

केप टाउनमें गाड़ी बुधवारको २ बजे पहुँची। वहाँ श्री यूसुफ हमीद गुल श्री मामद गुल श्री मखाराम और श्री अब्दुल कादिर स्टेशनपर मिलने आये थे। श्री यूसुफ हमीद गुलने अपने यहाँ खाना बनवाया था। वह खाकर हम ४–४५ बजे रवाना हुए थे। ये तीनों सज्जन जहाजपर भी आये थे।

आर्मोडेल कासिल

यूनियन कासिल मेलकी कासिलोंमें आर्मोडेल कासिल बड़ेसे-बड़े जहाजोंमें से है। इसका वजन १ ९७३ टन है। इसकी शक्ति १२५ हॉर्स पावर और लम्बाई ५९ फुट ६ इंच है। इसकी चौड़ाई ६४ फुट ६ इंच और ऊँचाई ४२ फुट ३ इंच है। उसमें पहले दर्जेके १२ दूसरे दर्जेके २२५ और तीसरे दर्जेके २८ यात्री जा सकते हैं। हर दर्जेके यात्रियोंके लिए विशाल और सुन्दर भोजन-कक्ष है। उनमें हवाके आने जानेके लिए व्यवस्था भी उत्तम है। हर दर्जेके लिए पढ़ाईका पुस्तकें मिलती हैं और पढ़नेके लिए अलग अलग कमरे बने हुए हैं। स्नानकी व्यवस्था बहुत ही अच्छी है और गर्म तथा ठंडा पानी जितना चाहें उतना मिल सकता है। पाखाने बहुत ही साफ रखे जाते हैं और उनमें सूचना लगी रहती है कि कोई पानी [illegible] न बिगाड़े। पहले और दूसरे दर्जेके अलग-अलग विभाग हैं। हमारा [illegible] पहले दर्जेका तीसरा [illegible] है और [illegible]। यानी टिकट [illegible] ७ नं० १ [illegible] देना पड़ा है।

खानेकी व्यवस्था

इन जहाजोंमें न जाने क्यों ऐसी व्यवस्था होती है कि मानो यात्रियोंको खाते ही रहना है। सबेरे ६ बजे नौकर कॉफी रोटी और मेवे लाता है। साढ़े आठ बजे कलेवा किया जाता है। उसमें करीबन दस तरहकी चीजें होती हैं। ग्यारह बजे डेक पर चाय और बिस्कुट आते हैं। एक बजे फिर सलूनमें दोपहरका खाना शुरू होता है। उसमें भी दस पन्द्रह चीजें होती हैं। शामको चार बजे चाय बिस्कुट और रोटी वगैरह। साढ़े छः बजे सलूनमें खाना और रातको नौ बजे या कुछ देरसे यात्रियोंकी रुचिके अनुसार चाय, बिस्कुट वगैरा चीजें। यह सब जहाजके किरायेमें शामिल है। इसके अलावा यात्रियोंको यदि कलेवेके समय शराब वगैरह चाहिये तो वह अलग। उसके पैसे देने पड़ते हैं। ऐसे जो शराब वगैरह न लेते हों क्वचित् ही मिलते हैं।

यात्री

हमारे साथी यात्रियोंमें तीन व्यक्ति विशिष्ट हैं। उनके नाम देना जरूरी है। एक तो ट्रान्सवालके कार्यवाहक लेफ्टिनेंट गवर्नर सर रिचर्ड सॉलोमन और उनकी लेडी सॉलोमन हैं। वे खास तौरसे लॉर्ड एलगिनसे मिलने जा रहे हैं। दूसरे दक्षिण आफ्रिकाके प्रख्यात ज्योतिष-शास्त्री सर डेविड गिल हैं और तीसरे केप सर्वोच्च न्यायालयके न्यायाधीश सर जॉन बुकैनन हैं। इनके अलावा लॉर्ड सॉमर भी हमारे साथ हैं।

श्री अली और मैंने कैसे समय बिताया श्री अलीकी स्थिति कैसी है और हमने यात्रियोंसे ...ा की है इसका विवरण हम दूसरे भागमें देंगे। इस बीच पढ़नेवालोंके लिए ...तना बता देता हूँ कि श्री अलीकी तबीयत अब सुधर गई है और वे अब मैं ... डेकपर मजा कर रहे हैं।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, १-११-१९०६

४७९. शिष्टमण्डलकी यात्रा — २

[जहाजपर
अक्तूबर ११, १९०६]

हमने क्या किया

मैं पहले भागमें बता चुका हूँ कि जब हम जहाजपर चढ़े उस वक्त भी श्री अलीकी तबीयत सुधरी नहीं थी। उन्हें बिस्तरपर ही रहना पड़ा। अपने साथ वे जो औषधियाँ लाये थे वे उन्होंने ली और मसाले सोप लिनिमेंटकी मालिश करवाई। उससे कुछ फर्क तो दिखाई दिया लेकिन दर्द नहीं गया। तीसरे दिन डॉक्टरको तबीयत बताई। उसने पसीना लानेकी दवा फेनासिटीन दी। उससे संधियाँ नरम पड़ीं और चौथे दिन श्री अली बिस्तरसे उठे। लेकिन फिर भी पूरा आराम नहीं हुआ। फिर मैंने उन्हें डॉक्टर कूनेका उपचार आजमानेकी सलाह दी। डॉ॰ कूनेके उपचारके मुताबिक श्री अली गरम और ठंडे पानीसे स्नान करते हैं। सवेरे खाना नहीं खाते। पहले वे सवेरे उठकर कॉफी लेते थे कलेवेके समय बढ़िया कॉफी और मेवे लेते थे।

4668

4668 POST CARD

Ramdas Gandhi
Indian
Opinion
Phoenix
Natal

जहाज आर्मडेल कासिल से

दोनों समयका खाना बन्द करके उन्होंने एक बजे खाना शुरू किया। दवा बन्द कर दी। इस उपचारका आज तीसरा दिन है (ता. ११ अक्तूबर)। श्री अली उससे ठीक हैं। एक बजे भूख लगती है और जो बदकोष्ठ या तथा अजीर्ण रहता था वह अब नहीं है। वे बीड़ी भी एक बजेके पहले नहीं पीते। आज भी यद्यपि तबीयत बिलकुल ठीक नहीं कही जायेगी फिर भी मंदाग्निपर काबू पा लिया है और घूमने-फिरनेमें कुछ ही तकलीफ होती है। उनकी खुराक सादी है। दोपहरमें मछली और आलू पुडिंग और काफी तथा सोंठका पानी (जिंजर एल) लेते हैं। शामको चार बजे चायका एक प्याला साढ़े छः बजे मछली हरी सब्जी पुडिंग और सोंठका पानी और काफी लेते हैं। इतना खानेके बाद और भी किसी चीजकी इच्छा उन्हें रहती हो सो नहीं मालूम होता। पाठकोंको यदि यह जाननेकी जिज्ञासा हुई हो कि मैं क्या खाता हूँ तो मैंने तीन दिन तक तो तीन वक्त खानेका नियम रखा था। लेकिन उतना खानेकी आवश्यकता न समझ अब एक बजे दूध रोटी आलू उबला हुआ मेवा और मलाई तथा सोडा या सोंठका पानी चार बजे कोको और शामको साढ़े छः बजे आलू उबली हुई हरी सब्जी और उबला हुआ मेवा और सोडा या सोंठका पानी ले लेता हूँ। रोटी और दूसरा मेवा नहीं खाता। इसका कारण यह है कि मेरी हिली हुई दाढ़में दर्द है। इस खुराकसे बिलकुल संतोष रहता है और काम बहुत हो सकता है। इसका मुख्य कारण मैं यह मानता हूँ कि एक बजे तक पेटमें कुछ न जानेसे उपर्युक्त खुराकसे संतोष हो जाता है और वह बस होती है। यह खुराक कुछ तो मेरे नियमके बाहरकी मानी जायेगी फिर भी चूँकि ठीक ही रहता हूँ इससे सिद्ध होता है कि जो खाना भूख लगनेपर खाया जाता है, वह तकलीफ नहीं देता।

श्री अली जस्टिस अमीर अलीकी पुस्तक इस्लामकी स्फूर्ति (स्पिरिट ऑफ इस्लाम) और वाशिंगटन इर्विंगकी पुस्तक मुहम्मद और उनके बादके लोग (महम्मद ऐंड हिज सक्सेसर्स) पढ़ रहे हैं। मैं तमिलका अभ्यास करता हूँ और फॉर्ब्स कृत रासमाला अथवा गुजरातका इतिहास और विदेशी प्रवासी रिपोर्ट (एशियन इमिग्रेशन रिपोर्ट) पढ़ रहा हूँ। अब चूँकि मडीरा नजदीक आ गया है इसलिए ओपिनियन की डाक शुरू की है। हम दोनों दूसरे यात्रियोंके सम्पर्कमें कम आते हैं। सर रिचर्ड सॉलोमनके साथ कभी-कभी कुछ बातचीत होती है। हमारे साथ चीनी राजदूत उनकी नौ वर्षकी लड़की तथा एशियाई कानूनके सम्बन्धमें चीनी शिष्टमण्डलके प्रतिनिधि श्री जेम्स हैं। चीनी राजदूत अपनी राजकीय पोशाक पहनते हैं। खुद स्वभावसे मिलनसार, विनोदी और होशियार हैं। उनकी लड़कीको अंग्रेजी शिक्षा अच्छी मिली है। इसलिए वह हँसी-मजाक करती-कराती है और यात्री उसके साथ खुलकर व्यवहार करते हैं।

जहाजमें साधारण स्थिति

दूसरे यात्री बड़े आनन्दसे दिन बिताते हैं। आज एक सप्ताहसे खेल चल रहे हैं। इनाम इनामोंके लिए चन्दा किया गया है। हम दोनोंका एक-एक गिनीका दान गया है। खेलोंमें छल्ला क्रिकेट चकरी फेंकना चम्मचमें अंडा लेकर दौड़ना आदि होते हैं। ये खेल १२ तारीखको पूरे होंगे और १४ तारीखको इनाम बँटेगा। रातके समय यात्री नाच करते हैं। उस समय हमेशा बैंड बजता है। खेलोंमें रिचर्ड सॉलोमन भी भाग लेते हैं। हम उसमें भाग नहीं ले सके। इसका मुख्य कारण है श्री अलीकी तबीयत और मेरा अध्ययन। रविवारको खेल बन्द रहते हैं। सलूनमें चर्च लगता है और वहाँ ईसाई प्रथाके अनुसार गुनाकी इबादत की जाती है।

४८० नये नगरपालिका-कानूनके सम्बन्धमें दो शब्द

ट्रान्सवालमें नगरपालिकाको कुछ अधिकार देनेवाला कानून हम दूसरी जगह दे रहे हैं। उसके विरुद्ध कहनेको कुछ नहीं रहता। यह कानून सबपर लागू होता है और, कहा जा सकता है कि शहरकी स्वास्थ्य रक्षाके हेतु अथवा ऐसे ही दूसरे कारणोंसे आवश्यक है। बहुतेरे कानूनोंके सम्बन्धमें तो हमें अपने ही विरुद्ध खड़े होनेकी जरूरत है। हम अपना आँगन साफ न रखें और उससे हमें दुःख उठाना पड़े तो उसके लिए हम दूसरोंको दोष नहीं दे सकते। उपर्युक्त कानूनसे यह मालूम होता है कि यदि हम स्वच्छताके नियम भंग करेंगे तो बड़ी कठिनाई होगी। यदि हम पहलेसे नहीं चेतेंगे तो फिर हमारे ही हाथों हमारा सिर फूटेगा। हमारे परवाने छिन जायेंगे और हम हाथ मलते रह जायेंगे। जिनके आस-पास दुश्मन रहते हों उन्हें बहुत ही चेतकर रहना पड़ता है। यहाँकी भाषामें कहें तो ऐसे लोगोंको 'कामर'[1] रखकर रहना पड़ता है। हमारी यही हालत है। स्वच्छता आदिके सम्बन्धमें हमें पोरोंसे बढ़ जाता है। यह स्थिति अभी नहीं आई है। लेकिन यदि हम नींदसे उठें आलस्य छोड़ें चुस्त बनें और थोड़ा-सा श्रम करें तो हम गन्दगीके पाशसे छूट सकते हैं। गन्दगी रूपी नासूर हमें सदा ही पीड़ा देता है, और क्षीण कर डालता है। नासूरको चीरते समय जैसे पहले दर्द होता है और बादमें हम सुखी होते हैं उसी तरह गन्दगी रूपी नासूरको चीरनेकी आवश्यकता है। यह काम हमीदिया व हिन्दू आदि समाजोंका है, और वह भी सिर्फ जोहानिसबर्गमें ही नहीं सभी जगह। क्या वे सभाएँ जागेंगी?

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन १३-१०-१९०६

४८१ दावामल

आजकल दक्षिण आफ्रिकाके सार्वजनिक मण्डलोंमें एशियाई समाजको लेकर विशेष चर्चा होने लगी है। ऐसी चर्चा में जहाँ जरा-सा भी मौका हाथ आता है, भारतीयोंको तुरन्त आगे रख दिया जाता है। इन निन्दकोंमें व्यापार-संघ मुख्य हैं। डेलागोआ-बेमें व्यापार संघोंकी एक सभा हुई थी जिसमें समस्त भारतीयोंको पृथक बस्तियोंमें भेजनेका सुझाव पेश किया गया था। यह हम पहले कह चुके हैं। अभी मैरित्सबर्गमें व्यापार-संघकी एक बैठक हुई थी।[2] उसमें संघने भारतीय व्यापारियोंके सम्बन्धमें अपने कुछ विचार प्रकट किये। अध्यक्षने अपने भाषणमें कहा था कि रंगदार व्यापारियोंकी संख्या बढ़ी है और गोरोंकी संख्या घटी है। अध्यक्ष श्री विलिन्सने बोलते समय आँकड़ोंका खयाल रखा होगा सो नहीं जान पड़ता। भारतीय व्यापारियोंकी संख्या इतनी बढ़ी है कि उसे सुनकर चौंक जायगे ऐसा कहनेसे पहले उन्हें साबित करना चाहिए था कि एशियाई व्यापारियोंकी संख्या इतनी बढ़ी है। फिर भी विलिन्स यह भी कहते हैं कि गाँवोंमें

१. आजकल रक्षाके लिए [illegible] या अन्य प्रकारकी सामरिक तैयारी।
२. २ अक्टूबर १९०६को।

भारतीय इतने कम नये हैं कि वे निकायमें अपने प्रतिनिधि भेज सकते हैं। यह बात भी बातकी तरह ही बेबुनियाद है। लेकिन मान के कि सही है तो उसमें बुरा क्या? क्या भारतीय देशकी समृद्धिमें वृद्धि नहीं कर रहे हैं? जिस तरह यूरोपीय व्यापारियोंको चाहिए उसी तरह भारतीय व्यापारियोंको भी उसकी उतनी ही आवश्यकता है। श्री ग्रिफिनके मुँहसे यह भी निकला कि दूकान कानून भारतीयोंको मारनेका हथियार बन है। दूकान कानून भारतीयोंके लिए बनाया गया है यह इससे भी स्पष्ट हो जाता है। खूबी तो यह है कि भारतीयोंको कुचलनेके लिए कानून बनाया गया फिर भी भारतीय फले हैं यह स्वयं गोरे लोग ही स्वीकार करते हैं। यदि स्थिति यह है तो भारतीयोंमें पू न-कुछ कुशलता होनी ही चाहिए। और यदि वह कुशलता है तो फिर भारतीयोंकि यह सीखनकी अपेक्षा उन्हें बदनाम करनेमें शक्ति लगानेसे क्या लाभ होगा?

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन १३-१-१९१

४८२ पत्र रामदास गांधीको[1]

[कार्तिक
अक्तूबर २ १९१ के पू

तुम्हारे पत्र मिलने ही चाहिए।

मोहनदास

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल गुजरातीसे
सौजन्य श्रीमती सुशीला बहन गांधी

१ यह पत्र गांधीजीने जिस कागजपर लिखा है उसकी दूसरी तरफ उनका व्याख्या चित्र है।

भारतीय इतने कम पढ़े हैं कि वे विधानसभामें अपने प्रतिनिधि भेज सकते हैं। यह बात
बातकी तरह ही बेबुनियाद है। लेकिन मान लें कि सही है, तो उससे कुछ
क्या भारतीय देशकी समृद्धिमें वृद्धि नहीं कर रहे हैं? जिस तरह यूरोपीय व्यापारियोंकी
चाहिए उसी तरह भारतीय व्यापारियोंको भी उसकी उतनी ही आवश्यकता है।
श्री स्मिथके मुँहसे यह भी निकला कि दूकान कानून भारतीयोंको खदेड़नेका हथियार बना
है। दूकान कानून भारतीयोंके लिए बनाया गया है यह इससे भी स्पष्ट हो जाता है।
खूबी तो यह है कि भारतीयोंको कुचलनेके लिए कानून बनाया गया फिर भी भारतीय
फल है यह स्वयं सारे लोग ही स्वीकार करते हैं। यदि स्थिति यह है तो भारतीयोंमें
कुछ-कुछ कुशलता होनी ही चाहिए। और यदि यह कुशलता है तो फिर भारतीयोंके
जीवनकी अपेक्षा उन्हें बदनाम करनेमें शक्ति लगानेसे क्या लाभ होगा?

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन १३-१-१९०६

४८२ पत्र: रामदास गांधीको[1]

[आश्रमिक कार्य]
अक्तूबर २, १९१

ग

तुम्हारे पत्र मिलने ही चाहिए।

आशीर्वाद स्वामीराम मूल गुजरातीसे
सौजन्य श्रीमती सुशीला बहन गांधी

१ यह पत्र [illegible] लिखा है उसके दूसरी तरफ [illegible] लिखा है।

४८३. शिष्टमण्डलकी यात्रा — ३

[जहाजपर
अक्तूबर २, १९०६ के पूर्व]

विविध विचार-तरंगें

इस यात्रा-विवरणके सिलसिलेमें अंग्रेजोंकी समृद्धिके कारणोंपर कुछ प्रकाश डाला गया है। मैं जानता हूँ कि जैसे सिक्केके दो पहलू होते हैं उसी तरह अंग्रेजोंके रहन-सहनके भी दो पहलू हैं। उलटा पहलू देखना हमारा काम नहीं। कहावत है कि हंस पानी और दूध अलग करके दूध ही लेता है। उसी प्रकार हमें भी अपने शासकोंके अच्छे गुणोंको समझकर उन्हींका अनुकरण करना है। इसलिए हमने जिस तरीकेसे विचार करना शुरू किया है उसीका यदि खयाल रखें तो मालूम होगा कि जहाजपर सारे दिन सब लोग आनन्द-विनोद ही नहीं करते रहते। जिन्हें काम है वे भी बिना किसी टीमटामके मानो काम करना भी स्वाभाविक ही है, अपना काम करते रहते हैं। जहाजपर ऐसे यात्री भी हैं जो पुस्तकें पढ़ा करते हैं। उनकी पढ़ाई विनोदके लिए नहीं बल्कि इसलिए होती है कि पढ़ना आवश्यक है। लेकिन पढ़ना समाप्त हो जानेके बाद वे भी आनन्द-विनोदमें शामिल हो जाते हैं। जहाजके कर्मचारी अपना काम नियमित रूपसे करते रहते हैं, एक मिनटकी भी टालमटूल नहीं करते। अपने आसपासकी टीमटाम देखकर वे हैसियतको भूल नहीं जाते। उन्हें ईर्ष्या नहीं होती। वे अपने काममें मशगूल रहते हैं। ऊपर जो भी लिखा गया है उसमें से बहुत-से काम तो हम करते हैं और कुछ बातोंमें तो हम अंग्रेजोंसे भी बढ़ जाते हैं। लेकिन यदि समग्ररूपसे देखें और सभी बातोंकी तुलना करें तो अंग्रेजोंकी जमा बाजू हमसे बढ़ जायेगी। जिस जहाजमें हम बैठे हैं उसको बनानेकी शक्ति हममें नहीं है। यदि बना लें तो चलाना नहीं जानते। सार्वजनिक जीवनकी तुलनामें हम उनका मुकाबला नहीं कर सकेंगे। इतने सारे लोग बिना हल्ला-गुल्ला किये एक साथ काम कर सकते हैं यह शक्ति हम शायद ही दिखा सकेंगे। उनके रहन-सहनकी पद्धति ऐसी है कि उससे वे काफी समय बचा सकते हैं और इस जमानेमें समय बचाना पैसा बचानेके बराबर है। इस जहाजमें छापाखाना है। उसमें उनके कार्यक्रम और भोजन-सूची छपती रहती है। तार भेजनेके लिए टाइपराइटर रहता है। खाना परसनेका काम व्यवस्थित ढंगसे होता है। इससे शुद्धि रहती है और समय बचता है। जिस तरहका जीवन वे बिताते हैं — बिताना चाहते हैं — उसके लिए यह सब आवश्यक है। इससे हमें उनके ठाठपर दृष्टि न डालकर ईर्ष्या न करके यह समझना चाहिए कि उन्हें जो कुछ भी मिला है वे उसके लायक हैं और उनके लिए व्यवस्थित वैसा करना आवश्यक है। यह किस तरह किया जाये इसपर विचार करनेकी यह जगह नहीं। यात्रा करते-करते जो बातें मेरे मनमें उठी हैं उन्हें मैंने उसी रूपमें पाठकोंके समक्ष रख दिया है।

जहाजकी गति तथा हवा

इस [illegible] जहाज सामान्यतः नवीन [illegible] है। यह प्रति दिन औसतन [illegible] मील चलता है। चार दिन हवा ठंडी रही। लेकिन जैसे-जैसे ऊपर चढ़ [illegible] हैं गर्मी बढ़ती जा रही है। फिलहाल हम भूमध्य रेखाके पास हैं। इससे गर्मी बहुत है [illegible] गर्मी [illegible] सह [illegible] रही है। [illegible] दिन और [illegible] है। [illegible]

अनुसार तो तनखरीक पहले बहुतेरोंको पंजीयनपत्र ले लेने चाहिए। यदि इस अवधिमें किसी भी भारतीयने पंजीयनपत्र न लिया तो सरकारको फिक्र होगी। सम्भव है वह नेताओंसे पूछे। लेकिन सरकार पूछे या न पूछे संघको तो पत्र लिखना ही होगा कि भारतीयोंमें से कोई भी पंजीयनपत्र लेने नहीं जायेगा। इसपर यदि सरकारको मुकदमा चलाना हो तो बेहतर होगा कि वह अनुमतिपर चलाया जाये। सरकार इस पत्रको माने या न माने यदि वह पंजीयनपत्र न लेनेकी बिनापर एक या ज्यादा व्यक्तियोंको गिरफ्तार करती है, तो श्री गांधीको अपने वचनके अनुसार पैरवी करनेको जाना होगा। वहाँ बचावमें और कुछ कहना नहीं है। वहाँ वे सिर्फ पिछला इतिहास सुनायेंगे और बतलायेंगे कि पंजीयनपत्र न लेनेमें न लेनेवालेका गुनाह नहीं है बल्कि उस श्री गांधीका या संघका गुनाह माना जाना चाहिए क्योंकि उन्हीकी सलाहसे यह हुआ है। इसपर, सम्भव है, लोगोंको उकसानेकी बिनापर श्री गांधीको ही गिरफ्तार किया जाये या फिर गिरफ्तार किये गये लोगोंको भारी सजा ही दी जाये अथवा जुर्माना किया जाये। जुर्माना तो हमें देना नहीं है बस जेल जाना ही रहा। इस मामलेके तार सारी दुनियामें जायें और ऐसे जो दूसरे मामले हों उनके तार भी भेजे जायें।

२ ऊपर जो बताया गया है उसके सिवा बचाव करनेको और कुछ नहीं रहता। यदि सरकारी वकील कानूनमें गलती करे तो उसका फायदा जरूर उठाया जा सकेगा।

३ जब जेल जानेका प्रस्ताव किया जा चुका है तब जमानत देकर छूटनेकी बात ही नहीं रहती। इस प्रकार जेल जानेमें बदनामी नहीं है।

४ सजा हमेशा जुर्मानेकी और जुर्माना न देनेपर जेलकी या जुर्माने और जेल दोनोंकी हो सकती है। और, अगर यह जुर्माना न दिया जाये तो और जेलकी। जुर्माना तो हमें देना ही नहीं है। किसीको हाथ पकड़कर निकाल देनेकी सजा नहीं दी जा सकती। यदि कोई जेल भुगतकर आनेके बाद भी पंजीयनपत्र न ले तो वह गुनहगार ठहरता है। मानो यदि सरकार चाहे तो सबका हमेशाके लिए जेलमें रख सकती है।

५ पहले किस पकड़ा जायगा यह नहीं कहा जा सकता।

६ व्यापारी वर्गके सभी लोगोंको जेल जाना पड़े यह सम्भव नहीं। फिर भी यदि जाना ही पड़े तो उसमें हर्ज जैसा कुछ नहीं। ऐसा होनेपर दूकान बन्द ही कर देनी चाहिए या किसी भरोसेके व्यक्तिको सौंपी जा सकती है। सरकार यहाँतक जाये सो होगा नहीं। फिर भी यह माननेकी जरूरत नहीं कि अमुक बात हो ही नहीं सकती।

७ नये कानूनके अनुसार जिन्होंने नये पंजीयनपत्र न लिये हों उन्हें परवाने पानेका हक नहीं है। यदि परवाना न दिया जाये तो परवानेका शुल्क भेजकर हमारा जो भी माल हो उसे पास रखा जाय। यदि बिना परवानेके व्यापार करनेपर मुकदमा चलाया जाये तो भी जुर्माना न देकर जेलकी सजा ही मांगी जाये।

८ यह सवाल उठता ही नहीं। जेल जाना ही अपराध है तो फिर उसमें दूसरा प्रश्न ही क्या? अनुमतिपत्रकी धारा रजिस्टर बढ़कर बदनामी और किसमें है? जिसमें हम बदनामी मानते हैं वह काम हम करें ही क्या? दूसरे चाहे कर लें हम चाहें ही क्यों। हमने जब कर रजिस्टर स्वीकार किया तब उसने ऐसा विचार नहीं किया था।

९ जो नये पंजीयनपत्र लेंगे उनकी नाक कटेगी और वे भारतीय समाजके [illegible] बनेंगे।

१ देखिए "[illegible]", पृष्ठ ४८८–९।

कि इतनी गर्मी होनेके बावजूद ज्यादा गर्मी नहीं मालूम होती। कोठरियों (कैबिनों) हवा आनेकी व्यवस्था रहती है, जिससे उनमें सारी रात ठंडक रहती है। जाड़ेमें भी वे अनुसार परिवर्तन करते हैं और हर यात्रीको पंखा दिया जाता है।

सर रिचर्ड सॉलोमनसे बातचीत

हम मदीरा पहुँचनेकी तैयारीमें थे। उस समय सर रिचर्ड सॉलोमनसे हमारी बातचीत सारी बातचीतके बीच उन्होंने बतलाया कि किसी समय वे आयोग नियुक्त करनेके बारेमें उन्हें यह सूचना मिली है कि भारतीयोंने हर बन्दरगाहपर एजेंट मुकर्रर कर लिये हैं, जो लोगोंको गलतबयानीका मुबीला बतलाकर दाखिल कर देते हैं और इस प्रकार बहुतसे लोग हुए हैं। इसका अर्थ यह हुआ कि सारी कौम बदनाम है और उसकी रक्षा देनेके लिए ही कानून बनाया गया है। दूसरे दिन सर रिचर्डने भी नयीको नया कानून स्वीकार करनेकी दी। इससे लगता है कि सर रिचर्डने आयोग नियुक्त करनेका विचार छोड़ दिया है। खयालमें उसका कारण यह है कि उन्हें उत्तरदायी सरकारका प्रथम गवर्नर बननेका लोभ है। यदि आयोग वगैरह नियुक्त करके हमारी दलीलोंको मान लें तो सम्भव है उससे नुकसान हो जायेगा। इसलिए वे हमारे लिए कुछ करना नहीं चाहते।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन २८-११-१९ ६

४८४ कुछ प्रश्न

…आरके नये कानूनके सम्बन्धमें बहुतेरे प्रश्न पूछे गये हैं। उनमें से महत्त्वपूर्ण प्र… नर हम नीचे दे रहे हैं

प्रश्न

१ कानूनका विरोध किस तरह किया जाये?
उसमें बचाव क्या किया जा सकता है?
जमानत देकर छूटना चाहिए या नहीं?
सजा क्या हो सकती है?
पहले फेरीवालोंको पकड़ा जायेगा या दूसरोंको?
६ व्यापारियोंका क्या हाल होगा?
७ अगले वर्ष परवानोंका क्या होगा?
८ जेल जानेसे भी फायदा न हो तो?
९ कोई-कोई लोग नये पंजीयनपत्र ले लें तो?
१ पंजीयन करानेमें क्या हर्ज है?

उत्तर

१ बहुतेरे भारतीयोंकी राय है कि पहली जनवरी को सभी भारतीयोंको अदालत या जेलके दरवाजेपर उपस्थित होकर कहना चाहिए कि हमें पकड़ो हम नये पंजीयनपत्र नहीं लेना चाहते। लड़ाई इस तरहसे नहीं की जा सकती है। इस तरह सभी लोग हाजिर हो जायेंगे तो उन्हें कोई पकड़नेवाला नहीं होगा। पकड़ना या न पकड़ना यह सरकारकी मर्जीपर है। उसके मिजाजके

अनुसार तो जनवरीके पहले बहुतेरोंको पंजीयनपत्र ले लेने चाहिए। यदि इस अवधिमें किसी भी भारतीयने पंजीयनपत्र न लिया तो सरकारको फिक्र होगी। सम्भव है वह नेताओंसे पूछे। लेकिन सरकार पूछे या न पूछे संघका तो पत्र लिखना ही होगा कि भारतीयोंमें से कोई भी पंजीयनपत्र लेने नहीं जायेगा। इसपर यदि सरकारको मुकदमा चलाना हो तो बेहतर होगा कि वह अगुओंपर चलाया जाये। सरकार इस पत्रको माने या न माने यदि वह पंजीयनपत्र न लेनेकी बिनापर एक या ज्यादा व्यक्तियोंको गिरफ्तार करती है तो भी गांधीको अपने वचनके अनुसार पैरवी करनेको जाना होगा। वहाँ बचावमें और कुछ कहना नहीं है। वहाँ वे सिर्फ पिछला इतिहास सुनायेंगे और बतलायेंगे कि पंजीयनपत्र न लेनेमें न लेनेवालेका गुनाह नहीं है, बल्कि उस भी गांधीका या संघका गुनाह माना जाना चाहिए क्योंकि उन्हींकी सलाहसे यह हुआ है। इसपर, सम्भव है, मामलेको उठानेकी बिनापर श्री गांधीको ही गिरफ्तार किया जाये या फिर गिरफ्तार किये गये लोगोंको थोड़ी सजा ही दी जाये अथवा जुर्माना किया जाये। जुर्माना तो हमें देना नहीं है अतः जेल जाना ही रहा। इस मामलेके तार सारी दुनियामें जायें और ऐसे जो दूसरे मामले हों उनके तार भी भेजे जायें।

२ ऊपर जो बताया गया है उसके सिवा बचाव करनेको और कुछ नहीं रहता। यदि सरकारी वकील कानूनमें गलती करे तो उसका फायदा जरूर उठाया जा सकेगा।

३ जब जेल जानेका प्रस्ताव किया जा चुका है तब जमानत देकर छूटनेकी बात ही नहीं रहती। इस प्रकार जेल जानेमें बदनामी नहीं है।

४ सजा हमेशा जुर्मानेकी और जुर्माना न देनेपर जेलकी या जुर्माने और जेल दोनोंकी हो सकती है। और, अगर यह जुर्माना न दिया जाये तो और जेलकी। जुर्माना तो हमें देना ही नहीं है। किसीको हाथ पकड़कर निकाल देनेकी सजा नहीं दी जा सकती। यदि कोई जेल भोगकर आनेके बाद भी पंजीयनपत्र न ले तो वह गुनहगार ठहरता है। यानी यदि सरकार चाहे तो सबको हमेशाके लिए जेलमें रख सकती है।

५ पहले किसे पकड़ा जायेगा यह नहीं कहा जा सकता।

६ व्यापारी वर्गके सभी लोगोंको जेल जाना पड़े यह सम्भव नहीं। फिर भी यदि जाना ही पड़े तो उसमें हर्ज जैसा कुछ नहीं। ऐसा होनेपर दूकान बन्द ही कर देनी चाहिए या किसी भरोसेके नौकरको सौंपी जा सकती है। सरकार यहाँतक जाये सो होगा नहीं। फिर भी यह माननेकी जरूरत नहीं कि अमुक बात हो ही नहीं सकती।

७ नये कानूनके अनुसार जिन्होंने नये पंजीयनपत्र न लिये हों उन्हें परवाने पानेका हक नहीं है। यदि परवाना न दिया जाये तो परवानेका शुल्क भेजकर व्यापार जो भी धन्धा हो उसे चालू रखा जाये। यदि बिना परवानेके व्यापार करनेपर मुकदमा चलाया जाये तो भी जुर्माना न देकर उसकी सजा ही भोगी जाये।

८ यह सवाल उठता ही नहीं। जब स्वयं ही फायदा है तो फिर उसमें दूसरा प्रश्न ही क्या? अँगुलियोंकी छाप देना बढ़कर बदइज्जती और किसमें है? जिसमें हम बेइज्जती मानते हैं वह काम हम करें ही क्या? दूसरे चाहे करें पर हम थोड़े ही करेंगे। हेमरूने जब कर्नल डगलस [illegible] दिया तब उसने ऐसा विचार नहीं किया था।

९ जो नये पंजीयनपत्र लेंगे उनका नाम छपेगी और वे भारतीय समाजके तिरस्कारपात्र बनेंगे।

१ देखिए [illegible] पृ. ४८८–९।

१ पंजीयनपत्र लेनेमें यह आपत्ति है कि हमारी स्थिति काफिरोंसे भी बदतर [illegible] पंजीयनपत्र लेने या न लेनेसे बिना अनुमतिपत्रवाले लोगोंका मामला होता या नहीं उठता ही नहीं। नये पंजीयनपत्र लेनेमें हमारी ही नाक कटती है। नाक कटानेमें आपत्ति है उतनी ही आपत्ति पंजीयनपत्र लेनेमें है। जिससे जेल सहन न की जा सके ठीक होगा कि वे ट्रान्सवाल छोड़ दें। जेल छोड़नेमें भी नामर्दगी तो है ही, पंजीयनपत्र लेनेमें ज्यादा नामर्दगी है।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन २-१-१९०९

४८५ आशाकी किरण

सार्वजनिक सभाके प्रस्ताव कहाँतक कारगर होंगे इसके बारेमें जानना ही तो है। उनमें से तीसरे और चौथे प्रस्तावोंके बारेमें जानना है। उनका बल शिष्टमण्डलकी बात जमी हुई है वह भारतीय समाजकी दृढ़तापर अवलम्बित है। चौथे प्रस्तावपर दृढ़तापूर्वक अमल करनेमें ही होगा। और फिर, कौन कह सकता है कि उसका प्रभाव जल्दी ही नहीं होने लगा है? एक दफा शिष्टमण्डल भेजनेसे सम्भव तीसरे प्रस्तावको रद कर देनेका विचार किया गया था आजकी खबरसे मालूम होता है कि शिष्टमण्डल समयसे चला गया यह बहुत ही अच्छा हुआ है। [illegible] जोहानिसबर्ग-संवाददाता कहता है कि उपनिवेश-मंत्रीने लॉर्ड सेल्बोर्नको तार भेजा है [illegible] शिष्टमण्डलका निवेदन सुने बिना एशियाई कानूनको मंजूरी नहीं दी जायेगी यह [illegible] सूचित कीजिए। इतनेसे तीसरे प्रस्तावका काम पूरा हो जाता है। निवेदनको जो महत्त्व दिया उसके कारणोंकी खोज जाने तो चौथे [illegible] माना जायेगा। लॉर्ड एलगिनके तारसे तीसरे प्रस्तावकी साथ ही चौथे प्रस्तावका प्रभाव भी दिखाई देता है। [illegible] [illegible] यह तो सिद्ध होता ही है कि यदि सरकारने ट्रान्सवालके भारतीयोंकी [illegible] ऐसे समयमें शिष्टमण्डल सरकारका बहुत काम कर सकेगा। [illegible] [illegible] दिखाने लगा है, तो जब उनपर अमल किया जायेगा तब क्या [illegible] [illegible] असर हुए बिना रह सकता है?

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन २-१-१९०९

४८६ टाइलर हैम्डन और वलिकन

हम इन तीन व्यक्तियोंका उल्लेख कर चुके हैं[१]। इन लोगोंने अपने देशके लिए जो कुछ किया है उसका सौवाँ हिस्सा भी हममेंसे कोई व्यक्ति दक्षिण आफ्रिकामें करे तो हमारी बेड़ी टूट सकती है।

वाट टाइलर बारहवीं सदीमें हुआ। एक बार इंग्लैंडके राजाने किसानोंपर भारी कर लगा दिया। यह कर अन्यायपूर्ण था। टाइलरने कर न देनेका निश्चय किया। उसके साथ बहुत-से किसान

१. देखिए "[illegible] भारतीयोंका धर्म" पृष्ठ ८०८-९।

हो गये। फौजने टाइलर और उसकी टोलीका सामना किया। टाइलर मारा गया। लेकिन अन्तमें किसानोंके सिरसे करका बोझ भी कम हो गया। इस घटनाके बाद लोगोंको अपनी सत्ताका जो भान हुआ उसका ज्यादा परिणाम सत्रहवीं सदीमें देखनेको मिला।

उस समय इंग्लैंडमें चार्ल्स राज्य करता था। उसे विदेशोंमें युद्ध करना था। उसका खजाना खाली हो चुका था। इसलिए उसने जहाजी कर (शिपमनी टैक्स) लागू किया। उस समय जॉन हैम्डन नामका एक सम्पन्न और इज्जतदार व्यक्ति था। उसने देखा कि राजाको यदि इस तरह कर दिया जायेगा तो आखिर इस राजाकी माँग और भी बढ़ेगी और लोग दुःखी होंगे। इसलिए उसने कर देनेसे इनकार कर दिया। बहुत-से लोग उसके साथ हो गये। कुछ लोग कर देनेको तैयार भी हो गये। लेकिन हैम्डन अपनी बातपर दृढ़ रहा। उसपर भारी मुकदमा चलाया गया। न्यायाधीशोंने उसे सजा देते हुए निर्णय दिया कि हैम्डनने कर नहीं दिया यह गलती की। सजा हो जानेपर भी हैम्डनने कर नहीं दिया। हैम्डन और उसके साथियोंको लोगोंने जेलमें बधाई दी। उसकी तरह और लोग भी दृढ़निश्चय रहे। बहुतोंने कर नहीं दिया। बड़ा विद्रोह उठ खड़ा हुआ। बादशाह घबराया। फिर जाँच शुरू हुई। हजारों लोगोंको जेलमें नहीं बन्द किया जा सकता। इसलिए पिछले निर्णयको दूसरे न्यायाधीशोंसे रद करवाया। हैम्डन छूटा। उसने स्वतन्त्रताके युद्धका जो बीज बोया था उसका विशाल वृक्ष बन गया। उसीके फलके परिणामस्वरूप कॉमवेल पैदा हुआ और इंग्लैंडको सच्ची स्वतन्त्रता मिली तथा लोगोंको राज्यव्यवस्थामें हाथ बँटानेका मौका मिला। हैम्डन इसके लिए लड़ता-लड़ता मरा फिर भी अमर है।

जॉन बनियन एक साधु पुरुष था। उसे भगवानकी प्रार्थना करनेके सिवा दूसरा कोई व्यसन न था। उसने उस समयके अर्थात् सत्रहवीं सदीके धर्मका भारी सत्याचार देखा। उस धर्माध्यक्ष (बिशप) की आज्ञाके अनुसार कार्य करना ठीक नहीं मालूम हुआ। वह सिर्फ खुदाकी आज्ञाको ही मानता था। वह अपनी पत्नी और बच्चोंको छोड़कर बारह सालकी उम्रमें बारह वर्ष रहा। वहाँ उसने अंग्रेजी भाषाकी एक अनमोल-अच्छी पुस्तक[1] लिखी। उस पुस्तकको पढ़कर लाखों लोग समाधान प्राप्त करते हैं। वह इतनी सरल भाषामें लिखी गई है कि बच्चे और बड़े सभी उसको आसानीसे पढ़ सकते हैं। वहाँ बनियनने जेल काटी वह अब अंग्रेजोंके लिए तीर्थस्थान बन गया है। बनियनने दुःख भोगा लेकिन उसने प्रजाको दुःखसे छुड़ाया। आज इंग्लैंडमें लोग धार्मिक स्वतन्त्रता भोग रहे हैं सो बनियन-जैसे साधु पुरुषोंके प्रतापसे ही।

जिस जातिमें ऐसी विभूति पैदा हो वह क्यों न राज्य करे? इन महापुरुषोंने जितना दुःख उठाया उतना यदि ट्रान्सवालके भारतीयोंको कुछ समय जेल जाना पड़े या व्यापारमें नुकसान उठाना पड़े तो उसे ज्यादा नहीं कहा जायेगा। यदि वे इतना न करें तो उनकी आजीविका होगी कैसे तो सहज ही बन्धन छूट जायेंगे।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन २-११-१९०७

1. पिलग्रिम्स प्रोग्रेस

तारीखवार जीवन-वृत्तान्त

(१९०५-१९०६)

१९०५

जुलाई १ परवानों और पृथक बस्तियोंसे सम्बन्धित तथा अनधिकृत देहाती जमीनों और रिहायशी मकानोंपर लगाये गये करके बारेमें नेटालके नये मन्त्रिमण्डलके विधेयकोंकी गांधीजीने आलोचना की।

ब्रिटिश भारतीय संघने उपनिवेश-सचिवसे आवेदन किया कि लेफ्टिनेंट गवर्नर ऑरेंज रिवर उपनिवेशमें नगरपालिकाके रंगभेद करनेवाले कानूनोंका निषेध कर दें।

जुलाई ८ इंडियन ओपिनियन में गांधीजीने मांग की कि भारतमें नमक-कर रद कर दिया जाये।

जुलाई ११ ब्रिटिश भारतीय संघने अध्यादेशकी तीसरी उपधाराका जिसके द्वारा एशियाई बाजारोंका नियन्त्रण नगर-परिषदोंको दे दिया गया था विरोध किया।

जुलाई १४ गांधीजीने जोहानिसबर्गकी नगर-परिषदसे यह आश्वासन मांगा कि भारतीयोंको ट्रामगाड़ियोंमें यात्रा करनेकी सुविधाएँ दी जायें।

जुलाई १५ इंडियन ओपिनियन में केप प्रवासी अधिनियमकी आलोचना की।

जुलाई १७ के बाद डेली एक्सप्रेस को अपना मतभेद प्रकट करते हुए पत्र लिखा कि उसके एक संवाददाताने बोअर युद्धके पूर्व पीटर्सबर्गमें रहनेवाले भारतीय व्यापारियों और फुटकर दुकानदारोंकी जो संख्या बताई है वह गलत है।

जुलाई २० भारतमें बंग-भंग घोषित।

जुलाई २२ गांधीजीने दक्षिण आफ्रिकी राजनीतिज्ञोंसे साम्राज्यकी संरक्षामें भारतीयोंके योगदानको दृष्टिमें रखते हुए ब्रिटिश भारतीयोंके साथ किये जानेवाले व्यवहारपर पुनर्विचार करनेका अनुरोध किया।

अगस्त ५ एडविन आर्नोल्ड स्मारक कोषमें १ गिनी चन्दा दिया।

अगस्त नेटाल विधान-परिषदने व्यक्ति-कर विधेयक पास किया।

अगस्त १२ गांधीजीने इंडियन ओपिनियन में लॉर्ड सेल्बोर्नकी इस घोषणाकी सराहना की कि वतनियोंके साथ होनेवाला अमानुषिक अन्याय एक कलंक है।

नेटाल विधानमण्डल द्वारा बस्तियों तथा भूमि-कर सम्बन्धी विधेयकोंकी अस्वीकृतिका स्वागत किया और [illegible] सर्वोच्च न्यायालयके इस फैसलेपर हर्ष प्रकट किया कि धार्मिक आयोजनपर वतनियोंके नाम पहराया जा सकता।

अगस्त १४ गांधीजीने हाजी हबीबका पत्र मिलकर इस बातसे इनकार किया कि उनके धार्मिक व्याख्यानोंमें कुछ आलोचना अथवा किसीको दुःख पहुँचानेका कोई इरादा था।

अगस्त १९ बंग-भंगके सम्बन्धमें विरोध और ब्रिटिश मालके बहिष्कारका आह्वान किया।

अगस्त २६ ब्रिटिश विज्ञान प्रगति सभाकी प्रशंसा की और आशा प्रकट की कि सभाकी बैठक कभी-न-कभी भारतमें भी होगी। कर्जनकी साम्राज्यवादिताके बारेमें विचार प्रकट किये।

अगस्त ३१ ब्रिटिश भारतीय संघने ऑरेंज रिवर उपनिवेशमें रंगदार व्यक्तियोंपर लागू होनेवाले नगरपालिका बस्ती-सम्बन्धी कुछ उपनियमोंको भारतीयोंपर भी लागू करनेपर आपत्ति की।

नवम्बर १८ गांधीजीने ब्रिटिश उपनिवेशोंमें जापानके विरुद्ध किये जानेवाले भेदभावकी ओर ध्यान आकृष्ट किया।
केप उपनिवेशकी ब्रिटिश भारतीय समितिसे प्रवासी अधिनियमका विरोध करनेको कहा।

नवम्बर २५ व्यक्ति-कर सम्बन्धी नियमोंके संशोधन और गरीब भारतीयोंके प्रति उनके विवेकपूर्ण प्रयोग की माँग की।

नवम्बर २९ ब्रिटिश भारतीय शिष्टमण्डलका नेतृत्व किया और लॉर्ड सेल्बोर्नके सामने वक्तव्य प्रस्तुत किया।

दिसम्बर २ स्टैंगरमें बेलकी हड़तालोंकी आलोचना की।
"वन्दे मातरम्" को भारतके राष्ट्रीय गानके रूपमें अपना लेनेकी सिफारिश की।

दिसम्बर ४ मद्रासके मनोनीत गवर्नर सर आर्थर लालीका इंग्लैंड होकर भारत जानेके अवसरपर ब्रिटिश भारतीय संघके मन्त्रीकी हैसियतसे विदाई दी।

दिसम्बर ६ केप उपनिवेशके सर्वोच्च न्यायालयने फैसला दिया कि नेटालके भारतीयोंका परिवार साथ न हो तो भी केप उपनिवेशमें अधिवासका अधिकार है, बशर्ते कि वे स्वयं अरसेसे वहाँ रह रहे हों।

दिसम्बर २२ ऑरेंज रिवर उपनिवेशके अध्यादेशोंके मसविदोंमें ब्रिटिश भारतीयोंको रंगदार लोगोंके दर्जेमें रखे जानेपर ब्रिटिश भारतीय संघने उच्चायुक्तके समक्ष विरोध प्रकट किया।

दिसम्बर २२ के बाद उच्चायुक्तने भारतीयोंकी इस प्रार्थनाको अस्वीकृत कर दिया कि "रंगदार लोगों" की परिभाषाको संशोधित किया जाये।

दिसम्बर २३ गांधीजीने वालकेकी समाहका हवाला देते हुए भारतीय नवयुवकोंसे शिक्षाके काममें योग देनेकी सिफारिश की और भारतमें साम्प्रदायिक झगड़ोंके निपटानेमें किसी अन्य दलके हस्तक्षेपकी निन्दा की।

दिसम्बर ३० १९०५ के कामका सिंहावलोकन किया और भारतीयोंसे अनुरोध किया कि वे संघर्षको "औचित्यके साथ, सबके साथ और फिर भी दृढ़ताके साथ" जारी रखें।
हीडेलबर्गके भारतीय समुदायमें आपसी दंगोंकी निन्दा की।
श्री पोलक और कुमारी डूसके विवाहके अवसरपर वर-सखा बने।

१९०६

जनवरी १ १८ वर्ष या उससे अधिक आयुवाले भारतीयोंपर एक पौंडी कर लागू किया गया।
पीम दूकानवाली अधिनियम लागू हुआ।

जनवरी २ गानकाम्मिस्कोमें भयम्पस महार।

जनवरी २ "इंडियन ओपिनियन" के एक समयके सम्पादक मनसुखलाल हीरालाल नाजरकी मृत्यु।

फरवरी १ "इंडियन ओपिनियन" के हिन्दी और तमिल स्तम्भ बन्द कर दिये गये।

फरवरी ब्रिटिश भारतीय संघने अनुमतिपत्र सम्बन्धी विनियमोंमें परिवर्तनका विरोध करते हुए उपनिवेश सचिवको पत्र लिखा।

फरवरी १ संघने जोहानिसबर्ग नगर-परिषद द्वारा भारतीयोंपर ट्रामगाड़ियोंके उपयोगके सम्बन्धमें लगाये गये प्रतिबन्धोंका विरोध किया।

फरवरी १४ प्रिटोरिया और जोहानिसबर्गके बीच चलनेवाली विशेष रेलगाड़ियोंपर भारतीयोंकी यात्रा निषिद्ध करार दी जानेपर गम्भीर आपत्ति की।

गांधीजीने डर्बनमें कांग्रेस द्वारा आयोजित स्वागत-समारोहमें भाषण दिया और आशा व्यक्त की कि उसको स्थायीरूप दिया जाये।

गांधीजीने सुझाव दिया कि भारतीयोंको स्थायी आहत-सहायक दलमें भरती होनेकी अनुमति दी जाये।

जुलाई २१ कांग्रेसने दलके सदस्योंका पदक देनेका निश्चय किया।

गांधीजीने हीरक जयन्ती पुस्तकालयकी सभामें भाषण दिया।

जुलाई ३ गांधीजीने शिष्टमण्डलकी उपयोगितापर वेडरबर्नकी सम्मति ली।

अगस्त ४ ट्रान्सवाल वापस लौटनेके इच्छुक भारतीय शरणार्थियोंकी कठिनाइयाँ बताईं।

लिटिल्टन और एशियाईके अधिनियमोंका फर्क बताते हुए लेख लिखा।

उपनिवेश सचिवने विधान-परिषदको सूचित किया कि सरकारका इरादा है कि ट्रान्सवालमें एशियाइयोंके पुनःपंजीयनके लिए विधेयक पेश किया जाये। ब्रिटिश भारतीय संघने इसपर तत्काल कार्रवाई करनेका प्रस्ताव किया।

अगस्त ६ गांधीजीने प्रस्तावित पुनःपंजीयनसे ट्रान्सवालके भारतीयोंको होनेवाली कठिनाइयोंके विषयमें दादाभाई नौरोजीको लिखा और सुझाया कि वे उपनिवेश-मन्त्री व भारत-मन्त्रीसे भेंट करें।

अगस्त ७ नेटालके गवर्नर सर हेनरी मैककैलमने डाकोंबाहुक दलकी सेवाओंके लिए गांधीजीको धन्यवाद दिया।

अगस्त ९ के पूर्व गांधीजीने रैंड डेली मेल के नाम एक पत्रमें भारतीयोंके लिए पूर्ण नागरिक स्वतंत्रताकी माँग की।

अगस्त ११ इंडियन ओपिनियन में पुनःपंजीयन अध्यादेशके सम्बन्धमें उपनिवेश-सचिवके वक्तव्यका विश्लेषण किया।

अगस्त १२ हमीदिया इस्लामिया अंजुमनमें राजनीतिक स्थितिपर व्याख्यान देते हुए भारतीयोंको प्रेरित किया कि वे अध्यादेशके सम्बन्धमें उपनिवेश मन्त्रीके वक्तव्यका विरोध करनेके लिए संगठित हो जायें।

अगस्त १३ दादाभाई नौरोजीको पत्र लिखा जिसमें साम्राज्यीय सरकार द्वारा ट्रान्सवालके लिए न्यायभावनापर आधारित कानून बनानेकी आवश्यकता बताई।

नेटाल भारतीय कांग्रेसने लॉर्ड एलगिनको नगर निगम सम्बन्ध विधेयकके सम्बन्धमें प्रार्थनापत्र भेजा।

अगस्त १८ गांधीजीने इस पत्रमें विचार व्यक्त किये कि एक राष्ट्रके निर्माणके लिए भारतमें हिन्दुस्तानीको राष्ट्रभाषा स्वीकार किया जाये।

सूचित किया कि मलायी बस्ती समितिने नगर-परिषद द्वारा अपनी अर्जीकी अस्वीकृतिके खिलाफ अपील करनेका निश्चय किया है।

अगस्त २१ केप परवाना कानून गज़ट में प्रकाशित कर दिया गया।

अगस्त २२ एशियाई कानून संशोधन अध्यादेशका मसविदा ट्रान्सवाल सरकारके गज़ट में प्रकाशित हुआ।

अगस्त २५ माइल्ता ब्रिटिश भारतीयोंका रजिस्टर लोगोंकी श्रेणीमें न रखनेकी माँग की। ब्रिटिश भारतीय संघने उपनिवेश-सचिवको एक पत्र लिखकर अध्यादेशके प्रति अपना विरोध प्रकट किया।

अगस्त २८ अध्यादेशके अन्तर्गत पुनः पंजीयनके सम्बन्धमें दक्षिण आफ्रिका ब्रिटिश भारतीय समितिने जाँच आयोगकी नियुक्तिका सुझाव दिया।

सितम्बर १ उपनिवेश-सचिवसे मिलने प्रिटोरिया जानेवाले शिष्टमण्डलका नेतृत्व

सितम्बर ४ ट्रान्सवाल विधान-सभा में अध्यादेश पेश किया गया।

सितम्बर ८ गांधीजीने एशियाई अध्यादेशके मसविदेको पास करानेके सरकारी प्रयत्नको मानव जातिके प्रति अपराध बताया।

ब्रिटिश भारतीय संघने भारत-मन्त्री उपनिवेश-मन्त्री तथा भारतके वाइसरायको अध्यादेशके विरोधमें तार भेजे।

सितम्बर ९ के पूर्व एक सभामें गांधीजीने खूनी कानून को भारतीयोंको कुचलनेका पहला कदम बतलाया और भारतीयोंसे उसका विरोध करनेके लिए कहा।

सितम्बर ९ हमीदिया इस्लामिया अंजुमनकी सभामें गांधीजीने ट्रान्सवालकी राजनीतिक व्याख्यान दिया और इंग्लैंडको शिष्टमण्डल भेजनेकी आवश्यकतापर जोर दिया परामर्श दिया कि वे पंजीयन न करायें और सबसे पहले स्वयं ऐसा करनेका प्रकट किया।

सितम्बर ११ जोहानिसबर्गमें आयोजित ब्रिटिश भारतीयोंकी सार्वजनिक सभामें वापिस लेनेकी माँग की और चेतावनी दी कि यदि यह अध्यादेश कानून बना दिया गया तो भारतीय उसका विरोध करेंगे।

सितम्बर १२ ब्रिटिश भारतीय संघने ट्रान्सवालके लेफ्टिनेंट गवर्नरको सार्वजनिक सभामें [illegible] गये प्रस्ताव भेजे।

[illegible] ने अपना दृष्टिकोण स्पष्ट करते हुए रैंड डेली मेल को [illegible] दिया।

[illegible] पूर्व ब्रिटिश भारतीय संघने स्टार को लिखा कि भारतीय [illegible] के सामने न झुकनेको दृढ़संकल्प हैं।

भारतीय स्त्री पूनियाको रेलगाड़ीसे यात्रा करते समय पुरुष अनुपस्थित [illegible] [illegible] में फोक्सरस्टमें गिरफ्तार करके रोक लिया गया।

[illegible] पर मुकदमा चलाया गया और उसे उपनिवेश छोड़नेकी आज्ञा दी गई।

[illegible] आज्ञाकी अवहेलनाके अपराधमें पुनः गिरफ्तार कर ली गई।

[illegible] ने ब्रिटिश भारतीय संघको सूचित किया कि अध्यादेशको शाही [illegible] नहीं मिली है।

सितम्बर १९ अखबार [illegible] पूनियाके मुकदमेके बारेमें पत्र लिखा जिसमें भारतीय स्त्रियों और बच्चोंके प्रति आतंकका राज्य कायम करनेके लिए ट्रान्सवाल सरकारकी आलोचना की।

सितम्बर २ [illegible] ट्रान्सवालमें भारतीयोंकी अवैध बाढ़की जाँचके लिए अदालती जाँच समिति बैठानेकी बात को तुरन्त मान लेनेकी अपनी रजामंदी घोषित की।

सितम्बर २१ गांधीजीने लीडर के इस वक्तव्यको कि भारतीय दुश्चरित्र स्त्रियोंको अपनी पत्नियाँ कहकर उपनिवेशमें ला रहे हैं चुनौती देते हुए पत्र लिखा।

नेटाल मर्क्युरी ने पूनियाके मामलेका सरकारी स्पष्टीकरण प्रकाशित किया।

भारतीयोंकी एक सभामें अन्ततः यह निश्चय किया गया कि गांधीजी तथा अलीको शिष्ट मण्डलके रूपमें इंग्लैंड भेजा जाये।

लॉर्ड सेल्बोर्नने ब्रिटिश भारतीय संघको सूचित किया कि शिष्टमण्डलके इंग्लैंड पहुँचने तक अध्यादेशको स्वीकृति नहीं दी जायेगी।

सितम्बर २८ लॉर्ड सल्बोर्नने ब्रिटिश भारतीय संघको सूचित किया कि लॉर्ड एलगिनकी सम्मतिमें शिष्टमण्डल उपयोगी सिद्ध नहीं होगा।

सितम्बर २९ संघने ट्रान्सवालके गवर्नरसे पूछा कि अध्यादेशको सम्राट्की स्वीकृति मिल चुकी है या नहीं।

सितम्बर २९के पूर्व लॉर्ड सल्बोर्नने ब्रिटिश भारतीय संघको लिखा कि वे अध्यादेशके सम्बन्धमें उसके दृष्टिकोणको नहीं मानते।

सितम्बर ३ संघने ट्रान्सवालके गवर्नरको तार भेजा जिसमें साम्राज्यीय सरकारसे प्रार्थना की गई थी कि वह एशियाई अध्यादेशको तबतक अपनी स्वीकृति न दे जबतक शिष्टमण्डल भारतीय दृष्टिकोण उसके समक्ष प्रस्तुत न कर दे।

शिष्टमण्डलको इंग्लैंड जानेके अवसरपर विदाई दी गई।

अक्तूबर १ गांधीजी और अली केप टाउन होते हुए इंग्लैंड जानेके लिए जोहानिसबर्गमें गाड़ीपर सवार हुए।

अक्तूबर ३ *शिष्टमण्डल केप टाउन पहुँचा और प्रमुख भारतीयों द्वारा स्वागतके बाद आर्मडेल कासिल नामक जहाजसे रवाना हो गया।*

अक्तूबर ८ ब्रिटिश भारतीय संघने ट्रान्सवालके गवनरको उपनिवेश-मन्त्रीके नाम दिये गये उस तारका पूरा मजमून भेजा जिसमें फ्रीडडॉर्प बाड़ा अध्यादेशको तबतक रोक रखनेकी प्रार्थना की गई थी जबतक शिष्टमण्डल अपनी बात न कह ले।

संघने लॉर्ड एलगिनको फ्रीडडॉर्प बाड़ा अध्यादेशके सम्बन्धमें प्रार्थनापत्र भेजा।

अक्तूबर ९ ट्रान्सवाल लीडर ने भारतीय स्त्रियोंपर लाछन लगानेवाले अपने डर्बन संवाददाता द्वारा दिये गये वक्तव्यको वापस ले लिया।

अक्तूबर १ ११ गांधीजीने इंडियन ओपिनियन के लिए संवादपत्र लिखे। वे तमिल भाषा सीख रहे थे।

अक्तूबर २ एशियाई अध्यादेश तथा सत्याग्रहकी विधियोंके सम्बन्धमें किये गये प्रश्नोंके गांधीजी द्वारा दिये गये उत्तर इंडियन ओपिनियन में प्रकाशित हुए।

शिष्टमण्डल साउथैम्प्टन पहुँचा।

अ

आ

इ

ऐ

औ

क

ठ

ड

ढ

त